अमृतलाल नागर
मानस
का
हंस

भारतीय विद्या मन्दिर

आकाश का हंस

राजपाल एण्ड सन्ज कश्मीरी गेट, दिल्ली ६

अनुज-सम प्रिय
धर्मवीर भारती
को

आमुख

गत वर्ष अपने चिरंजीवी भतीजों (स्व० रतन के पुत्रों) के यज्ञोपवीत संस्कार के अवसर पर बम्बई गया था। वहीं एक दिन अपने परम मित्र फिल्म निर्माता निर्देशक स्व० महेश कौल के साथ बातें करते हुए सहसा इस उपन्यास को लिखने का संकल्प मेरे मन में जागा। महेश जी बड़े मानस प्रेमी और तुलसी भक्त थे। बरसों पहले एक बार उन्होंने उत्कृष्ट फिल्म सिनेरियो के रूप में 'रामचरितमानस' का बखान करके मुझे चमत्कृत कर दिया था इसीलिए मैंने उनसे मानस चतुश्शती के अवसर पर तुलसीदास जी के जीवनवृत्त पर आधारित फिल्म बनाने का आग्रह किया। महेश जी चौंककर मुझे देखने लगे कहा—'पंडिज्जी क्या तुम चाहते हो कि मैं भी चमत्कारबाजी की चूहादौड़ में शामिल हो जाऊं? गोसाईं जी की प्रामाणिक जीवन-कथा कहां है?"

यह सच है कि गोसाईं जी की सही जीवन-कथा नहीं मिलती। यों कहने को तो रघुबरदास वेणीमाधवदास कृष्णदत्त मिश्र अविनाशराय और संत तुलसी साहब के लिखे गोसाईं जी के पांच जीवनचरित हैं। किन्तु विद्वानों के मतानुसार वे प्रामाणिक नहीं माने जा सकते। रघुबरदास अपने आपको गोस्वामी जी का शिष्य बतलाते हैं लेकिन उनके द्वारा प्रणीत 'तुलसीचरित' की बातें स्वयं गोस्वामी जी की आत्मकथा-परक कविताओं से मेल नहीं खातीं। संत वेणीमाधवदास लिखित 'मूल गोसाईं चरित' में गोसाईं जी के जन्म यज्ञोपवीत, विवाह मानस-समाप्ति आदि से संबंधित जो तिथि वार और संवत दिए गए हैं वे भी डॉ० माताप्रसाद गुप्त और डॉ० रामदत्त भारद्वाज की जांच-कसौटी पर खरे नहीं उतरते। इसी प्रकार गोस्वामी जी के अन्य जीवनचरित भी सच से अधिक झूठ से जड़े हुए हैं। परन्तु यह मानते हुए भी 'कवितावली', 'हनुमान बाहुक' और 'विनयपत्रिका' आदि रचनाओं में तुलसी के संघर्षों भरे जीवन की ऐसी झलक मिलती है कि जिसे नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता। किंवदंतियों में जहां अन्धश्रद्धा भरा झूठ मिलता है वहां ही ऐसी हकीकतें भी नजर आती हैं जिनसे गोसाईं जी की आत्मा-परक कविताओं का ताल-मेल बैठ जाता है। इसके अलावा मेरे मन में तुलसीदास जी का ड्रामा प्रोड्यूसर और कथावाचक वाला रूप भी था जिसके कारण मैं मित्रवर महेश जी की बात के विरोध में चमत्कारी तुलसी से अधिक यथार्थवादी तुलसी की वकालत करने लगा।

लगभग पांच-छः वर्ष पहले एक दिन बनारस में मित्रमण्डली में गोसाईं जी द्वारा आरम्भ की गई रामलीला से संबंधित बातें सुनते-सुनते **एकाएक** मेरे

मन मे यह प्रश्न उठा कि तुलसी बाबा ने किसी एक स्थान को अपनी रामलीला के लिए न चुनकर पूरे नगर मे उसका जाल क्यों फैलाया—कहीं लंका, कहीं राजगद्दी, कहीं नक्कटया—अलग-अलग मुहल्लों में अलग अलग लीलाएं कराने के पीछे उनका खास उद्देश्य क्या रहा होगा ? शौकिया तौर से रंगमंच के प्रति कभी मुझे भी सक्रिय लगाव रहा है। एक पूरे शहर को रंगमंच बना देने का खयाल अपने आप मे ही बड़ा शानदार लगा लेकिन मेरा मन यह मानने को तनिक भी तैयार नही होता था कि तुलसीदास जी ने 'प्रयोग के लिए प्रयोग' वाले सिद्धान्त के अनुसार ऐसा किया होगा। खैर तभी यह भी जाना कि रामलीला कराने मे पहले गोसाईं जी ने बनारस मे नागनथैयालीला प्रह्लादलीला और ध्रुवलीलाएं भी कराई थीं। इनमे ध्रुवलीला को छोड़कर बाकी लीलाएं आज तक बराबर होती हैं। यह तीनो लीलाएं किशोरों और नवयुवकों से संबंधित हैं। यह बात भी उसी समय ध्यान मे आई थी। अपने प्रियबंधु अशोक जी जो इन दिनों लखनऊ से प्रकाशित होनेवाले दैनिक समाचारपत्र 'स्वतंत्र भारत' के संपादक हैं से एक बार प्रसंगवश यह जानकारी मिली कि बनारस की रामलीला मे केवट अहिर ठठेरे, ब्राह्मण क्षत्रिय आदि सभी जातियो के लोग अभिनय करते हैं। काशी में अनेक हनुमान मंदिरो के अलावा जनश्रुतियों के अनुसार कसरत-कुश्ती के अखाड़ों मे भी बाबा की प्रेरणा से ही हनुमान जी की मूर्त्तियां प्रतिष्ठापित करने का चलन चला। मुझे लगा कि तुलसी और तुलसी के राम आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के सुझाए शब्द के अनुसार निश्चय ही 'लोकधर्मी' थे। 'सियाराम मय जग' की सेवा करने के लिए गोस्वामी तुलसीदास संगठन कर्ता भी हो सकते थे। रूढ़िपंथियो से तीव्र विरोध पाकर यदि ईसा आम जन समुदाय को संगठित करके अपने हक की आवाज बुलन्द कर सकते थे तो तुलसी भी कर सकता था। समाज संगठन-कर्ता की हैसियत से सभी को कुछ न कुछ व्यावहारिक समझौते भी करने पड़ते हैं तुलसी और हमारे समय मे गांधी जी ने भी वर्णाश्रमियों से कुछ समझौते किए पर उनके बावजूद इनका जनवादी दृष्टिकोण स्पष्ट है। तुलसी ने वर्णाश्रम धर्म का पोषण भले किया हो पर सम्कारहीन कुकर्मी ब्राह्मण क्षत्रिय आदि को लताड़ने में वे किसी से पीछे नही रहे। तुलसी का जीवन संघर्ष विद्रोह और समर्पण भरा है। इस दृष्टि से वह अब भी प्रेरणादायक है।

महेश जी की बात के उत्तर मे यह तमाम बातें उस समय कुछ यो मथकर के उतरीं कि खुद मेरा मन भी उपन्यास लिखने के लिए प्रेरित हो उठा। महेश जी भी ऐसे जोश मे आ गए कि अपनी साटसाहबी आन मे मुझे दो महीनों मे फिल्म स्क्रिप्ट लिख डालने का हुक्म फरमा दिया। मैंने कहा 'पहले उपन्यास लिखूंगा। तब तक तुम अपनी हाथ लगी पिक्चर 'अग्निरेखा' पूरी करो।" किन्तु नियति ने महेश जी को 'अग्निरेखा' लांघने न दी। गत २ जुलाई को उनका देहावसान हो गया। किताब के प्रकाशन के अवसर पर महेश कौल का न रहना कितना खल रहा है यह शब्दों मे व्यक्त नहीं कर पाता।

इस उपन्यास को लिखने से पहले मैंने 'कवितावली' और 'विनयपत्रिका'

को खास तौर से पढ़ा। विनयपत्रिका' मे तुलसी के मतसघर्ष के ऐसे अनमोल क्षण सजोए हुए ह कि उसके अनुसार ही तुलसी के मनोव्यक्तित्व का ढाचा खडा करना मुझे श्रेयस्कर लगा। रामचरितमानस की पृष्ठभूमि मे मानसकार की मनोछवि निहारने म भी मुझे पत्रिका के तुलसी ही से सहायता मिली। 'कवितावली और हनुमानबाहुक' मे खास तौर से और 'दोहावली' तथा गीतावली म कही-कही तुलसी की जीवन झाकी मिलती ह। मैंने गोसाइ जी से सबधित अगणित किंवदतियो म स केवल उन्ही को अपने उपन्यास के लिए स्वीकारा जो कि इस मानसिक ढाचे पर चढ सकती थी।

तुलसी के जन्म-स्थान तथा सूकरखेत बनाम सोरो विवाद म दखलदाजी करने की जुरग्रत करने की नीयत न रखते हुए भी किस्सागो की हैसियत स मुझे इन बातों के सम्बन्ध मे अपने मन का ऊट किसी करवट बैठाना ही था। चूकि स्व० डा० माताप्रसाद गुप्त और डा० उदयभानु सिंह क तर्कों से प्रभावित हुआ इसलिए मैंने राजापुर को ही जन्म-स्थान के रूप मे चित्रित किया है।

उपन्यास म एक जगह मैंने नवयुवक तुलसी और काशी की एक वेश्या का असफल प्रेम चित्रित किया है। वह प्रसग शायद किसी तुलसी-भक्त को चिढ़ा सकता है लेकिन ऐसा करना मेरा उद्देश्य नहा है। तन तरफत तुव मिलन बिन' आदि दो दोहे पढे जिनके बारे म यह लिखा था कि यह दोहे तुलसीदास जी ने अपनी पत्नी के लिए लिखे थ। जनश्रुतिया के अनुसार गोसाइ बाबा अपनी बीवी से ऐसे चिपके हुए थे कि उन्ह मके तक नही जान देते थ, फिर बाबा उन्ह यह दोहेवाली चिट्ठी भला क्या भेजने लगे? खैर, या मान लें कि जवानी की उमग म तुलसी ने अपन बैठके म यह दोह रचकर किसी दास या दासी की मार्फत किसी बात पर कई दिना स रूठी हुई पत्नी को मनान क लिए खुशामद म लिखकर अन्त पुर म भिजवाए थे पर एक दोह म प्रयुक्त 'तरुणी' शब्द मेरी इस कल्पना के भी आडे आया। पत्नी के लिए लिखते तो शायद 'भामिनी' शब्द का प्रयोग करते 'तरुणी' शब्द थोडे अपरिचय का बोध कराता है। वैसे भी पडित तुलसीदास न, बकौल बधुवर डा० रामविलास शर्मा, कालिदास को खूब घोटा होगा। वे कभी रसिया भी रह होंगे। विनय पत्रिका म वे अपनी मदन बाय से खूब जूझे ह। कलियुग के रूप म उन्हे पद और पसे का लोभ तो सता ही नहीं सकता सताया होगा कामवृत्ति ने। मुझे लगता है कि तुलसी ने काम ही से जूझ-जूझ कर राम बनाया है। 'मृगनयनी के नयन सर, को अस लागि न जाहि' उक्ति भी गवाही देती है कि नौजवानी म वे किसी के तीर-नीमकश से बिंधे होंगे। नासमझ जवानी मे काशी निवासी विद्यार्थी तुलसी का किसी ऐसे दौर से गुजरना अनहोनी बात भी नहीं है।

सत बेनीमाधवदास क सम्बन्ध म भी एक सफाइ देना आवश्यक है। सत जी मूल गोसाइ चरित के लेखक मान जाते हैं। उनकी किताब के बारे मे भले ही शक-शुब्ह हो मुझे तो अपने कथा-सूत्र के लिए तुलसी का एक जीवनी लेखक एक पात्र के रूप म लेना अभीष्ट था इसलिए कोई काल्पनिक नाम न रखकर सत जी का नाम रख लिया। तुलसी के माता, पिता, पत्नी, ससुर आदि

के प्रचलित नामों का प्रयोग करना ही मुझे अच्छा लगा।

यह उपन्यास ४ जून सन् १९७१ ई० को तुलसी स्मारक भवन अयोध्या में लिखना आरंभ करके २३ मार्च '७२ रामनवमी के दिन लखनऊ में पूरा किया। चि० भगवतप्रसाद पाण्डेय ने मेरे लिपिक का काम किया।

इस उपन्यास को लिखते समय मुझे अपने दो परमबंधुओं, रामविलास शर्मा और नरेन्द्र शर्मा के बड़े ही प्रेरणादायक पत्र अक्सर मिलते रहे। उत्तर प्रदेश राजस्व परिषद् के अध्यक्ष श्रीयुत जनार्दनदत्त जी शुक्ल ने अयोध्या के तुलसी स्मारक में मेरे रहने की आरामदेह व्यवस्था कराई। बंधुवर ज्ञानचंद जैन सदा की भांति इस बार भी पुस्तकालयों से आवश्यक पुस्तकें लाकर मुझे देते रहे। इन बंधुओं के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूं।

डॉ० मोतीचन्द्र लिखित 'काशी का इतिहास' तथा राहुल सांकृत्यायन लिखित 'अकबर' पुस्तकों ने ऐतिहासिक पृष्ठभूमि सजोने में तथा स्व० डॉ० माताप्रसाद गुप्त की 'तुलसीदास' और डॉ० उदयभानु सिंह कृत 'तुलसी काव्य मीमांसा' ने कथानक का ढांचा बनाने में बड़ी सहायता दी। प्रयाग के मित्रों ने 'परिमल' संस्था में इस उपन्यास के कतिपय अंश सुनाने के लिए मुझे साग्रह बुलाया और सुनकर कुछ उपयोगी सुझाव दिए। मैं इन सबके प्रति कृतज्ञ हूं।

अन्त में मित्रवर स्व० रुद्र काशिकेय का सादर सप्रेम स्मरण करता हूं। वे बेचारे 'रामबोला' बोल अधूरा छोड़कर ही चले गए। रुद्र जी काशी के चलते फिरते विश्वकोष थे। स्व० डा० रांगेय राघव भी 'रत्ना की बात' लिखकर तुलसी के प्रति अपनी निष्ठा व्यक्त कर गए हैं। मानस चतुश्शती मनाने का सुझाव सबसे पहले 'धर्मयुग' में देनेवाले डॉ० शिवप्रसाद सिंह और समारोह के आयोजक, काशी नागरी प्रचारिणी सभा के प्रधान मंत्री श्री सुधाकर पांडेय तथा वे परिचित अपरिचित लोग जो गोस्वामी जी के सबल व्यक्तित्व को अंध श्रद्धा के दलदल से उबार कर सही और स्वस्थ रीति से जनमानस में प्रतिष्ठित कराने के लिए प्रयत्नशील हैं चाहे आयु में मुझसे बड़े हों या छोटे, मेरी श्रद्धा के पात्र हैं।

१७ कनिंग लेन
नई दिल्ली। (प्रवास)
२९ अगस्त १९७२ ई०

अमृतलाल नागर

मानस
का
हंस

१

श्रावण कृष्णपक्ष की रात। मूसलाधार वर्षा बादलो की गडगडाहट और बिजली की कड़कन से धरती लरज-लरज उठती है। एक खण्डहर देवालय के भीतर बौछारो से बचाव करते सिमटकर बठे हुए तीन व्यक्ति बिजली के उजाले मे पलभर के लिए तनिक स उजागर होकर फिर अधेरे म विलीन हो जाते है। स्वर ही उनके अस्तित्व के परिचायक हैं।

बादल ऐसे गरज रहे ह मानो सवग्रासिनी काम क्षुधा किसी सत के अतर ग्रालोक को निगलकर दम्भ भरी डकारें ले रही हो। बौछारें पछतावे के तारो-सी सनसना रही ह। बीच-बीच मे बिजली भी वसे ही चमक उठती है जसे कामी के मन म क्षण भर के लिए भक्ति चमक उठती है।"

"इस पतित की प्रायना स्वीकारें गुरू जी अब अधिक कुछ न कहे। मेरे प्राण भीतर-बाहर कही भी ठहरने का ठौर नही पा रह ह। आपके सत्य वचनो स मेरी विवशता पछाडें खा रही है।'

'हा ऽ, एक रूप मे विवशता इस समय हम भी सता रही है। जो ऐस ही बरसता रहा तो हम सवेरे राजापुर कस पहुच सकेंगे रामू ?"

"राम जा कृपालु हैं प्रभु। राजापुर अब अधिक दूर भी नही है। हा सकता है चलने के समय तक पानी रुक जाय।"

तीसरे स्वर की बात सच्ची सिद्ध हुई। घडी भर म ही बरखा थम गई। अधेरे मे तीन ग्राकृतिया मदिर स बाहर निकलकर चल पडी।

मना कहारिन सवरे जब टहल-सेवा क लिए आई तो पहल कुछ दर तक द्वार की कुण्डी खटखटाती रही सोचा नित्य की तरह भीतर स अगल लगी होगी फिर औचक म हाथ का तनिक-सा दबाव पडा तो दखा कि किवाडे उढके भर थे। भीतर गई दादी-दादी पुकारा रसोई वाले दालान म भाका, रहन वाल कोठे म दखा पर मैया कही भी न थी। मना का मन ठनका। बाकी सारा घर ता अब धीरे धीरे खण्डहर हो चला है और कहा दख! पुकार से भी तो नही बोली। कहा गइ ? मना न एक बार सारा घर छानने की ठानी, तब दखा कि व ऊपरवाल अध-खण्डहर कमरे म अचेत पडी तप रही हैं।

मना दौडी-दौडी श्यामो की बुआ के घर गई। श्यामो बरसा पहल अपने घर-बार की होकर दूसर गाव गई श्यामो के पिता भी पत्नी के मरन और उसके हाथ पीले करने के उपरात कई बरसा से सन्यासी हाकर चित्रकूट म गाजा पिया

करते हैं, पर उनकी विधवा बहन अब तक गांव में स्यामो की बुआ के नाम से ही सरनाम है। सोमवती ठाकुर हैं पर धरमसोध में गांव की बड़ी-बड़ी ब्राह्मणियों के भी कान काटती हैं। ७५ के लगभग आयु है और रतना मैया को भौजी कहती हैं, उन्हें अपना गुरु मानती हैं।

अरे बुआ, गजब हुइ गया। दादी तो चला।

हाय-हाय, का कहती हो मनो। अरे कल तिसरे पहर तो हम उन्हें अच्छी भली छोड़ के आये रहे।

'कुछ पूछौ ना बुआ एकदम अचेत पड़ी हैं लक्कड़ जसी सुलग रही हैं। राम जाने ऊपर खण्डहरे में का करै गई रही। वहीं पड़ी हैं।'

अरे तो हम बूढ़ी-ठूढ़ी अकेल क्या कर सकेंगी। गनपती के बड़कऊ और मुल्लर होरन को लपक के बुलाय लाओ। हम सीधे भौजी के धरे जाती हैं।"

बादल करीब-करीब छंट चुके थे परन्तु सूर्य नारायण का रथ अभी आकाश मार्ग पर नहीं चढ़ा था।

रतना मया की बहिर्चेतना लुप्तप्राय हो गई थी। सांसें उल्टी चल रही थीं। स्यामो की बुआ ने मया की दशा देखकर मनो को नीचे के कमरे में झटपट गोबर से लीपने का आदेश दिया और आप द्वारे पे जाकर आसपास के बन्द-खुले द्वारों की ओर मुंह करके गोहारने लगी, अरे, गनपती की बहू रमधनिया की अम्मा, अरी बतासो अरे जल्दी-जल्दी आओ सब जनी। भौजी को धरती पर लेने का बखत आय गया।"

हैं। ये क्या कहती हो स्यामो की बुआ? अरे कल तो अच्छी भली रही।" सुमेरू की अम्मा मुल्लर की महतारी बतासो काकी देखते-देखते ही अपने अपने द्वारे पे आके हाल-चाल पूछने लगीं पर आने के नाम पर बाबा और मैया के पुराने शिष्य गणपति उपाध्याय की पत्नी उनकी बड़ी पतोहू और रामधन की अम्मा को छोड़कर और कोई न आया। किसी की झाड़ू-बुहारू अभी बाकी थी, किसी की जिठानी अभी जमना जी से नहीं लौटी थी। औरतें अपने-अपने घरों में सबेरा शुरू कर रही थीं। घर गिरस्ती के नाना जजालों का मकड़जाल बुनने का यही तो समय था। अभी से चली जाय और मया सुरग सिधारें तो उनकी मिट्टी उठने तक छूतछात के मारे घर के सारे काम ही अटके पड़े रहेंगे। फिर भी इतनी स्त्रियां तो आ ही गईं। उन्होंने और स्यामो की बुआ ने मिलकर मया को ऊपर से उतारा और गोबर लिपी धरती पर लाकर लिटा दिया। राम राम सीताराम की रटन आरंभ हो गई।

थोड़ी ही देर में कुछ मरद-मानुस आ पहुंचे। अंतिम क्षण की बाट में मैया के जीवन-वृत्त का लेखा-जोखा चार जनों की जबानों के बहीखातों पर चढ़ने लगा।

'बड़ी तपस्या किहिन बिचारी।'

हम जानी साठ-पैंसठ बरिस तो हो गए होंगे बाबा को घर छोड़े।

'अरे जादा, तीन बीसी और पांच बरिस की तो हमारी ही उमिर हुइ गई। सम्मत् १४ में भय रहेन हम। उसके पांच-सात बरिस पहले बाबा ने घर छोड़ा रहा।

"हम तो कहते हैं कि ऐसी धरमपतनी सबको मिलै। औरो की तौ फसाय देती हैं पर दादी ने तो बाबा की बिगड़ी बनाय दी। हमरी जान मे अब गाव मे बाबा की उमिर के '

"काहे बकरीदी बाबा और रजिया बाबा हैं। बकरीदी बाबा बताते तो हैं कि बाबा से चार दिन बड़े हैं। और राजा अहिर इनसे एक दिन छोटे हैं।

रजिया कक्का, बकरीदी चच्चा हम जानी सौ बरस के तो जरूर होयगे।"

'नाही, बप्पा से दस बरिस बड़े हैं। अरे बुआ क्या हाल है दादी का ?"

बसने परी हैं अबही तो। बोल-बोल तौ पहले ही बन्द होइ चुका है। जान काहे मा परान अटके हैं।"

"कुछ भी कहौ, बाकी एक पाप तो इनसे भया ही भया। पती देवता से कुवचन बोली, तौन वह घर से निकरि गए।'

'राम राम, अनाड़ी जैसी बात "

अचानक बकरीदी दर्जी का छोटा बेटा बूढ़ा रमजानी दौड़ता हुआ आता दिखलाई दिया। निठल्ले नारत्राय मे कौतूहलवश विघ्न पड़ा। ६१-६२ वष के बूढ़े रमजानी का दौड़ना आश्चयकारी था। दूर से ही बोला—"ककुआ, ककुआ, होसियार। बाबा आय रहे हैं।'

'अरे कौन बाबा ?'

गुसाइ बाबा ' गुसाइ बाबा ' अरे अपनी रतना काकी के "

दो शिष्यो, राजा अहिर, अपने जवान पोते की पीठ पर लदे बकरीदी दर्जी निवदीन दुब न हकू मनकू आदि गाव के कई लोगो के साथ गोस्वामी तुलसीदास जी धीरे धीरे आ रहे थे। बाबा के शिष्या मे से एक रामू द्विवेदी उनके साथ काशी से आया था। उसकी आयु तीस-बत्तीस के लगभग थी। दूसरे शिष्य वाराह क्षेत्र निवासी एक सत जी थ। आजानुबाहु चमकते सोने-सी पीत देह लम्बी सुतवां नाक, उभरी ठोडी पतले होठ सिर और चेहर के बाल घुटे हुए माथे, बाहा और छाती पर वैष्णव तिलक था। काया कृश होने पर भी व्यायाम से तनी हुइ भव्य लगती थी। लगता था मानो मनुष्या के समाज मे कोई देवजाति का पुरुप आ गया है। बायें हाथ म कमण्डलु, दाहिने हाथ मे लाठी, गले म जनेऊ और तुलसी की मालायें पड़ी थी। वे जवानो की तरह से तनकर चल रहे थे।

"भैया तुम बहुत भटक गए हा। कैसा राजा इन्नर-सा सरीर रहा तुम्हारा।" सत-गृहस्थ राजा जो बाबा से आयु मे केवल एक दिन छोटे पर स्वस्थकाय थे, स्नेह से बाबा को देखकर बाले।

बाबा ने कहा— 'पिछले आठ-नौ बरसा से बात रोग ने हमका ग्रस लिया है। बाहू म पीड़ा हुई, फिर सारे शरीर म होने लगी। बस हनुमान जी और व्यायाम ही जिला रहे हैं हमको। बाकी बकरीदी भया से हम बहुत तगड़े हैं। चार ही दिन तो बड़े हैं हमसे। और तुम्हारा जी चाह तो तुम भी हमसे पंजा लड़ाय लेव राजा।"

एक हसी की लहर दौड़ गई। उसी समय अपन घर से मुगटा पहने बाबा के पुराने शिष्य, अड़सठ-उनहत्तर बर्षीय पण्डित गणपति उपाध्याय नगे पैरो दौड़ते

हुए आए भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया। बाबा ने पहचानकर गले लगाया। गणपति ने मैया की गम्भीर दशा बतलाकर अचानक आगमन को चमत्कारी बखाना।

बाबा कहने लगे—"आठ महीने से ही हम वाराह क्षेत्र में आ गए थे। चातुर्मास वहीं बिताने का विचार था। परन्तु कुछ दिन पहले हमें स्वप्न में हनुमान जी से ऐसी प्रेरणा मिली कि राजापुर होते हुए हम चित्रकूट जाएं और वहीं चातुर्मास पूरा करें।

राजा प्रेम से उन्हें एक बाहु में भरकर बोले— "अरे अब भगवान ने तुमको अंतरजामी बनाय दिया है। बहुत ऊंची तपस्या भी किए हो।"

श्यामो की बुआ देखते ही 'अरे मोर भैया' कहकर पुक्का फाड़कर रोती हुई दौड़ी और कहा— "भौजी के परान बस तुमरे बदे अटके हैं।" फिर उनके पैरों पर गिरकर और ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी।

वृद्ध संत ने उनके सिर पर दो बार हाथ थपथपाया और राम राम कहा। रतना मैया के मरन की बाट जोहते खड़े हुए बूढ़ों, अधेड़ों और लड़कों ने बाबा के चरण छूने में होड़ लगा दी। अगल-बगल के घरों की औरतें चुटकी से घूंघट थामे एक आंख से उन्हें देखने लगीं। बच्चों की भीड़ भी बढ़ आई। श्यामो की बुआ गरजी— "चलौ हटौ रस्ता देव। पहले भौजी से मिल देव, जिनके परान इनके दरसन में अटके हैं।"

परम संत महाकवि गोस्वामी तुलसीदास उनसठ वर्षों के बाद अपने घर की देहरी पर चढ़ रहे थे। उनका सौम्य-शांत-तेजस्वी मुख इस समय अपने औसत से कुछ अधिक गम्भीर था। उनके पीछे भीड़ भी भीतर आने लगी। चेहरे पर भीनी मुस्कान के साथ उनका कमण्डलुवाला हाथ ऊपर उठा, अंगूठे और तर्जनी के घेरे में कमण्डलु अटका था और तीन उंगलियां ठहरने का आदेश देते हुए खड़ी थीं। बाहरवालों ने एक-दूसरे को पीछे ढकेला। बाबा अकेले अंदर गए। वही दहलीज, वही दालान, आंगन के पारवाली कोठरियां और दालान का अधिकांश भाग अब ईंटों का ढेर बना था। जगह-जगह बरसाती घास और वनस्पति उग रही थी। परन्तु बाबा का मन इस समय कहीं भी न गया। ध्यान मग्न सिर झुकाए हुए उन्होंने दालान में प्रवेश किया। मैना हाथ जोड़कर झुकी और उनके चरणों के आगे भूमि पर सिर नवाया, फिर कहना चाहा कि इसी कमरे में हैं, किन्तु श्रद्धातंक के मारे बेचारी बाईस वर्षीया दासी के मुंह से बोल न फूट सके, केवल हाथ के संकेत से कमरा दिखला दिया। इसी बैठके वाले कमरे में कथावाचस्पति पण्डित तुलसीदास शास्त्री ने अपने गार्हस्थिक जीवन में अध्ययन और शास्त्रार्थ से भरे-पूरे नौ वर्ष बिताए थे। कमरे के भीतर जाकर ताज़ी लिपी भूमि पर निश्चेष्ट पड़ी हुई पत्नी को देखा, फिर बाबा ने किवाड़ों को थोड़ा उढ़काकर मैना मैना को भीतर न आने के लिए कहा। दाहिनी ओर चौकी पर रामचरितमानस का बस्ता रखा था। उस पर बासी फूल रखे हुए थे। दीवट में मोटे बत्तवाला दिया जल रहा था।

बाबा एक क्षण तक खड़े रहे, फिर पत्नी के सिरहाने बैठ गए। छाती के बीच में प्राणों की धुकधुकी खरगोश की कुलांचा-सी रुक रुककर चल रही थी।

चेहरा शांत किन्तु कुछ-कुछ पीडित भी था। बाबा ने अपने कमण्डलु से जल लेकर मैया के मुख पर छींटा दिया। उनके सिर पर हाथ फेरकर उनके कान के पास अपना मुख ले जाकर उन्होंने पुकारा—"रतन!" चेहरे पर हल्का-सा कम्पन आया पर आंखें न खुलीं। फिर पुकारा—"रतन!"

लगा कि मानो कमल खिलने के लिए अपने भीतर से संघर्ष कर रहा हो। बाबा ने राम राम बुदबुदाते हुए उनकी दोनों आंखों पर अंगूठा फेरा। मैया की आंखें खुलने लगीं। पुतलियां दृष्टि के लिए भटकीं, फिर स्थिर हुई और फिर क्रमशः चमकने लगीं। मुरझाया मुख-कमल अपनी शक्ति भर खिल उठा। होंठों पर मुस्कान की रेखा खिंच आई। शरीर उठना चाहता है किन्तु अशक्त है। होंठ कुछ कहने के लिए फड़कने का निर्बल प्रयत्न कर रहे हैं किन्तु बोल नहीं फूट पाते। केवल चार आंखें एक-दूसरे में टकटकी बांधे बड़ी सजीव हो उठी हैं। पति की आंखों में अपार शांति और प्रेम तथा पत्नी की आंखों में आनन्द और पूर्ण कामरव का अपार संतोष भरा है।

'राम राम कहो रतना! सीताराम-सीताराम!"

होंठों ने फिर फड़कना आरम्भ किया। कलेजे की प्राण कुलाचें कण्ठ तक आ गई।

'सीताराम! सीताराम!" बाबा के साथ-साथ मैया के कण्ठ से भी क्षीण अस्फुट ध्वनि निकली। बोलने के लिए जीव का संघर्ष और बढ़ा। बाबा ने मैया का हाथ अपने हाथ से उठाकर और प्रेम से दबाकर धीरे से कहा—'बोलो बोलो सीताराम। 'सी ता रा ।" एक हिचकी आई मैया की आंखें खुली की खुली रह गई और काया निश्चेष्ट हो गई। मृत देह पर जीवन की एक छाप अब तक शेष थी। विरह से सूनी रतना मैया सुहागिन होकर परम शांति पा गई थीं।

बाबा थोड़ी देर वैसे ही मैया का हाथ अपने हाथ में लिए बैठे रहे, फिर उठे और भीतरवाले द्वार की ओर जाने के बजाय सड़क-पड़ते तीन द्वारों में से बीच वाले का बेंड़ना सरका कर उसे खोल दिया। बरसों बाद खुलने के कारण जड़काष्ठ ने भी खुलने में वैसा ही संघर्ष किया जैसा मैया ने सीताराम शब्द उच्चारण करते हुए किया था। बाबा शांत भाव में बाहर चबूतरे पर आकर खड़े हो गए।

२

मैया की मौत से कुछ पलों पहले बाबा का अचानक आना गांववालों के लिए एक चामत्कारिक अनुभव तो बना ही साथ ही बड़े गर्व का विषय भी बन गया था। गोसाईं महात्मा इस समय चांद-सूरज की तरह लोक उजागर थे। उनके गांव में पैदा हुए थे। जब हुमायूं और शेरशाह की लड़ाई के पुराने दिनों की

भगदड मे इधर-उधर छितराके भागने वाले मुगल लडवैये डाकू बनकर लूटपाट और आतंक मचाने लगे, तब यह विक्रमपुर गाव पूरी तरह से लुट पिट और खण्डहर बनकर सभ्यता के मानचित्र से मिट गया था। बस दो-चार गरीब-गुरबे छोटे काम करनेवाले हिन्दू और पन्द्रह-बीस मुसलमानों के घर ही बच रहे थे। उस समय बाबा ने यहा आकर तपस्या की और सकटमोचन हनुमान को स्थापित किया। उन्ही के आशीर्वाद से राजापुर नाम पाकर यह गाव फिर से बसा था। उनके साथी-सगियो मे दो लोग अभी मौजूद हैं। इसलिए लोगो में जोश था कि मया की अर्थी बडी धूम-धाम से उठनी चाहिए जरा सात गाव लोग देखें और कहें कि बाबा सबसे अधिक उन्ही के हैं। उनकी जन्मभूमि यही, घर यही, घरैतिन यही और आज इतने बडे विरक्त महात्मा होकर भी वे अपने हाथों अपनी अर्द्धांगिनी का दाह सस्कार करेंगे। विक्रमपुर उर्फ राजापुर के लिए यह क्या मामूली घटना होगी।

जवानों मे ही इस बात का सबसे अधिक जोश था गाव के करीब-करीब सभी बड़े-बूढे स्त्री-पुरुष भी लडको के इस जोश का जोशीला समर्थन करने लगे। तय हुआ कि रजिया कक्का और बकरीदी कक्का से कहलाया जाय। इनमें भी राजा भगत बाबा के विशेष मुहलगे थे। बाबा अपनी जवानी मे जब सोरो से आए थे तो राजा के घर ही ठहरे थे। उन्होंने ही गाव गांव इनकी कथावाचन कला का माहात्म्य फैलाया था। जब दान-दक्षिणा अच्छी मिलने लगी और इनके ब्याह की बात चली तो राजा ही की सलाह मानकर बाबा ने बकरीदी से यह जमीन खरीदी। राजा ने ही बाबा का यह घर बनवाया था। ब्याह-बरात का सारा प्रबंध भी उन्होंने ही किया और अब तक अपनी रतना भौजी के साथ उनका वैसा ही निभाव रहा था।

सबके आग्रह से राजा और बकरीदी बाबा के पास गए। बाबा चबूतरे पर कुशासन बिछाकर बैठे थे पालथी मारे, मेरुदण्ड सहज तना हुआ आखें कही दूर अलक्ष्य में लगी हुई थी सुमिरनी अपने क्रम से चल रही थी। सूकरखेत निवासी शिष्य सत बेनीमाधव और काशी से साथ आए हुए शिष्य रामू द्विवेदी अगल-बगल बैठे बाबा को पखा झल रहे थे। बकरीदी को सहारा देकर उनके सामने से ही चबूतर पर चढाकर लाते हुए राजा पर बाबा की दृष्टि बरबस पडी। चार दिन बडे होने के कारण बाबा बकरीदी दर्जी को भया कहकर पुकारते हैं इसलिए उनके सम्मान म वे खडे हो गए। बकरीदी दोनों हाथ उठाकर अपनी कमज़ोर आवाज म सास का अधिक जोर लगाकर बोले— रहै दव रहै देव गमी जनाजन म मील सिष्टाचार का बिचार नही हाता।' कहते-कहते सास फूल आई स्वामी का दौरा पडा और व बैठा दिए गए।

राम राम। (राजा मे) इहाँ क्या लाए ?'

अर गाव के सब पचा न मिलके हम और इ ह तुम्हारे पास भेजा है।'

क्या बात है ?

एक हाथ से दमफूलते बकरीदी की पीठ सहलाते हुए होठो पर व्यंग की हल्की-सी हसी लाकर राजा बोले— अरे तुम इस गाव के महतमा हौ न, तौ

तुम्हारी अवाई को सब पच मिल के क्यों न मुनावें ?"

बाबा के चेहरे पर भी फीकी मुस्कान आ गई। तभी बकरीदी फिर जोश में बोल उठे—"यह बात नही है। हमारी मयेहू क्या कम महतमा रही। (खों-खों) तुम तौ हम पचन को छोडि के चले गए ऊ तौ जनम-भर हमारे ही साथ रही। सब लाग बाजे-गाजे से बिमान-उमान बनाय के जनाजा लै जैहैं। देर-सवेर होय तो बोलना मत। यह हमार अरदासौ है और हुकुमौ है।'

"तुम्हारा हुकुम हमारे लिए रामाज्ञा है। रामू!"

'आज्ञा प्रभु!"

'समय का सदुपयोग करो। राम-नाम सुनाओ, जिससे भीतर का मिथ्या क्रन्दन-कोलाहल बन्द हो।"

बाबा की अवाई सुनकर भीतर गाव भर की स्त्रिया जुट आई थी, 'हाय अजिया हाय मोर मैया' कहकर मैया से सम्बधित अपने अपने सस्मरणो को सूत्रवत् बट-बट कर लुगाइया आपस में रोने का दगल चला रही थी 'अरे नन्हुआ का जब जर चढा रहा तब तुम्है बचायो अब को बचाई? हमार सोना और रूपा के बियाहन मा सब भम्भड तुमहें निबटायो। अब हमार मोतिया का को पार लगाई? हाय मोर अजिया। हाय तुम हमका छाडिक कहा चली गईऽऽ।" इस तरह गाव भर के दुख-सुख का इतिहास रतना मैया से जुडकर कोलाहल की ऊची मीनार बना रहा था। उत्सुक स्त्रियो को मैना कभी रो रोकर और कभी आसू-सोख स्वर मे बतलाती थी कि कसे बाबाजी के कमरे मे घुसते ही उजाला हुआ और बाबा ने दादी से सीताराम-सीताराम बुलवाया। श्यामो की बुआ को यह कचोट थी कि अपनी मौजी की असल चेली तो जनम भर वह रहीं और अतिम चमत्कार देखने का सौभाग्य निगोडी मैना को मिला। इसी दुख को दुहराकर रोती रही।

रामू द्विवेदी ने बडे ही सुरीले और मधुर ढग से गाना आरम्भ किया—

> ऐसो को उदार जग माहीं।
> बिन सेवा जो द्रव दीन पै राम सरिस कोउ नाहीं।

राम शब्द का 'रा' मात्र सुनते ही उनका मुखमण्डल खिल उठा। धीरे धीरे ताली बजाते हुए उन्होंने आखें मूद ली। ध्यान-पट की श्यामता मन की तेजी से सिमटकर बीच मे आने लगी। ध्यान-पट अरुण-पीत हो गया जसे किसी रगमच की काली जवनिका उठा दी गई हो। और जवनिका चारों ओर से गोलाकार होकर सिमटती हुई पीतपट के बीचोबीच अधर मे लटककर नाचने लगी। वह पीतपट ऐसा है जसे विद्युत रेखा चौडी होकर फन की तरह फैल जाय और उसका अणु-अणु निरतर कौंधने लगे। यह चमक श्याम बिन्दु के चारो ओर आ आकर यों पछडती है जसे तट पर सागर की लहरें पछाड खाती है। लहरों के छीटों से श्याम बिन्दु मे एक आकार निर्मित होने लगता है। बिन्दु की श्यामता को वह आकार अपने आप में तेजी से समोने लगता है। अरुण पट के मध्य में कोटि मनोज लजावन हारे, सर्वशक्तिमान परम उदार सीतापति रामचन्द्र का आकार इस तरह झलकने लगा कि जैसे ब्राह्म बेला मे दुनिया झलकती है। इस दृश्य का आनन्द हृदय में

भरने लगता है और अधिक स्पष्टता से दर्शन कर पाने का आग्रह ध्यान को और एकाग्र करता है। बाबा को लगता है कि गंगा मानो उलटकर अपने उद्गम स्रोत श्रीरामचन्द्र के कंजारुण पद-नख में फिर से समा रही हों।

फिर और कुछ ध्यान नहीं रहा। भीतर-बाहर केवल भाव भगवान है तुलसीदास की कंचन काया एकदम निश्चेष्ट है। वे समाधिलीन हैं।

दोपहर तक राजापुर गांव में कहीं तिल रखने की भी जगह नहीं बची थी। हर व्यक्ति बाबा के दर्शन पाना चाहता था। धकापेल मच रही थी। 'तुलसी बाबा की जय रतना मैया की जय जय-जय सीताराम' के गगनभेदी नारों से किसीकी बात तक नहीं सुनाई पड़ रही थी। गोस्वामी जी महाराज का आगमन सुनकर आस-पास के अनेक छोटे-बड़े जमींदार और सेठ-साहूकार भी आए थे। मखाने तांबे के टके चांदी के दिरहम सोने के फूल पचमेल रत्नों की खिचड़ी जो जिससे बन पड़ा अर्थी पर लुटाया। गरीबों-मंगतों की झोलियां भर गईं। विमान के आगे ढोल दमामे नरसिंहे घंटा शंख घड़ियाल बजाते कोस भर का रास्ता चार घंटे में पार हुआ। सूर्यास्त के लगभग बाबा ने मैया की चिता में अग्नि दी। उस समय विरक्त महात्मा की आंखों से आंसू टपकने लगे। यह देखकर आस-पास खड़े उनके भक्तगण भाव विगलित हो गए। जन समाज 'सीताराम सीताराम' की रटन में लीन हो गया।

सीताराम की गुहार बाबा के कानों में ऐसे पड़ी जैसे कोई अंधा बन्द गली में चलते चलते दीवार से टकराकर अपना सिर चुटीला कर ले। मन को पछतावा हुआ हे प्रभु तुम्हारी यह माया ऐसी है कि जन्म भर जप-तप साधन करते-करते पच मरो तब भी इससे पार पाना उस समय तक महा कठिन है जब तक कि तुम्हारी ही पूर्ण कृपा न हो। सुनता हूं विचारता हूं समझता भी हूं यहां तक कि अब तो दूसरों को विस्तार से समझा भी लेता हूं पर मौके पर यह सारा किया धरा चौपट हो जाता है। हे हरि वह कौन-सी अनुभूति है जिसे पाकर मैं इस मोह-जनित भव-दारुण विपत्तियों के संत्रास से मुक्त हो सकूंगा। मेरे मन को कब ब्रह्म-पीयूष मधु शीतल रस पान करने का कब अवसर मिलेगा कि जिससे वह झूठी मृग-जल-तृष्णा से मुक्त हो सके। अगले शुक्ल पक्ष की सप्तमी को आयु के नब्बे वर्ष पूरे हो जायगे। अब भला मैं और कितने दिन जिऊंगा जो तुम मुझे आशा निराशा की चकरघिन्नी में नचाते ही चले जाते हो। दया करो राम अब तो दया कर ही दो।' आंखें फिर भर गईं।

पीछे भीड़ में सीताराम-सीताराम' हो रहा था कहीं-कहीं बातें भी हो रही थीं। चुपाय रहौ शास्त्री अवसर देखौ यह प्रेमाश्रु हैं।'

प्रेमाश्रु और ज्ञानी बहावें? अरे भरी जवानी में हमारी दुइ-दुइ पत्नियां मरीं और कसी रही कि रस की गगरिया मदनमोहिनी, जिन पर आठो पहर हम प्रेम में अपने प्राण निछावर करते रहे पर हम तो एक्कौ आंसू न बहाया। चट से तीसरी ब्याह लाए और आत्मसंयम के बंदे गर्ग संहिता का उपदेश याद करै लगे कि—

दुर्जना शिल्पिनो दासा दुष्टस्य पटहा स्त्रियः
ताडिता मार्दवं यान्ति नैते सत्कार भाजनम् ॥

"तो इन्होंने भी लिखा है कि 'शूद्र, गंवार, ढोल पशु, नारी ये सब ताडन के अधिकारी'।"

'लिखने से क्या होता है। जो अमल मे लावै सो ज्ञानी।"

"पण्डितवर, अपने गाल बजाने के लिए क्या यही अवसर मिला है आपको ?" उत्तेजनावश रामू का स्वर तनिक ऊंचा उठ गया।

"रामू !" बाबा ने पीछे घूमकर देखा। रामू और बेनीमाधव बाबा के पीछे खडे थे। उनसे दस कदम पीछे कोने म अधेड वय के वैष्णव तिलकधारी शास्त्री और त्रिपुण्डधारी सुमेरु जी थे। बाबा की गर्दन पीछे मुडते ही वे दोनो चोर की तरह पीछे दुबक गए, यद्यपि उन्होंने उनकी ओर देखा तक न था। बाबा का आदेश पाते ही रामू का क्रोध से तमतमाया हुआ चेहरा विवश भाव से नीचे झुक गया।

श्मशान से लौटने पर बाबा की इच्छा थी कि सकटमोचन हनुमान जी के चबूतरे पर सोए पर बडे-बडे लोग उनके विश्राम के लिए राजसी सुख प्रस्तुत करने को आतुर थ। हर एक उन्हे अपने शिविर मे ठहराना चाहता था। राजा भदैनि इन बडो की बातो से बिगड गए, बोले—'भया अते काहे सोवै ? अरे हिया उनका घर है गाव है जलमभूमी है।"

घर गाव जन्मभूमि, यह शब्द बाबा के मन मे तीन फासो से चुभे, व्यग फूटा हसी आई कहा—'घर घरैतिन के साथ गया। गाव तुम्हारे नाम से बजता है और रही जन्मभूमि वह तो सूकर खेत मे है भाई यहा से तो कुटिल कीट की तरह माता पिता ने मुझे जन्मते ही निकाल फेंका था।"

राजा के चेहरे पर ऐसी झेंप चढी कि मानो बाबा को घर-गाव से निकाल फेंकने का अपराध उन्ही से हुआ हो किन्तु उनका मन बचाव के लिए तुरत ही एक सूझ पा गया मुस्कराये फिर कहा—'तो उसमे बुराई क्या भयी ? गाव से निकले तो राम जी की सरन मे पहुच गए।"

तुलसी बाबा भीतर ही भीतर कट गए सिर झुकाकर कहा—'नीकी कही। तुम खरे गोस्वामी हो रजिया मेरा बहका पशु पकड लाए। ठीक है मैं उसी घर मे रहूगा जिसे तुम मेरा कहत हो।"

राजा और बाबा की बातो मे ऐसी पहेली उलझी थी कि जिसे सुलझाए बिना न तो बेनीमाधव जी को चन पड सकता था और न रामू द्विवेदी को। सत बेनीमाधव जी की आयु पचास-पचपन के बीच मे थी और रामू पण्डित अभी इक्तीस के ही थे। बेनीमाधव गत सात आठ वर्षो से अपने-आपको बाबा का शिष्य मानत हैं। कुछ महीनो तक वे काशी मे उनके पास ही रह थे किन्तु उनके बेलगाम मन को बाबा के सिद्ध गोस्वामीत्व से इतना भय लगता था कि उनमे प्रतिक्रियाए उठने लगी थीं। तब बाबा ने उनसे कहा—'वटवृक्ष के नीचे दूसरा पौधा नही उगता बेनीमाधव तुम वाराह क्षेत्र मे रहो और मन को कमाओ। बीच-बीच म जब जी चाहे यहा आ जाया करो।" तबसे वे प्रति वष अपना कुछ समय गुरु सेवा में बिताते हैं।

रामू बचपन स ही उनके साथ है। काशी की महामारी के दिनो मे उसने बाबा के आदेशानुसार किशोरो का सेवकदल सगठित करके काशी म बडा काम

किया फिर अपने पितामह के देहांत के बाद वह उन्हीं के पास रहने लगा। बाबा न ही उसे संस्कृत पढ़ाई है। अब वही उनकी देखभाल करता है हरदम बाबा का मुखारविंद ही निहारता रहता है। वह उनकी एक-एक भाव भंगिमा को पहचानता है। उसकी अचूक और निष्कपट सेवा भावना अध्ययनशीलता और गायन तथा काव्य प्रतिभा से प्रसन्न होने के कारण बाबा उसे पुत्रवत चाहते हैं।

इन दोनों शिष्यों के साथ बाबा जब घर पहुंचे तो देखा कि लेटने के लिए उनकी चौकी बाहर चबूतरे पर लगाई गई है और गणपति उपाध्याय पास ही मे खड़े उनकी बाट देख रहे है। घर का द्वार खुला देखकर वे भीतर चले गए। दालान से बढ़के मे झांककर देखा तो जहां उनकी पत्नी ने प्राण तजे थे वहीं स्यामो की बुआ दिये की बत्ती ठीक कर रही थी। बाबा रात म पहचान नही पूछा— कौन है माई।"

अरे हमको चीन्हे नाही भया हम हैं सिउदत्त सिंह की बहिन गंगा।'

'भला भला यहां सोएगी तू ?"

हम न सोवगे तो दिया कौन दयी ?

'हम।

अरे न्तो वड़े महात्मा हइक तुम हिया पौन्यो ? वड़ी ऊमस है।'

और तेरे लिए ऊमस नहीं है ?'

हम तो भैया तुम जानौ कि जबसे तुम सन्यासी भये तब से यही पर भौजी की सेवा मे ही रही हैं। भौजी कहैं स्यामो की बुआ तुम्हारी एसी सेवा कोई नही कर सकत है। हमही तो आज भिनमारे मैंनो को हिया बैठाय के बाहर लोगन का बुलाव की खातिर गई रही। इत्ते म तुम आय गयो औरन को भीतर आवे न दियो मना किहैव। हम आव नागे तो सब पच हमैं रोकि लिहिन। कहार की पतोहू निगोडी अतकाल के दरसन पाय गई। औ हम जो जनम भर उनकी असल चेली रही सो बाहरै रह गइ।' स्यामो की बुआ पछतावे के मारे रो पड़ी।

भान मन की शिकायत और रोना सुनकर बाबा को मन ही मन मे हसी आ गई समझाते हुए कहा—'अच्छा अच्छा सोच न करो। तुम्हारी सेवा राम जी के खाते म लिखी है।"

स्यामो की बुआ आमू पोंछते हुए बोली— अरे उनके खाते से हमारा कौन परोजन। भला-बुरा कहै वाले तो सब पच हिया रहते हैं। मनो निगोडी दिन भर सबन कहत फिरी कि उसने तुमरा चमत्कार देखा। सब जनी हमत कहैं कि बुआ मैंना भागमान है पुन्न लूट लै गई। तुमर चरनन की सौंह भया आज दिन भर हमका ऐसी रुवाई छूटी है ऐसी छूटी है कि (रोने लगी फिर रोते रोते ही कहा) एक तो हमार भौजी चली गइ दूसरे राम जी ने हमरा भाग खोटा कर दिया। बुआ फट-फूटकर रोने लगीं।

बाबा थके हुए थे। एक तो अर्द्धांगिनी के अवसान से उनका मन एक सीमा तक अवसन्न था और फिर दिन भर अपने भक्तों की श्रद्धा के अघाक्रमणो का त्रास भी सहा था। इसके अलावा आज उन्हें चलना भी अधिक पड़ा था। बाबा

के आदेश से गणपति अपने घर चले गए। रामू चाहता था कि गुरू जी विश्राम करें और वह पैर दाबे। आज उन्ह सोने म भी अबेर हो गई थी। रामू को गुरु का कष्ट सदा असह्य था। वह उन्ह स्यामो की बुआ के व्यथ क्रन्दन से मुक्त कराना चाहता था।

बेनीमाधव जी भी पहली बार गुरू जी की जन्मभूमि म आए थे। गुरु के सबध मे कुछ बातें आज वे अकस्मात ही जान गए थे और बहुत कुछ जानने के लिए उत्सुक थे। उनका सघर्षशील मानस एक महापुरुष के सघर्षशील जीवन से अपने लिए बल ग्रहण करना चाहता था। थोडी देर पहले ही गुरू जी महाराज ने अपने बालमित्र की बात का उत्तर देते हुए बडी कचोट और व्यग के साथ कहा था कि जन्मते ही घर से कुटिल कीट की तरह निकाल फेंके गए थे। इस बात का क्या रहस्य है? उनका जीवन-वृत्त क्या है? वाराह क्षेत्र इनकी गुरुभूमि है। कौन थे इनके गुरु? वाराह क्षेत्र मे बेनीमाधव बाबा ने जब एक दिन उनसे पूछा था तो उत्तर मिला था कि नररूप मे नारायण मेरी बाह गहने के लिए आ गए थे। फिर प्रश्न किया तो कहा कि अवसर आने पर सुनाएगे। इसके कुछ ही दिना बाद अचानक राजापुर आने का कारण बतलाए बिना ही वे ऐसा सयोग साधकर यहा के लिए चले कि अपनी जीवनसगिनी का अतिम क्षण मोक्षकारी बना दिया। क्या महाराज पहले ही से जान गए थे? इस प्रकार बेनीमाधव जी अपने भीतर अनेक प्रश्ना से पीडित थे और उनका समाधान पाने को आतुर भी। पर यह बुढिया तो पीछा ही नही छोड रही, क्या किया जाय।

स्यामो की बुआ बाबा के चरण पकडकर बठ गई थी। वह रोए ही जा रही थी हठ साधकर अपनी ही कहती चली जा रही थी। बाबा के दोना चेलो ने उनसे विनती करनी चाही पर वे और भी चढ गइ रामू के पैर को एक हाथ से ढकेलने का आवेश दिखलाकर क्रोध मे बोलीं— दूर हटौ। तुम कौन हो हमको समझाव वान? यह हमार भया हैं। हजारन को राम जी के दरसन कराइन है मरती बिरिया हमारी भौजी को भी कराए। निगोडी मैंनो हमको धोखा देके पुन्यात्मा बन गई। (रोकर) हम अपनी भौजी की असल चेली और हमहीं दरसन न कर पाइ। हम अब इनके चरन न छोडंगे। इह हमारा उद्धार करना ही पडेगा। भौजी कह गई हैं हमसे कि स्यामो की बुआ, तुमही असल चेली हौ।' स्यामो की बुआ ने बाबा के पैर पकडकर क्रदन ताण्डव मचा डाला।

बाबा बचारे उन्हें कसे मना करें। काल समाज अथवा अपने ही मन से आघात खाकर वे भी तो अपने आराध्य से ऐसा ही हठ करते हैं। ऐसी ही विनय, ऐसा ही विलाप, अश्रुवपण उन्हाने भी बार-बार किया है। अपने भीतर राम भरोसा पाने से पूव वे भी श्रद्धावश एसे ही अनेक साधु-सतों के पर पकडकर राम जी का दर्शन कराने के लिए गिडगिडाते थे। उन्होंने भी गहरी उपेक्षा तीखे कडवे वचन, भूख-दारिद्र्य क्या नही सहा? आज राम-नाम के प्रताप से वे यह दिन भी देख रहे हैं कि राव-रक सब उनके आगे भिखारी बनकर चिरौरिया करते हैं। फिर भी उन्ह लगता है कि श्रीराम के चरणो में उनकी प्रीति प्रतीति अभी पूरी नही हुई। परन्तु दुनिया समझती है कि वे श्रीराम सरकार के दर्शन करा सकते

हैं। हे राम, तुम्हारे नाम की महिमा और तुम्हारे ही शील से आज मुझे तो यह गौरव देखने को मिला है उसे देखकर मैं बहुत सकुचित हो रहा हूं।'

भावो ने उद्वेलित होकर अपनी अतलय का स्पर्श पाया, मन म चलते हुए शब्द अब लयात्मक गति पाने लगे—

द्वार द्वार दीनता कही काढि रद, परि पाहूँ।
हे दयालु दुनी दस दिसा दुख दोष दलन छम
भया।
कियो न सभाषन काहू। द्वार द्वार—'
भया हमार '

जा बहिनी जा। राम राम रटती आगन मे सो जा। राम जी तुझे सपने म दशन देंगे। —फिर गात हुए बठक म प्रवेश कर गए। मृतक के रिक्त स्थान पर दिया जल रहा था। एक क्षण उसे देखते खड़े रह फिर बाहर का द्वार खोला और चबूतरे पर आ गए।

रामू की एक आदत पड़ गई है गुरू जी जब बिना कागद-कलम लिए ही भाव वश होकर गुनगुनाने लगते हैं तो उनके पीछे-पीछे वह आप भी उन्ही शब्दो को उसी गायन पद्धति से दोहराने लगता है। उसे एक बार का सुना याद हो जाता है।

बाबा चौकी पर बठ गए। पद गुनगुनाते दोहराते हुए रामू झट स अपने कधे पर रखा अगौछा उतारकर गुरू जी के चरण पोंछन लगा। गुरु के चलित अन्तर्भाव का झटका बाहर परो म प्रदर्शित हुआ। एक चरण का झटका रामू के हाथो को और दूसरा घुटने को लगा। बहते भाव को अपनी इस बाहरी हरकत से ठेस न पहुचे इसलिए उसने बडी फुर्ती और मुलायमियत से गुरु का लटका हुआ बाया चरण अपने दाहिने हाथ से दबा लिया और गुनगुनाहट को तनिक ऊचा उभार देकर गुरुमुख की ओर आदतवश देखने लगा यद्यपि अधेरे पाख की रात म इतनी दूर से उसे बारीकी से कुछ सूझ नही सकता था। बाबा की भाव धारा अबाघ गति से बढ रही थी किन्तु अब स्वर मे रोष भी प्रकट हो रहा था

ननु जायो कुटिल कीट ज्यो तज्यो मातु पिताहूँ।
(स्वर का रग बदला) काहे को रोष ?
काहे को रोष दोष काहि धौं मेरे ही
अभाग मोसो सकुचत छुइ सब छाहूं।

रोष का शमन होते ही शेष सारी पक्तिया धाराप्रवाह गति से गाई गई। रामू को एक बार भी अपना स्वर उठाकर बाबा की सहायता नही करनी पडी। बाबा का स्वर आत्म निवेदन रस म भीगता ही चला गया। अत तक आते आते इतना कामन हो गया था कि करुणा और आनन्द म भेदाभेद करना ही कठिन था।

गुरुमुख गगा म दोनों शिष्य भी तरते और डुबकिया मारते हुए छक रह थे। लेकिन सबसे अधिक सुख तो भौजी की असल चेली ने पाया। बठक के द्वारे के चौखट स टेक लगाए बठी थी। बडी ठसक भरे सतोष के साथ अपने उठे हुए घुटना पर मुट्ठी बधी बाहें टेककर उनपर अपनी ठोढी टिकाकर सुन रही थी।

संत बेनीमाधव ने उठकर गुरू जी के चरणस्पर्श करके कहा "कृतार्थ भया महाराज। आपके जन्म-काल के त्याग वाली बात हमारे मन मे चल रही थी। उसे आपने कृपापूर्वक अपनी वाणी से और उत्तेजित कर दिया है। और जब इतनी ऊमस बढाई है तो कृपापूर्वक मेह भी अवश्य ही बरसाइयेगा। मेरे और लोक-कल्याण के लिए अनुचर की झोली म आपका जीवन-वृत्त पड जाय तो सेवक का यह जन्म सफल हो जाय। वे संत कौन थे जिन्होंने "

श्यामो की बुआ खुद भी अपने भैया से कुछ निवेदन करना चाहती थी। उन्हे भय हुआ कि एक शिष्य जब इतनी लम्बी बकवास कर रहा है तो निगोडा दूसरा भी कहीं न लपक पड़े, इसलिए झट से उठीं और चलती बात मे भैया के पैरा पडकर कहना चालू किया— "भैया तुम पूरे अन्तरजामी हो। हमार जिउ जुडाय गया। अरे हम अपनी भौजी की असल चेली और चमत्कार देखिस निगोडी मैनो। अब हम कहैंगी कि हमरी खातिर भया ऐसा भजन रचि के सुनाइन कि सुनतै एकदम से हमार मोच्छ हुइ गई। अरे हम तो तुम्हारी दया से तर गइ भया। चलती बिरिया भौजी हमैं इन चरनन की सरग-सीढ़ी दै गइ।" भावावेश मे आकर श्यामो की बुआ रोने लगी।

बाबा ने बुआ की झुकी पीठ पर हल्की उगली कोचकर छेड़ा—"अरी तू तौ यहा तर के बैठ गई, वहा तेरी भौजी का दिया बुझ गया।"

हाय राम।' कहके बुआ उठने को हुइ कि बाबा ने उनके सिर को अपने हाथ से थपथपाकर कहा— रहने दे हमने तो ऐसे ही छेड दिया। रतना का दीपक तौ हमारे हिरदै मे दीपित है। जा सो जा। और अब भौजी भैया रटना छोडकर सीताराम-सीताराम रट। जा।'

पद रचना के समय पैर पोछने का काम रुक गया था वह रामू ने बुआ-बाबा सवाद की अवधि मे कर डाला। अब इस प्रतीक्षा मे था कि बाबा लेटें और वह चरण चापना आरभ करे, किन्तु बाबा पर पर पैर रखे वैसे ही बठे रहे।

रामू ने गद्गद स्वर मे कहा— विनय के २७५ पद आज रच गए प्रभु।"

खोई हुई हा कहकर बाबा मस्ती म आकर धीरे धीरे गाने लग—

> साथी हमरे चलि गये, हम भी चालनहार।
> कागद मे बाकी रही ताते लागत बार॥

बाबा ने इतने करुण स्वर में गाया कि शिष्यो की आखें भरने लगी। बेनीमाधव बोले— हम तो आपका अथावतार कराने के लिए आतुर हो रहे हैं और आप कबीर साहब के शब्दो की आड लेकर मरण कामना कर रहे हैं। अपने अनुचरों पर इतना अन्याय न करें गुरू जी।"

'अवतार धारण करने पर अविनाशी ईश्वर को भी मृत्यु के माध्यम से ही अपनी लीला सवरण करनी पडती है। मैं तो प्रभु का एक तुच्छ सेवक मात्र हू।'

"तो क्या मेरी इच्छा पूरी न होगी, महाराज ?"

"रामभद्र जानें। सब कुछ उन्ही की इच्छा से होता है। किन्तु हमारे जीवन-वृत्त मे धरा ही क्या है। जन्म-काल से लेकर अब तक केवल अपार दुख-दुर्भाग्य

ही मेरे साथ रहा है। लोक मे कही ठौर ठिकाना न मिला परलोक की जानता नही। मेरे जीवन मे जो सारतत्व है वह केवल राम-नाम ही है।

'वही तो दर्शाना चाहता हूँ गुरु जी।

चरितो म रामचरित ही श्रेष्ठ है।

रामू बोला— आप ही ने बताना है प्रभु कि राम के दाम का महत्त्व राम से भी अधिक होता है। संत जी की इच्छा लोक की इच्छा है।'

मानस मे विनय के पदो म कवितावली और दोहो म अपनी अनेक रचनाओ म मैंने अपने जीवन की अनुभूतियां ही तो समर्पित की है। आज श्मशान म उस पण्डित ने दम्भ वश मुझपर यह लाछन लगाया कि नारी के प्रति मेरे मन म घृणा और उपेक्षा का भाव है।

यदि हो भी तो इसम अनुचित क्या है प्रभु ? विरक्त को सासारिक काम नाओ और कामिनियो रो मन मोडने के लिए उनकी उपेक्षा करनी ही पडती है।''

सत्य है महाराज भगवान शकराचार्य भी कह गए हैं कि नारी नरक का द्वार है। इस वासना के

बाबा न टोका— यह चर्चा फिर कभी हो सकती है। विश्राम करो बेनीमाधव। रामू भीतर का दीप जला दे पुत्र मैं वहीं सोऊगा।

जो आज्ञा प्रभु किन्तु भीतर तो बडी गर्मी है।

भीतर की गर्मी बाहर की गर्मी को हर लेती है।

रामू को फिर कुछ कहने का साहस न हुआ। वह भीतर वाले दालान के आले से दिया उठा लाया कमरे का बुझा दीप आलोकित किया फिर मृतक के स्थान का दीप भी जलाने चला तो बाबा बोले— उसे रहने दे। दालान का दिया यहीं रख दे और विश्राम कर।'

आप अकेले रहेंगे प्रभु ?'

अकेला क्या मेरी बुढिया मेरे साथ रहेगी, भाई।

तो चौकी '

चौकी बिछावन की दरकार नहीं। उसके धरती पर छूटे हुए प्राण मुझे यहा मिलेंगे। जा।

३

रामू आधे क्षण तक स्तब्ध खडा रहा। फिर कुछ कहने-पूछने का साहस न बटोर सकने के कारण दिया बालकर द्वार बन्द कर दिए। चबूतरे वाले द्वार के सामने बेनीमाधव खडे थे। बाबा ने उधर के द्वार भी बन्द कर लिए और उस स्थान पर जा बैठे जहा उनकी पत्नी ने अपनी देह त्यागी थी। थोडी देर सिर झुकाए बैठे अपने दाहिने हाथ से उस जगह की मिट्टी सहलाते रहे जहा रत्ना का मस्तक था। ध्यान म प्रिया का अन्तिम रूप-दर्शन था और मनोदृष्टि म चार

आखें एक-दूसरे मे लीन होकर आनन्दमग्न थी।

सीताराम! सीताराम!'—रत्ना का स्वर है। कहा स आ रहा है? सबरे धरती पर दिखलाई पडती अर्द्धागिनी अब माया की तरह विलुप्त है। सीताराम! सीताराम!' कहा है? मन के झरोखे से झाक रही है—दिये की लौ म झलक रही है। धरती पर टिकी हथेली उठकर गोद म बायें हाथ की खुली हथेली पर आ जाती है काया म सधाव आता है, आखें दिये की लौ पर टिक जाती है। दोनो भौहो क बीच बाबा के ध्यान बिन्दु से उनका सूक्ष्म मन जुगनू-सा उडता हुआ प्रकट होता है और सीधा दिये की लौ म समा जाता है। उनकी अन्तर्दृष्टि म लौ लघु स विराट होती जाती है। उनकी कल्पना म पूरा कमरा अनत विद्युत प्रकाश स ऐसा जगमगा जाता है माना कमरे का फर्श और दीवारें इंट-चूने की न होकर मणिजटित हो।

सीताराम! सीताराम! —कानो म गूज समाई है जिसम अपना और रत्ना का स्वर गगा-यमुना के समान एक म घुला मिला है। गूज की गति तीव्र स तीव्रतर हो रही है शब्द शब्द न रह मधुर वाद्यध्वनि स गुजरित हो रहे हैं। मणि-मणि मे धनुषधारी राम और जगदम्बा सीता प्रसन्नवदन अभय मुद्रा म खडे हैं। बाबा का मुख-मण्डल आनन्दलीन है। छोटे-छोटे अनत विद्युत कण तीव्र गति स घुलते मिलते एकाकार धारण करते इतने बढ जाते है कि अन्तर्दृष्टि म केवल युगल चरण ही दिखलाई दे रहे है—और फिर दृष्टि का एक मीठा झटका लगता है रत्ना मा के चरणो म झुकी बैठा है— पर मैं कहा हू?'

नई ब्याहुली-सी अलकृत रत्ना तनिक चेहरा घुमाकर इन्हे देखती है फिर नटखट गुमानो मुद्रा म पूछती है— मुझे साथ लाए थ?"

प्रश्न मन को सकुचाता है फिर किंचित उत्तेजित होकर स्वर फूटता है। 'तुम कब मेरे साथ नही रही?

'तुम मुझे भला क्यो रखोगे नारी निन्दक!" रत्ना ने मीठी आखें तरेरी।

"कौन कहता है?

'सारा जग!

पर क्या यह सत्य है?"

'शूद्र, गवार, ढोल, पशु नारी "

'मात्र यही क्या और भी अनेक वाक्य है, परन्तु वे क्या प्रसग म आए हुए पात्रो के विचार है?

और तुम्हारे?"

'जिनके आचरणो म मेरी आसक्ति है उन्ही के श्रीमुख स वे विचार भी प्रकट हुए हैं। तुम्हारे विरह और प्रेम के उद्गार इतने शुद्ध थे कि व राम के उद्गार बनकर जानकी माता के प्रति अर्पित हो गए—

देखहु तात बसत सुहावा,
प्रिया हीन मोहि भय उपजावा।

'देखहु शब्द की ध्वनि मात्र स नया बिम्ब जाग्रत् हो उठता है—वन म

तापस राम तुलसी के स्वर में लक्ष्मण से कह रहे हैं—

लछिमन देखत काम अनीका।
रहहिं धीर तिन्ह कै जग लीका।
एहिके एक परम बल नारी।
तेहि तें उबर सुभट सोइ भारी।

'उबर कर अपना पल्ला छुड़ा तो लिया मुझसे। फिर मैं कहाँ ?"
तुम्हारी वासना से उबरा किन्तु तुम्हारे प्रेम में डूब भी गया और ऐसा डूबा कि
पता ही न चला।' (हँसती है)
प्रेम हो और पता न चले ? अशोक वाटिका में राम विरहिणी सीता के पास कपीश्वर श्रीराम का संदेश लेकर पहुँचते हैं—मन के संकेत मात्र से कल्पना का दृश्य उभर आता है। हनुमान के हृदय में खड़े राम अशोक वन में बैठी सीता को देख रहे हैं और कपि कह रहे हैं—

कहेउ राम वियोग तव सीता। मो कहुँ सकल भये बिपरीता॥
नवतरुकिसलय मनहुँ कृसानू। काल निसा सम निसि ससि भानू॥
कुवलय बिपिन कुंतबन सरिसा। वारिद तपत तेल जनु बरिसा॥
जे हित रहे करत तेइ पीरा। उरग स्वास सम त्रिबिध समीरा॥
कहेहू ते कछु दुख घटि होई। काहि कहहुँ यह जान न कोई॥
तत्त्व प्रेम कर मम अरु तोरा। जानत प्रिया एक मन मोरा॥

अशोक वाटिका ध्यान-पटल से ओझल हो गई है। एक ओर काशी के भदैनी क्षेत्र की एक कोठरी में मानस लिखते हुए स्वयं और दूसरी ओर इस घर के ऊपर वाले कमरे में उदास रत्ना जो माना शब्द प्रवाह में बहकर आती है और लिखते हुए तुलसीदास के हृदय में विराज जाती है। फिर बिन्दुवत श्री सीताराम की इष्ट मूर्ति ध्यान-पट पर आती और क्रमशः इतनी विराट हो जाती है कि अब केवल युगल चरण ही दृष्टि के सामने हैं उसमें प्रणत रत्ना है और वे हैं। बिम्ब में ठहराव आ गया है। बिन्दु फिर बिन्दु हो जाता है। बाबा की बाहरी काया आनन्द विभोर मुद्रा में मूर्ति-सी निश्चल है।
बाहर बादलों की गड़गड़ाहट है, तेज तूफान और वर्षा की सांय-सांय है। बिजली का भयानक धमाका होता है। कमरा हिल उठता है ध्यान भंग हो जाता है। 'भया भया, प्रभु जी गुरू जी' शब्दों की घबराहट और दालानवाले द्वार के किवाड़ों की भड़ भड़ सुनकर वे उठे और द्वार खोले। कमरे के भीतर तीन आकारों से पहले हवा के झोंकों ने प्रवेश किया और दिया बुझ गया।
घर गिर रहा है भया भागौ भागौ। ऊपर वाले कमरे प गाज गिरी सब भरभराय पड़ा। कहकर श्यामा की बुआ छाती पीटती हुई 'राम राम' बड़बड़ाने लगी।
बाबा कमरे से बाहर निकलकर दालान में आ गए। तीखी बौछारों से वह

जगह भीग रही थी। दीवार स चिपक्कर खडे हान पर भी पानी से बचाव नही हो सकता था। आगन म घना अधेरा होने के कारण ठीक तरह से यह अनुमान ही नही लग पाता था कि कितना भाग टूटा।

बाबा बोल—"यहा कब तक खडे रहगे भीतर चलो।'

अरे भया, जा यह भी भरभरा के गिर पडा तो क्या होयगा ?" श्यामा की बुआ घबराकर बोली।

'तो हम सब ढोल बजाते भये एक साथ बकुण्ठ पहुचेंगे और कहेंगे कि राम जी, इस डरपोक डोकरिया को लै आए।"

रामू और बेनीमाधव हस पडे। बिजली फिर चमकी, जल्दी-जल्दी दो बार उजाला हुआ, सारा आगन इटो से भरा पडा था। बाबा का ध्यान बीती स्मृतियो के स्पश से बच न सका। जब गृह प्रवेश हुआ था कितनी धूमधाम थी! पण्डितो की पूजा ज्यौनार फिर गाव की स्त्रियो न मगल-गीत गात हुए नववधू का प्रवेश कराया था—गाय थी दो दास थे रत्ना सारे घर म काम-काज करती कराती व्यस्त डोला करती थी पति-पत्नी हिंडोले मे सोते नन्हे तारापति का मुग्ध दृष्टि से देखकर फिर एक-दूसरे को देख रहे हैं फिर कुछ ध्यान न आया, कलेजे म सास भर आई और ठण्डी हाकर बाहर निकल गई, भीतर जाते हुए बोले— 'वाह रे भाग्य। कभी घर न बसन दिया मेरा।"

अर प्रभु जी, आपका घर तो अब जन-जन के हृदय मे बस गया है।"

सुखी रहो बच्चे, तुमने मेरी भूल सुधारी। राम जी की उदारता को क्षण भर के लिए भी बिसारना नमकहरामी है। इतना साधते-साधते भी मन मोह की कीच म फिसल ही जाता है। राम राम।

इतने ही म गणपति और उनके कुछ बाद राजा क लडके-पोते अपने साथ म कुछ और लोगो को लिए हुए आ पहुचे। गाज-गाव मे ही गिरी है, कहा गिरी, इसका सही अनुमान न होने पर भी राजा न अपने बेटो को बाबा की कुशल मगल पूछने के लिए भेजा। कुछ पास-पडोसी भी टाट के बोरे ओढे आ पहुचे, फिर पडोस से दो मशालें आइ। कमरे-दालान की स्थिति दखी गई। यह भाग भी अधिक सुरक्षित न था।

बाबा बोले—'जो भाग गिरना था वह गिर चुका। तुम लोग भी चिन्ता-मुक्त होकर अपने अपने घर जाओ। तुलसी को एक रात शरण दने के लिए यह स्थान अभी सक्षम है।'

बाकी सब तो बाबा की आज्ञा से लौट गए पर गणपति ने वही रात बिताने का हठ किया। ऐसे हठ स भौजी की अमल चेली का हठ भी भला क्योकर न प्रेरित होता। बहुत कहने पर भी वह न गई, रतजगा करने का निश्चय हुआ और कीर्तन होने लगा।

४

दो दिनों तक बाबा भक्तों की भीड़ से इतने घिरे रहे कि उन्हें दिन में तनिक भी विश्राम न मिला। सवेरे संकटमोचन पर कथा सुनाते और दिन भर अपने घर पर रोग-शोकधारी नर-नारियों को धीरज और विश्वास देते हुए, किसीको काशी विश्वनाथ की भभूत और किसीको मंत्र देकर अपनी कला प्रेम से हनुमान जी के चरणों में फेंकते हुए उन्होंने दो दिनों में हजारों की भीड़ निबटाई। दूसरे दिन सायंकाल घोषित भी हो गया कि बाबा कल यहां से चले जायेंगे। कहां जायेंगे यह पूछने पर भी किसीको न बतलाया गया।

नब्बे वर्ष के तपस्वी के चेहरे पर रोग-जर्जरता की हल्की छाप तो थी पर थकावट का नाम न था। इसे देखकर गांववाले तो चकित हुए ही बेनीमाधव जी भी चकित हो गए। सूकर खेत में भी बाबा के दर्शनार्थ बड़ी भीड़ आया करती थी, पर वहां हवा फैल गई थी कि बाबा चार महीने रहेंगे इसलिए दर्शनार्थियों की दैनिक संख्या में संतुलन आ गया था। उन्हें विश्राम करने का अवसर मिल जाता था। बेनीमाधव जी ने बाबा के प्रति काशीवालों की भक्ति भावना के भी अनेक प्रदर्शन देखे हैं। काशी में भीड़ तो नित्य ही रहती पर बाबा चूंकि वहीं के निवासी हैं, गलियों महल्लों में प्रायः डोलते भी आते हैं इसलिए वह दाल में नमक की तरह उनके जीवनक्रम में रमी हुई है। परन्तु राजापुर का यह विशाल जन समूह तो बेनीमाधव जी के लिए अपूर्व था। हिन्दू, मुसलमान, अमीर, गरीब में कोई भेद नहीं, सबकी जात और वर्ग एक है, वे आर्तजन हैं। उनके तन-मन नाना बाधाओं से पीड़ित होकर घबरा उठे हैं, उन्हें सहारा और प्रेम चाहिए। तुलसीराम का खास गुलाम, अथक भाव से रामजनों की सेवा करता रहा। संयोग यह भी रहा कि बदली रही पर पानी न बरसा।

तीसरे दिन तड़के मुंह अंधेरे गणपति जी और रामू पण्डित अपनी नियम पूजा से खाली हो चुके थे किन्तु बाबा का ध्यान पूरा होने में अभी देर थी। बेनीमाधव जी भी लम्बी माला जपते हैं पर उनका जप बाबा से पहले पूरा हो जाता है। उस समय तक स्नानार्थी आने लगते हैं। आज भी आने लगे थे। ध्यानमग्न बाबा की तनी हुई देह और शांत मुखमुद्रा को कुछ देर तक बड़े भाव से देखते रहने के बाद गणपति बोले—'यह आयु और उसपर भी जवानों की-सी फुर्ती! नियम से व्यायाम करना और बिना थकावट इतनी भीड़ से निपटना इन्हीं का काम है। हम तो इनके बच्चे समान हैं पर इस उनहत्तर-सत्तर की आयु में ही थक गए।'

रामू सोत्साह बोला—'अरे काशी के अकाल और गिल्टी की महामारी के दिनों में इन्हें देखते आप। दसों दिशा डोल डोल कर काशी का हाहाकार अपने भीतर के राम बल से रौंदते चलते थे।'

सुना उन दिनों यह आप भी गिल्टी से पीड़ित रहे थे?

वह तो वात रोग हुआ था। इन्होंने बड़ा दुख झेला पर उसमें भी जब तक

शरीर चल तब तक दूसरा का दुख भी भेलते ही रहते थे। इन्ही के उत्साह से हम सैकडा जवा। थककर भी न थक पाए। दिन रात रोगिया की सेवा करते, शव ढो-ढो कर फूकते और आठो पहर सीताराम की गुहार लगाकर अपना मनोबल बढाया करते थे। और सचमुच हमम से दो लडका को छोडकर कोई न मरा।"

तब तक वेनीमाधव जी भी आ पहुचे। बाता का रस गहरा हो चला। बेनी माधव जी की कथा जिज्ञासा अब बडी बलवर हो चुकी थी। रामू से चिरौरी करने लगे कि किसी जुगत से बाबा को अपनी जीवन कथा सुनाने के लिए प्रेरित कर दो। गणपति जी को सहसा एक सूझ भाई बोले -- अच्छा हम आपकी बात बनाय लगे। हम जाते हे और रजिया काका, बकरीदी काका को लकर पहुचते हैं। रजिया काका को साथ लेंगे तो बात का प्रसग अपने आप सध जायगा।

बनीमाधव उपकृत नयना स उन्ह देखने लग। गणपति जी तीव्र गति स दो डग चले फिर पलटकर रामू से कहा--' रामू जी, जात समय गुरू जी के फलाहार के लिए हमारे घर पर एक आवाज लगाल जाइएगा। तयार तो सब रहेगा ही।

आधी-पौन घडी बाद ही बाबा का आधा आगन गुलजार हा गया, आधा गिर मलब स भरा था। चटाइया पर बकरीदी, राजा भगत, सत बनीमाधव, गणपति उपाध्याय तथा गाव के दो-एक सम्भ्रात लाग बठे थ। तुलसी के गमले क पास बाबा का आसन लगा था पास ही बायी ओर क दालान म रतना मया का ठाकुरद्वारा था। चाकी पर मैया द्वारा पूजित बाबा की चरणपादुकाए रखी हुई दिखलाई द रही थी। उसी दालान क दूसरे छोर पर कोन म चूल्हा बना था और रसोई क कुछ बतन रख थ। चूल्ह से कुछ हटकर कोठरी का बन्द द्वार भी दिखलाई दे रहा था। बारिश और धूप स बचाव के लिए जिस ओर चूल्हा बना था उसके सामन वाले दालान का द्वार फूस की छपरी स ढका हुआ था। दाहिनी ओर का सारा भाग ध्वस्त पडा था। बाबा का मुख और दूसरो की पीठ बैठकवाले दालान की तरफ थी।

बात राजा भगत न आरभ की, बाल--- हमारा ता यह मन होता है कि दुइ दिन हमारी अमराई म बिताओ। हम तुम्हारी मालिस करेंगे। सग-सग कसरत करेंगे, डालेंगे आम खाएग, दूध पिएग और मगन हुइके भजन भाव करेंगे। यह लडके चला चाटी कोई वहा न रहेगा।'

वाह काका तुमने तो अपने ही स्वारथ की बात सोची।" गणपति जी न मीठी शिकायत की।

राजा बोल--- हमारा यह स्वारथ भी बडा है पण्डित। जब तक भौजी की जिम्मदारी रही तब तक तो हमार मन मे यही चिन्ता नागिन जस्र रेंगती रही पर अब दसो दिसा से मन मुकुत है। दुइ दिन इनके चरन और सेइ लें तो हमारी सब साध पुर जाय।

बाबा प्रसन्न मुद्रा म बाल---"ठीक है ता आज चला।'

आज तो भया, हमारे घर म तुम जूठन गिराओगे, बाल-बच्चा का यह

सुख हम न छोंनेंगे ।"

आज यहा रहगे तो कल तुमको हमारे सग चित्रकूट चलना पडेगा । वहें सतसग होगा ।"

राजा भगत प्रसन्न होकर बोल— यह तो और अच्छी बात है । अरे अब हम घर से मुकुत हैं । लडके-बाले घर गिरस्ती सभालते ह । एक भौजी का बधन रहा तो वह रामपुर चली गइ अब हम तुम्हारे सग-सग ही डोलेंगे भैया । पर इन बातो से पहले अब हम गाव के मतलब की एक बात पूछ लें कि अब यह घर तुम किसे सौंप रहे हो ?"

अपनी काया की ओर इगित करके मुस्कराते हुए बाबा बोले— हमार घर तो यह है वह भी जब लग राम न छडावें ।

बकरीदी बोले— यह घर तो भया अब गाव भरे की अमानत है । हमारी तो फकत यह राय है कि ई म मन्दिल अस्थापित कर दिया जाय । और तुलसी दास महाराज के बठका मे लडके पढ ।

सभी ने एक स्वर मे समथन किया । राजा बोले— तो फिर हम एक बात और कहेगे । गनपती महराज को पुजारी बनाय के ई जगह सौंप दव । इनके घर भर ने लगन ते भौजी की सेवा की है और भैया के भी पुराने चेले हैं ।

हा रत्ना के लिए भेजी गई यह रामचरित मानस की प्रति और उनके व्यवहार की वस्तुए इसी के पास रहने से मुझे भी सतोष होगा । तारापति न रहा गणपति तो है ।'

बेनीमाधव जी के चेहरे पर भी अपने शिष्यत्व का फल प्राप्त करने की उतावली झलक उठी । बडी चतुराई से बात उठाई, पूछा— 'यह घर आपका पतृक निवास है ?

'नही । वह पुराने विक्रमपुर गाव के खडहर तो आधे से अधिक जमना जी मे तभी समा गए थे जब हम पच ना ह-ना हे रहे । महराज की जलमभूम भी जमना जी म समा गई । पुरखे बताते रहे कि तुलसी भया को लके मुनिया कहारिन जब गाव ते चली गई तौ एक साधू आया और कहिसि कि आज ई गाव का सवनास होयगा जिसे बचना होय वह गाव छाडि के चला जाय । उसके दुइ घडी बाद मुगला की दौड आई । बडे महराजा, भैया के पिता मारे गए । सब गाव स्वाहा हुइगा । हम लोगा के पुरख हम सबको लैके तारीगाव भागे रहें । बडी परल मची रही । राम-राम ।' राजा भगत ने बतलाया ।

बेनीमाधव तुम्हारी इच्छा पूरी होने का अवसर आ गया है । मेरे राम जी का पावन जीवनचरित महादेव भोलानाथ ही उदघाटित कर सकते थे किन्तु मुझ अकिंचन की जमकथा यह बकरीदी भया और राजा भगत ही सुना सकते हैं ।

बाबा की बात पर राजा भगत भी बोल उठे— बकरीदी भइया ने एक बार हम-तुम्हे सुनाया भी रहा । तुमको याद है न, भइया ?'

'इसी जमीन का सौदा करने राजा के साथ इनके यहा गया था । तब इन्होंने ऐसे रोचक ढग से पिछले समय की बातें सुनाई थी कि मेरी आखो के

आगे उनके सजीव चित्र उभर आए थे।"

गणपति जी भी उत्साह भरे स्वर मे बोले— बकरीदी काका यह लोग बडी दूर से सुनने की खातिर आए हैं।'

बकरीदी काका ने एक बार अपनी झुकी कमर को तानकर सीधी करने का प्रयत्न किया कहने का जोश छाती म फूला, धुधली आखें दूर अतीत मे सधी पर वसे ही खासी आ गई। बूढी काया के भीतर जागती जवानी का सघर्ष उनके चेहरे पर तमककर उभरा और खासी को रुकना पडा। कुछ क्षण अपने गले की खराश पर विजय पाने मे लगे जिससे आवाज का जोश फिर कुछ थका थका सा हो गया। धीरे धीरे बात उठाई कहा—"अब हमारे भीतर वैसा जवानी का जोस तो रहा नही बच्चा बाकी यह बात है कि हमारे अब्बा बताते रहे कि गोसाइ महराज का जनम भया रहा तौने दिन, वही बिरिया अब्बा बडे महराज के पास हमारे गिरौ नछत्तर पूछने के बदे गए रहे ।"

बकरीदी भया राजकुअरी और बेडनिया की बात बताओ पहले। तभी तो इन पचो को गाव की विपदा का अजाद लगेगा।"

राजा भगत की बात पर बकरीदी मिया ने समथनसूचक सिर हिलाया और नये जोश मे कहना शुरू किया—' हा तो ये भया कि हुमायू बास्साय रहे। तौन उनके बाप पठानो से दिल्ली फतह कर लिहिन और फिर चारो अलग देस म कयामत आय गई। मुगल ऐमी जोर से आए कि कुछ न पूछौ। कही रजपूतो से ठनी कही पठानो से कटाजुज्झ हुआ। बस लूटपाट मारकाट, आगजनी, यहै हाल रहा। हमारे राजा साहेब जैसपुर के पठाना के साथ रहे। तौन मुगल राजा साहेब की गढी घेरि लिहिन—आसपास के गावन मा गुहार पड गई। हमरे गाव की सरहद पर बाह्मन, छत्तरी, अहिर, जुलाहा सातो जात के सूरमा हरदम डटे रहे।" × × ×

पेडो के झुरमुट के पीछे छिपकर खडे हुए लगभग सौ-सवा सौ बहादुर उत्तर दिशा की ओर देख रहे हैं। उस दिशा मे लगभग कोस भर की दूरी पर एक विशाल जगल जल रहा है। लडवैया की गरज हुकार कानो के पर्दे फाड रही है और उससे भी अधिक हजारो मनुष्या का आतनाद भरा कोलाहल इन बहादुरा के चेहरा पर निराशा, क्षोभ और जोश की उडन-परछाइया डाल रहा है। कोई किसी से बोल नही रहा। मिलने पर आखें प्रश्ना के उत्तर म प्रति प्रश्न ही झलकाती हैं। आवाजें सुन-सुनकर इन लडवयो मे किसी किसी का ध्यान बरबस अपने हथियार लाठियों भाला और तीर-कमानो पर जाता है कलेजो से हताश निसासें ढल पडती हैं।

गाव म माई के थान पर कुछ बूढिया आपस मे खुसुर-फुसुर बातें कर रही हैं अरे ई दउ के बज्जर असजौन-जौन गरज रहे हैं उनसे कौन जीत सकत है भला।"

हम-तुम्हें तो आतमा की बहुरिया ने अटकाय लिया। नही तो अपनी बिटियन-बहुरियन के साथ हम भी जमना पार हुइ जातीं अब तलक।

"अब माई जलम-मरन तो कोऊ के बस की बात है नाहीं। हुलसी बिचारी

तो आपै दुखियाय रही है। कल सभा मे बसत इत्ते इत्ते दरद उठे पर फिर बन्द हुइ गए। रात से तौ बिचारी के जर भी चढ़ि आया है। हमते रोय के कहैं कि भौजी जाने कौन करम राकस हमरे पट मे आयके बैठा है।"

"अरे, महराजिन, यू लड़ाई झगड़ा जीना मरना तो रोज का खिलवाड है। हमरी जिठानी के भी बाल-बच्चा होय वाला है आजकल म। हम भी तो अटके बठे हैं का करैं। हुसैनी जोलहा आय रहा है। इसकी घरतिन ने भी तौ परौं कि नरौं बेटा जना है।' सुक्खू अहिर की घरतिन बोली।

हुसनी जुलाहा अपनी बगलो म बैसाखिया लगाए इधर ही आ रहा है। चेहरे से खाता-पीता खुश और आयु म ३५ ४० के बीच का लगता है। भाई के चबूतरे पर बठी महराजिना म से एक बूढ़ी ने पूछा — हुसनी लड़ाई का समाचार कुछ पायो ?'

सलाम बुआ। धौकलसिह गद्दारी कर गए। गढ़ी टूट गई। राजा साहेब मारे गए। अब लूट मची है।"

तब तो जानो कि हमारा गाव बचि गया। मुगल अब इधर न आव साइत।'

हा कहा तो यही जाय रहा है बाकी बुआ लुटेरे-जल्लादन का कौन ठिकाना।"

माई थान से लगे हुए घर के द्वार से एक कुरूप प्रौढा दासी निकली और हुसनी द्वारा बुआ कही जाने वाली बूढ़ी से हड़बड़ाहट भरे स्वर म कहा— पडाइन भौजी चलौ चलौ दाई बुलावत है बखत आय गया।"

पडाइन जल्दी से उठी। हुसनी बोले—"हम भी महराज के पास आए हैं। चलौ।"

छोटी-सी कच्ची बठक म पचीस-तीस बरस की आयु वाले दुबले-पतले चिन्ताजर्जर ज्योतिषी आत्माराम चटाई पर छोटी सी चौकी रखे कभी पोथी के पन्ने और कभी पचाग पर दृष्टि डालकर मिट्टी की बत्ती से पाटी पर कुछ गणित भी फलाते जाते हैं। तभी हुसनी की बसाखिया दरवाज़े पर खटकती है।

सलाम महराज!'

आशीर्वाद। बठो-बठो।'

हमारे लडके के नछत्तर बिचारे महराज ?'

हू-हू अभी बताते ह।" हिसाब पूरा किया और आत्माराम ने हताश होके पाटी और बत्ती चटाई पर एक ओर सरकाकर निसास ढील दी।

क्या कोइ अमगुन विचार म आया महराज ?'

तुम्हारे लडके की बात नही। राजा साहेब न बचेंगे "

वह तो जूझि गए महराज!"

क्या खबर आ गइ है ?"

हा इत्ती बिरिया तो गढ़ी म लूटपाट चल रही है कत्लेआम मचा है। अल्ला मिया की मरजी। अच्छा अब हमको आप बताय दें तो हम भी भागें। तारीगाव म साला के घर पर सब बाल-बच्चन को छोड आए हैं वहीं

लौट जाय।"

तेरा बिटौना तो सौ बरस का आयुबल लैके आया है भागवान। जमीन-जजाद पुत्र-कलत्र जावत सुख भोगैगा। हमने आज भोरहरे ही विचार किया था।"

दासी ने दरवाजे पर आकर उत्साह से थाली बजाई। सुनकर हुसनी और आत्माराम पण्डित के चेहरे चमचमा उठे। हुसैनी ने कहा—' मुबारक होय महराज, हम अच्छी साइत से आए।"

पण्डित आत्माराम तब तक अपनी जलघडी वाली कटोरी के भीतर बनी रेखाओ को देखने म दत्त चित्त हो गए थे। जलघडी का बारीकी से परीक्षण करके पचाग पर नजर डाली और उदास स्वर म कहा— हमारा बेटा बुरी साइत मे आया।"

हैं महराज ?"

'अभक्तमूल नक्षत्र! महतारी-बाप के लिए तो काल बनि क आवा है काल।'

द्वार पर खडी दासी का चेहरा भय से जड हो गया। वह भीतर भागी। कोने की कोठरी के आगे पडाइन दीवार से टिकी बैठी हुई जोर जोर स पखिया झल रही थी। उन्हे देखकर दासी वही आकर धम्म से या बठ गई मानो उसका दम निकल गया हो।

क्या भया मुनिया ?"

'का कही। महराज कहत हैं कि महतारी-बाप के बदे काल आया है।"

उसी समय सुखरू अहिर की अम्मा कपाटे के साथ घर मे घुसी और दरवाजे म ही चिल्लाकर कहा— राजकुवरी को पकड लइ गए मौजी।"

हैं ? और रानी जू ?"

कुयें मे फादि परी। महल की औरतो का बडा बुरा हाल हुइ रहा है।"

जगल मे लगी आग की पृष्ठभूमि म बधी हुई राजमणियो के साथ छकडा और खच्चरों पर लदा हुआ लूट का माल लेकर मुगल सिपाही जीत और लूट की मस्ती म गाते बीच-बीच म एकाध बन्दी अथवा बदिनी पर चाबुकें बरसाते अपन पडाव के सामनेवाले बडे तम्बू की तरफ बढ रहे हैं। तम्बू मे सरदार मसनद पर बठ वेडिना का नाच देख रहा है।

सिपाही तम्बू म लूट की मूल्यवान वस्तुए लाकर सामने रखते हैं। फिर औरतें लाइ जाती हैं और अत म एक अनि सुदरी नवयौवना। उसे देखते ही नाचना भूलकर वेडिन क मुह से वेसाख्ता निकल गया— कुवरीजू!'

सरदार ने राजकुमारी के सौन्दय को उपेक्षा भरी दृष्टि से देखा, पूछा— तू कौन है ?'

'राजकुवरी, सरकार।' बेडिन ने राजकुमारी का परिचय दिया।

'खामोश इस बोलने द। नाम बतला!'

राजकुमारी तमतमाया मुख झुकाए मौन खडी रही। सरदार ने नाचन वाली से कहा— झोटा खींचकर इसका सिर उठा।'

बेडिन झिझकी फिर कुंवरी की ओर बढ़ी ही थी कि उसने हाथ बढ़ाकर बेडिन के गाल पर जोर से एक थप्पड़ मारा। बेडिन चकराकर गिर गई।

सरदार ने दूसरी बेडिन से कहा— "देखती क्या है शाहजादी साहबा की लातों से खातिर कर ये बातों से नहीं मानेंगी।"

दोनों बेडिनें राजकुमारी पर टूट पड़ीं। सरदार सोने के गगर से जवाहरात निकालकर देखने लगा।

राजकुमारी के अपमान की खबरें गांव में पहुंचीं। बरगद तले इस समय अधिक लठवया की भीड़ थी। आस-पास के दो-तीन गांवों के लोग जुट आए थे।

'सुना है मुगल लोग धौकलसिंह को राजगद्दी देंगे।'

"ये धौकल और अब्बू खां पठान तो बड़े दगाबाज निकले। बिचारे राजा साहेब को लड़वाय दिया और आप आयके बरियों म मिल गए।'

कोऊ इन गद्दारन की गरदनें काट लाव तो हम वहिके चरन धोय धाय के पियब। सारे हमार कुंवरीजू का बेडनिन ते पिटवाइन!"

पिटवाया ही नहीं उन्हें बेडनियों के हाथों सौंप भी दिया है। इस अपमान का बदला जरूर लिया जाएगा। हम लोगों म तो कौल-करार हुइ चुका है। आज रात मुगलों की छावनी पे हमारा धावा होगा। जिसम अपनी मर्दानगी का मान होय वो हमारे साथ आवे। औ हम जो आज धौंकलवा सारे का मूड़ अपने हाथ से न काटा तो असल छत्री के बेटा नहीं।'

औ राजकुंवरी कहां हैं?"

धौकल सिंह के कब्जे मे हैं। सुना है बेडनियों को दुइ सौ मोहर द के उनको खरीद '

क्या? ये धौकलवा अब इतना गिर गवा है? हम तुमरे साथ हैं चदनसिंह। आज बिकरमपुर के सूर-बीरों की तलवार का पानी देखना।

बहुत दूर नहीं गांव की सीमा के भीतर ही कहीं झांझ-ढोलक मजीरा और बधावे के गीतों की आवाज आने लगी।

हैं मरघट मे दीवाली! ये बधावे कौन बजवाय रहा है?"

अरे अब कलजुग है चन्दनसिंह। परमेसरी पडित अब्बू खां पठान के जोतसी भये हैं। आतमाराम महराज के घर बेटा हुआ है न, इसीलिए पडिताइन ने भाई के घरैं बधावा भेजा है।'

अरे तो आज का मनहूस दिन ही मिला रहा इन्हें?"

'परमेसुरीदीन के लिए मनहूस थोड़े है। अब्बू खा पठानों से गद्दारी करके मुगलों म मिल गए और परमेसुरी अपने साले आतमा महराज को धोखा देके अब्बू खा के जोतसी बन गए लबी भेंट पाय गए।

आत्माराम जी के बठके मे पडाइन भौजी आसू पोछती सिर झुकाए खडी थी। उकडू बैठे हुए आत्माराम जी का मुखमण्डल क्रोध और क्षोभ से विफर रहा है। उनके बहनोई ने उनसे ही अब्बू खा जमीदार के भविष्य की खर-खबर पूछी और उन्हें कोरा सवा टका देकर बाकी दक्षिणा आप हड़प गए। अब अपनी सम्पन्नता और उनकी विपन्नता का ढोल पीटने के लिए इतनी धूम धाम से

बधावा भेज रहे हैं। आत्माराम की आँखें क्रोध के मारे छलक पडी, कहा—'सत्यानाश जाय इस दुष्ट का। हमारे दुर्भाग्य पर हसने के लिए यही अवसर मिला था उसे ? वह सन्निपात मे पडी है गाव शोक मग्न है और यह गद्दारा का हिमायती बाजे बजवा रहा है !"

'अरे परमेसुरी को तो सात गाव के लोग जानते ह। भूलो उस नासपीटे को भीतर आओ। हुलसिया हमार अब जाय रही है। ऐसा हत्यारा जनमा है कि बिचारी को न बैद मिला न दवा-दारू हुइ सकी। हाय राम जी, यह क्या गजब कर डाला है ईसुरनाथ। पडाइन फिर रो पडी और पल्ले से आँखें ढक ली।

'जाय के क्या करूगा भौजी ? (आकाश की ओर दृष्टि-सकेत करके) अब तो वही भेंट होगी।' कहते हुए आँखें फिर छलछला उठी। बाजे और पास सुनाई पडने लगे थे।

"जाओ तुम्हें हमारी सौंह। चमेली जिजिया, तुम इनको भीतर लिवा ले जाओ। हम इनको भगाय के आती हैं।' पडाइन भौजी क्रोधावेश मे बठक से बाहर निकल आइ। घर के उढके हुए द्वार खोलकर माई के चबूतरे पर चढकर खेत के पार बरगद के नीचे जुटे हुए पुरुष समाज को गुहारा—'ए भैरोसिंह सुकरू, बचवा के बप्पा ! अरे दुइ-तीन जने हिया आवौ हाली-हाली !—ए बचवा के बप्पा ऽऽ!'

उधर से भी गुहार का जवाब सुनकर पडाइन चबूतरे से उतरी और सीढियो पर मत्था टेककर कहा—"हे मया अब अपना कोप बाधि लेव महतारी। गाव की ये विपदा हरो जगदवा। अब तो करेजा काप उठा है हमार। का होइ महरानी ?"

बाजे बहुत पास आ चुके थे और उसकी प्रतिक्रियावश पडाइन का भय-कम्पित अश्रु विगलित स्वर क्रोधावेश म सहसा प्रचण्ड हो गया। वे कोसन कासती हुई बाजवाला की तरफ लपकी—"अरे सत्यानास जाय गाज गिरे तुमरे ऊपर और तुमको भेजनेवाले के ऊपर। चुपाओ सबके सब हुआ त्राह त्राह मची है और तुम "

घर के अन्दर से दो-तीन नारी-कण्ठो के कल्हाटे सुनाई पडने लगे। पडाइन डाटना भूल गइ। 'हाय मोर हुलसिया। अरे मोर मूबोली ननदिया ! अरे हमको छोडके तुम कहा गईं राऽऽम !" पडाइन वहीं की वही धम्म से बैठ गइ और दोना हाथ अपनी माथा पर रखकर विलाप करना आरम्भ कर दिया। मगने बाजा बजाना बन्द करके किंकर्तव्यविमूढ से खडे-खडे कभी पडाइन और कभी आपस मे एक दूसरे का मुह बाय ताकने लगे। इसी समय पडाइन के पति यानी बचवा के बप्पा और भैरोसिंह भी दौडते हुए आ पहुचे। पण्डित आत्माराम भी उसी समय अपने घर के द्वार पर दिखलाई दिए। दोनो हाथो से किवाडा का सहारा लेकर वे ऐसे खडे हुए मानो कोई बजान मूर्ति खडी हो। आँखें शून्य मे खोते-खोते सूज गई थी। पुरुषा का साहस न हुआ कि मुह स कुछ कह नारी क्रन्दन बाहर भीतर एक-सी ऊची गति पर चढ रहा था।

अधेड आयु के हट्टे-कट्टे पाडे यानी बचवा के बाप, आत्माराम जी के पास

जाकर खडे हो गए। भरोसिंह उनके पीछे-पीछे चले आए। बधावा बजाने वाले चुपचाप सिर लटकाकर उल्टे पावों लौट चले। पड़ाइन धरती पर हाथ पटक-पटककर विलाप करती रहीं। पाडे की आंखें कटोरियों-सी भर उठीं, भरे कण्ठ से कहने लगे— 'चार बरसो मे भया भया पुकार के मोह लिया और अब आप चली गई निगोडी! अब कौन रामी बाधेगा मुझे? हुलसिया तू कहा गई री! हाय ये क्या हो गया राम!" दीवार से सिर टिकाकर पाडे फूट-फूटकर रोने लगे। आत्माराम वैसे ही खडे रहे।

दो-तीन और लोग भी आए

'हरे राम। आज तो गाव की विपत का अंत नहीं है।

पाडे जी यह रोने धोने का समय नहीं है। बहिनें कुवरीजू को लेके मसान की राह से ही जमनापार जाएगी। अभी पता लगा है कि चार नावें रोकी गई हैं। हम सबको लेके उधर ही जाते हैं। चार-पांच जन यहां हैं। जल्दी-जल्दी अर्थी लेके पहुचो। और मैय्यारु सब जमना जी महाराज के वही कोनेवाले टुटहे सिवाले मे जायके बैठें जरूरत पडे तो सिवाला के नीचे जोगी बाबा की गुफा है चमेलिया जानती है वहा छिपके बैठ जाना। अच्छा लो हम आतमा क्या कहें भया? ऐसा अभागा जन्मा तुम्हारे घर कि घर ही उजड गया।'

पड़ाइन फफककर रोती बिलखती भीतर चली। आत्माराम एक ओर सरक गए और उनसे कहा—'भौजी मुनिया को भेज देना।"

बाहर खडा पुरुषवर्ग टिकठी बनाने के लिए बास काटने चला गया। आत्माराम दरवाजे से बाहर आकर खडे हो गए। गाव एकदम सूना घर सूने और आत्माराम के लिए तो बाहर भीतर सब सूना ही सूना था सब मनहूस था।

मुनिया दासी आसू पोछती हुई बाहर आई। आत्माराम ने उसे एक बार देखा फिर मुह घुमाकर दूसरी ओर देखते हुए कहा— उस अभागे को गाव से बाहर फेंक आ मुनियां।"

कहा फेंकव महराज?'

जहा जी चाहे। उसकी महतारी का कहा कर!'

जमना पार हमारी सास रहती हैं। आप कहो तो उनकी

और उचित समझ वही कर। हम तुझे चांदी के पाच सिक्के देंगे। अपनी सास को दे देना। जा उसकी महतारी की मिट्टी उठने से पहले ही उस अभागे को दूर ले जा जिससे उसकी पाप छाया अब किसी को न छू पावे।'

× × × नब्बे वर्षीय महामुनि महाकवि गोस्वामी तुलसीदास के शान्त-सौम्य मुखमण्डल पर बकरीदी द्वारा कहे गए अपने पिता के इन शब्दों को सुनकर पीडा की लहराती छाया पडने लगी। वे आखें मूदे ध्यानावस्थित मुद्रा मे बैठे थे। रामू उन्हें पखा झल रहा था। बकरीदी मियां सुना रहे थे—'बडे महराज तो मसान ही से क्या जाने कहा चले गए। बुजुरगन का कहना रहा कि सन्यासी हुइ गए औ मुनिया जब इन महराज को अपनी सास के पास छोडके गाव लौटी तब तलक हिया तो कयामत आय चुकी रही। मुगल और अब्दू खा के सिपाहियो ने मिलके

विकरमपुर गाव को मिट्टी मे मिला दिया। राजकुवरी ने जमना मे डूबके अपनी इज्जत बचाय ली और जो महराज तब अभागे बताए गए रहें उनके दरसन करके अब सारी खिलकत अपना भाग सराहती है।"

बाबा सुनकर मुस्काए मस्ती मे दाहिना हाथ बढाकर सुनाने लगे—

जायो कुल मगन बधावनो बजायो सुनि
भयो परितापु पापु जननी-जनक को।
बारेतें ललात बिललात द्वार-द्वार दीन
जानत हो चारि फल चारि ही चनक को।
तुलसी सो साहेब समर्थ को सुसेवकु है
सुनत सिहात सोचु बिधिहू गनक को।
नामु राम रावरो सयानो किधौं बावरो
जो करत गिरीतें गरु तृन तें तनक को।

सुनकर सभी गद्गद हो उठे। राजा भगत ने कहा—"खरे सोने-सी बात कही भैया, जिनके राम रखवारे हों उनका ग्रह-नछत्र भी कुछ नहीं बिगाड सकते हैं।"

५

चित्रकूट क्षेत्र मे प्रवेश करते ही बाबा के जरा-जीर्ण गात में मानो फिर से तरुणाई आ गई। उनके मानस-लोचनों में सीता सहित तापस-वेषधारी धनुर्धर राम-लक्ष्मण ललक-ललककर उभरने लगे। दूर हरे भरे पर्वतों की चोटियां जगह जगह झरते हुए मनोरम झरने धनुष की कमान-सी बहती हुई पयस्विनी नदी बाह्य दृष्टि को जिधर भी सौन्दर्य लुभाता था उधर ही उन्हें अपने आराध्य दिखलाई पडने लगते थे।

राम सौन्दर्य-पुंज हैं। बाबा ने जब-जब जितनी सुन्दरता देखी है तब-तब उनकी कल्पना का राम-सौन्दर्य अवचेतना के कुहासे से और अधिक निखरकर प्रकट हुआ है। यह भाव-विकास का क्रम पिछले ४०-४५ वर्षों में आगे बढा है। सारा चित्रकूट क्षेत्र राम में रमा हुआ आत्मविस्मृतिकारी लग रहा है। बाबा चल रहे हैं पर बाहरी गति में उनका ध्यान इस समय तनिक भी नहीं है। वह खुली आखों देख भी रहे हैं पर दृष्टि बाहर से भीतर तक प्रशस्त राजमार्ग-सी दौड रही है। हरीतिमा है लालिमा है अनन्त प्रकाशमय नीलिमा है जो स्मृति के क्षेत्र में साकार होते हुए भी विस्मृति का छोर छूकर निराकार हो जाती है। कुछ कहा नत नहीं बनता। गूगा गुड खाए पर बताए कैसे। यह सौन्दर्य नदी-सा तरल फूल-पत्ता-सा कोमल, झरनों-सा प्रवहमान और पर्वतों-सा अडिग वज्र-कठोर है। वह कुसुम और वज्र दोनों के छोर छूकर सर्वशक्तिमान-सा आभासित हो रहा है।

सैलाब-सा उमड़कर भाव अपनी उमडन मे अब सहज हो चला। पशु-पक्षियों से भरा-पुरा वन जिसमें यत्र-तत्र सिद्धों और साधकों की पर्णकुटिया बनी हैं बाबा की प्रगाढ श्रद्धा के नन्हे ने अपने वृक्षों की तरह झुमाने लगा। पर्वत की ओर देखते हुए वे हाथ बढाकर अपनी ही कविता की पंक्तिया सुनाने लगे—

चित्रकूट अचल अहेरी बठयो घात मानो
पातक के व्रात घोर सावज सहारिहै।

ऐसा लगता है कि मानो कलियुग आज तक यहा प्रवेश करने का साहस भी नही कर पाया है। यहा अब भी जगदम्बा सहित रामभद्र निवास करते हैं और लखनलाल सदा वीरासन पर बठकर पहरा दिया करते हैं।

रामू ने पूछा— क्या अयोध्या मे भी आपको ऐसा ही अनुभव होता है प्रभु ?"

बाबा क्षण-भर के लिए मौन हो गए। फिर गभीर स्वर मे कहा—' सियाराम तो हिये म समाए हैं जहा जाता हू वही वे ही वे दिखलाई पडते हैं। फिर भी अयोध्या सदा मुझे अगम कूप के समान लगी जिसम बूढकर बठ रहन को जी चाहता है। अयोध्या का अनुभव मूक पर चित्रकूट सदा मुखर है। (भाव विभोर होकर गाने लगे)—

'राम कथा मदाकिनी चित्रकूट चितचारु।
तुलसी सुभग सनेह बस सिय रघबीर बिहारु॥'

रामघाट पर पहुचते ही राजा भगत को तो बहुत-से लोग पहचान गए परन्तु बाबा को अपना कोई पूर्व परिचित न दिखाई दिया।

अरे भगत हैं आओ आओ जै सियाराम।' एक अधेड वय के घटवाले ने राजा भगत से रामजुहार करते हुए गोसाइ बाबा और उनके दोनो शिष्यो की ओर देखा चन्दन घिसते हुए उनसे भी ज सियाराम की। फिर बाबा को देखा फिर देखा दृष्टि हटती भी नही और मिलती भी नही। कौन महात्मा हैं ?

ज सियाराम जै सियाराम। रामजियावन महराज तुमरे बप्पा कहा हैं ?
राजा भगत ने अपने कधे पर पडी हुई चादर उतारकर तखत झाडना आरम्भ कर दिया।

बप्पा तो राम जी के घर गए। यह तीसरा महीना चल रहा है।

अरे !" बाबा से कहकर राजा भगत रामजियावन घटवाले से बोले - भया बिराजो।

यह तो ब्रह्मदत्त का तखत है।" बाबा ने पहचानते हुए कहा फिर घटवाले को ध्यान स देखकर बोले— रामजियावन "

अरे बाबा ! आपकी जटा-दाढी न रहै से पहिचान न पाए।' कहते हुए गद्गद भाव से झपटकर रामजियावन उनके परो पर गिर पडा। आशीर्वाद पाकर फिरे रोते हुए बोला— इत्ती बेला बप्पा होते तो गला भर आया, कुछ कह न सका। आसू पोछने लगा।

"क्या कुछ मादे हुए थे ?" राजा भगत ने पूछा।

नही, अरे भले-चगे दरसन करिकै आए, हिया बठे, सबसे बोलते-बतियाते रहे। फिर बोले कि जी होता है कासी जी जाए विस्वनाथ बाबा के दरसन करें, औ बाबा का नाम लिया कि इनके आसरम म अपना अत समय बितावें। अरे बोलते-बोलते उनका दम घुटै लाग। हम पूछा, बप्पा का भवा। तब तक उइ लुढकि पडे।"

"राम राम।"

वडे भले रहे बरमदत्त महराज। तुमरे बडे भगत रहे भैया।"

ब्रह्मदत्त मेरे परममित्र और उपकारी थे। जब यहा आया तब उन्ही के घर पर रहा।' बाबा ने कहा।

गद्गद स्वर म जियावन बोला—"आपकी कुठरिया तो महराज हमारे घर मे अब दरशन का अस्थान बन गई है। रामनौमी को भीड की भीड आती है। आपकी चौकी, पूजा का आसन, पचपात्र, सब जहा का तहा धरा है।"

'ठीक है वहीं रहूगा।

'अरे बाबा, हम सब पचो का भाग जागा जो आप पधारे।"

घटवाले के घर के बाहरी भाग म एक बडा-सा कच्चा आगन था। उसी म कुछ कोठरिया भी बनी थीं जो सम्भवत यात्रियो के ठहरने के लिए ही बनवाई होगी। बाबा की कोठरी कोने मे थी। भीतर कच्चे अहाते की ओर भी उसका एक द्वार खुलता था इसलिए हवादार थी। बाबा की चौकी, पूजा का स्थान आदि सब वसा का वसा ही था, स्वच्छ और सुव्यवस्थित। वहा प्रतिदिन प्रात काल राम जियावन की बेटी गौरी और भतीजी सियादुलारी सस्वर रामायण पाठ करती हैं। दो तीर्थवासिनी विधवा रानिया तथा चित्रकूट के सेठ परिवार की स्त्रिया, सब मिलाकर आठ-दस सम्भ्रात महिलाओ का जमाव होता है। राम-जियावन के परिवार को उससे अच्छी वार्षिक आय भी हो जाती है। लडकिया आठ-नौ साल की है, कण्ठ बडा ही मधुर है। स्व० ब्रह्मदत्त ने अपनी पोतियो को बचपन से ही रामायण रटाना आरम्भ करा दिया था। किसी राम भक्त धनी यजमान से दक्षिणा लेकर उन्होने राजा भगत की मार्फत ही रत्नावली जी की प्रति से मानस की एक प्रतिलिपि तयार कराई थी। मानस-पाठ की कृपा से उन्होंने बहुत कमाया। वे राम से अधिक तुलसी भक्त थे। सोरो से विक्रमपुर आकर बसने पर बाबा जब पहली बार राजा के साथ चित्रकूट आए थे तभी से उनका नेह-नाता बध गया था। रामघाट पर ही उन्होंने वाल्मीकीय रामायण बाची थी। ससारी होने के बाद एक बार फिर कथा बाचने के लिए यहा बुलाए गए थे। तब पत्नी के साथ आए थे और ब्रह्मदत्त के यहा ही टिके थे। ससार-त्याग करने के बाद बाबा जब यहा आए तब पहले तो गुप्तवास किया परन्तु ब्रह्मदत्त ने एक दिन उन्हें देख लिया और घेरकर अपने घर ले आए। तदुपरान्त मठ का गोस्वामी पद ग्रहण करने से पहले एक बार फिर आए। ब्रह्मदत्त के घर पर ही टिके और रामघाट पर रामचरित मानस सुनाया था। अपनी इस यात्रा मे बाबा चित्रकूट के जन-मानस मे ऐसे बस गए थे, कि उनके यहा से जाने के बाद भी

उनकी स्मृति रूपी पतंग को किंवदंतियों की लम्बी डोरी बांधकर लोग-बाग आज भी उड़ाया ही करते हैं।

रामजियावन ने बाबा के शुभागमन का समाचार जब अपने घर भेजा तब गौरी और सियादुलारी रामायण बांच रही थी और नियमित रूप से आनेवाली स्त्रियां सुन रही थीं। स्त्रियों में बात पहुंची तो बिजली बनकर घर घर पहुंच गई। घाट पर कानाकान उड़ी तो दम भर में जनरव बन गई। हाट-बाट गली गली, जहां देखो वही यह चर्चा थी कि गोसाईं जी पधारे हैं। पिछली पीढ़ी वालों का पुराना नेह और नई पीढ़ी का कौतूहल उमड़ा। बहुत-से लोग तो अपना काम धाम छोड़कर रामघाट की ओर लपके। जिस समय बाबा स्नान करने के लिए नदी में पैठे उस समय घाट पर पचासों जन जुट आए थे। इधर उधर से भीड़ बराबर आती ही जा रही थी। जो रहे महाराज—वो! इहै राम जी साच्छात दरसन देते हैं। यहां बहुत दिनां तक रह चुके हैं। बरसों बाद आए हैं। अहा! कैसा तेज है! और इस हल्ले हुल्लड़ में रामजियावन का स्वमहत्त्व भाव जो उमड़ा तो ऊंचे स्वर में लहककर गाने लगे—

> चित्रकूट महिमा अमित, कही महामुनि गाय।
> आइ नहाये सरितवर सिय समेत दोउ भाय।।

किसी का भाव से राम-महिमा का छेड़ भर देना ही बाबा को बहिर्लोक से अंतर्लोक में ले जाने के लिए यथेष्ट होता है। पयस्विनी की धारा में राम लक्ष्मण उन्हें तैरते हुए अपने पास आते दिखाई देने लगे। गद्गद होकर हाथ जोड़े हुए उन्हें मार्ग देने के लिए वे जो हड़बड़ाकर पीछे हटे तो पैर लड़खड़ाया और वे जल में ही फिसल पड़े।

घाट पर हाहाकार मच गया। नदी गहरी नहीं, डूबने का भय नहीं, पर चोट लगने का तो है। कई लोग उन्हें बचाने के लिए जल में कूद पड़े किंतु बाबा के पास ही खड़े रामू ने चट से उन्हें थाम लिया। तब तक और लोग भी पहुंच गए थे। उसी समय चित्रकूट नगर के महासेठ भी तामझाम पर बैठकर आ पहुंचे। बाबा थोड़ा पानी पी गए थे और एक पैर में मोच भी आ गई थी, बस वे मन से स्वस्थ थे। लगभग सत्तर वर्ष की आयु के रौबीले सेठ जी ने घटवाले के तखत तक सहारा देकर लाए जाते ही बाबा को घुटने टेककर प्रणाम किया। पहचानने की मुद्रा के साथ बाबा ने पूछा— जगन्नाथ साहु के पुत्र हो ?

जी हां महाराज, वैदेहीशरण मेरा नाम है। आप ही का दिया"

'हां, याद आया। आपके विवाह के समय की बात है पहले आपका नाम'

सेठ जी हंसकर बोले— अरे अब उसकी याद भी न दिलाइए महाराज जी, नाम का बड़ा प्रभाव होता है। चलिए आपको लेने आया हूं। घटा बड़ी जोर से घिर आई है जाने कब बरस पड़े।

बाबा मीठे भाव से बोले— आपके घर फिर कभी अवश्य आऊंगा। इस समय तो मैं अपने स्वर्गवासी मित्र ब्रह्मदत्त के घर जाकर अपनी राम कोठ

भारतीय विद्यामन्दिर

रिया मे ही विश्राम करूगा ।"

'जहा महराज जी की इच्छा हो, रह । इनके यहा भी सब प्रबन्ध हो चुका है । (आकाश की ओर देखकर) घटा घिरी है, दिन भी चढ रहा है, भोजन-विश्राम की वेला हुई । आपने वास्ते तामभाम आया है ।"

माच के कारण गोस्वामी जी ने सेठ जी की यह सवा स्वीकार कर ली । गगाजमुनी तामझाम पर विराजमान भीड स घिरे हुए बाबा प्रसन्न मुद्रा म भी ऐसे अलिप्त भाव स चल जा रहे थे कि माना वह अपनी काया मे रहत हुए भी उससे बाहर हो । चामत्कारिक रूप से अपनी ख्याति के बढ़न पर बाबा को प्राय अपने ऊपर गव हो जाया करता था । इस खोखले अभिमान के नशे से वे बहुत जूझे हैं और सधते-सधत अब मन ऐसा हो गया है कि जप की गुफा मे बैठकर उनका मन बेहोशी का पत्थर ढाक लेता है । फिर बाहर सडक चलती रहे या हजारो के मजमे म रहे लेकिन उसस मन क निर्लेपन को कोई आच नही मानी । वह अपने म मगन रहता है न देखता है, न सुनता है । केवल गगन शब्द सुनता है । सधते-सधते नाम-जप अब बाबा का विश्राम बन गया है ।

घर पहुचत-न पहुचते एक बादल गडगडाने लगे थे । रामजियावन के घर के लम्बे चबूतरे पर, छतो पर स्त्रिया ही स्त्रिया खडी थी । रामजियावन की ओर देखकर बाबा हसते हुए बोले— आज तो तेरे घर पर धावा हुआ है रे ! महात्माओ को ठहराने का यही फल मिलता है ।' बाबा के इस कथन पर राम जियावन समेत आस-पास के सभी लाग हस पडे ।

तामझाम जमीन पर उतारा गया । राजा भगत बोले— अरे अभी भीड कहा भई है भया । कल-परसो से देखना, धरती पर तिल रखने को भी जगह न मिलेगी ।

बाबा उतरने लग । सेठ जी ने आगे बढ़कर सहारा दिया । भीड और निकट खिच आई चरणरज के भूखे भिखारी झपटे । रामजियावन ने अपने भाइ को ललकारा । बीस-पच्चीस जवानो ने भीड से जूझते हुए बाबा को अपने घेरे मे ले लिया । व चबूतरे की ओर बढ़े । छाया की भाति साथ रहनेवाला रामू पण्डित सेठ राजा भगत, रामजियावन आदि भक्तो की सेवा-उमग का मान रखत हुए भी बाबा की सुविधा-असुविधा पर पूरा ध्यान रखे हुए था । सेठ जी सहारा तो द रहे थे परन्तु घेरा तोडने के लिए निकट आती भीड के रेलो स चौंक सहमकर आगे-पीछे भी हो जाते थे । इससे बाबा के कधे को झटका लगता था । रामू ने बडी विनम्रता के साथ सेठ को अलग करके बाबा का भार ले लिया । व सुख स सीढिया चढ गए । सैकडो कण्ठो का जयघोष जसे ही निनादित हुआ वसे ही बादल भी गरज उठे । बाबा चबूतरे पर खडे हो गए और दोनो हाथ ऊपर उठाकर जनता को शात किया, फिर कहा— देखो, चित्रकूट वालो की रामगुहार सुनकर गगन भी गूज उठा । अब आप सब अपने अपने घर जाओ । परसो से हम रामायण सुनाएगे । और कल हम यहा दिन भर रहेंगे नही, इसलिए कोई न आए । जै-जै सीताराम ।"

भीड का पिछला भाग रामघोष करता हुआ बिखरने लगा, लेकिन आगे के

लोग अब अपने आपको चरणरज पाने का अधिक हकदार समझकर चबूतरे पर चढ़ने का प्रयत्न करने लगे। संत बेनीमाधव रामजियावन आदि ने तुरन्त घेरा कसने के लिए ललकारा। बाबा ने फिर सबको थामा, जोर से कहा—'हमारे पग मे मोच आ गई है। आज सब जने हमे क्षमा करें। जै-जै सियाराम।"
बाबा ने स्त्री पुरुषों की भीड को हाथ जोडकर प्रणाम किया। इस समय जप विश्राम और बिम्बसिद्धि का क्रम दोनों ही गतिशील थे। बाबा के सामने अनेक सीतायें और अनेक राम थे—एक रूप रूपाय—माना मन का एक-एक अणु धरती आकाश के छोर से छोर तक अपनी बिम्बशक्ति से जाग्रत और सक्रिय हो उठा था। दृष्टि बाहर से भीतर तक एक सीधा राजपथ जैसी हो गई थी। जुडे हुए हाथ भीतर नाम-जप से जुडकर माना मन का प्रतीक बन गए थे।
कोठरी मे प्रवेश किया। वही पुरानी जगह वही कुशासन बिछा पीढ़ा और सामने रखी हुई चौकी। उसपर उनकी मिट्टी की पुरानी दवात और सरकंडे की कलम भी वैसे ही रखी थी लेकिन उसके पास ही चादी का पीढ़ा चौकी चादी की दवात और नई कलम भी रखी थी। पीढ़े पर रखी पुरानी खडाउए एक ओर रखी हुई थी। चौकी के सामनेवाली दीवाल पर चूने से सूर्य का गोला बनाकर बाबा ने कभी गेरू से सीताराम लिख दिया था। फीके पडने से बचाने के लिए बार-बार पोत जाने से लिखावट और गोला तनिक विरूप तो अवश्य हो गया था किन्तु मौजूद था। चौकी पर रेशमी चादर और गद्दा बिछा था। बाबा सतुष्ट मुद्रा मे चारों ओर देखकर चौकी की ओर बढे। चादर-गद्दे को एक कोने से उठाकर देखा। नीचे बिछी हुई अपनी पुरानी चटाई को देखकर प्रसन्न हुए।
रामू, ये गद्दा इत्यादि ठाठ-बाट हटाओ।'
सेठ जी के चेहरे पर फीकापन भापकर राजा भगत बोले—'अब बिछा है तो बिछा रहने देव। तुम्हारी बूढी हडिडयों को सुख मिलेगा।
बाबा ने बच्चा की तरह से मचलकर कहा—'नहीं, अतकाल मे अपनी आदत क्यों बिगाड़े।'
रामजियावन के घरवालों ने तब तक गद्दा चादर उठा डाला था। चौकी पर बैठकर बाबा अपनी पुरानी चटाई पर हाथ फेरते हुए बोले—ब्रह्मदत्त दमडी-दमडी की दो लाए थे। बारीक बुनी है। एक हमको दी और एक घाट पर बिछाई। हमारी तो जस की तस धरी है।
हां हमे याद है महराज, घाट पर ऐसी ही चटइया रही, मुदा वह तो कई बरस भए टूट गई।
'दास कबीर जतन ते ओढी ज्यों की त्यों धरि दीनी चदरिया।' कहकर बाबा हसने लगे। उन्हें हसते देखकर सभी खिलखिला पडे।
बरसाती मक्खियों-सी चिपकी भीड बडे मनुहावन के बाद गई। सेठानी जी चाहती थीं कि उनके द्वारा रखी हुई पादुकाओं को गोसाइं जी यदि यहां रहते हुए निरतर न पहनें तो कम से कम एक बार उसमे पग ही डाल दें जिससे कि वे सेठानी की पूजा की वस्तु हो सकें। रानी साहबा का मन रखने के लिए नई

कलम और चादी की दवात भी रखनी ही पडी। इस प्रकार कुछ दर के बाद सन्नाटा हो सका, बाबा तथा उनकी मण्डली के भोजन करते-न करत ऐसी मूसलाधार वर्षा आरंभ हुई कि थोडी ही देर में पनाले वह चले।

भोजन करके बाबा फिर अपनी कोठरी म आ गए। बेनीमाधव जी तथा राजा भगत दूसरी कोठरी म टिकाए गए थ। रामू बाबा के साथ था। उससे पैर दबवाते हुए बाबा को झपकी आ गई। थोडी देर बाद रामू का ध्यान बाबा के सिरहाने दीवार के कोन पर गया। दीवार के सहारे छत से पानी की लकीर वह रही थी। इससे रामू को विशेष चिन्ता व्यापी और वह अपने गले से तुलसी माला उतारकर कधे पर पडे अगौछे मे हाथ छिपाकर जप करन लगा। थोडी देर म 'खल-खल' की आवाज़ काना म पडी। आखें खोलकर पहली दृष्टि सोते हुए गुरू जी पर और दूसरी बहती दीवार पर डाली। पानी अब अधिक तेजी से बह रहा था। धन्नी के कोने स मटियाला पानी मोटी धार म बह रहा था और उसी से 'खल-खल' की ध्वनि हो रही थी। रामू की आखें अब उधर ही टिक गइ। सहसा धन्नी के सिर स एक बडा मिट्टी का लादा पानी के साथ धप्प-से फर्श पर गिरा। ऊपर स आनवाले पानी की धार और मोटी हुई। द्वार से आगन मे झाका, पानी बहुत जोरा से बरस रहा था। आकाश मे बिजली ऐसे कडक रही थी मानो इसी छत पर टूटकर गिरेगी। अब रामू से बठा न रहा गया। बिना आहट किए चौकी स उठा और सोन हुए महापुरुष के चेहर पर एक दृष्टि डालकर फिर द्वार स बाहर निकलकर, छप्पर पडे, जगह-जगह म चूत हुए दालान स होकर आगे वाली कोठरी क द्वार पर पहुचा। देखा कि राजा भगत सो रहे हैं और बेनीमाधव जी आगन की ओर मुह किए बठे सुमिरनी के घोड दौडा रह हे। रामू न सकेत स उन्ह बाहर बुलाया और कहा— ब्रह्मचारी जी आप तनिक प्रभु क पास बठ जाय। व सो रह ह और कोठरी म पानी चूत-चूते अब पनाला बह चला है। म भीतर कहने जा रहा हू।

बेनीमाधव जी तुरन्त बाबा की कोठरी की ओर चल पडे। जाकर देखा कि दीवार स बहकर आते हुए पानी स कोठरी के गोबराय हुए फश पर तलया बन रही है। वे द्वार के पास ही खड़े हो गए। गुरू जी गहरी नींद म थ। कुछ देर बाद वे अचानक बडबडाए— राम राम ', फिर बचनी स करवट बदली। खल-खल खल-खल ध्वनि से आखें खुल गइ। तकिय स सिर उचकाकर बहता कोना देखा, फिर छत देखी, फिर बनीमाधव की ओर ध्यान गया, बैठ गए कहा— रामू इसी के उपचार की चिन्ता मे गया होगा।'

हा गुरू जी मिट्टी की दीवार है, कहीं अधिक पोल हुइ तो य झापें फिर रोक न पाएगी। पानी बडी जोरो स पड रहा ह।

हा, जब स्वप्न म उत्पात हो रहा था तो जाग्रतावस्था म भी उसका कुछ न कुछ प्रमाण तो मिलना ही चाहिए। राम करे सो होय।'

क्या कोई बुरा स्वप्न देखा था आपन ?

स्वप्न म हम काशी म थे। विश्वनाथ जी के दर्शन करके गली म आए तो सहसा उनका नदी हम सींग मारन के लिए झपटा। हम राम राम गोहराने लगे

तभी नीद खुल गई। ऐसा लगता है कि अब हमारी आयु शेष हो चली है।"

सुनते ही बेनीमाधव जी सहसा भावुक हो गए। आखें छलछला उठी हाथ जोडकर बोले— अपने श्रीमुख से एसे अशुभ वचन न कहे गुरु जी। आपका जीवन हमारी छत्रछाया है।

तब तक रामू रामजियावन और उनके छोटे भाई रामदुलारे आ पहुचे। बहती दीवार के कोने का निरीक्षण करके रामदुलारे बोला — ई भूम्प की कर तूत है। ऊपर राज सुखावा गवा रहै ना। अबही ठीक होत है दादा महराज जी का दूसर कोठरी मा ले जाव।

रामू और बेनीमाधव जी उन्हे सहारा देकर उठाने के लिए झुके सरककर आगे आते हुए बाबा ने हसकर कहा— अरे बेटा बालपने म तो हम ऐसी झोपडी म रहे है कि पानी गलावे और धूप तपावे। हमारी पावती अम्मा कहे कि जिससे राम जी तपस्या कराते है उसे ऐसा ही महल देते है।" हसते हुए यह कहकर वे सहारे से उठे।

कोठरी म भीड भाड होने से राजा भगत की आख खुल गई। उन्हे इस कोठरी मे अचानक आने का कारण बतलाया गया। तब तक बेनीमाधव जी भी चौकी पर बैठ गए। बेनीमाधव जी ने छूटा हुआ प्रसग फिर उठाया— पावती मा कौन थी गुरु जी ?

मेरी शरणदायिनी जगदम्बारूपिणी बूढी भिखारिन।

आपके घर की मुनिया दासी की सास ?

हा एसी झोपडी म रहती थी जिसम वह सीधी खडी भी नही हो सकती थी। पेडो की टूटी हुई टहनियो को जस-तस बाधकर सरपत घास और ढाक के पत्तो से बनाई गई और वह भी अनपढ हाथो की कला। आधी या लू चले तो पत्ते उड-उड जाए कभी चरमरा कर गिर भी पडे। आए दिन उसकी मरम्मत करनी पडती थी फिर भी उसकी दीन हीन दशा कभी सुधर न पाई। बरसात भर भीगी धरती पर वह हमे कलेजे से लगाकर और अपने आचल से ढाककर बौछारो से बचाने का निरथक प्रयत्न करती थी।'

तब तुम बहुत नान्हे-से रहे होगे भया ? ' राजा भगत ने पूछा।

चार पाच बरिस की आयु स तो हमको याद है फिर वे बिचारी मर गइ। ऐसे ही एक बरसात के दिन हम भिक्षा मागकर लौट रहे थे कि एकाएक बडी जोर से आधी और पानी आ गया। × ^ ×

६

मन-पटल पर बीते दृश्य सजीव हो उठे। चार-पाच वष का नन्हा-सा बालक कधे पर झोली लटकाए आधी-पानी मे बढा चला जा रहा है। भागने का प्रयत्न करे तो फिसलन का भय लगता है और धीरे चले तो आधी-पानी के तेज झोंके

उसे डगमगा देते है। सहसा दूर से कड़कड़ा रही बिजली बच्चे से दो-तीन सौ कदम दूर एक पेड़ पर गिरी। बच्चा भय के मारे दौड़ने लगता है और चार-पाच कदम के बाद ही फिसल के गिर पड़ता है। झोली का अन्न बिखर जाता है। बच्चा उठता है। हवा-पानी और कीचड उसे उठने नही दे रहे है। झोली की टोह लेता है, वह कुछ दूर पर छितरा पड़ी है। उसकी बड़ी मेहनत की कमाई, दिन भर की भूख का सहारा पानी म बहा जा रहा है। वह उठने की कोशिश मे बार-बार फिसलता है। भीख म पाया हुआ आटा गीला और बहता हुआ देखकर वह रो पड़ता है। 'हाय-हाय-हाय' बिलखता हुआ फिर सरक-सरककर तेजी से अपनी झोली के पास जाता है और उसे उठाकर झटपट कधे पर टागता है। कीचड-सनी थैली से आटे का पानी चू-चूकर उसकी पसली पर बह रहा है। आकाश फिर गरजता है। सहमा बच्चा उठकर चलने के लिए खड़ा होने का प्रयत्न सावधानी से करता है और अपने-आपको घर की ओर बढाने मे सफल भी हो जाता है। घर बहुत दूर नही। पर घर है कहा?

झोपडियो के मानदण्ड से भी हीनतम आठ-दस छोटी छोटी झोपडियो की बस्ती के लिए यह तूफान प्रलय बनकर आया था। अधिकाश झोपडिया या तो उड गई थी या फिर ढही पडी थी। भिखारियो के टोले मे सभी अपने अपने राजमहलो की रक्षा करने के लिए जूझ रहे थे। उन्ही मे से एक कोने पर बना पावती अम्मा का घास फूस और ढाक के पत्तो का राजमहल भी ढहा पड़ा था। बहुत-से ढाक के पत्ते और गली हुई फूस टट्टर म से निकल चुकी थी। उसके बचे खुचे भाग के नीचे पावती अम्मा कराह रही थी। उनकी गृहस्थी के मटके, कुल्हड फूटे पडे थे।

बच्चा 'अम्मा' कहकर झपटता है। टट्टर के नीचे दबी पडी हुई बुढिया का आधे निकला हुआ हाथ पकडकर खीचने का निष्फल प्रयत्न करता हुआ रो उठता है। बुढिया ने कराहकर आखें खोली, बुझे स्वर म कहा—'किसी को बुलाय लाओ, तुमसे न उठगी।'

बच्चा बस्ती भर मे दौडता फिरा— ए मगलू काका, तनी हमारी अम्मा को निकाल दव। उनके ऊपर छप्पर गिर पडा है—ए भसिया की बहू, ए सलोनी काकी ए झबुआ की आजी ए कैंक्वा भया ' परन्तु न काका ने सुना न भया ने न आजी ने। पूरी बस्ती इस प्रलय प्रकोप के कारण त्रस्त है। गाने के बच्चे और अध-लगडे-लूल असहायजन हर जगह रिरिया रहे है। बहुत-से भिखारी इस समय आसपास के गावो म अपनी कमाई करने गए हुए हैं। अत्यत अशक्त जन ही पीछे छूट गए हैं। जस-तस करके व अपने ही ऊपर पडी निबट रहे है, फिर कौन किसकी सुने।

मूसलाधार पानी म भीगता निराशा मे डूबा हुआ रामबाला कुछ क्षणो तक स्तब्ध खडा रहा, फिर धीरे धीरे अपनी गिरी हुई झोपडी के पास आया। देखा, पावती अम्मा का हाथ वसे ही बाहर निकला भीग रहा था। उनके मुह और शरीर पर भीगन छप्पर का बोझ भी यथावत् ही था। रामबाला की मनोपीडा कुछ कर गुजरने के लिए चंचल हो उठी। इधर-उधर सिर घुमाकर काम की खोज

की। छप्पर का जो भाग फूस-पत्ते विहीन होकर पडा था उसके एक सिरे पर बास का एक छोटा टुकडा बड बास स जुडा हुआ बधा था। बालक को लगा कि यही काम है 'बास के इस टुकडे को खीच लिया जाए फिर इससे अम्मा की देह पर पडे हुए छप्पर को ऊचा उठा दिया जाय जिसस कि अम्मा उसके नीचे सरक कर पौढें ।' उपाय सूझत ही काम चल पडा। बास का टुकडा खीचना शुरू किया तो टट्टर की पुरानी सुतली ही टूट गई। टूटने दो अभी तो इस सिरे का छप्पर उठाना है। छप्पर के एक सिरे के नीचे बास का टुकडा अडाकर उसे उठाना आरम्भ किया। छप्पर का कोना तो तनिक सा ही उठ पाया पर जोर इतना लगा कि कीचड म पाव फिसल गया। गिरा फिर उठा अबकी बार घुटने टेककर बठा और फिर बास अडाया। छप्पर कुछ उठा सही पर नन्हें हाथ बोझ न सभाल पाए। बालक को अपनी पराजय तो खली ही पर अम्मा ऊपर का बोझ तनिक-सा उठकर फिर मुह पर गिरने से जब कराही तब उसे अनचाहे अपराध की तरह और भी खल गया। ताव म आकर जय हनुमान स्वामी, जोर लगाओ ललकार कर दूसरी बार छप्पर उठान म रामबाला ने अपनी पूरी शक्ति लगा दी। छप्पर लडखडाया पर उस गिरन न दिया और भी जोशीले हुकारे भर भर कर वह अन्त मे एक कोना उठाने म सफल हो ही गया। फिर दूसरे कोने का उठाने की चिन्ता पडी। इस काहे से उठाए ? कोई मतलब की चीज दिखलाई न पडी। पडोसी के यहा कुछ खपाचिया पडी थी एक बार मन हुआ कि उठा लाए पर कुछ ही देर म गाली मार के भय स वह उत्साह उडनछू हो गया। टहनी काम के योग्य सिद्ध न हुई। छप्पर के नीचे अम्मा की लठिया झाकती नजर आई। उस लपककर खीच लिया और उसके सहारे से किसी प्रकार दूसरा सिरा भी ऊचा उठा ही लिया। दो एक क्षणो तक अपने श्रम की सफलता को विजय-पुलक भर-सतोष से निहारता रहा फिर पावती अम्मा के सिरहाने की तरफ बढा।

भीगते हुए भी अम्मा निर्विकार मुद्रा म काठ-सी पडी थी। उनके कान से मुह सटाकर रामबोला ने जोर से कहा— अम्मा कमी सरक जाओ तो भीजोगी नही।'

मोरि देह तो पाथर हुई गई है रे कस सरकी ? सुनकर रामबाला हताश हो गया। एक बार शिकायत भरा सिर उठाकर बरसत आकाश को देखा फिर और कुछ न सूझा तो अम्मा से लिपटकर लेट गया। स्वय भीगते हुए भी उसे यह सतोष था कि वह अपनी पालनहारी को वर्षा से बचा रहा है। पर यह सताप भी अधिक देर तक टिक न पाया। पावती अम्मा तब भी पानी से भीग रही थी।

आकाश मे बिजली के कौंधे बीच-बीच मे लपक उठते थे। बादलो की गड गडाहट सुनकर रामबोला को लगा कि मानो चर्नसिह ठाकुर अपने हलवाहो को डाट रहे है। रामबोला अनायास ही ताव मे आ गया। उठा और फिर नये श्रम की साधना म लग गया। दूसरे छप्पर के ढील पड गए अजर-पजर को कसने के लिए पास ही खलार म उगी लम्बी घास-पतवार उखाड लाया। रामबोला ने

भिखारी बस्ती के और लोगों को जैसे घास बटकर रस्सी बनाते देखा था वैसे ही बटने लगा। जैसे-तैसे रस्सियां बटीं जस-तस टट्टर बांधा। अब जो उसकी आधी से अधिक उघड़ी हुई छावन पर ध्यान गया तो नन्हे मन के उत्साह को फिर काठ मार गया। घास फूस, ज्यौनारों में जूठन के साथ-साथ बाहर फेंकी गई पत्तलों और चिथड़े-गुदड़ों से बनाई गई वह छोटी-सी छपरिया फिर से छाने के लिए वह सामान कहां से जुटाए? उड़ाया हुआ माल वह इस बरसात में कहां-कहां ढूंढेगा। दैव आज प्रलय की बरखा करके ही दम लेंगे। हवा के मारे औरों के छप्पर भी पेंगें ले रहे हैं। अभी तक अपनी-अपनी छावनों को बचाने के लिए सभी तो तूफान से जूझ रहे हैं 'तब हम अब का करी? हमार पेट भुखान है। हम नान्हें से तो हैं हनुमान स्वामी! अब हम थक गए भाई! अब हम अपनी पावती अम्मा के लगे जायके पौढ़ेंगे। दैउ बरस तो बरसा करैं। हम क्या कर बजरंगबली तुम्हीं बताओ! तुमसे बने भाई तो राम जी के दरबार में हमारी गुहार लगाय आओ औ न बने तो तुमहू अपनी अम्मा के लगे जायके पौढ़ो।'

रामबोला खिसियाना-सा होकर रेंगकर अपनी छपरिया में घुसा। उसने खींचकर पावती अम्मा का हाथ सीधा किया तो वे पीड़ा से कराह उठीं, पर बड़ी देर से एक ही मुद्रा में पड़ी हुई जड़ बांह सीधी हो गई। स्नायुकंपन हुआ जिससे उनके शरीर का आधा भाग थोड़ी देर तक कांपता रहा। बालक के लिए यह आश्चर्यजनक, भयदायक दृश्य तो अवश्य था पर उसे यह कंपित देह पहले की मृतवत् देह की स्थिति से कहीं अधिक अच्छी भी लगी। सूझ आई

'पावती अम्मा! पावती अम्मा!!"

'हां बचवा।" पावती अम्मा का वेदना में बुझा स्वर सुनाई दिया।

हम तुमको आगे ढकेलेंगे। तुम एक बार जोर से कराहोगी तो जरूर मुल तुम्हारी ये जकड़ी देह खुल जायगी। बरखा से तुम्हारा बचाव भी हुइ जायगा।"

बुढ़िया माई 'ना ना' कहती ही रही पर रामबोला ने उनकी बगल में लेटकर कोहनी से ढकेलना आरम्भ कर दिया। जय हनुमान स्वामी' का नारा लगाकर दांत भींच और सिर झटकाकर रामबोला ने अपनी पूरी पूरी शक्ति लगा दी। पावती अम्मा कराहती हुई पीछे सरक गईं। बालक अपनी जीत से खुश हुआ। गौर से देखा पर इस बार पावती अम्मा के किसी भी अंग में कंपन न हुआ। उन्हें खांसी अवश्य आई और वे देर तक 'राम-राम' शब्द में कराहती रहीं बस। परन्तु अब वे भीग तो नहीं रही हैं। बरसात झेलने के लिए रामबोला की पीठ है। खांसती-कराहती अम्मा की पीठ सहलाते हुए विजयी पूत ने इठलाते स्वर में ऐसे चुमकारी भरे अन्दाज से पूछा कि मानो बड़ा छोटे से पूछ रहा हो—
पार्वती अम्मा बहुत पिराता है?'

चुपाय रहौ बच्चा राम राम जपौ।'

"राम राम" × × ×

"राम राम राम राम रटते ही मैंने दुखों के पहाड़ ढकेले हैं।" स्मृतियों में खोकर बोलनेवाला बाबा का करुण स्वर अब वर्तमान की पकड़ लेकर बातें करने

लगा— अपना-पराया दुख देखता हू तो मन अवश्य ही भर उठता है। पर उस कोमलता मे भी मेरी सहनशक्ति राम के सहारे ही अडिग बनी रहती है

आपनें तो एक अवलम्बु अब डिभ ज्यो
समय सीतानाथ सब सकट विमोच है।
तुलसी की साहसी सराहिये कृपाल राम
नाम के भरोसे परिनाम को निसोच है॥'

वातावरण बाबा के ओजस्वी स्वर के जादू से बध गया था। मन्त्र-मुग्धता के क्षणो को कथारस के आग्रह से भग करते हुए बेनीमाधव जी ने विनयपूर्वक पूछा—'आप उन्हे अम्मा न कहकर पार्वती अम्मा क्यो कहते थे गुरू जी ?"

उन्होने ही सिखलाया था। बडे होकर एक बार हमने पूछा तो कहा कि ब्राह्मण के बालक हो। हम अम्मा कहते हो यही बहुत है बाकी हमारा नाम भी लिया करो।

फिर उनका क्या हुआ प्रभु ? वे स्वस्थ हो गइ ?' रामू ने पूछा।

अभागे का करम खाता क्या कभी सरलता से चुकता है ? बिना किसी औषधि के बिना खाए पिए राम राम करती वे फिर चगी हो गइ। उस घटना के कदाचित् चार-छह महीनो के बाद तक वे जीवित रही थी। पर उन अन्तिम महीनो म भीख मागने के लिए मैं ही जाया करता था। बीच मे कभी एक-आध बार कदाचित वह मेरे साथ गई हो तो उसका कोई विशेष स्मरण अब नही रहा।'

आपका रामबोला नाम उन्होने ही रखा था ?" रामू ने फिर प्रश्न किया।

राम जाने, बेटा। हा पार्वती अम्मा से यहा अवश्य सुना था कि मैंने बोलना राम शब्द से ही आरम्भ किया था। भिखारिन की गोद मे पला भीख के हेतु सहानुभूति जगाने का साधन बनकर अपना चेतनाक्रम पानेवाला बालक भला और बोल ही क्या सकता था! कदाचित पार्वती अम्मा ने या मेरी तोतली वाणी से राम राम सुनकर किसी और ने इस विशेषण को मेरी सज्ञा बना दिया। जो हो किन्तु इतना हमको याद है कि रामबोला नाम धारण करके कधे पर छोटी सी गाठ बधी झोली लटकाए हाथ म एक सटी लिए हुए हम ऐसे ठाठ के साथ भीख मागने के लिए पार्वती अम्मा के सग जाया करते थे कि माना त्रलोक्य विजय के लिए जा रहे हो।'

स्मृतिलोक की झाकी लेने के लिए आखें फिर मुद गइ।

× × × एक गाव के एक घर के द्वार पर रामबोला और पार्वती अम्मा सुर म सुर मिलाकर कह रहे हैं राम के नाम प कुछ मिल जाय—ए मा ऽऽ ई ऽऽ।

शिशु रामबोला अपने तोतले किन्तु मीठे स्वर म भजन गाता है—
राम कहत चलु राम कहत चलु राम कहत चलु भाई रे।

द्वार के भीतर से एक छोटी आयु की कुलवधू कटोरी भर आटा लेकर आती

है। रामबोला गाना बद करके उसके सामने अपनी झोली फैला देता है। युवती मुस्कराकर कहती है "गाना काहे बद किया रामबोला ?" बच्चा झोली फैलाए चुपचाप खडा रहा, पावती अम्मा ने अपना हाथ रामबोला के सिर पर प्यार से फेरते हुए युवती से कहा—"अभी इसे याद नही बहुरिया। अभी नन्हा-सा तो है।"

'पर बडा मीठा गाता है। तुम्हारा पोता है न पावती।"

हा जब पाला है तो जो चाहे समझो। बाकी ब्राह्मन पण्डित का पूत है। इसके जनमते ही इसकी महतारी मर गई। बाप बडे जोतसी रहे तो पत्रा विचार के बोले कि इस घर से निकालो यहा रहेगा तो सबका जिउ लेगा। हमारी पतोह उनके हिया टहल करती रही तो वह हम दे गई। हम कहा कि हमे मरे जिए की चिन्ता नही, अभागी वसे ही हैं पाल देंगे। बुढापा काटने का एक बहाना मिल गया।' × × ×

अतीत मे लीन होकर बाबा कह रहे थे— 'पावती अम्मा हम भजन याद कराती थी। महात्मा सूरदास कबीरदास और देवी मीराबाई आदि सतो के भजन उस समय बडे प्रचलित थे। मुझे सब याद हो गए। यद्यपि भिक्षा देनेवालों के आग्रह पर गाना मुझे प्राय अच्छा नही लगता था। मेरे ब्राह्मण सतान होने और मेरे दुर्भाग्य की बातें सुना-सुनाकर वे मेरे प्रति सहानुभूति जगाया करती थी। यह बात आरम्भ ही से मेरे स्वाभिमान को धक्के मारती थी। बडी कठिन तपस्या थी यह। जब मैं अकेला जाने लगा तो यह अनुभव और भी अधिक तीव्र हुआ ।" × × ×

शिशु भिक्षुक गा रहा है

हम भक्तन के भक्त हमारे।
सुन अर्जुन परतिग्या मरी यह ब्रत टरत न टारे।
टरत न टारे टरत न टारे रे-रे।

सिर में जोर से खुजली मची। टारे' शब्द की रे रे ध्वनि भी सिर के साथ ही हिलने लगी। 'भक्त काज लाज " नाक पर मक्खी बैठ गई। उसे उडाने मे गला बेसुरा हो गया और नाक भी खुजला उठी। कभी एक टाग उठाकर उसे सुस्ताने का अवसर दिया और कभी दूसरी को। चेहरे पर ऊब और क्षोभ की मचलती परछाइयों म, 'हे माई दाया हुइ जाय। बडी देर से ठाढे हैं।' की सदा भी लग जाती। बीच-बीच मे जुमुहाइया भी आ जाती। धरती आकाश पर सूनी दृष्टि घूमने लगती। फिर किसी मक्खी के उत्पात से 'हम भक्तन के भक्त हमारे' भजन की पुनरावृत्ति हो जाती, फिर 'य मा ऽ ई दाया हुइ जाय।' इस ऊबा देनेवाली दीर्घकालीन तपस्या के बाद एक ककशा प्रौढा कटोरी म चुटकी भर आटा लेकर भीतर से आती है। उसका देनेवाला हाथ बित्ता भर ही आगे बढता है मगर जबान गज भर की हो जाती है "मुह जला हमारी ही देहरी मे टें-टें करत है जब देखो तो । भवानियौ नाहीं खात हैं ई दहिजार का। ले मर।'

रामबोला का चेहरा विवश तमतमाहट से भर उठा। झोली आगे बढ़ाने की

इच्छा तो न हुई पर बढानी ही पडी। यह रोज का क्रम है। इससे छुटकारा नहीं मिल सकता।

ब्राह्मणपाडे के नुक्कड पर पीपल के पेड के पास दो-तीन लडको के साथ रामबोला गुल्ली डण्डा खेल रहा था। पीपल के चबूतरे पर उसकी झोली और सटी रखी थी। रामबोला डण्डे से गुल्ली फेंक रहा था। तभी खेता की ओर से विद्वान से अधिक पहलवान लगनेवाले पुत्तन महाराज पधारे। रामबोला को देखते ही वे अपने लडको पर बमके— फिर ईके साथ खेल लगे एँ। ससुर नीच जात भिखारी जिसकी देह से बास आती है उसके साथ ब्राह्मण छत्री के बेटे खेलते हैं जो है सो हजार बार मना किया ससुरो को।'

पुत्तन महाराज के आते ही रामबोला खेल छोडकर चबूतरे स अपनी झोली और सटी उठाने लगा था लडके घर के भीतर भाग गए थे। पुत्तन महाराज की बात रामबोला को अच्छी न लगी कधे पर झोली टागते हुए उसने कहा—
हम रोज नहाते है महराज। हम भी ब्राह्मण के बेटा "

हा-हा साले तू तो वाजपई है वाजपेई। हमसे जबान लडाता है जो है सो। गॅ ।' पुत्तन महाराज रामबोला के पास आकर खडे हुए उसे अपनी लाल आखें दिखला रह थे। बच्चा उस क्रोध मुद्रा को देखकर सहम तो अवश्य ही गया पर मन का सत्य दबा न सका उसने फिर कहा— 'हम झूठ नाही बोलते महराज।'

'साले सत्तवादी हरिश्चन्द्र का नाती बनता है (बच्चे के सिर और गालो पर दो-तीन करारे तमाचे पड गए। वह लडखडा गया) भाग। और फिर जो तोको हिया खेलते देखा तो मारते-मारते हडडी-पसली की चटनी बनाय देंगे। खबरदार जो अब हमारे घर पे भीख मागने आया।

रामबोला रोता हुआ सरपट भागा। वह सीधे अपनी झोपडी पर आकर ही रुका और एक पडोसिन लडकी के सिर की जुयें बीनती हुई पावती अम्मा से लिपटकर फूट फूटकर राने लगा।

'अरे क्या भया बचवा ?'

रामबोला बिलखकर बोला— अम्मा अब हम कभी-कभी भीख मागने नही जाएगे।'

'अरे तो पेट कसे भरेगा बचवा ?

'हम खेती करेंगे जैसे और सब करते हैं।

बुढिया पावती सुनकर हसने का निष्फल प्रयत्न करती हुई रुककर बोली अरे बेटा हम पचो को जमीन कौन देगा ? खाने को तो मिलता नही है हल बल कहा से मिलेगा ?'

पर हमको भीख मागना अच्छा नहीं लगता है अम्मा। द्वारे-द्वारे रिरियाओ गिडगिडाओ कोई सुन कोई न सुन, गाली द। यह रोज रोज का दुख हमसे सहा नही जाता है।

बच्चे के सिर और पाठ पर प्रेम से हाथ फेरकर बुढिया बोली— यह दुख नहीं तपस्या है बेटा। पिछले जनमा म जो पाप किए है वो इस जनम मे

तपस्या करके हम धो रहे हैं कि जिससे अगले जनम मे हमे सुख मिले ।"

"तो क्या सारे पाप हमने ही किए थे अम्मा ? औ ये सुखचैनसिंह ठाकुर, पुत्तन महराज जो हम गरीबो को मारते-पीटते हैं वो क्या पाप नही कर रहे हैं अम्मा ?"

बच्चे का तेहा देखकर अम्मा बोली— बाम्हन के पूत हो ना ! अच्छा एक कहानी सुनोगे रामबोला ?"

'इसी बात पर ?"

'हा।"

सुनाओ।"

एक आदमी रहा और एक कुत्ता रहा। तो कुत्ता किनारे पर सोता रहा और आदमी अपने रास्ते जा रहा था। तो ठलुहाई म उस आदमी ने पत्थर उठाके कुत्ते को मार दिया। कुत्ता सीधा राम जी के पास गया और कहा कि राम जी हमारा न्याव करो। राम जी ने पूछा—हम तुम्हारा क्या न्याव करें ? कुत्ता बोला कि राम जी इस आदमी को खूब दण्डो। कसे दण्डौं कुतवा ? राम जी न पूछा। तो कुत्ता बोला कि इसे किसी बडे मठ का महत बनाय देव राम जी। राम जी बोले, अरे तू तो इसे बडा सुख देने को कह रहा है रे ! कुत्ता बोला नाहीं राम जी पिछले जनम मे हम भी महत थे तो खूब खा-खा के मोटाए और दीन-दुबलो को दबाने लगे। हमने सबके ऊपर अत्याचार किया, उसी का दण्ड भोग रहा हू। तो राम जी बोले कि अरे कुतवा इसे दण्ड न कह यह तेरी तपस्या है। इसमे तुम्ह ज्ञान मिलेगा।" × × ×

तुलसी बाबा बतला रहे थे, 'मेरी आदि गुरु परम तपस्विनी पावती अम्मा ही थी। मानो शकर भगवान ने मुझे जिलाए रखने के लिए ही जगदम्बा पावती को भिखारिन बनाकर भेज दिया था। दरिद्रता मे इतना वैभव दुबलता मे इतनी शक्ति और कुरूपता म इतनी सुन्दरता मैंने पावती अम्मा के अतिरिक्त औरो म प्राय कम ही देखी।'

'तो क्या यही पावती जी तुम्ह पढाइन लिखाइन भैया ? राजा भगत ने पूछा।

'पावती अम्मा तो बेचारी मुझे इतना ही पढा गई कि जब जब भीर पडे तब-तब बजरगबली को टेरो। कहो कि ह हनुमान स्वामी तुम हम राम जी के दरबार म पहुचा दो जिसस कि हम अपनी भली-बुरी उनसे निवेदन कर लें। वर्षा म भीगने के बाद मेरी पालनहार बहुत खींच-खाचकर भी कदाचित् पाच-छ महीने से अधिक नहीं जी पाई थीं। एक दिन जब मैं भिक्षाटन से लौटकर आया तो ' × × ×

बच्चा रामबोला भीख भरी झोली लिए अपनी कुटिया म प्रवेश करता है और देखता है कि पावती अम्मा ठण्डी पडी हैं। उनके मुख पर मक्खिया आ-जा रही हैं और वह बुलाए से भी नहीं बोलती हैं। शिशु रामबोला घबराया हुआ

पड़ोस की झोपड़ी में जाता है, वहां जाकर आवाज़ देता है— फँकुआ की अजिया, मेरी अम्मा को क्या हो गया ? बोलती ही नहीं हैं। आंख भी नहीं खोल रही हैं।"

फँकुआ की आजी रामबोला के साथ उसकी झोपड़ी में आती है। पावती अम्मा की देह टटोलती है, फिर मुंदी आँखें खोलकर निहारती है और कहती है— "गईं तोरी पावती अम्मा अब का धरा है।"

"कहां गईं ?"

"राम जी के घर और कहां। जाओ बस्ती से सबको बुला लाओ।"

बस्ती के लोग आते हैं। फिर वही मेवासों की भीख मांगकर लाई जाती है। लकड़िया का दान मांगा जाता है। बुढ़िया फुकती है और शिशु रामबोला पत्थर होकर सब कुछ देखता है। बड़े लोग जो कहते हैं वही करता है। अपनी पालनहारी को ठिकाने लगाकर अपनी कुटी में आकर अकेला बैठ जाता है। अब हमारा क्या होगा बजरंगी स्वामी ? राम जी के दरबार में हमारी गोहार लगा दो। हे राम जी, अम्मा बिना अब हम क्या करें ?' बच्चा फूट-फूटकर रोने लगता है, धरती से चिपट चिपटकर रोता है मानो धरती ही उसकी अब पावती अम्मा है। फिर वही रोज का भीख मांगने का श्रम—राम जपाकर, राम जपाकर, राम जपाकर भाई रे।

'ए रामबोला, इया आओ।'

नहीं हम काम है।"

अब क्या काम है ? तेरी झोली में इतनी तो भीख भरी है। आओ हमारे साथ खेलो। हम तुम्हें अम्मां से कहके दो रोटी ला देंगे।'

हम अब तुम्हारे यहां से भिक्षा नहीं लेते। तुम्हारे बप्पा ने हमको डांटा था।"

'अरे हमने तो नहीं डांटा था। आओ खेलें।"

'नहीं। तुम्हारे बप्पा ने मना किया है। मारेंगे।"

'बप्पा हैं नहीं। दूर गए हैं। आओ खेलें। आओ। आओ न।"

रामबोला भोली कन्धे से उतारकर पीपल के चबूतरे पर रखता है और लड़के से डण्डा लेने के लिए हाथ बढ़ाता है। वह गड्ढे पर गुल्ली रखकर रामबोला से कहता है—'पहला दाव मेरा होगा।'

रामबोला कहता है—'नहीं भाई, तुम अपना दाव लेकर भाग जाते हो मैं नहीं खेलूंगा, जाता हूं।"

'अरे नहीं, हम तुम्हें दाव जरूर देंगे।'

'अच्छा खाओ सौंह।'

तुम्हारी सौंह खाता हूं।"

हमारी सौंह तुम क्या मानोगे, राम जी की सौंह खाओ तब हम मानें।"

'राम जी की सौंह, हम तुम्हें जरूर दाव देंगे।"

खेल होने लगा। एक बार हारकर भी उस लड़के ने अपनी हार न मानी। रामबोला मान गया, फिर खिलाने लगा। लड़का दुबारा हारा। उसने फिर हार न मानी और अपना गुल्ली-डण्डा उठाकर जाने लगा। रामबोला को ताव आ गया। उसकी शिकायत थी कि लड़के ने राम जी की शपथ खाकर भी धोखा

दिया यह क्या भले घर के लोगो का कार्य है ! रामबोला ने छीना झपटी मे गुल्ली और डण्डा दोनो ही उससे छीन लिया। लडका क्रोध मे बावला होकर उसे मारने झपटा। सामने से जाते हुए दो हलवाहों ने मना भी किया किन्तु वह और भी उलझ पडा। रामबोला ने उसकी बाह पकड ली और मरोडने लगा। लडके ने अपने बचाव के लिए रामबोला की बाहो पर अपने दात चुभो दिए। रामबोला पीडा से कराह उठा और साथ ही उसे ऐसा क्रोध आया कि बायें हाथ मे काटनेवाले लडके के जबडे पर ही मुक्का मारा। हाथ मुक्त हो गया। अपनी बाह से बहते हुए लहू को देखकर रामबोला की आखो मे खून उतर आया। लडके को पटककर उसने उसकी अच्छी तरह से कुटाई बनानी आरम्भ की। पस्त होकर अपने बचाव के लिए जब वह जोर-जोर से डकराने लगा तभी उसे छोडा। चबूतरे मे अपनी झोली उठाकर चल दिया।

उस दिन झटपुटी शाम के समय रामबोला अपनी झोपडी पर तवा चढाकर कच्ची-पक्की रोटिया सेंक रहा था। तभी उसे झोपडी के बाहर दो-तीन आवाजें सुनाई पडी। उसी बस्ती मे रहनेवाला भिखारी युवक भमिया किसी मे कह रहा था—'अरे यह रामबोला बडा चोर और बेइमान है। गाव भर के लडका से झगडा करता है।"

आज हम साले की हडडी-पसली तोडकर रख देंगे। फेंको इसकी झोपडी। निकल साले बाहर!"

रामबोला घबराकर बाहर निकल आया। उसने स्वर से पहचान लिया था कि दूसरा आदमी उस लडके का पिता पुत्तन महराज ही है। झोपडी से बाहर निकलते ही लडके के पिता ने उसे ऐसा करारा झापड मारा कि आखो के आगे तारे चमकने लगे। रामबोला धरती पर गिर पडा। उसपर लातें पडने लगी। बेचारा बच्चा 'राम रे' करके चीख उठा।

'साले भिखारी की औलाद! भले घर के लडको पर हाथ उठाता है? अरे हम तुम्हारा हाथ तोड डालेंगे।" रामबोला की बाह पकडकर उस व्यक्ति ने उसे फिर उठाया और उसकी बाह मरोडते हुए धम्म से पटक दिया। बच्चे मे रोने की शक्ति भी बाकी न रही। उस व्यक्ति ने बच्चे की उस टूटी शरणस्थली झोपडी को भी तहस-नहस कर दिया और कहा— यह साला हमे गाव मे अब जो कही दिखाई पडा तो हम इसकी हडडी-पसली तोड के फेंक देंगे।"

गिरे हुए छप्पर ने चूल्ह की आग पकड ली। सूखी फूस मिनटो मे लपटें उठाने लगी उस आग से अपनी झोपडिया बचाने के लिए आसपास के भिखारी भिखारिन निकल आए। जलते छप्पर के दूसरे सिरे का बास निकालकर एक भिखारिन आग को अपनी झोपडी की ओर से बचाने के लिए जलते हुए छप्पर को आगे ढकेलने लगी। फूस न पूरे छप्पर के फूस-पत्तो म भी लपटें उठा दी। तनिक-सी झोपडी कुछ पलो म ही जल भुनकर अपना अस्तित्व खो बैठी। झोपडी के अन्दर गठरी-मोठरी जो कुछ था जलकर स्वाहा हो गया। रामबोला धरती से चिपका मुर्दे की तरह पडा रहा। पुत्तन महराज चलते समय उसे एक करारी ठोकर और लगा गए। बस्ती की अन्य भिखारिनें और भिखारी जो

तमाशा देखने के लिए और अपने घरो को बचाने के लिए आ गए थे, चें-चें-में में करने लगे। दो-एक स्त्रिया ने सहानुभूति भी प्रकट की। अधिकतर लोग रामबोला को ही दोष दे रहे थे कि भिखारी के बच्चो को भले घर के बच्चा के साथ खेलने की आखिर जरूरत ही क्या थी! एक लडके ने कहा भी कि हम अपने मन से उन लोगो के साथ नही खेलते पर जब वह लोग हमे खेलने के लिए कहते हैं तो हम क्या करें? लेकिन जबरे का न्याय दीना और दुबलो का पक्ष पाती नही होता।

मार से पीडित रामबोला धरती से चिपका पडा रहा। उसमे उठने की ताब भी न थी। भसिया ने कहा— 'अब इसको बस्ती म नही रहने देंगे इसके कारण किसी दिन हम पचो पर भी विपदा आ सकती है।'

एक भिखारिन ने दया विचारते हुए कहा— अरे तो कहा जाएगा बिचारा? अभी नन्हा-सा तो है।'

'भिखमगा के बच्चा को कौन चिन्ता, कही भी जावे माग के खाएगा।"

भीड अपने अपने घरो मे चली गई। बच्चा वही पडा रहा। जब सन्नाटा हो गया तो आकाश की ओर देखकर बोला— बजरगबली स्वामी राम जी क्या अपने दरबार म कुम्भी चन्ना के बठे है? हमारी तरफ से बोलनेवाला क्या कोई भी नहीं है? तुम भी नही बोलोग? अब हम कहा रहें बजरगी?

बदली से चाद निकल आया। दूर पर गाव के पेड राक्षसा की तरह खडे दिखाई दे रहे हैं। अपनी झोपडी राख बनी बिखरी पडी है। कुत्ते कही पास ही मे जूझते हुए शोर मचा रहे हैं। बच्चा उठता है। अपनी जली पडी हुई झोपडी को कुरेदकर सामान निकालना चाहता है पर उसमे बचा ही क्या है! हताश बच्चे के मुह से गम-गम सासें निकलती हैं जी चाहता है कि उसमे ऐसी शक्ति आ जाए कि वह भी उसी तरह इन दुष्ट गाव वाला के घरो मे आग लगा दे जसे कि बजरगबली ने लका फूकी थी। वह नन्हा-सा है नही फूक सकता तो हनुमान स्वामी ही आके उसका बदला ले लें। आओ। इन दुष्टो से हमारा बदला लेओ। आओ भगवान।' पावती अम्मा ने हनुमान के द्वारा लका फूके जाने की कहानी कभी बच्चे को सुनाई थी। लेकिन इस समय बार बार गिडगिडा गिडगिडा कर गुहारने के बावजूद हनुमान जी ने इस गाव की लका न फूकी। वह उत्तर की ओर गाव से लपटें उठने की बाट देखता ही रह गया पर कुछ न हुआ। हताश होकर रामबोला उठा और गाव की सीमा की ओर चल पडा। × × ×

गोस्वामी तुलसीदास जी के चेहरे पर भूतकाल, मानो वतमान बनकर अपनी छाया छोड रहा था। वे कह रहे थे— पावती अम्मा सच ही कहती थी कि जिससे राम जी तपस्या कराते हैं उसे ही दुख-दुर्भाग्य के अथाह समुद्र म भयकर क्रूर तिमि तिमिगलो के बीच मे छोड देते हैं। उनसे अपनी रक्षा करना ही अभागे की तपस्या कहलाती है। अब सोचता हू कि राम जी ने मुझपर अत्यन्त कृपा करके ही यह सारे दुख डाल थे। इन्ही दुखो की रस्सी का फदा डालकर मैं

राम-नाम की ऊंची अटारी पर आज तक चढता चला आया हू। दुख का भी एक अपना सुख होता है।"

वेनीमाधव जी बोले—"इसी घटना के बाद आप सूकर खेत पहुचे थे गुरू जी ?"

'हा किन्तु इधर-उधर भटकते, भीख मागते, बिललाते बिलखाते हुए ही उस पावन भूमि तक पहुच पाया था। घाघरा और सरयू के पावन स्थल पर महावीर जी का जो मंदिर है न मैं अंत म वही का बन्दर बन गया। भक्त लोग बन्दरो के आगे चने और गुडधानी फेंका करते थे। जाति-कुजाति, सुजाति के घरों से मागे हुए टुकडे खाते और अपमान सहते मैं उस जीवन से इतना चिढ उठा था कि अन्त मे किसी से भी भिक्षा न मागने का निश्चय किया।' × × ×

रामबाला हनुमान जी के आगे नमित होकर बार-बार कह रहा है—"अब हम तुम्ही से मागेंगे हनुमान स्वामी अब किसी के पास नही जाएगे। तुम हमारा पेट भर दिया करो। हम तुम्हारा स्थान खूब साफ कर दिया करेंगे।'

बच्चा वही रहने लगता है। रोज सवेरे उठकर हनुमान जी का चबूतरा बुहारता है। फिर नहाने जाता है। लौटकर चबूतरे पर ही बैठ जाता है और भजन गाता है। बन्दरा के लिए फेंके जानवाल चनो को बीनता है और उन दाना के लिए उस बन्दरो से सघष भी करना पडता है। दोना हाथो मे सटिया लेकर वह बन्दरो से जूझता है। आय जावो जरा। आम्रो तो सही। अरे तुम्हरी यू खीसें न ताड डाली तो हमार नाम रामबाला नही। खौखियात है ससुर ? हम तुमसे जोर से खौखिया सकते है।' बन्दरो की तरह ही खो-खो करता हुआ बालक रामबोला दोना हाथो म सटिया लकर उनपर झपटता है। बन्दर जब दूर जाते है तो एक हाथ की सटी रखकर अपने अगौछे म भुने हुए गेहू आदि रखता जाता है, बन्दरो को भी देखता जाता है फिर हनुमान जी की दीवाल का सहारा लेकर बैठ जाता है और ठाठ से चने चबाता है।

एक दिन रामबोला मुह अंधेरे ही चबूतरे पर झाडू लगाता हुआ बडबडा रहा था— हे हनुमान स्वामी, देखो अब तुम्हारा चबूतरा कितना साफ-सुथरा रहता है। हम बडे मन स सेवा करते हैं बजरगबली। अब तो तुम राम जी के दरबार मे हमारी अरदास पहुचा दो। हम भी और दूसरे लडको की तरह अ-आ इ ई पढें और हमको दुइ रोटी का सहारा होइ जाय। ये चने-गुडधानी चाम-चाम के अब तक पेट भरें ? रोटी खाए बहुत दिन हो गए। देखो कल तुम्हारे होठकटवा बन्दर ने हमको कसा पजा मारा है ! खून झलझलाय उठा। हमारी बाह ऐसी पिराय रही है कि तुमसे क्या कहें। तब भी हम तुम्हारी सेवा कर रहे हैं। अब तो तुम हमारी जरूर सुन लो नाथ। पावती अम्मा कहती रही कि दीन-दुर्बलो की गुहार तुम्हीं सुनते हो। सुन लो बजरगबली हनुमान स्वामी। हम तुम्हारी हा-हा खाते हैं चिरौरी करते हैं। सुन लो नाथ। अरे सुन लो।'

रामबोला अब कहीं भिक्षा मागने के लिए नही जाता। वह सबेरे उठकर हनुमान जी के स्थान को बुहारता है और नहा धोकर चबूतरे पर बठे-बठे भजन

गाया करता है। बच्चे के सरल कंठ-स्वर और हनुमान जी के प्रति उसकी सेवा निष्ठा ने दर्शनार्थियों के मन में उसके प्रति थोड़ा-बहुत प्रेमभाव जगा दिया है। कुछ भगत भगतिनियां बन्दरों के साथ-साथ रामबोला को भी चने और गुड़धानी दे दिया करते हैं। बन्दरों से रामबोला की दोस्ती भी हो गई है। ललक्का सरदार अब कभी-कभी रामबोला के पास चबूतरे पर आकर बैठ भी जाता है। बन्दरों के बच्चे स्वच्छन्दतापूर्वक उसके साथ खेलने लगते हैं। इससे रामबोला का मन अब आठों पहर सुखी रहता है।

जब कभी एकाध फल मिल जाता है तो रामबोला उसी में से आधा भाग सदा ललकऊ सरदार को देता है। यदि कोई उसके माता-पिता के सम्बन्ध में पूछता है तो उत्तर में वह उस सीता और राम के नाम बतलाता है। बच्चे की इस हाजिरजवाबी से लोग प्रसन्न होते हैं। यदि कोई यह पूछता है कि दाल भात-रोटी खाने को तुम्हारा जी नहीं करता, तो उसे चट से यह उत्तर मिलता है कि बजरंगबली हम जो कुछ खाने को देंगे वही तो खाऊंगा।

एक दिन रानी साहब ने ब्रह्मभोज दिया। उसकी धूम कई दिनों पहले से ही बंध गई थी। गोण्डा और अयोध्या के हलवाइयों की एक पूरी सेना बुलाई गई है। बड़ा शोर है कि राजमहलों में मिठाइयों पर मिठाइयां बन रही हैं। आस-पास के गांवों के हर ब्राह्मण परिवार को न्योता मिला है। भिखमंगों में उत्साह की लहर दौड़ गई है। चींटियों की तरह से रेंगते हुए जाने कहां-कहां से झुण्ड के झुण्ड भिखारी अभी से ही आने लगे हैं। बहुतों ने हनुमान जी के चबूतरे के आस पास भी डेरा डाल दिया है। उनके कारण बन्दरों और रामबोला को अपना दैनिक भोजन भी नहीं मिल पाता। एक मुड़चढ़ा भिखारी कल से बराबर इसी घात में रहता है कि कोई भगत हनुमान जी को खाद्य डाले और वह उसे हड़प जाय। रामबोला ने जब आपत्ति की तो मार खाई। कल सारा दिन रामबोला और बन्दर भूखे ही रहे। दूसरे दिन से ही बन्दर तो वहां से हट गए पर सबेरे जब दर्शनार्थी आए तो रामबोला ने गुहार लगाई— देखो ये पंच हमें मारते हैं। कल से न हमने ही कुछ खाया है और न हमारे बन्दरों को कुछ मिला है। यह सब पंच मिलके हनुमान जी का स्थान भ्रष्ट करते हैं। उनको आप सब यहां से हटा दें।

अपनी शिकायत सुनकर भिखारी और भिखारिनें रामबोला को चें-चें करके कोसने लगती हैं। भिखारी दल किसी भी दर्शनार्थी के वश का नहीं था और हनुमान जी के नाम पर निकाले जाने वाले चने आदि को चबूतरे पर डाले बिना घर लौट आना भी उनको धार्मिक भावनाओं के प्रतिकूल था। हनुमान जी की खाद्य डाली गई और भिखमंगों ने उसे लूट लिया। यह देखकर रामबोला को बड़ा ताव आ गया। उसने बजरंगबली से शिकायत की— हनुमान स्वामी तुम साखी हो, हम कल से इनके कारन बड़ दुखियाय रहे हैं। तुम्हारे बन्दरों को भी खाने को नहीं मिलता, औ ऊपर से ये हमको मारते हैं। अच्छा अब हम भी बदला लेंगे। लेकिन बदला लेने का कोई उपाय न सूझा। सारे दिन भिखारी भिखारिनों से लड़ते झगड़ते और खामियाजा ही बीत गया। रात भी न आई।

सबेरे चबूतरे पर झाड़ू लगाने लगा तो भिखारी बच्चो ने उसे चिढाने के लिए गदगी का अभियान चलाया । रामबोला तप गया— बदला लेंगे । जरूर लेंगे । कैसे लेंग, बताए ? अच्छा तो ठहरो, हम तुम्हें दिखाते ह । अब या तो य दुष्ट राक्षस लाग ही यहा रहग या फिर हम और हमार बन्दर ।'

बडे ताव से रामबोला चबूतर स उतरकर अनाज मण्डी की ओर चल पडा । परसा स बन्दर वही डेरा डाल पडे ह । मण्डीवाल अनाज की फटकन और थाड बहुत चने भी उनके आगे डाल देत ह । रामबोला बन्दरा के ललकऊ सरदार को खोजता हुआ वहा पहुचा । पीपल के पेड क नीचे वानर परिवार को बैठा देखकर वह बडे ताव से ललकऊ से बाला— वाह, अच्छे साथी हो, हम वहा मार खाय और तुम हिया बैठे-बठे माल खाआ ! वाह वाह-वाह ! ललकऊ सरदार एस चुप होकर बठ गया कि माना उसे रामबोला की शिकायत सुनकर लाज लगी हो । वह अपनी कनपटी खुजलाने लगा, फिर जल्दी-जल्दी दाना हाथा स आसपास के पडे दाने बीन-बीनकर रामबोला के आगे रखने लगा । वह बाला—'ये नही, तुम सब जने हमार साथ चलो और राक्षसा को वहा स भगाओ । देखो ललकऊ, हम हनुमान स्वामी से बद कर आए ह । हमारी नाक नीची न होय । आओ चलो ।'

भारी भरकम शरीर वाला ललकऊ रामबाला का मुह देखन लगा । वह फिर बोला— हम क्या देखत हा, आओ । हमारी बात की लाज रख लो भया नही तो ललकऊ, हम सच्चा कहत ह कि हम आज ही तुम सबका छाडकर यहा से चल जाएगे । आओ आओ आओ न ! सरदार इस बार सचमुच चल पडा और उसके पाछ-पाछे चालिस-पचास बानरा की टोली भी दौडन लगी । आगे आगे रामबोला और ललकऊ उनके पीछे तथा आसपास बन्दरा की टाली दौडती चली । हनुमान जी क चबूतरे पर घमासान मचा हुआ था । रामबोला के हुस्कात ही बन्दर चबूतर पर चढ़ी हुई भिखारिनो पर टूट पडे । थाडी दर म एसी भगदड मची कि भिखारियो की टोली वहा स सत्रस्त होकर भागी । रामबाला बडा प्रसन्न हुआ । चबूतर पर चढ़कर हनुमान स्वामी स बोला—' देख लियो हनुमान स्वामी, अरे हमार ललकऊ सरदार बडे बीर ह । और तुम देख लना, ललकऊ अब किसीको यहा पर तक न रखन दगा । (मुडकर अपनी जुयें बिनवाते हुए ललकऊ को देखकर) ललकऊनू सुना, हनुमान स्वामी क्या कह रह है ! अब यहा कोई आन न पाव । परसा राजा क घर चलगे, मज स माल उडाना । हम ? नही हम तो न जायगे भाई । हम न्योता कहा मिला है ! फिर बिना बुलाए हम किसीके घर क्या जाय ! राजा हागे ता अपन घर क हागे । हमार राजा रामचन्द्र जी स बडे तो ह नही । अर, हमारे हनुमान स्वामी आज हा जावें राम जी स कहगे कि राम जी राम जी, तुम्हारा रामबालवा कल स भूखा है । उस ऐसी कसक भूख लगी ह कि तुम उसे खान को न दोगे ता वह रो पडेगा ।

रामबोला न देखा नही था, उसके पीछे एक वयोवृद्ध सौम्य साधु आकर खडे हो गए थ । वे हनुमान जी तथा ललकऊ सरदार स होनेवाली उसकी बातें सुन-सुनकर आनदमग्न हो रह थे । रामबोला की बात समाप्त होने पर वे

सहसा बोले—'बेटा, राम जी ने तुम्हारे लिए यह पेड़े भेजे हैं। ला खाओ।"

इतने ही में कुछ दूर पर एक पेड़ के नीचे जुए बिनवाते हुए ललबऊ ने साधु को देखा। वह आनंद से चिचियाते हुए छलांग मारकर उनके पास आ पहुंचा और उनकी टांग पकड़कर खूब उमंग से चिचियाने लगा। सरदार को यह करते देखकर कई बन्दर साधु के आसपास पहुंच गए। साधु अपनी दाढ़ी-मूछों में मुस्कान बिखेरकर बोले— हां-हां जान गए तुम सबका आनन्द हुआ है। ठहरो-ठहरो, तुम सबका भी मिलेगा। पहले इस बात सत को दे लें। तुम सब तो हनुमान जी के बन्दर हो, पर यह बालक तो साक्षात् राम जी का बन्दर है।' कहते हुए अपने झोले से अंगौछा निकालकर उसके एक छोर पर बंधे लगभग पाव डेढ़ पाव पेड़ों में से बाबा ने कुछ तो बन्दरों के आगे डाल दिए और एक मुट्ठी रामबोला के हाथों में देकर बोले— लो खाओ खतम करो तो और दें।

रामबोला कृतज्ञ दृष्टि से साधु को देखने लगा। भूख बड़ी जोर से लगी थी उसने जल्दी-जल्दी तीन चार पेड़े मुंह में भर लिए फिर एकाएक उसे ध्यान आया उसने साधु के पैर नहीं छुए। हड़बड़ाकर उठा और साधु के सामने धरती पर अपना मस्तक टेककर उसने भरे मुंह से कहा— बाबा-बाबा, पांव लागी। पेड़ों भरे मुंह से शब्दों का अशुद्ध उच्चारण सुनकर तथा बच्चे का भाव देखकर साधु हंस पड़े। पेड़ों से पेट भरा फिर नदी से पानी पिया और जब लौटकर आया तो उसने देखा कि चबूतरा खाली था और मंदिर के पासवाली बन्द कुटी के द्वार खुले हुए थे। बच्चे को लगा कि हो न हो कृपालु साधु इसी कुटी के अन्दर हैं। वह भीतर चला गया। साधु अपनी कुटी बुहार रहे थे। रामबोला आगे बढ़कर उनके हाथ की झाड़ू पकड़कर बोला— आप बैठो बाबा जी हम सब साफ किए डालते हैं।

रहै दे रहै दे तुझसे नहीं बनेगा। अभी नन्हा-सा ही तो है।'

अरे, हम रोज हनुमान जी स्वामी का चबूतरा बुहारते हैं। आप किसी से पूछ लें। आप खुद ही देख लेना कि हम कैसा बुहारते हैं।'

बच्चे के आग्रह को देखकर साधु ने उसे झाड़ू दे दी। रामबोला बड़े उत्साह से अपने काम में जुट गया। बच्चा झाड़ू लगाते हुए एकाएक बोला — हम रोज रोज अपने मन में सोचें कि कुटिया बन्द क्यों पड़ी है। यहां कौन रहता है। एकाध जने से पूछा तो उन्होंने कहा कि नरहरि बाबा रहते हैं। तो क्या आप ही नरहरि बाबा हैं ?"

हां, तू कहां से आया है रे ?'

हम बहुत दूर रहते रहे बाबा ! फिर हमारी पार्वती अम्मा मर गई

"अपराध हमारा नही, उनके अपने लडके का रहा। ससुर अपना ही खेले और दूसरे को दाव न देवे। तो हमने उसका हाथ पकड लिया और कहा कि दाव देव। तो वह हमको मार-पीटै लगा। तब हम भी गुस्सा आ गया। हमसे वह बडा रहा बाबा, लेकिन हमने उसको उठायकर पटक दिया और खूब मारा। जो अयाय करे उस तो दण्ड देना चाहिए है न बाबा? राम जी न रावण को इसीलिए तो मारा था है न बाबा?"

नरहरि बाबा हस पडे, कहा— अरे तू बडा विद्वान है रे! तू तो खास राम जी का बन्दर है!

कोने म सिमटा हुआ कूडा अपनी नन्ही-नन्ही हथेलियो से समेटते हुए थम कर बच्चे न साधु की ओर देखा। चार आखें दो दिलो के अन्दर बैठ गई। रामबोला खिलखिला कर हस पडा। पावती अम्मा के मरने के बाद रामबोला को ऐसी मुक्त हसी कभी नही आई थी।

बाबा नरहरिदास का उस क्षेत्र म बडा मान था। वे कथा बाचा करते थे, और एकतारे पर एसे तन्मय होकर भजन गाते थ कि सुननवाले आत्मविभोर हो उठते थे। उनकी जाति-पाति का किसीको पता न था। उनके भक्त उन्ह ब्राह्मण कहत थ और विरोधी उन्ह हनुमानवशी डोम बतलाया करते थे। बाबा नरहरिदास जी ने पूछने पर भी कभी अपनी जाति नही बतलाई। वे कहते थ कि पानी की कोई जाति नहीं होती, जो रग मिलाओ वह उसी रग का हो जाता है। बाबा नरहरिदास यद्यपि ब्रह्मभोज म सम्मिलित होन के लिए राजमहल म न गए पर रानी साहबा ने उनके लिए ढेर सारी भोजन-सामग्री भिजवा दी। रानी का विश्वास था कि नरहरि बाबा के आशीर्वाद से ही उन्ह ऊची उमर म पुत्र का मुख देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। बाबा ने रामबोला और अपने बन्दरो को छक-छक कर खिलाया, फिर स्वय सारी भोजन-सामग्री को एक मे मीज कर तथा उसे पानी म सानकर व आप खा गए। रामबोला को उनकी भोजन-पद्धति देखकर बडा ही आश्चय हुआ। बाबा जब खा-पीकर चैन स बठे तो रामबोला ने उनसे पूछा— बाबा, एक बात बताओग?'

पूछो बेटा।'

"यह इतने बढिया-बढिया मोतीचूर के लड्डू पूरी, खस्ता-कचौरी रायता सब एक मे मिलाके गाय-बैल की सानी की तरह आप खा गए तो इसका स्वाद क्या मिला?"

नरहरि जी मुस्कराए कहने लगे— भोजन से पट भरता है कि स्वाद?"

दोना भरते है।'

'अच्छा तो स्वाद भर दिया जाय किन्तु पेट न भरा जाय तो क्या तुमको तृप्ति हो जायगी रामबोला?"

रामबोला इस प्रश्न से चक्कर मे पड गया फिर सिर हिलाकर बोला—'नाही।"

बस, तो फिर यही बात है। पेट को कोई स्वाद न चाहिए। यह तो बीच की दलाल जिह्वा ही है जो स्वाद की दलाली लेती है।"

रामबोला चक्कर म पड गया, उसने कहा—' पेट तो बाबा हमारा भी रोज भर रहा था परन्तु ऐसा स्वाद हमने कभी नही पाया। हमारा तो जी होता है कि हम रोज रोज ऐसा ही सुन्दर भोजन करें।'

रोज राज यह षटरस भोजन तुम्हें कहा से मिलेगा! क्या चोरी करोगे रामबोला!'

नाही।'

बाबा बोले-- 'राम जी जब तुम्हे दें तो खाओ न दे तो न खाओ। स्वाद के पीछे न जाओ पेट की चिन्ता करो।'

अच्छा बाबा।'

रामबोला बाबा नरहरिदास के साथ ही रहने लगा। वह हनुमान जी का चबूतरा बुहारता बाबा की कुटिया और आगे की छोटी-सी फुलवारी वाला भाग स्वच्छ करता और दिन म विश्राम के समय वह अपने नन्हे-नन्हे हाथो से बाबा के पर दबाता था। नित्यप्रति मण्डी के एक अनाज के व्यापारी के घर से बाबा के लिए सीधा आने लगा था। नरहरि बाबा बच्चे को रोटिया बनाना और पोना सिखलाते थे। रामबोला धीरे धीरे अच्छा भोजन बनाने लगा। उसे खिलाकर तथा बन्दरो के आगे टुकडे डालकर शेष सामग्री की सानी बनाकर नित्य खाते थे।

एक दिन रानी साहबा अपने राजकुवर को लेकर बाबा के दशन करने आइ। बाबा के बन्दरो के लिए और घाघरा-सरयू के सगम-तट पर बसने वाले कगलो के लिए वे लडडू-कचौडिया बनवाकर लाई थी। नरहरि बाबा को वे एक गाय भी पुन्न करके दे गइ। गाय पाकर रामबोला को ऐसा उत्साह आया कि वह उसे तथा उसके बछडे को देखते नही अघाता था। नरहरि बाबा से बोला— हम औरो के यहा गाय देखें तो दूध और छाछ पीने को हमारा भी जी करे। अब बाबा हम रोज रोज दूध दुहेगे और फिर मजे से हम-तुम दोनो छक के पिया करेंगे। वाह रे, हनुमान स्वामी तुमने हमारी खूब सुनी।'

नरहरि बाबा बच्चे की भोली बातें सुनकर हस पडे, फिर पूछा— हनुमान स्वामी कहा है रे?"

वह क्या चबूतरे पर खडे है गदा-पहाड लेके। अच्छा बाबा एक बात बताएगे आप?

पूछो।"

'यह तो सजीवनी बूटी का पवत है। है न?

'तुमको कसे मालूम रामबोला?

हमारी पावता अम्मा न एक बार हमको बताया रहा। ठीक बात है न बाबा?"

हा ठीक बात है।

पर सजीवनी बूटी से लछिमन जी तो पहले ही ठीक हो गए अब य क्या पवत लिए खडे है?'

बच्चे के इस प्रश्न पर नरहरि बाबा हस पडे बोले— इसलिए खडे है कि और किसीको जरूरत पडे तो उनसे सजीवनी बूटी ले ल। तुमको चाहिए

सजीवनी बूटा ?"

हमका शक्ति थोडे लगी है बाबा हम मरे थोडे है।"

जिसके हृदय म राम जी नहा रहते वही मरे के समान हाता है, बटा। तुम तो साक्षात् रामवाला हो।'

नाम स क्या होगा बाबा, हम जरूर मरे हुए ह बाबा।

'काहे ?'

मर हम नान्ह से लडके, हमार पास न ओढने को है और न बिछान को। हमार हिरद म सियाराम जी काहे निवास करेंगे ? और फिर राम जी तो बाबा बहुत बडे ह और हमारा हिरदै तो अबही नान्ह-सा है।

'ता राम जी भा नन्ह से बनकर निवास करते हे।'

रामबाला सुनकर स्तब्ध हो गया। आख फाडकर बाबा को देखने लगा। फिर बाला— पर हमने ता बाबा उनको कभी देखा नही। क्या राम जी छाटे भी होते ह ?"

हा-हा, वे छोट स छोट हा सकते है इतन छाटे कि किसीका न दिखाइ पडें। श्रार इतन बड भी हा जाते ह कि काई उनको पूरा देख नही सकता है।

राम जी कसे ह बाबा ? आप दखे हा ?'

नरहरि बाबा बच्चे क प्रश्न पर एक क्षण के लिए चुप हो गए फिर अदृश्य म आखें टिकाकर कहा— एक बार झलक भर देख पाया था उन्हे। तब स बरा बर एक बार फिर दखने की ललक म हम पडे ह बचवा।

'पर बाबा, आप ता बडे हे आपका हिरद भी बडा है।

काया बडो हा जान से तो हृदय थोड बडा हा जाता है रे। वह ता राम जी का दया स हा होता ह।

रामबाला चुप हा गया। बात उसकी समझ म ठीक तरह स न आइ। फिर कुछ सोचकर पूछा— अच्छा बाबा, राम जी कसे ह ? बड सुन्दर हाग।"

हा, बहुत सुदर।

'जस अपनी फुलवारी म फूल सुदर लगत है बस होग ?'

इस जगत म जितन सुन्दर-सुन्दर फूल ह उन सबका मिला दो ता उनसे भा अधिक सुन्दर हे राम जी।

सुनकर बच्चा हताश हा गया— हम ता सब फूल भी नहा देखा बाबा, हम कस जान। (फिर एकाएक आखें सूझ स चमक उठी।) राजा जी की फुल वारी मे सब सुदर-सुदर फूल हाग। है न बाबा ?"

हमका नही मालूम बचवा। हम कभा राजा जी की फुलवारी म नही गए हैं। परन्तु जब इतना बडी फुलवारी है ता वहा बहुत-स फूल भी हाग। अच्छा, अब तुम हनुमान जी के चबूतर पर जाकर बठो और राम-जी राम-जी' जपो। हम भी अब जप करेंगे।

रामबाला जब बाहर आन लगा ता नरहरि बाबा ने उसस कुटिया का द्वार बाहर स उढका जान का आदेश दिया। आज्ञा का पालन करके रामबोला बाहर आया। बाडे म एक ओर गाय-बछड़ का बधे देखकर वह थम गया। दख

दखकर उसके मन म हप नही समाता था— कसा नीक लगता ह ! कसे सु दर हैं ! एक तरफ यह फूल खिल रहे है और एक तरफ यह गाय-बछडा है । अरे बहुत सुन्दर है । एसा सुख मुझे कभी नही मिला । बाहर आते हुए बाडे का टट्टर बन्द किया और फिर चबूतरे पर जाकर बठ गया मूर्ति को देखते हुए मगन मन उससे बतियान लगा । हनुमान स्वामी आप बडे अच्छे देवता हो । हमको बाबा से मिला दिया, इससे हम बडा सुख मिल गया । इतनी बडी मडया ह कि पानी नही पानी का बाप भी बरसे तो भी हम नहीं भिगो सकता है । हमारी पावती अम्मा विचारी ऐसी झोपडी म नही रह सकी । यह हमारी फुलवारी और गाय-बछडा कसा सु दर लगता है ! जो सारे फूला के बीच यह गाय-बछडा खडा कर दिया जाय तो बहुत ही अच्छा लगेगा । पर हमने तो कभी सब फूलो को देखा ही नही है । एक बार देख लें । सब फूला को एक साथ देखन की इच्छा रामबोला के मन म इतने उत्कट रूप से जागी कि उन्हे देखन के लिए वह उतावला हो उठा । रामबोला चबूतरे से उठा और राजा जी की फुलवारी की ओर दौड पडा ।

फुलवारी बहुत बडी थी । उसके चारा ओर इतनी ऊची ऊची दीवारें थी कि हाथी पर बैठा हुआ आदमी भी फुलवारी के भीतर का दृश्य न देख सके । रनिवास की स्त्रिया इस प्रमद वन म मनोविनोद के लिए प्राय आती थी । फाटक पर कडा पहरा रहता था । रामबोला फाटक क तगडे मुछाडिये सिपाहिया को देखकर सहम गया । उधर स निराश होकर लौट आया । चहारदीवारी क किनारे किनारे चलत हुए बार बार नजर ऊची उठाकर देख पर कुछ भी दिखाई न पड । बच्चे को फूल देखने की हुडक-सी लग गई हे राम जी कसे देखें कस तुम्हारा सरूप दिखाइ पडे ? अब ता हमसे देख बिना रहा ही नही जाता है । क्या करें ?'

रामबोला अपने भीतर ही भीतर बावला हो उठा था । दीवार के सहारे सहारे वह चलता ही चला गया । दूसर सिरे पर पहुचकर उसे एक जगह से बाहर आती हुई एक बडी नाली का मुहाना दिखाई दिया । नाली सूखी पडी थी और रामबोला का मन अपने उत्साह म बह रहा था । उसने एक बार नाली के मुहाने म झाककर भीतर देखा फिर जोश मे आकर वह उसम घुस गया । बदन इटो से छिला, कष्ट भी हुआ परन्तु ज्यो-त्यो करके बच्चा नाली के भीतर स रेंग ही गया । अ दर पहुच उसे अपार स तोप हुआ । वह घूम घूम कर देखने लगा । भाति भाति के रग बिरगे मनाहर पुष्पो के वृक्षो और क्यारियो को देखकर उसका मन मगन हो गया । सचमुच ऐसी सु दरता उसने अब तक नही देखी थी । सरोवर म कमल खिले थे । उसके किनारे मार चहलकदमी कर रहे थे । सामने हिरनो का एक जोडा घास चर रहा था । वक्षा पर पक्षी चहक रहे थे । सब कुछ बडा ही अच्छा था बस दूर-पास पर यदि उसे किसी मनुष्य की आहट सुनाई पडती थी तो वह डर के मारे चौककर दुबक जाता था । अपनी यह स्थिति ही उसे असुन्दर लगी थी बाकी सब कुछ सु दर था । चलते चलते वह एक सरोवर के निकट पहुच गया । यह स्थान एकान्त मे था और चारा ओर कई फूल वृक्षो से घिरा हुआ था । उसके बीच म सगमरमर का एक छोटा-सा सिंहासन नुमा चबूतरा बना हुआ था । बच्चा वहा खडा हो गया । चारो आर फूला की शोभा देखकर

फूल चुनने आरम्भ कर दिए। रंग बिरंगे फूल चुन लिए, फिर उन्हें चबूतरे पर सजाने लगा। रामबोला सजाता जाय और फिर खड़ा होकर उनकी शोभा निहारता जाय। कभी एक रंग के फूल एक जगह से उठाकर दूसरे फूलों की गड्डी के पास रख दे और फिर शोभा निहारे। पर उसका जी न भरा। उसने अलग अलग रंग के फूलों के गोले-दर-गोले बनाने आरम्भ किए। फिर शोभा देखी सोचा और थोड़े फूल समा सकते हैं। बच्चा उस कुंज से बाहर निकल कर और भी रंग बिरंगे फूल तोड़ लाया। फिर सजाकर देखा। बच्चे के चेहरे पर अब पहले से अधिक संतोष झलका। फिर लगा कि इतने सन्तोष में भी उसका मन अभी भरा नहीं है। बाबा कहते थे कि सब फूलों को मिला दो तो राम जी उससे भी ज्यादा सुन्दर साबित होंगे, 'पर सब फूल कहां से पाऊं? अच्छा वो जो सरोवर में कमल खिले हैं उनको ले आऊं।' बच्चा सरोवर के किनारे किनारे के छोटे-छोटे कमल भी तोड़ लाया। गोलों के बीच में उन कमलों से उसने दो आंखें बनाईं, होठ बनाए, कान और नाक भी बनाई फिर देखा। अच्छा लगा। मगन मन फूलों की शोभा निरखता जाय और संतोष भरी 'हूं-हूं' करता जाय। 'राम जी का पूरा मुख कमल जैसा होगा? वह जो आगे बड़े-बड़े कमल खिले हैं उन्हें तोड़कर लाऊं।' यह सोचकर फिर सरोवर में घुसा। पानी में थोड़ा ही आगे जाने पर पानी गहरा हो गया। पैरों में कमलों की जड़ें भी उलझीं। आगे बढ़ने की हिम्मत न हुई लौटने लगा। लौटते हुए एक जगह उसका पैर कमल की जड़ों के जाल में ऐसा उलझा कि वह डर गया। पैर निकाले पर न निकले। प्रयत्न से खींचतान करने पर उसका दूसरा पैर भी फंस गया। बच्चा भय और घबराहट के मारे चीख पड़ा—"बचाओ बचाओ।"

किसी माली के कानों में आवाज पड़ी। वह झपटकर आया। रामबोला पानी में बाहर निकलने के प्रयत्न में बार-बार उठता और गिर पड़ता था। गनीमत यही थी कि वह बहुत गहराई में नहीं था। गिरने पर दोनों हाथों के टेके लगाकर सिर ऊंचा कर लेता था। पर अपने पैर के फंसाव और फिसलन के कारण वह अपने-आपको पूरी तरह से संभाल नहीं पा रहा था।

"तू कौन है रे? यहां घुस कैसे आया?" कहते हुए माली ने पानी में अपना पांव जमाकर रखा और उसका पांव पकड़कर जोर से खींच लिया। फिर तो रामबोला को बहुत मार पड़ी। उसने बार-बार रोते हुए यह सिद्ध करने का भरसक प्रयत्न किया कि वह चोर नहीं है। राम जी की सुन्दरता का अनुमान पुष्पसमूह से लगाने की लालसावश ही उसने इस फुलवारी में प्रवेश किया था। माली को विश्वास न हो तो वह चलकर चबूतरे पर देख ले। राम जी की सौंह हनुमान स्वामी की सौंह वह चोरी करने नहीं आया था। वह नरहरि बाबा की कुटिया में रहता है। नाली के मुहाने में घुसकर भीतर आया था। इस प्रकार मार खाते हुए अपनी ईमानदारी सिद्ध करने के लिए उसने सभी दलीलें रो रोकर पेश कर दीं। दो एक माली और भी आ गए। चबूतरे पर बनाया हुआ बच्चे का खेल देखा। नरहरि बाबा का नाम सुना तो दो चार हाथ मारकर फिर उसे बाहर निकाल दिया। / × ×

इस प्रकार राम मुख-छवि निहारने की पहली ललक पर मुझे मार खानी पड़ी। जब पिट-कुट के घर पहुंचा तो बाबा के चरणों में गिरकर खूब रोया। मुझे याद है। बाबा का वह वाक्य भी मुझे कभी नहीं भूलता जो उन्होंने मेरे सिर पर हाथ फेरते कहा था। बाले कि पराये फूलों से अपने राम को देखेगा? पहले अपने मन की बगिया लगा ले फिर तुझे राम अवश्य दिखाई पड़ेंगे।"

पर अब तो आपने राम जी के दर्शन अवश्य पा लिए होंगे प्रभु जी।" रामू ने प्रश्न किया।

सुनकर बाबा कुछ बोले नहीं केवल मुस्करा दिए उनकी दृष्टि प्रश्नकर्ता रामू के चेहरे के पार कहीं दूर जाकर टिक गई। फिर राजा भगत ने पूछा—'राम जी क्या बहुत सुन्दर हैं?"

सौन्दर्य व्यक्त भी है और अव्यक्त भी। साकार की सीढ़ियां पर चढ़कर तुम निराकार सौन्दर्य को निहार सकोगे। अच्छा कल मेरे साथ चलना। राम सौन्दर्य दर्शन के लिए तुम्हें इस चित्रकूट से बढ़कर भला और कहां अवसर मिलेगा? यहां पत्थर भी छवि अंकित होता है।"

७

जन्माष्टमी का दिन है। रामजियावन महराज के कच्चे आंगन में बच्चे लोग मण्डप सजा रहे हैं। पत्थरों के ढोकों से पहाड़ बनाए जा रहे हैं। पत्थरों की आड़ में एक बड़ा टाटीदार गगाल रखा जा रहा है। दो नवयुवक ऊंची चौकी पर गगाल जमा रहे हैं। दो लड़के उसके अगल-बगल खड़े होकर पत्थरों के ढोकों से गगाल का वह भाग ढक रहे हैं जो सामने से दिखाई पड़ सकता है। एक लड़का सामने खड़ा होकर आलोचक की दृष्टि से निहार रहा है हां अभी बाईं तरफ का भाग दिखाई दे रहा है। दो पत्थर और रखो तो बात बन जाय। गगाल की बाईं ओर खड़े पहाड़ बनाते लड़के ने दो ढोके और चढ़ाए और पूछा— अब बताओ?"

हां अब ठीक है। अब नीचेवाली गुफा में शंकर भगवान लाकर रख दें मनोहर भइया?

अभी ठहर जाव भाई यह पर्वत अच्छी तरह से बन जाय। एक-एक पत्थर जम जाय तब ले आना। पुरानी मूरत है खूब संभाल के रक्खी जायगी।"

दो लड़के बांस के छोटे-बड़े कई पोले टुकड़े और छोटी पत्तियों वाली कई टहनियों का एक ढेर लिए बैठा था। वह बांस के टुकड़ों के आधे-आधे भाग में चारों ओर चक्कू से छेद बना-बनाकर रखता जाता था और दूसरा उन छेदों में छोटी-छोटी टहनियां काटकर खोंसता जा रहा था। वे बांस के पीले डण्डे विभिन्न प्रकार के वृक्षों के लघु संस्करण बनते चले जा रहे थे। यह पेड़ पर्वत की शोभा

बढ़ाने के लिए जगह-जगह खोंमे जा रहे थे। मण्डप के ऊपर भी बल्लियां गाड़कर तख्ते बिछाए गए थे और उनपर गाले पत्थरों की बटियां लुढ़का कर बादलों की गरज का ध्वनि आभास दिया जा रहा था। जमुना की लहरें और घटाओं की छटा दिखलाने के लिए पुराने रंगे हुए घटाओं के पर्दे और भालरें टांगी गई थीं। बड़ी तैयारियां हो रही थीं। एक लड़का हंसकर बोला—"हम तो हिंया नकली पानी बरसाइत है और जो उपर ते राजा इन्नर फाटि पड़े तौ का होई ?"

पेड़ बनाता हुआ लड़का बिगड़ उठा—"ए सुखिया अण्ड-बण्ड न बोलो भाई, अबकी परसाल की तरह दुन्शा न होने पावे। अबकी हमारे घर बाबा आए हैं। भाकी देखने के लिए सैकड़ा आदमी आएंगे हमारे यहां देख लेना।"

'तब बाबा से कहो जावे कि राम जी से कह दें कि राम जी आज पानी न बरसाना।"

सुखिया फिर हंसा बोला—'राम जी कहेंगे कि हम का पड़ी है ? पानी बरसे, चाहे न बरसे हमारा जनमदिन थोड़े है।"

'वाह भगवान भगवान एक, राम जी ऐसी बात कभी नहीं कहेंगे।"

'एक कैसे हो सकते हैं। राम जी का जनमदिन रामनौमी को पड़ता है और कृष्ण जी का आज पड़ रहा है। जो एक होते तो एक जनमदिन न पड़ता ?'

'एक हो ही नहीं सकते हैं।" एक दूसरे लड़के ने जोरदार समर्थन किया।

'अच्छा ऐसे चलो पूछो बाबा से कि भगवान एक है या दो।" एक छोटी आयु का लड़का पूछने के लिए कोठरी की ओर भागा। रामसुखी चिल्लाया—"ए खबरदार यह न पूछो। ए सुगनवा, सुनता नहीं है।" लेकिन रामफेर उर्फ भुगना बाबा की कोठरी में पहुंच गए।

कोठरी में बाबा चौकी पर विराजमान थे। उनकी आंखें खुली होने पर भी बाहर नहीं भीतर देख रही थीं। रामू दिये के प्रकाश में बैठा तख्ती पर लिखे लेख को कागज पर उतार रहा था। बेनीमाधव जी गोमुखी में हाथ डालकर माला जपते-जपते रुककर बोले—'गुरू जी, जपते-जपते मन कभी-कभी सहसा शून्य हो जाता है। पहले भी एक बार ऐसा ही अनुभव हुआ था परन्तु सतत अभ्यास से वह संभल गया था। पर अब तो ऐसी विस्मृति बढ़ती है कि कुछ समझ में ही नहीं आता है। कभी-कभी अत्यन्त लज्जा का बोध होता है महाराज।"

'लज्जा क्यों आई ? तुम्हारा जप तुम्हें प्रज्ञा के क्षेत्र में प्रवेश कराता है और तुम उसकी नई गति को पहचान भी नहीं पाते। तुम्हारी श्रद्धा कहां है बेनीमाधव ?"

'मेरी श्रद्धा आप में है।"

'कौन-सी श्रद्धा ? सात्विक या राजसिक, तुम मेरे बारे में चिन्तन करते हो या मेरे जीवन-चरित्र-लेखन के ?"

बेनीमाधव झेंप गए कहा—'आपने मेरे चोर को ठीक जगह पर पकड़ा है गुरू जी आपकी जीवन-कथा लिखकर अमर हो जाना चाहता हूं।'

"स्वर्ग की सीढ़ियां सूक्ष्म होती हैं वत्स तुम स्थूल पर ही क्यों टिके हो ?"

वस्तु जगत के धरातल पर अभी जिज्ञासाएं शान्त नहीं हुई, गुरू जी।"

"बेनीमाधव तुम मेरा जीवन चरित्र जिस उद्देश्य से लिख रहे हो वह परि-पूरित होकर भी न होगा।"

बेनीमाधव हड़बड़ाकर आगे झुके और अपने गुरु जी के सामने भूमि पर मत्था टेककर कहा—'ऐसा शाप न दें गुरु जी मेरे यह लोक और परलोक दोनों ही बिगड़ जायगे।"

बाबा हंसे, कहा— तुम्हारी श्रद्धा सात्विक होती तो मेरी सीधी-सादी बातों में तुम्हें शाप भय न दिखाई पड़ता।"

बेनीमाधव सतर्क होकर बाबा का मुख देखने लगे। वे कह रहे थे—

'श्रद्धा के सात्विक न होने के कारण तुम्हारे द्वारा लिखा हुआ मेरा जीवन चरित मृत देह के समान ही काल की चिता पर भस्म हो जायगा। यह यथार्थ है।"

बेनीमाधव के चेहरे पर परेशानी झलकी। किन्तु उन्होंने मन की उमड़ती घबराहट को थामकर कहा— जिस काव्य के सहारे इस अकिंचन के अमर होने की बात आप कहते हैं वह काव्य ही यदि नष्ट हो गया तो फिर अमरता कैसे सुलभ होगी गुरू जी ?"

तुमने खडहर हवेलियां अवश्य देखी होंगी बेनीमाधव। वे खण्डहर होकर अपने आकार के वैभव को तो खो देती हैं किन्तु नाम चलता रहता है कि यह अमुक व्यक्ति की हवेली थी। इसी प्रकार तुम्हारा काव्य खो जायगा और उसकी स्मृतियों के खण्डहर में तुम्हारे नाम पर टुटपुंजियों के भाव जम जायगे।

नहीं गुरु जी, मेरी श्रद्धा राजसी भले ही हो किन्तु उसमें मेरी सात्विकता भी निश्चित रूप से निहित है। मैं लोक मगल की भावना से भी यह काव्य कर रहा हूं।"

'यह भी' ही तो तुम्हें खा रहा है बेनीमाधव। तुम एक ओर तो प्राण की सूक्ष्म गति करना चाहते हो और दूसरी ओर उसकी स्थूलता को एक क्षण के लिए भी क्षीण करने का प्रयत्न नहीं करते। मेरा जीवन चरित यदि स्वयं तुम्हारा मगल नहीं कर सकता तो वह लोक-मगल कैसे कर पाएगा भाई ?'

सुनकर बाबा बेनीमाधव स्तब्ध हो गए। उनका वधा मन अपनी थाह पाने के लिए तेजी से गहराई में बूड़ चला। तभी रामफेर कोठरी में घुसकर वहां के वातावरण को अनदेखा करके अपनी बात सीधे बाबा से कहने लगा— बाबा बाबा, राम जी और कृष्ण जी दो हैं कि एक हैं ?'

बाबा समेत सबका ध्यान रामफेर की ओर गया। सबके चेहरे मुस्कान से खिल उठे। बाबा ने हंसकर कहा — यह बताओ कि रामफेर और मुगना एक ही लड़का है कि दो है ?

बाबा का प्रश्न सुनकर वह झेंप गया और फिर मानो उस झेंप को मिटाने के लिए उसने कहा— हम भी तो यही कह रहे थे सुकवी भैया से कि दोनों एक ही हैं। मुदा बाबा जब एक ही भगवान हैं तो उनके जनमदिन काहे को अलग अलग पड़ते हैं ?'

अरे भाई भगवान तो पल-पल में जनम लेते हैं। तुम लोग भला पल-पल

मे उनकी झाकी-झूला मना सकते हो ?"

'नहीं।"

'बस इसीलिए साल मे दो बार जनमदिन मनाया जाता है। भगवान तो एक ही हैं।"

तो बाबा तुम भगवान जी से कह देव कि आज पानी न बरसावै। आज हम लोग बडी बढिया झाकी सजा रहे हैं। खूब घटा-उटा बनाए ह। कलाश पवत बनाया है, चित्रकूट बनाया है चित्रकूट पर राम जी बैठाए हैं।"

बच्चे की भोली भोली बातें सुनकर बाबा बडे मगन हुए, बोले—'वाह-वाह बडी सजावट की है तुम लोगो ने लकिन एक बात बताओ तुम लोग हमको भगवान जी की झाकी दिखाओगे ?

'हा हा, हमारी अम्मा कह रही थी कि आज बाबा भगवान का जनम करवाएगे। और हमारी आजी क्या बनाय रही हैं जानते हो बाबा ?'

'क्या बना रही हैं भाई ?'

'अरे बडे-बडे माल वन रहे है। बीजपापडी, चिरौंजी मखाने की पापडी और तुमका का-का बताए बाबा! चरणामित बनेगा।"

'अच्छा भला उनको कौन खायगा रामफेर ?"

'भगवान जी खायगे और फिर हम पचन को प्रसाद मिलेगा।"

और भगवान जो सब माल खाय गए रामफेर तो तुम पच क्या करोगे ?"

'वाह तुम इतना भी नही जानते हो बाबा भगवान जी अपने खातिर बनवात हैं और सबको खिलाते ह।'

बाबा ने बेनीमाधव की ओर देखा और कहा—'यह बालक सत्व को पहले प्रतिष्ठित करके ही सत्य को स्वीकारता है। यह सत्य को पहचानता है।'

'अच्छा बाबा पहले आप हमारा काम कर देव, पीछे इनसे बात करो। हमको बहुत काम पडा है।'

बच्चे की गम्भीरता न बाबा का मन मोद से भर दिया। बोले—हा-हा, अपना काम बताओ वह जरूर महत्त्वपूण होगा। क्या काम है सुगना ?'

हमारा काम यह है कि हम पच मिलकर झाकी सजा रहे हैं और आप यहा बैठकर भगवान जी से कहिए कि आज पानी न वरसावै।"

'काह न वरसाव भाई पानी न बरसैहै तो अन्न कैसे होगा ?'

अरे बस छठी तक न बरस, इतना तो बरस चुका है। आग चाहे और जार से बरस। हमारा सब सुख बिगड जायगा।'

बच्चे की बात सुनकर सब हस पडे। बाबा ने कहा—'अच्छा भाई सुगना राम तुम्हारी आज्ञा का पालन करूगा। कृष्ण भगवान, आप हमारे सुगना-रामफेर की अरज सुन लव। राजा इन्द्र को बाधकर रखो जिससे कि हमारे बच्चो का मना न बिगड पावै। जयकृष्ण परमात्मा। जय योगेश्वर नटनागर बालमुकुन्द।'

बच्चा सन्तुष्ट होकर चला गया और उसे सतोष देने के लिए बाबा आखें मूदकर जो प्रायना भाव म आए तो फिर उसी मे रम गए। मनोलोक म बाल

मुकुन्द की झाकी सज गई। सुगना उर्फ रामफेर की बातो से उपजा सुख आनन्द बनने लगा। सुगना मुख कृष्ण मुख बना। कृष्ण अपनी चिर-परिचित बालरूप राम की मनोछवि में प्रतिष्ठित होकर बाबा का मन मोहने लगे। वात्सल्य भाव की गूज में यशोदा मैया का आकार उभरने लगा। अपनी जाघ पर थपकी देते हुए उछाह भरे स्वर में वे गा उठे

> *(माता)* *ले उछग गोविन्द मुख बार-बार निरख।*
> पुलकित तनु आनँदघन छन छन मन हरषै।
> पूछत तोतरात बात मातहि जदुराई।
> अतिसय सुख जाते तोहि मोहि कहु समुझाई।
> देखत तब बदन कमल मन अनद होई।
> कहै कौन रसन मौन जानै कोइ कोई।

रामू लिखना रोककर बाबा के साथ ही साथ उनके शब्दो को धीरे धीरे गुनगुनाने लगा। वेनीमाधव जी भी भावमग्न होकर अपने पैरो पर थाप दे रहे थे। बाबा के स्वर का माधुर्य इस आयु मे भी ऐसा चुम्बक है कि वातावरण का चेतन स्वरूप मुग्ध होकर बध जाता है। गायन समाप्त करने के बाद बाबा कुछ देर तक उसी प्रकार ध्यानावस्थित मुद्रा में बैठे रहे। जब उन्होंने आखें खोलीं तो वेनीमाधव जी ने उनसे सविनय प्रश्न किया—'कृष्ण भगवान को आपने केवल व्रज-जनहितकारी क्यो माना गुरु जी ?'

'मेरे लिए श्रीकृष्ण अथवा श्रीराम के जन्म भूमियो के नाम एक सीमित क्षेत्र का अर्थबोध नही कराते। यह समस्त सचराचर जगत ही भगवान का व्रज अवध है। कौन-सी भूमि भगवान की जन्मभूमि नहीं है वत्स ? रूप रस गध स्पर्श, शब्द नाना आकार प्रकारों मे मेरे रामभद्र को छोडकर प्रतिपल के सहस्राश मे भला और कौन जन्मता है ?'

रामघाट पर नित्य बाबा रामचरित मानस सुनाते हैं। कोल किरात आदि गण दूर-दूर से आकर आजकल चित्रकूट मे ही अपना डेरा जमाए हुए हैं। वे बाबा के लिए फल फूल, कन्द, मूल दूध, दही आदि लेकर आते हैं। इस समय रामजियावन के घर में मानो आठो सिद्धि नवोनिधियो का वास है। तीसरे पहर कथा होती है और फिर भक्तो की भीड रामजियावन के घर मे सजी हुई झाकी देखने के लिए आती है। चित्रकूट की गली-गली मे भक्तो की भीड यत्र तत्र अपन बसेरे बसाए पडी है। पक्षियो का कलरव तो रात को थम जाता है पर यह जनरव मध्यरात्रि से पहले कभी शात नही होता।

तुलसीदास जी के दर्शन करने अथवा रामकथा सुनने की श्रद्धा के साथ साथ ही उनका समस्त माया प्रपच भी अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। इधर वे भक्ति भावना से उद्दीप्त होते हैं और उधर पारस्परिक ईर्ष्या द्वेष से उतने ही सकीर्ण भी हो जाते हैं। न वे उदात्त हैं न सकीर्ण वे दोनो का मिश्रण है। कभी एक रस उमगता है कभी दूसरा। वे मानो सागर की लहरें मात्र हैं जो उछलना भर ही जानती हैं उनमें गहराई तनिक भी नहीं होती।

एक दिन कथा के उपरांत बाबा घर लौट रहे थे तो आती जाती भीड को देखकर बोले—'अयोध्या मे ऐसी भीड भाड अब नही होती। यहा दर्शनार्थी अब प्राय नहीं के बराबर ही आते हैं।

बेनीमाधव जी ने पूछा— पहले किसी समय यहा भीड आती रही होगी बाबा ?"

'हा-हा बचपन मे जब हमारे पच सस्कार कराने के लिए गुरू जी हम अयोध्या ले गए थे उस वर्ष अंतिम बार रामभक्तों और राजसेना के बीच मे बडी करारी झडप हुई थी। हमे स्मरण है अयोध्या रणभूमि बन गई थी।'

बेनीमाधव जी बोले—'एक बार मुझे भी अयोध्या मे जन्मस्थान के सघर्ष का स्मरण है। उसमे मैंने भी चार-पाच लाठिया खाई थी, महाराज। परन्तु ऐसे छोटे-मोटे सघर्ष तो वहा प्राय हुआ ही करते हैं।"

हा मैंने भी देखने मे आए हैं किन्तु जैसा सघर्ष मैंने बचपन मे वहा पर देखा था वैसा फिर कभी नही देखा। उस समय हुमायू बादशाह शेरशाह पठान से हार थे चारो ओर भगदड पडी थी। तभी कुछ विरक्त साधुओ ने जन्म-स्थान के उद्धार करने की योजना बनाई। अपार भीड थी। गुरू जी हमे लेकर अयोध्या पहुचे। × × ×

दिन का चौथा पहर है। नरहरि बाबा रामबोला को साथ लेकर सरयू के एक घाट पर नाव से उतर रहे हैं। घाट पर सन्नाटा है बस दो चार व्यक्ति इधर उधर आते-जाते दिखाई पड रहे है। नाव मे उतरी हुई आठ दस सवारिया स्थिति को देखकर चिंतित हो रही हैं। एक कहता है— जान पडता है कोई उत्पात होनेवाला है। बडा सन्नाटा है।'

ऊपर आकर तख्त पर बैठे एक बुडढे साधु से नरहरि बाबा पूछते हैं— 'आज बडा सन्नाटा है बाबा जी कोई उत्पात हुआ है यहा ?'

अपने पोपले मुह से कुछ-कुछ अस्पष्ट स्वर मे उस चिन्तामग्न बूढे साधु ने कहा— हुमायूशाह हार गया। मुगल और पठान लोग कल और परसो सारा दिन भर एक-दूसरे से गुथे रहे। देखो क्या होता है। तुम लोग जल्दी-जल्दी अपने अपने स्थानों पर चले जाओ भाई। आजकल किसी बात का ठिकाना नही है कि कब क्या हो जाय।"

घाट से आगे बढने पर शृगारहाट नामक मुख्य बाजार मे आए। निर्जनता के कारण वह चौडी सडक और भी अधिक चौडी लग रही थी। कुत्ते तक उस मार्ग पर नही दिखलाई पड रहे थे। रामबोला ने इतना बडा नगर पक्के मकान पक्की सडक और घाट-बाट जीवन मे पहली ही बार देखे थे। इस दृश्य से वह चमत्कृत भी हुआ मन मे बतियाता चला। राजा रामचन्द्र जी की अयोध्या है इसमे तो ऐसे ठाठ-बाट का होना ही चाहिए था। मुदा यह बीच-बीच मे इतने खण्डहर क्या पडे है ? राम जी की अयोध्या मे मुगल-पठान क्यो लड रहे है ? किसी और बादशाह की हार-जीत का प्रश्न क्या उठ रहा है ?' ऐसे कौतूहल भरे प्रश्न उसके अबोध मन को चौकाने लगे

एक जगह आठ दस लडवये तीर-कमान लिए कमर मे तलवारें बाधे एक चबूतरे के पास खडे थे। नरहरि बाबा ने उनसे कहा—'ज सियाराम !"

ज सियाराम बाबा अरे ना हे से बच्चे को लेकर काह घूम रहे हो आप ?"

'बाहर से आए हैं भगत। ठिकाने पर जा रहे हैं। यह प्रलय काल कब तक रहेगा भाई ?

एक सिपाही न खिसियाई हुई हसी हसकर उत्तर दिया— कौ जाने महराज राम जी तो अजु या छोडि क वकुण्ठवासी हो गए। अब जो न हो जाय सो थाडा है।

यह हवेली कौन सेठ की है ?

खिसूमल जौहरी की। वह तो फटे पुराने चिथडे पहनकर भाग गए हैं और हमे मरन के लिए यहा छोड गए हैं। माया उनकी और रच्छा हम करें! ह-ह ह।

दूसरा सिपाही बोला— तो क्या उपकार कर रहे हो तुम !

एक तीसरे सिपाही ने कहा— यह घुरहूना सार जब बोलता है तब अण्ड बण्ड ही बकता है। अरे पापी पेट की गुलामी कर रह है हम लोग। जिसका नमक खाते हैं उसके लिए जान भी देंगे।

नरहरि बाबा शात स्वर म बोले— पेट ही तो राम जी की माया है। पेट और नारी इन्ही दो से ससार नाचता है। तो सब सेठ-साहूकार भाग गए होंगे ?"

'हा महराज बस एक रतनलाल सेठ मूछो पै ताव दिए डटे हैं। दो हजार बराग़ा लडवये उनके साथ है। कोई मुगल पठान उधर मुह करने की हिम्मत नही करता है।

इस हवेली को पार करके बाबा एक गली म मुडे। गली यहा से वहा तक सूनी पडी थी। सारे द्वार खिडकिया झरोखे बन्द थे।

रामबोला ने पूछा— बाबा राम जी मुगल पठानो को अपनी अयोध्या म दगा काहे मचाने देते है ?'

अरे भाइ राम जी के तो सभी लडिका है। और लडके दगा भी करते हैं। क्या तुम नही दगा करते हो ?

रामबोला झेंप गया। बाबा न कनखी से उसकी ओर देखा और मुस्कराकर कहा— तुम भी लडके हो कभी-कभी दगा करते हो।" हल्का विनोद का पुट देकर बाबा ने बच्चे के मन को थाम लिया। एक बडे फाटक के सामने आकर बाबा रुके। उन्होंने फाटक का कुण्डा जोर से खडखडाया और आवाज दी— अजनीशरण ए अजनीशरण !' भीतर से कोई आवाज नही आई। कही दूर पर जय-जय-सीताराम का युद्धघोष गूजा। नरहरि बाबा ने फिर कुण्डा खट खटाया और जोर जोर से अजनीशरण को पुकारा। फाटक की खिडकी के पीछे स आवाज आई— कौन है ?'

हम नरहरिदास।"

कौन दास कहा से आए हैं ?'

वाराहक्षेत्र से नरहरिदास।

तुम्हारे साथ कोई और भी है ?"

अरे, द्वार तो खोलो भाई हम पहचाना नहीं अजनीशरण कहा हैं ? सियारामशरणदास हैं ? जाके उनसे कहा कि वाराहक्षेत्र से नरहरि बाबा आये हैं।'

फाटक के पीछे से एक नया स्वर सुनाई दिया— हा, हम चीन्हि गए। फाटक, खोल दे जयरमवा।

कुण्डी खटकी। खिड़की का एक पल्ला तनिक सा खुला। दो आखो ने झाक कर देखा और पल्ले झट से खुल गए। आओ बाबा। अरे, ऐसी प्रलय म आप कसे आकर फस गए बाबा ? जय सियाराम।"

"जय सियाराम। बडा उत्पात मचा है यहा तो!"

'कुछ समझ म नहीं पडता है महराज, क्या होगा ? जिस बब्बरशाह ने जन्मभूमि को नष्ट भ्रष्ट किया उनही का बेटा आज दण्ड पा रहा है। हार के भागा बिचारा। अब यह पठान क्या करैंग सो कौन जाने।

- 'राम करे सो होय, कलिकाल है भाई।'

रामबोला बडो की बातें सुन-सुनकर अपने मन म कुछ विचित्र-सा अनुभव कर रहा था। उसके हृदय म कौतूहल भरी सनसनाहट और आतक की उठती गिरती तरगें भरी हुई थी। नई जगह का अनजानापन भी मन को अस्थिर बना रहा था। उसके मन म गब्दो का भण्डार मानो चुक गया था मन का यह गूगा पन रामबोला को और भी आतकित कर रहा था।

भीतर दालान म एक वृद्ध साधु चौकी पर बठे माला जप रहे थे। नरहरि बाबा को देखते ही वे उठ खडे हुए और प्रेम से उनकी अभ्यर्थना की। बातो के दौर म बाबा ने रामबोला का परिचय दिया। पनी दृष्टि से बालक को देखकर महन्त जी बोले— यह तो जन्म से ही यज्ञोपवीत धारण करके आया है बाबा इसे आप क्या सस्कार देंगे!'

सासारिकता निभानी ही पडती है महन्त जी स्वय राम जी को भी पृथ्वी पर आकर सस्कार-सम्पन्न होना पडा था।

'हा, यह तो ठीक है। तो क्या परसो रथयात्रा के दिन इस सस्कार देंगे ?"

हा।'

अब तो अयोध्या से रथयात्रा का उत्साह ही समाप्त हो गया, बाबा। श्रीराम की अयोध्या रावण की लका हो गई है।'

लका तो यहा नहीं बन सकती। अब तक दिल्ली म थी, अब चाहे जौनपुर मे बने। राम जी की इच्छा, क्या कहा जाय।'

दो दिन बीत गए। अयोध्यापुरी आतक और अफवाहो से तो भरी रही किन्तु कोई घटना न घटी। रथयात्रा के दिन ब्रह्म मुहूर्त म ही रामबोला का मुण्डन और फिर उपनयन सस्कार हुआ। रामबोला को गायत्री मन्त्र की दीक्षा स्वय नरहरि बाबा ने दी। सस्कार समाप्त होने के बाद रामबोला को तुलसी मण्डप के नीचे काठ के छोटे-से पलने में विराजमान राम जी को प्रणाम करने के लिए भेजा गया। रामबोला जब भगवान को साष्टाग प्रणाम कर रहा था तब तुलसी

की एक पत्ती वृक्ष से झरकर उसके मस्तक पर गिरी। उसे देखकर महन्त जी प्रसन्न मुद्रा में बोले—"उठ उठ बच्चा तेरा कल्याण हो गया। राम जी ने तेरे मस्तक पर भक्ति भार डाल दिया है।"

सुनकर नरहरि बाबा पास आए। बालक के मस्तक पर चिपकी तुलसी की पत्ती को देखकर वे बोले— आपने सत्य ही कहा महन्त जी श्रीराम ने इसे निःसंदेह स्वभक्ति का ही वरदान दिया है। आज से इसका नाम तुलसीदास हुआ।'

उसी दिन महन्त जी ने बालक का अक्षरारंभ संस्कार भी कराया। रामबोला उर्फ तुलसीदास अब विधिवत् पंच संस्कार पाकर ब्राह्मण बटुक बन गया था। महन्त जी ने बाबा से पूछा— बालक को क्या आप अयोध्या में ही छोड़ जाना चाहते हैं?

इसे काशी ले जाऊंगा महन्त जी आचार्य शेष सनातन ही इसे पण्डित बनाएंगे।

हमारा विचार है कि अभी आप कुछ दिनों तक अयोध्या न छोड़ें। राजनीतिक स्थिति शांत हो जाने पर ही यात्रा करना उपयुक्त होगा।'

राजनीतिक स्थिति अब तो सदा ऐसी ही रहेगी महन्त जी। शेर खा आवे चाहे चीता खा। वस्तुतः धर्म धर्म से नहीं लड़ रहा है यह बात अब सिद्ध है। नहीं तो पठान भला मुग़लों से लड़ते? राम जी कालदधि मथकर मानव-मन का माखन निकाल रहे हैं।

संस्कार तथा नया नाम पाकर तुलसी के जीवन में सहसा एक विराट परिवर्तन आ गया। वह बड़ी लगन से पढ़ता। उसे जो कुछ भी पढ़ाया जाता वह दिनभर उसे ही याद करता था। यज्ञोपवीत के सात आठ दिन बाद ही नगर में डौंडी पिटी— खल्क खुदा का, मुल्क शेरशाह का अमल । स्थानीय पठान शासनाधिकारी के नाम की घोषणा हो जाने के बाद सबको अपनी दूकानें खोलने और कारबार चलाने का आदेश दिया गया। समय देखकर नरहरि बाबा ने काशी जाने की योजना बनाई। तुलसी बोला— बाबा, तुम तो कहते थे कि अयोध्या जी में राम जी का महल है। हमें भी दिखाय देव।

सुनकर बाबा की आंखें उदास हो गई। होंठों पर खिसियान भरी पराजित मुस्कान की रेखा खिंच गई वे बोले— राम जी का पुराना महल टूटकर अब नया बन रहा है बेटा।

तो राम जी आजकल कहां रहते हैं?'

मेरे-तेरे अपने चाहनेवालों के हृदय में रहते हैं।'

बात इतनी गम्भीरतापूर्वक कही गई थी कि बच्चा उसका प्रतिवाद करने का साहस तक न कर सका। यद्यपि उसके मन में गहरा प्रश्नचिह्न बना ही रहा।

मार्ग इस समय निरापद था। जगह-जगह पठानों की चौकियां थीं। वे लोग व्यापारी काफिलों को आने जाने के लिए प्रोत्साहन दे रहे थे। बाबा नरहरिदास जी के साथ ही काशी जाते हुए एक अन्य साधु ने यह देखकर कहा— यह पठान

मुगलो से अधिक प्रबन्धपटु लगते है। इनका ब्योहार भी मीठा है।"

नरहरि बाबा हस, कहा —' नया धोबी कथरी मे साबुन। अभी कुछ दिनो तक ता यह अच्छे प्रबन्धक बने ही रहेगे। उन्हे अपना शासन जमाना है।"

'आपने सत्य कहा महात्मा जी पर अब क्या रामराज्य कभी लौटकर नही आएगा ?"

'जब रामकृपा होगी तब रामराज्य भी आ जायगा।"

'रामराज्य कसा होता है बाबा ? बालक तुलसी ने प्रश्न किया।

'बाघ और बकरी एक ही घाट पर पानी पीते है। राह म सोना उछालते चलो तो भी कोई तुमसे छीनेगा नही। जैसा न्याय राम जी करते हैं वसा कोई नही कर सकता है बटा। रामराज्य मे कोई दीन-दुर्बल को सता नही सकता। काई भूखा नही रहता कहा भी चोरी चकारी और अन्य अपराधजनित काय नही होते।'

'ऐसा रामराज्य कब आएगा बाबा ?"

नरहरि बाबा मुस्कराए कहा— तुम आठो पहर अपन मन म प्रेम से गोहराओ राम जी आओ, राम जी आओ तो राम जी तुम्हारी गोहार अवश्य सुनेंगे।"

'राम जी आओ राम जी आओ राम जी आओ।' बालक का भोला मन गुरु स राह पाकर सीधा-सरपट दौड चला। माग भर वह इधर-उधर से मन हटाकर बार-बार यही रटता चलता था। उसकी बुदबुदाहट पर बडी देर बाद नरहरि बाबा का ध्यान गया। तब तक वे अपनी कही बात को भूल भी चुके थ। उन्होने पूछा—'क्या बुदबुदाता है रे ?'

'राम जी का गोहरा रहा हू, बाबा।"

तुलसी के सिर पर प्रेम से हाथ रखकर बाबा बोल —'गोहराए जाओ, रुकना नहीं। कभी तो गरीब निवाज के काना म भनक पड ही जाएगी।"

एक व्यापारी काफिला इन साधुओ के साथ चल रहा था, इसलिए इन्हे माग म भोजन-पानी की तनिक भी चिन्ता न करनी पडी। वे सकुशल काशी पहुच गए। × × ×

८

बाबा का मन अपनी जीवन कथा की तटस्थ हाकर पुनरावृत्ति करते हुए एक जगह पर शून्य-स्थिति मे आ गया और जब सूनापन आता है तो आदत स सधा हुआ राम शब्द तुरन्त उस शून्य का केन्द्र बिन्दु बन जाता है। कुछ क्षणा तक वे शब्द रूपी कमल की केसर म मधुप बनकर चिपके रहे फिर कहा— 'अच्छा बेनी माधव आप की कथा अब कल हागी।"

रात मे स्वप्न देखा कि एक सर्पिणी अपना फन कुडली मे दबाए पडी है और

बाबा उस ध्यान मे खडे हुए देख रहे ह । गकस्मात उन्ह ऐसा लगता है कि जसे उनका हृदयाकाश अगम्य वाद्य ध्वनिया की गूज से भर उठा है । उन्हे स्वप्न म भी ध्यान आने लगा कि जो बाज उन्ह अब तक राम ध्वनि के साथ काना मे ही सुनाई पडा करते थे वे अब हृदय की धडकनो म ऐसे अद्भुत नाद करत सुनाई दे रहे है कि व स्वय ही उसके जादू से बध गए हैं । उन्ह ऐसा लगता है कि जस व एक बहुत बडे सोन के फाटक क सामन खडे है । अपन साहब की ड्योढी देखकर उनके हृदय को आह्लाद का दौरा पडा । वे डरते हैं और अपनी राम आस्था से सभलते हैं ।

प्रभु जी की ड्योढ़ी पर आना क्या कोई हसी ठटठा है ! कसा चमत्कार है। भय लो लगगा ही । पर भय तरा क्या कर लगा र तुलसी ! तू जिसका खास गुलाम है यह उसी मालिक गरीब निवाज तुलसी निवाज की ड्योढी ह ।'

द्वद्व यहा भी न छूटा दूसरा मन खिल्ली उडाल हुए पूछ बठा— क्या प्रभु भी तुझे अपना मानत ह ?'

मानते ह ।

फिर खुलती क्यो नही ? खास गुलाम को भला डयान्नी पर रोक-टोक ?'

पहला मन इस प्रश्नाघात स स्तम्भित हाता है । आह्लाद रुक गया । मन की खीझ बढी । फिर वह सिसक उठा । नीन्द खुल गई । वे उठकर बैठ गए । आखा म आसू छलछला आए हाठ कापने लगे । दोना हाथ जोडकर प्राथना की करुणा मे बह चल—

> राम ! राखिय सरन राखि आय सब दिन ।
> विदित त्रिलोक तिहु काल न दयालु दूजा,
> आरत प्रनत-पाल को है प्रभु बिन ।।
> स्वामी समरथ एसो, हौं तिहारा जैसो तैसो
> काल चाल हरि हाति हिये घनी घिन ।।
> खीझि-रीझि बिहेसि अनख क्योहूँ एक बार ।
> तुलसी तू मरो बलि कहियत किन ?
> जाहिं सूल निमुल, होहिं सुख अनुकूल,
> महाराज राम, रावरी सौं तेहि छिन ।।

रामू झपटकर उठकर बठ गया । वह सहसा मन म लज्जा का अनुभव करन लगा । कई वर्षो के साथ मे यह पहला ही अवसर था जब रामू अपने प्रभुजी के जागने के बाद जागा । बाबा का भजन चलता रहा । वह पीछे खडा-खडा होठा म दुहराता रहा । प्रभु जी के स्वर मे आज कसी अगाध करुणा है । बाबा फिर जब चैतन्य होकर भीतर मुडे तो उसन बाबा के चरणा मे अपना प्रणाम निवेदन किया और फिर अपना टाट समटकर उसे रखन के लिए बाहर दालान म चला गया ।

बाबा उसके पीछे ही पीछे बाहर दालान में आ गए आकाश देखा, बोल— लगता है कि हम जल्दी उठ आए । स्वप्न म सर्पिणी को देखा तो आख खुल गई । बात कहते हुए उन्ह लगा कि वे चीखकर स्वर निकाल रहे है । और कान

म बजन वान ढान-दमाम की गूज मे जैसे उनका स्वर अपने ही मे दबा जा रहा है। उन्ह लगा कि उनके प्राणो मे बाढ आ रही है और प्रवाह के वेग से वे स्वय भीतर ही भीतर कही बहे चल जा रह है।

'रामू !" गूढ़ किन्तु धीमे स्वर में पुकारा।

जी प्रभु जी।"

'लगता है कि जीवन म अभीप्सित क्षण आ पहुचा है। सावधान रहना। मेरे शिशु मन की परीक्षा का कठिन क्षण भी है। कुछ भी हो सकता है।"

सुनकर रामू का मन काप उठा। लडखडाए, घबराहट भरे सिसकते स्वर मे मुह स निकला प्रभु जी "

मृत्यु नही पगले जीवन की बात सोच। चल, अब उठ पडे हैं तो घाट पर ही चलें।

भगत जी और सन्त महाराज को जगा लू तो "

व अपने समय से जागेंगे। तू मुझे ले चल।" रामू क लिए बाबा की बात कुछ पहेली-सी तो थी किन्तु वह इतना अवश्य समझ गया कि बाबा के भीतर कोई रहस्यमय परिवतन हो रहा है। उनके स्वर मे कुछ भारीपन और खिचाव भी था। ऐसा लगता था कि वे भीतर कही पीडित ह परन्तु वह पीडा उनके लिए दुखदायिनी होत हुए कही पर सन्तोष भरी और सुखदायिनी भी है। वे चेहरे पर ही खोए-खोए-से लग रह हैं। स्वर चाल-ढाल सबम यही बात है। ऊपरी तौर से वह दिन अनमना बीता। बाहर से मानो उनकी सारी क्रियाए शिथिल पड गई थी। बोलना चालना, भीड भडक्का खाना-पीना कुछ भी रुचिकर नही लग रहा था। रामजियावन ने वैद्य को लाने की बात कही किन्तु बाबा ने मना कर दिया बोले— मेरे वैद्य स्वय पधार रहे हैं।"

रामू अनुभवसिद्ध भले ही न हो किन्तु काशी म जन्मा है। ऐसे वातावरण म पला-बढा है जहा आध्यात्मिक प्रसग जनसाधारण की गप्पो तक म सुने-बखाने जात ह। चौदह-पन्द्रह वष की आयु म बाबा के पास आया था और इन्ही की सेवा मे जवान हुआ। अनक सन्त-सन्यासियो और ज्ञानियो के साथ बाबा की बातें भी सैकडो बार सुनी हैं इसलिए रात मे जब बाबा लेट तो पैर दबाते हुए उसने कुछ-कुछ सहमे हुए स्वर मे पूछा— प्रभु जी, काया म कोई आध्यात्मिक परिवतन ?'

ह। किसी स कहने-सुनन की आवश्यकता नही है।

दूसरे दिन रात म फिर उसी समय शक्ति जागी। इस बार बाबा भी जाग पडे। बठने लगे तो भीतर से आदश गूजा शवासन साधे पडे रहो। बाबा अचम्भे म आ गए। सोचते यह स्वर है तो मेरा ही पर इतना गम्भीर और गूज भरा है कि मानो रामजी का ही स्वर हो। अभ्यास भरी सास राम राम जप रही है अन्तर्दृष्टि के आगे दृश्य आ रहे हैं

उन्हे भासित हो रहा था कि उनका मन माना एक गुफा है। जिसमे बीचो बीच एक दिया जल रहा है। वह गुफा राम रमी वाद्यध्वनियो से गूज रही है, और वह गूज बढ़ती ही जा रही है। फिर उन्ह लगा कि प्राण मानो उनके

नाभिचक्र से नाचते हुए ऊपर उठ रहे हैं पचेन्द्रियां अजीब सनसनाहट से भर उठी हैं। सारे राग एक सम्मिलित नाद बनकर उन्हें अपने-आप में लपेटते हुए चले जा रहे हैं नाद बवण्डर की तरह उनके मन के चारों ओर नाच रहा है। दीप-शिखा नाद के बवण्डर को नागिन की जीभ बनकर छू लेती है। जैसे ही उसका स्पर्श होता है वैसे ही नादमयी काया आह्लाद की विवश गुदगुदी, कौतूहल और भय की सनसनाहट से भर उठती है। मन-गुफा के कण-कण से ऐसा रस झरने लगता है कि वह ऊभचूभ हो जाते हैं आनन्द और भय में ऐसा द्वन्द्व हो रहा है कि ऊपर से कुछ कहते नहीं बनता पर मन में कहीं से बात भी उठ रही है कि धैर्य धरो, प्रतीक्षा करो।

मन-दीप की शिखा मीनार-सी ऊंची उठती है और उसकी नोक से एक नन्हा ज्योति बिन्दु झरकर गुफा के शून्य में नाचने लगता है। वह क्रमशः बड़ा होता है और बन्द कमल कली-सा नीचे उतर आता है। कली खिलती है खिल कमल से तुलसीदास ही का एक आकार पद्मासन साधे बैठा हुआ प्रकट होता है।

फिर उसके स्पर्श से एक दूसरा ज्योति बिन्दु उठकर नाचता है और वैसे ही सक्रमण करते हुए क्रमशः कमल और कमलासीन तुलसी प्रकट होकर बाबा के बाएं विराजते हैं। क्रमशः आकार से आकार निकलते चले आते हैं। प्रत्येक आकार पहले से अधिक झीना होता है और इन सात आकारों के गोष्ठचक्र के बीच में एक नन्हा-सा सूक्ष्माकार विराजमान हो जाता है। किन्तु यह किसी का आकार नहीं, यह सूर्य है जिसकी किरणें सुनहरी नागिनों-सी चारों ओर थिरक रही हैं। मन चकित और बड़ा ही विकल है। सूर्य उनके आकारों को आत्मसात करता हुआ बढ़ रहा है।

रामू जाग पड़ा। उसने आश्चर्य से देखा कि अंधेरे में बाबा की काया तहखाने में रखे सोने जैसी लग रही है। झिलमिल देह मानो यथार्थ से एक उच्च यथार्थ है।

कुछ देर तक अन्तपट के दृश्यों को देखते रहे। और फिर वह दृश्य भी तिरोहित हो गए। केवल काला अंधेरा बचा और शेष रहा कपाल बिन्दु पर एक अनोखा और सचल भारीपन। बाबा को उन दृश्यों के खो जाने का बड़ा दुख था। उन्हें वैसा ही लग रहा था जैसे उनका पैसा गांठ से खिसककर कहीं गिर गया हो। दुख को शब्दों का जामा पहनने की आदत पड़ गई है। लेटे ही लेटे बाबा अपने आप ही से बोलने लगे—

> कह्यो न परत, बिनु कहे न रह्यो परत
> बड़ो सुख कहत बड़े सों बलि दीनता।
> प्रभु की बड़ाई बड़ी आपनी छोटाई छोटी
> प्रभु की पुनीतता आपनी पाप-पीनता।
> दुहू ओर समुझि सकुचि सहमत मन,
> सनमुख होत सुनि स्वामि-समीचीनता।
> नाथ-गुननाथ गाये हाथ जोरि माथ नाये,
> नीचऊ निवाजे प्रीति रीति की प्रबीनता।

हाथ जोड़कर प्रणाम किया और उठ बैठे। उन्हें बैठे देखकर रामू ने तुरन्त चरणों में माथा टेककर प्रणाम किया।

"रामू!"

'हां प्रभु जी।'

'घाट पर चल बेटा।'

'जैसी आज्ञा प्रभु जी, किन्तु अभी तो रात शेष है।"

'हुआ कर, मुझे ले चल।' इस लालच से रामू के कंधे पर हाथ रखकर बाबा आंखें मींचे हुए ही चल रहे थे कि कदाचित् वे प्रयाग-दृश्य फिर उनके अन्तःपट पर आ जाय। पर नहीं आ रहे। 'तुलसीदास, इस नन्हे वय की आयु में भी तुमने बच्चों जैसी उतावली दिखलाई? याद रख रे मूढ़, यही तो वह दरबार है जहां गर्व से सब हानि होती है। यहां तो अपनी आध्यात्मिक गरीबी एवं मिस्कीनता को प्रदर्शित करने में ही कुशल-क्षेम है। मूर्ख तू भूल जाता है कि राम सरकार रावण जैसे मद-मोटा को नहीं वरन् विभीषण जैसे दीन-दुर्बल पुरुष को शरण देते हैं। इस दरबार में तू जो चतुर बनकर आता है तो तुझसे बढ़कर मूर्ख और कोई नहीं है। हे अज्ञानी, तूने जटायु, अहल्या और शबरी की कथाएं क्या बिसार दीं जिनमें अहंकार रहित प्रेम भाव सहराता है। वे ही प्रभु को प्यारे हैं। रामभद्र मुझे क्षमा करें। मैंने बड़ी चूक की।

> सकल कामना देत नाम तेरो कामतरु
> सुमिरत होत कलिमल-छल-छीनता ॥
> करुनानिधान बरदान तुलसी चहत
> सीतापति भक्ति-सुरसरि-नीर-मीनता ॥'

दो दिनों से भगत जी और बेनीमाधव जी पिछड़ जाते हैं। बेनीमाधव जी को इस बात से गहरा दुख और लज्जा का बोध होता है। कल जब घाट पर आए थे तब बाबा नहाकर व्यायाम कर रहे थे किन्तु आज तो वे अपने ध्यान में भी बैठ चुके हैं। बाबा का विचित्र हिसाब है। नहाकर व्यायाम करते हैं और उस समय वे गणेश भैरव शिव-सरस्वती-हनुमान और प्रभु सीतापति समेत चारों भाइयों की वंदना में अपने अथवा पराए रचे हुए श्लोकों का मानसिक पाठ भी करते चलते हैं। उनकी डण्ड-बैठक की अवधि उनके भजन क्रम के लम्बे पाठ के साथ ही साथ पूरी हो जाती है। तन-मन के इस व्यायाम में उनका आधी घड़ी से कुछ अधिक समय हो लगता है। फिर वे ध्यान में बैठ जाते हैं। बाबा का यह दैनिक कार्यक्रम जब पूरा हुआ और जब भगत आदि भी अपने दैनिक क्रम से मुक्त हुए तो घाट पर चहल-पहल बढ़ चुकी थी। रामजियावन नहा धोकर अपना चंदन घिसने बैठ चुके थे। घर लौटने से पहले शिव जी के दर्शन करने आया करते थे। आज मार्ग में भगत जी ने बाबा को टोका— भैया, का हम दीन दुबलों को हिय छाड़ि के सरग जाओगे?'

सुनकर बाबा खिलखिलाकर हंस पड़े और भगत जी के कंधे पर हाथ रख कर बोले— तुमको छोड़ के जाएंगे तो स्वर्ग में हमारे हेतु राजापुर कौन बसा-

ठोकरें खाकर भी तुम सतत रहे हो उसी का अनुसरण करके तुम्हें सद्गति प्राप्त हो सकती है। अन्य उपाय नहीं। पश्चात्ताप के पाप को सतत प्रार्थना का पुण्य बनाओ। मैंने यही किया है —

> सतकोटि चरित अपार दधिनिधि मथि
> लियो काढ़ि बामदेव नाम घृतु है।
> नाम को भरोसो-बल चारिहू फल को फल,
> सुमिरिये छाड़ि छल भलो कृतु है।

'आपने शतकोटि चरित्र का दधि मथकर जिस कामारि अर्द्धनारीश्वर को पाया वह मुझे एक आप ही के पावन चरित से प्राप्त होने की आशा है। मैं यह भलीभांति समझ चुका हूं कि आप ही मेरा बेड़ा पार लगाएंगे।" बेनीमाधव जी बाबा के चरणों में झुक गए।

उनके सिर पर स्नेह से हाथ फेरते हुए बाबा कहने लगे— जप में ध्यान रमाओ। नाम ही का आधार लो। तुम्हें गति मिलेगी।"

'नहीं मिलती गुरू जी। वर्षों से प्रयत्न कर रहा हूं। धरती पर पानी डालने से वह सोखती है मैं तो चिकना पत्थर हूं पत्थर पानी बह जाता है।" गीली आंखें फिर कटोरी-सी भर उठीं।

बाबा ने स्नेह से झिड़का— कैसे मद हो बेनीमाधव ? दीवार से बार-बार गिरनेवाली चींटी की कथा सुनी है न। उस अदम्य अपराजेय नन्हे जीव से शिक्षा ग्रहण करो। नाम-जप एकाग्रता सिद्ध कराता है। भाव की एकाग्रता अतश्चेतना का वह द्वार खोलती है जिसमें सत्य साधक होकर बसता है।' कुछ क्षणों तक रुककर वे झरने की ओर देखते रहे—झरना नहीं रंग बह रहे थे। रंग आपस में मिलते तो नया रूप लेते, बिछुड़ते तो नया रूप लेते और जब सब रंग मिलते तो झरना बिजलियां बहाने लगता था। बाबा उमंगों से भर उठे खड़े हो गए कहने लगे — अपने जीवन भर के संघर्ष का सुख मैंने अब पाना आरम्भ किया है। आओ चलें।'

उस रात फिर उसी समय शक्ति जागी। बाबा को लगा कि कोई उन्हें झिंझोड़ कर जगा रहा है। वे उठ बैठे। देखा कि सामने एक प्रकाश पुरुष खड़ा है। पुरुष के चरण-नख बिन्दु से एक ज्योति निकलकर उनकी काया के चारों ओर इन्द्रधनुष की तरह फैल गई। ज्योति रेखा जब उनके हृदय को स्पर्श करती है तो वह उन्हें दाहक नहीं लगती वरन् उसका ताप उनके हृदय को गुदगुदा रहा है।

उनकी सांसों में समाई रामधुन बढ़ती जा रही है। उन्हें ऐसा लगता है कि मानो उनकी देह संगीत-लहरियों से भर उठी है। उनकी दृष्टि के आगे फैले प्रकाश का अणु अणु उनकी गूंज से निनादित हो रहा है। इस गूंज से घिरा राम-नाम सुनने में अलौकिक लग रहा है। ज्योति चारों ओर से सिमटकर फिर बिन्दु बन रही है और उनकी काया की ओर बढ़ रही है। बिन्दु उनकी नाभि, हृदय और कण्ठ को छूता हुआ ऊपर बढ़ रहा है उनकी भवों के केन्द्र को स्पर्श

कर रहा है। उन्हें अपने कपाल के मध्य मे गुदगुदी-सी अनुभव होती है और वह गुदगुदी बढ़ते-बढ़ते असह्य हो जाती है। बार-बार जी चाहता है कि सिर रगड दें परन्तु हाथ उठ जाने पर भी वे उसे हठपूर्वक रोक लेते हैं। उन्हें लगता है कि उनका सारा शरीर भीतर से खोखला हो उठा है सांय-सांय कर रहा है। प्राण केवल भृकुटी मे भंवर बनकर चक्कर काट रहे हैं यह चक्कर तीव्र से तीव्रतर होता चला जा रहा है। कण्ठ से लेकर मस्तक तक ऐसा तनाव बढ गया है कि उनसे सहन नहीं हो पा रहा है। मन को बहुत कड़ा करके बाबा अपना राम-जप निरन्तर साधे रखते हैं। श्रद्धा के भीतर द्वन्द्व छिड गया है। उफनकर काव्य शब्द फूटते हैं —

स्वारथ-साधक परमारथ-दायक नाम
राम-नाम सारिखो न और हितु है।
तुलसी सुभाव कही साँचिये परगी सही
सीतानाथ नाम नित चितहू को चितु है।

चेतना सिमटकर शून्य बन जाती है। इन्हें ऐसा लगता है कि राम शब्द मानो काल की नाव बनकर उनकी भृकुटी में धसता ही चला जा रहा है। वे केवल भीतर से ही नहीं, बल्कि बाहर से भी अचेत हो जाते हैं।

उस दिन बाबा सारे दिन मौन रहे। हर वस्तु से अलिप्त और अपने में तन्मय रहे। वार्ता का उत्तर भी सिर को 'हां ना' में ही हिलाकर दिया। भक्तों की भीड़ यथावत् ही आई। उन्होंने सबका मौन भाव से ही ग्रहण किया। उन्हें भीतर से लगता था कि जैसे उनके बोलने की शक्ति और इच्छा ही चुक गई है। किन्तु तीसरे पहर कथा सुनाते समय उनका स्वर अचानक खुल गया।

उस दिन नर-नारियों को कथा में अपूर्व अलौकिक रस मिला। प्रत्येक जन यही अनुभव कर रहा था कि मानो चित्रकूट में राम जी का अतिथि-समाज इसी समय उनके बीच में उपस्थित है और फलाहार कर रहा है। लोग भाव मन्दाकिनी में बह रहे थे। उस दिन कथा समाप्त होने पर भक्तों की भीड़ भौंरा बनकर तुलसी चरण-कमल-स्पर्श का रसपान करने के लिए बावली बनकर उमगी। बाबा का आह्लाद वेग भी साथ ही साथ उमड पड़ा, मानो मन रूपी समुद्र में ज्वार आ गया हो। आंखों के सामने नर नारी साधारण जन न रहकर सीताराम की छवि से भासित हो रहे थे। बाबा की आंखें छलछला आईं कण्ठ गद्-गद हो गया और सीताराम सीताराम कहते-कहते ही वे सहसा अचेत हो गए।

बाबा को भीड़ से बचाकर एकान्त में लाना सहज काम नहीं था किन्तु रामू बेनीमाधव और रामजियावन आदि की तत्परता से बाबा को व्यासपीठ से उठाकर घाट के तखत पर लाया गया। बाबा को अचेत देखकर भीड़ व्याकुल हो उठी थी। वह सारा दिन चिन्ताकारक रहा। बाबा दो बार और अचेत हुए। सहसा बातें करते जहां उनकी आदत के अनुसार मुख पर राम शब्द आ जाता था वहीं वे भाव विगलित होकर गिर पड़ते थे। हरवचन वैद्य बुलाए गए थे पर वे उसमें भला क्या राह पाते, माथे पर बादाम रोगन की मालिश की जाने लगी।

उस दिन सभी व्याकुल रहे। बाबा की खाने की इच्छा ही मानो समाप्त हो चुकी थी। उन्हें अपना पेट भरा भरा लगता था। तबीयत का हाल जब पूछा जाता तभी वे झूमकर कह देते "चिन्ता न करो बहुत अच्छा हूँ।" उनका स्वर मानो किसी खोह में ऐसा झूमकर आता था कि लगता था उन्होंने मटका भाग पी ली हो।

उस दिन बाबा की कोठरी में रामू किसीको आने न देता था। मात्र राजा भगत अड़ गए, बोले— "हम तुम्हार जी का मरम समझत हैं, बाकी तुम अभी निरे बच्चे हो महराज। हम हिय पौढ़ेंगे।" कहकर वे कोठरी के द्वार पर आए, देखा कि बाबा तकिये का टेका लगाए मग्न अधलेटे-से पड़े हैं। ऊंची आवाज में भगत जी ने पूछा— "भैया भीतर आय जायं?"

"आव आव राजा।"

"भैया हमारी यह इच्छा है कि आज तुम्हार ही पास रहें। हम सब समझ गए हैं। हमारा हियां रहना जरूरी है।"

"रहो रहो" गहरा और झूमता हुआ स्वर फूटा— "सब खोइ रहा हम क्या? हमारे तो एक रामचन्द्र हैं

राम रावरो नाम साधु सुर तरु है
राम रावरो नाम साधु सुर तरु है
सुमिरे त्रिविधि घाम हरत पूरत काम
सकल सुकृत सरसिज को सर है।"

भगत जी, बेनीमाधव जी, रामजियावन, हरवचन वैद्य और रामदुलारे उस छोटी-सी कोठरी में भीड़ बनकर जम गए। रामू उनकी चरण सेवा में लग गया। बीच में दो-एक बार बाबा ने अपना दायां हाथ उठाकर अपना सिर दबाया। देखकर बेनीमाधव और राजा भगत साथ ही साथ उठे। उस समय भगत जी में नव-जवानों की-सी फुर्ती आ गई थी। सन्त जी के कंधे पर हाथ रखकर उन्हें धीमे से ढकेलते हुए वे बोले— "बैठो-बैठो सन्त जी, हमने जवानी में भैया की बहुत मालिस की है।" कहकर वे बाबा के सिरहाने बैठकर उनका सिर दबाने लगे।

"कौन? भगत? अच्छा अच्छा भगत।"

"हां भैया।"

"हम छोटे-से रहे तो हमारा सिर बहुत पिराता था। पार्वती अम्मा ऐसे ही दबाती थीं। वह अमृतरस आज फिर पाया। राम तुम्हारा भला करें। हमारी पार्वती अम्मा साक्षात् पारबती जी रहीं। उनकी बड़ी याद आती है।"

सन्त बेनीमाधव का कवि-मन कुछ पूछने को उत्सुक हुआ। भगत जी का दायां हाथ दबाते-दबाते रुक गया, नाक पर उंगली रखकर उन्होंने चुप रहने का संकेत किया।

सन्त जी मन ही मन बड़े कुण्ठित हो गए। उन्हें लगता था कि तुलसीदास जी पर मानो दो ही व्यक्तियों का पूर्णाधिकार है। उनका दुख और क्षोभ मन के मान से फूलने लगा।

बाबा का झूमता स्वर फिर मुखरित हुआ 'बेनीमाधव !"

'जी गुरु जी !" उत्तर देते हुए संत जी के स्वर में उत्साह और आनन्द आया। बाबा ने पुकारकर उन्हें मानो आश्वस्त किया था कि वे उन्हें भी अपना ही मानते हैं। बाबा कहने लगे— 'तुम्हारा मन क्या कहता है, हमारी पार्वती अम्मा मुक्त हो गई होगी ? बड़ा कष्ट पाया बेचारी ने। इतनी तपस्या की और फल क्या मिला ?"

'उनकी तपस्या का फल आप हैं गुरू जी।"

'हां हम हैं, राम हैं राम हैं।" थोड़ी देर में ही लोगों को लगा कि बाबा को झपकी आ गई है। धीरे धीरे सभी ऊंघ गए। केवल रामू ही अथक अपलक बैठा उन्हें तकता रहा। चेहरा कितना शांत है, कितना देदीप्यमान है।

रात के तीसरे पहर फिर ध्वनि जागी। बाबा की आंखें एक बार खुलीं, अपने आसपास देखा। रामू को तख्त पर ही सजग बैठा देखकर वे मुस्कराए, अपना बायां हाथ उठाकर उसके घुटने पर रख दिया और फिर आंखें मूंद लीं। भीतर प्रकाश भर रहा था, इंद्रधनुषी प्रकाश-कूप के तल में दस बत्तियां वाला दीप चमक रहा था। उस इंद्रधनुषी कूप से स्वर उमगता है— अब क्या देखोगे तुलसी ? तुम्हारी इच्छाशक्ति अब तुम्हें सब कुछ प्रदान कर सकती है, क्या लोगे ?'

प्रश्न के उत्तर में आह्लाद उमड़ पड़ा। ऊपरी मन में एकाएक पार्वती अम्मा के दर्शन करने की धुन समाई, परन्तु भीतरी मन गरज उठा— रे मूढ़, राम भज ! राम भज ! राम और पार्वती अम्मा या राम या पार्वती अम्मा ?

इंद्रधनुषी कूप से क्रोध भरा स्वर आया— मैं अब नहीं आऊंगा।' बालू की ऊंची कगार-सा अंतर्दृश्य ढह गया, अंधकार की नदी में छपाछप विलीन हो गया। बाबा एकाएक घबराकर उठ बैठे। 'यह क्या हुआ राम ?" सारी देह कांपने लगी, पसीना-पसीना हो गई। आंखें छलछला उठीं। विगलित स्वर फूटा—

'दीनबंधु दूरि किये दीन को न दूसरी सरन। आपको भले हैं सब, आपने को कोऊ कहूं। सबको भला है राम रावरो चरन।'

उनकी भजे हुए तावे की-सी चमचमाती देह बुझी राख जैसी लग रही थी। बाबा के चौंकने से सभी जाग पड़े थे। बाबा की यह विकलता लोगों के लिए चिंताकारक बन गई।

अगली रात मन की तीव्र उत्सुकतावश बाबा तो जाग गए, पर शक्ति न जागी। बार-बार आग्रह करके भीतर की दुनिया देखनी चाही पर वह न दिखलाई दी। बहुत राम राम जपा, बहुत चिरौरी की पर कुछ न हुआ। उस दिन वे सारा दिन बहुत उदास रहे। अपनी चूक पर उन्हें रह रहकर पछतावा हो रहा था, 'क्या मेरे पातक मुझे यहां तक ले डूबेंगे ! सचमुच मैं इतना अभागा हूं ?' आंखें भर भर आती थीं, कलेजे में सांस फूल फूल उठती थी, 'हे प्रभु, अपनी ड्योढ़ी तक लाकर मुझे यों न दुतकारिए।

श्रद्धालु भीड़ नित्य की तरह उनके चबूतरे पर जुड़ी हुई थी। सब अपनी

चिताओं की गठरी लेकर इस महान सन्त के द्वार पर अपने दुख भार छोड़ने के लिए आए थे। परन्तु यह कौन जानता था कि दूसरों का कष्ट हरनेवाला महापुरुष इस समय अपनी ही मानसिक यन्त्रणाओं से अत्यधिक त्रस्त था। ऐसा लगता था कि दण्ड देने के लिए नियति ने एक ऐसे अदृश्य यन्त्र में बाबा को बन्द कर दिया है जिसमें उतनी ही सुइयां जड़ी हैं जितने कि शरीर में रोम छिद्र होते हैं। ऐसी चुभन है कि न कहते ही बनता है और न सहते ही। किन्तु सेवा से सेवक का निस्तार नहीं, उसे अपना कर्त्तव्य तो निभाना ही होगा। जो अनेक बार प्रतीति पाकर अपने आपको खास सेवक समझता रहा है वही इस समय अपने साहब के द्वारा त्यक्त और तिरस्कृत है। क्या जीवन के अन्त में अब निराशा ही निराशा हाथ लगेगी ?

सन्त बेनीमाधव बाहर लोगों को मना करने चले कि आज बाबा अस्वस्थ होने के कारण किसी से नहीं मिलेंगे परन्तु जैसे ही वे चले वैसे ही बाबा के मन में उनके मन की बात दर्पण-सी प्रतिबिम्बित हुई। वे हाथ उठाकर बोले— "नहीं बेनीमाधव, मालिक के काम की अवहेलना करने का साहस यह गुलाम कभी नहीं कर सकता। अनेक रूप रूपाय राम प्रभु लोक-यन्त्रणा को दर्शा कर मेरी यन्त्रणा की लघुता सिद्ध करने के लिए पधारे हैं।'

किसी के बच्चे को तिजारी का ज्वर नहीं छोड़ता, किसी का बेटा घर त्याग कर चला गया है। किसी की सास कष्ट देती है तो किसी की बहू कर्कशा और जादू करती है। किसी निबल की जमा जमीन किसी सबल ने हड़प ली है और कोई सबल किसी दुबल की भामिनी को बलात हर ले गया है। किसी को भूत सताता है तो किसी को चुड़ल। रोग शोक अत्याचार अनाचार पाप शाप आदि त्रिविध तापों की कष्ट-कथा बहती चली जा रही है और वे झाड़ फूक करते, भभूत-गण्डे बांटते हनुमान जी और राम जी के प्रति निष्ठा जगाते हुए मध्याह्न तक अपने तन-मन को यन्त्रवत परिचालित करते रहे। उन्हें देखकर रामू को ऐसा लगता था कि मानो किसी संगमरमर की मूर्ति में बोलने और अपने हाथों को गति देने की शक्ति अवश्य आ गई है किन्तु है वह निष्प्राण। इतने वर्षों के साथ में रामू ने बाबा के उल्लास, उमंग, वेदना भरे मन की सैंकड़ों झांकियां देखी थीं पर ऐसा उदास कभी नहीं देखा। रामू अत्यधिक चिंतित था, कहीं कुछ गड़बड़ी तो नहीं होने वाली है। कुण्डलिनी की ऊर्ध्व गति में क्या कोई बाधा आई है? कौन जाने ? प्रभु जी अपने श्रीमुख से ऐसे गोपन अनुभवों की बातें कभी किसी को नहीं बतलाया करते, फिर जानने का उपाय ही क्या है। किन्तु ऐसा हो नहीं सकता। प्रभु जी के समान शुद्ध मन और आचरणवाला एक भी व्यक्ति रामू ने नहीं देखा। प्रभु जी अपने मुख से यद्यपि बार-बार अपने आपको अति अधम और पातकी आदि कहा करते हैं किन्तु रामू ने उन्हें न तो किसी के प्रति नीचता बरतते हुए देखा है और न कोई पाप करते ही। उसके मन में वर्षों से यह पहेली बनी हुई है कि आखिर पुण्यात्माओं का पातक होता किस प्रकार का है। बाबा दूसरों का दुख-दर्द मेटने के लिए वर्ष की कुछ विशिष्ट तिथियों पर यन्त्र-तन्त्रादि सिद्ध करते हैं लेकिन रामू ने आज तक कभी यह नहीं देखा कि बाबा ने किसी

को मारने या बदला लेने की भावना से कभी ऐसे प्रयोग किए हों। फिर भला यह कौन-सा कष्ट सह रहे हैं। इस नन्हे वय के सरल निर्मल शिशु से भला कौन-सा पाप हो सकता है? रामू सोच-सोच कर रह गया पर उसे कुछ न सूझा।

दिन में बाबा ने भोजन न किया। बहुत चिरौरी करने पर एक अमरूद के दो टुकड़े खा लिए, तीसरे पहर कथा भी कही पर खींचकर कही। शाम को दर्शन के लिए पधारी हुई रानियों, सेठानियों को भी उपदेश दिया। रात में केवल तनिक-सा दूध-साबूदाना लेकर ही रह गए।

अगली रात भी सूनी ही गई, शक्ति न आई। बाबा अपने आप से बड़े दुखी थे, 'मैंने पार्वती अम्मा का आग्रह क्यों किया? श्रीचरण भक्ति छोड़कर मैंने और कुछ क्या चाहा? सेवक को भला क्या अधिकार है कि वह अपने स्वामी से किसी वस्तु की माँग करे! स्वामी की जो मर्जी होगी वही मिलेगा। तुलसी, जो बात स्वयं तूने अपने से तथा दूसरों से बारबार कही है, उसी जाने-समझे सत्य को नकार कर तूने अपने प्रभु को क्यों अप्रसन्न किया?' मन का अवसाद काव्य-तरंगों में लहराने लगा—

'जानि पहिचानि मैं बिसारे हौं कृपानिधान
एतौ मान ढीठ हौं उलिटि देत खोरि हौं।
करत जतन जासों जोरिबे को जोगी जन
तासों क्योंहू जुरी सो अभागो बैठो तोरि हौं।
मोसो दोस कोस को भुवन कोस दूसरो न
आपनी समुझि-सूझि आयो टकटोरि हौं।
गाड़ी के स्वान की नाईं माया मोह की बड़ाई
छिनहिं तजत छिन भजत बहोरि हौं।

मन की ग्लानि उमड़ती ही गई। 'हे प्रभु, मैं आपके सुनाम की करोड़ों कसमें खाकर अब तो यही कहूँगा, मुझ जैसे लबार, लालची और प्रपंची को अपने द्वार से दूर फेंकवा दीजिए, नहीं तो मैं कहीं इस सुधा सलिल के समान चमकते हुए आपके पवित्र द्वार-पथ को सूकरी की भाँति गंदा कर दूँगा। हे प्रभु, सत्य कहता हूँ, अब मुझे इस धरती से उठा लीजिए। अब जीने की लालसा नहीं और यदि आपने ढील दे दी, मैं जीवित रह गया तो आपके सुयश को अपने पातकों से मैं निश्चय ही कहीं गहरे में डुबो दूँगा।' अपने को प्रभु से दण्ड दिलाने की तीव्र चिढ़ भरी इच्छा करते-करते बाबा की आँखों से गंगा-जमुना बह चलीं।

उनके शब्दों को मन में दोहराते हुए अश्रु विगलित स्वर के प्रभाव में रामू भी बिलख बिलखकर रो पड़ा।

बाबा के दोनों जाँघों में कई दिनों से गिल्टियाँ निकल आई हैं। उनमें से दो अब पक भी चली हैं। पीड़ा भोगते हुए बाबा के मन में बार-बार आया कि जागी किन्तु रूठी हुई शक्ति के कोप के कारण ही उनकी काया पर यह विकृत प्रभाव पड़ा है, किन्तु राजा भगत, मंत वेनीमाधव जी तथा रोज आने जाने वालों में से कई अनुभवी लोगों का यह विचार था कि बलतोड़ के फोड़े हैं। कई लोग

रामू को दोष देते थे कि उसने मालिश करने में असावधानी बरती। वह बेचारा सुनकर लज्जित हो जाता था। रामू पिछले दस-बारह वर्षों से बाबा की मालिश करता आया है। अपनी प्रबल श्रद्धा एवं सेवा भाव के कारण उसने मालिश की विद्या को अब ऐसी बना लिया है कि बाबा परमप्रसन्न होते हैं। उसने अपनी जानकारी में ऐसी रगड़ नहीं की कि बाबा के बलतोड़ हो जाते वह भी एक-दो नहीं चार-पांच फिर भी जब बड़े-बुजुर्ग कहते हैं तो कदाचित् उससे चूक हो गई हो। बाबा इन दिनों अधिक बातें नहीं किया करते थे। वे प्रायः उपदेश ही दिया करते थे, किन्तु अब कथा के समय को छोड़कर बाकी समय 'राम कहो' अथवा 'रामराम जपो' से बड़ा वाक्य नहीं कहते थे एक ओर वे अपने तन की पीड़ा तथा दूसरी ओर आशा और प्रार्थना को अनवरत सहा-साधते हुए अन्तर्लीन ही रहा करते थे। चित्रकूट में सभी लोग बाबा के इस परिवर्तन से चकित थे। भाद्र मास के शुक्लपक्ष की नवमी को रामचरित मानस का पाठ पूरा हुआ। अंतिम दिन आरती में डेढ़ हज़ार रुपयों से कुछ अधिक ही रकम चढ़ी। बाबा ने चित्रकूट के आदिवासियों और भिखारियों की टूटी झोपड़ियों को छवाने और उन्हें आगामी सर्दी के कपड़े दिलाने के लिए दान कर दी।

इसके बाद ही बाबा बोले — 'अब हम काशी जी जायगे। गंगामैया की याद आ रही है। बाबा विश्वनाथ बुलाते हैं।'

दशमी के दिन बाबा ने चित्रकूट से प्रस्थान किया। हजारों जन उन्हें सीमा तक छोड़ने के लिए आए। एक छोटी बैलगाड़ी पर उनकी यात्रा के लिए व्यवस्था की गई थी। विदा का दृश्य बड़ा मार्मिक था। चित्रकूटवाले बाबा को अपना ही समझते थे। सबको ऐसा लग रहा था मानो परिवार का बड़ा-बूढ़ा अपने अन्तकाल में गृह त्यागकर काशी लाभ करने जा रहा हो। अधिकतर लोगों के मन में यह पुकार उठ रही थी कि बाबा का यह अंतिम दर्शन है। भगवान अपने परम भक्त को भाव भीनी विदाई दे रहे थे।

९

क्षितिज पर काशी दिखलाई पड़ने लगी। गंगा दूर से रुपहली गोटे की पट्टी जमी चमक रही थी। देखते ही बाबा आत्मविभोर हो गए। गंगा की ओर हाथ बढ़ाकर मस्ती में कविता फूट पड़ी—

> देवनदी कहँ जो जन जान किए मनसा कुल कोटि उधारे।
> देखि चले झगरैं सुरनारि सुरेस बनाइ बिमान सँवारे।
> पूजा को साजु बिरंचि रचैं तुलसी जे महातम जाननिहारे।
> ओक की नीव परी हरिलोक बिलोकत गंग ! तरंग तिहारे।

गाड़ी ज्यों ही कुछ और आगे बढ़ी त्यों ही सबको सामनेवाले पेड़ पर एक

शव लटकता हुआ दिखलाई दिया।

रामू बोला— लगता है किसीको फासी दी गई है।

और आगे बढने पर सारा दृश्य स्पष्ट रूप से दिखलाई देने लगा। तीन सिपाही वपधारी और एक मूल्यवान वेषधारी सरदार की लाशें पडी थी। उनसे कुछ हटकर लहू के ताल म डूबी एक स्त्री की लाश थी। फासी पर लटका हुआ शव भी जगह जगह से रक्तरंजित था। कौवे वृक्ष पर काव-काव मचा रहे थे और कुत्ते लाशा स जूझ रह थे। आकाश पर कही से उडकर आते हुए गृद्धो का छोटा-सा झुण्ड भी दिखलाई दे रहा था। दृश्य देखकर हरएक का मन भारी हो गया था। गाडी लाशा से जरा सरकाकर निकाली जाने लगी। बाबा अत्यन्त करुण स्वर म निरन्तर राम राम जपने लगे। गाडी स्त्री के शव से जरा आगे ही निकली थी कि बाबा तनिक हडबडाकर बोले— गाडी रोक दो। रामू यह लडकी पानी माग रही ह। अभी मरी नही है। कहने भर की दर थी कि रामू चट से गाडी पर से कूद पडा और उस स्त्री के सिरहाने के पास पहुचा। सचमुच वह पानी माग रही थी। तब बनीमाधव लोटा लिए पास आ गए।

'पानी-पानी।'

कराहता हुआ धीमा स्वर दानो के काना म पड रहा था। बनीमाधव न झुककर चुल्लू स उसके अधखुल होठो म पानी डाला। पानी का स्पश पात ही गर्दन थोडी हिली।

राम राम जपत हुए बनीमाधव न उसके मुह पर पानी का एक हल्का-सा छीटा दिया। युवती न आखें खोली।

राम राम जपो बिटिया।'

गाडीवान और भगत जी का सहारा लिए हुए बाबा गाडी से उतरकर लगडात हुए इसी ओर आ रह थ।

युवती न बेनीमाधव से पूछा— उइ मरि गए ?"

बनीमाधव ने समझा कि युवती शत्रुओ के सम्बन्ध म पूछ रही ह। प्रेम स आश्वासन दिया— हा बिटिया, अब तुम्हारा कोई भी शत्रु बाकी नही बचा। राम राम जपो।

युवती की आखें मुद गइ, हफनी तज हो गई। बाबा तब तक निकट पहुच चुके थ। बनीमाधव जो निरन्तर जोर-जार से राम-नाम जप रहे थे। बाबा जब उसक सिरहान पहुचे तब उसके होठ फिर पानी के लिए बुदबुदाए। बेनीमाधव अपनी रामधुन म युवती के होठो की हरकत पर ध्यान न दे पाए। रामू ने लोटे से एक चुल्लू जल लकर उसके होठो म डाला। पानी का स्पश पात ही होठ कुछ और खुल और पानी के गले स नीच जात ही आखें भी एक बार खुली। बाबा को देखा, आखें कुछ और ऊपर उठी, पड पर लटकती लाश की गाठ दिखलाई दी। युवती बिलखी—"रा आ-आ '

उसके सिर पर हाथ फेरते हुए बाबा बाल— सुख स जाव बेटी, तुम्हारा पति अमर गति पा गया। राम राम भजो।

युवती की आखें बाबा का एकटक निहारते हुए ही थम गइ, उनकी ज्योति

बुझ गई। बाबा बोले— 'कलिकाल में यह आग दिन का खेल हो गया है। वीर थी वह स्त्री जिसने आततायियों द्वारा अपवित्र होने से पहले ही अपनी हत्या कर ली। वीर था उसका पति भी जिसने अकेले ही इतने आदमियों को समाप्त कर दिया।'

'तब इस व्यक्ति को फांसी किसने दी होगी ?'

'कुछ और सिपाही भी रहे होंगे जो बदला लेकर चले गए। लेकिन उनकी स्वामिभक्ति देखो, अपने सरदार तक का शव ठिकाने नहीं लगा गए। वस्त्र मूल्यवान हैं किन्तु रत्नालंकार एक भी नहीं दिखलाई दे रहे हैं। दुष्ट उन्हें लेकर आगे बढ़ गए। वाह रे स्वार्थी दुनिया, अब मैं इन शवों की सदगति हुए बिना आगे नहीं जाऊंगा। बेनीमाधव ! रामू ! तनिक गांव में जाकर दो चार व्यक्तियों को बुला लो, बेटे। इन यवनों को धरती तथा इस वीर दम्पति को अग्नि के सुपुर्द किया जाए।

भगत जी बोले— अच्छा अब तुम तो चलकर गाडी पर बैठो भइया ई बूकरन और गिद्धन ते हम पच जूझि लेब।'

गाड़ीवान बोला— आप सब महात्मा लोग बिराजो हम हियां खड़े हैं।

गाड़ी पर बैठे हुए बाबा गम्भीर भाव से कहीं अदृश्य में देख रहे थे। भगत जी बोले— हमारे तो जनम बीत गवा इहै सब कलिकाल के अत्याचारन का देखत-देखत। मनई के प्राणन का माना कौनो मूल्य नाहीं रहा।

बाबा बोले— अकबरशाह के समय में थोड़ा-बहुत सुशासन आया था, अब वह भी समाप्त हो गया। शासक दिल्ली में रहता है। उसे नित्य हीरे मोती, जवाहिर और सोना चाहिए। स्त्री और धन की लूट का नाम ही कलिकाल है। सारे पाप यहां से आरंभ होते हैं। हम जब पहली बार गुरु परमेश्वर के साथ यहां आए थे तब तो और भी बुरी दशा थी।'

पन्द्रह-बीस व्यक्ति रामू के साथ आ पहुंचे। लाशों पर उड़ती दृष्टि डाल कर पहले वे गाड़ी की ओर ही भागते हुए आए। रामू ने उन्हें बतला दिया था कि गोस्वामी तुलसीदास जी महाराज ने उन्हें बुलाया है। सबने गाड़ी को छूकर सिर नवाया। दो बुड्ढे भी साथ आए थे उन्होंने सबसे कहा— जाव जाव इन वीर पती-पतनी की चिता तयार करौ और दुष्टन सारन का पड़ा रहै देव। खाय गिद्ध-कौवा।''

बाबा ने तुरत ही हाथ उठाकर कहा— ना ना मनुष्य मनुष्य है। काया को सद्गति मिलनी ही चाहिए।

बुड्ढा बोला— अरे महराज, हम तो इनकी सद्गति करें और जो अभी इनके साथी-संगी लौट आवें तो सब मिलकै हमारी ही गति बना डालेंगे।

राम है भइया, राम है। कभी होम करते हाथ जल अवश्य जाता है पर राम जी सबकी दया बिचारते हैं।

बुड्ढा बोला— यह दुष्ट किसीकी दया नहीं बिचारते।''

उत्तर सुनकर बाबा हल्की-सी हंसी हंसकर बोले— दुष्ट यह हो या वह किसीकी दया नहीं बिचारते।

काशी नगरी की सीमा में प्रवेश करते देखकर दूर से ही कुछ पण्डा प्रति निधियों ने उन्हें 'एहर आवा हो जजमान' कहकर ललकारना आरंभ किया। दो पण्डे दौड़ते पास भी आ गए। लढ़िया में बाबा को बैठा हुआ देखकर एक प्रौढ़ पहलवाननुमा पण्डे ने घृणा से मुंह बिचकाकर कहा— अरे ई तौ गुसैयां हौं सरवा।"

रामू, बेनीमाधव आदि के चेहरों पर तमक आ गई किन्तु बाबा खिल खिलाकर हंस पड़े। कहा— 'हां रे अब तुम्हारे यजमान करवत लेने के बजाय राम-नाम लिया करेंगे।'

'अरे तुम्हें भवानी खाय, अधर्मी, तोरे रोम-रोम मा "

'राम रमैं।" बाबा ने पण्डे की गाली को अपने भाव से मढ़ दिया और कहा—' राम कहा कर बचवा। इस शंकर जी की नगरी में भला काली गुण्डई का क्या काम है ?"

"अरे जा सारे। सबेरे-सबेरे तुम्हार राम मुख देखकर हमार तो बोहनी बिगड़ गई।' कहते हुए वे लौट गए। दूसरा युवक पग-दो पग उसके साथ जाकर फिर लौटा और हाथ जोड़कर बाबा से कहा—"ई मंगली के कारण आप हम सबको सराप न दीजिएगा। महराजौ आप ऐसे महात्मा से कुबचन बोलकर जाने कौन से नरक में ठिकाना मिलेगा इस नीच को। बाकी हमें आप छिमा कर दीजिए।'

करवत का वह कटुभाषी पण्डा अपनी जगह से ही चिल्लाया— अबे आता है कि नहीं। सारे, जिजमान न मिला तो तुझे ही ले जाके करवत दे दूंगा, और तेरी बिटिया-मेहरुआ को बेंचकर अपने दक्षिणा के पैसे वसूल कर लूंगा।"

दूसरा पण्डा उसकी ओर बढ़ते हुए चिल्लाकर बोला— अरे, जा-जा, तेरे बाप-दादे सात पीढ़ी तक के आवें तो भी हमारा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते।' दोनों पण्डे आपस में गाली-गलौज करते हुए तेजी से दौड़ पड़े। और बाबा की लढ़िया भी उन्हीं के पीछे-पीछे धीरे-धीरे बढ़ती गई।

गंगा और अस्सी के संगम पर घाट के ऊपर एक पक्की इमारत बनी थी। उसके पहले एक अखाड़ा भी था जिसके ऊपर छप्पर छाया हुआ था और कई बालक, युवक और प्रौढ़ लोग वहां डण्ड-बैठकें लगाते मुग्दर घुमाते अथवा मालिश करवाते या फिर अखाड़े में कुश्ती लड़ते दिखलाई पड़ रहे थे। घाट पर भी थोड़ी-बहुत भीड़ भाड़ थी। अधिकतर लोग घाट की सीढ़ियों अथवा चबूतरों पर बैठे पूजामग्न थे। दूर से आए हुए कुछ देहाती स्त्री-पुरुषों का स्नान भी चल रहा था। बाबा को देखकर अखाड़े के लड़कों ने बाबा आ गए, बाबा आ गए कहकर वैसे ही चिल्लाना आरंभ किया जैसे सूर्य भगवान को देखकर चिड़िया चहकती है। थोड़ी ही देर में बाबा अपने भक्तों से घिर गए। रामू और बाबा दोनों ही बनारस वापस आकर अत्यंत मगन थे। बेनीमाधव और राजा भगत को मकान के ऊपरी भाग की दो कोठरियों में बसाने का आदेश देकर बाबा अपनी कोठरी की ओर बढ़े। कोठरी का द्वार सफेदी से पुता हुआ था। द्वार के चारों ओर रामनामी से अंकित गणेश जी बने हुए थे। द्वार

के अगल-बगल दीवारों पर ऐसे ही राममय स्वस्तिक और कमल बने थे। कई युवक बाबा को सहारा देते अथवा उनके आगे-पीछे लगे हुए उनके साथ बढ़ रहे थे। बाबा ने कोठरी में प्रवेश किया। कोठरी लिपी-पुती स्वच्छ थी। उनकी अनुपस्थिति में किसी भक्त ने चारों ओर गेरू और चूने से राम शब्द के बड़े ही कलात्मक और सुंदर बेल-बूटे चीत दिए थे। चौकी के सामने की दीवार पर राम-नाम की तरंगों में एक रामनामी हंस भी बनाया गया था। और जिधर बाबा की चौकी लगी थी उधर दीवाल में हनुमान जी की एक विशाल-काय मूर्ति भी राम शब्दों से अंकित की गई थी। चारों ओर देखकर बाबा मगन हो गए। बोले— वाह, तुम लोगों ने तो इस कोठरी को बैकुण्ठ बना दिया। किसने किया यह सब ?

बाबा को सहारा देकर चौकी पर बैठाते हुए एक युवक बोला— कन्हई इस एक दिन पुतवा रहे थे तभी सुमेरू रंगसाज इधर आए। उन्होंने आपके नाम की कुछ मानता मानी थी सो पूरी हो जाने पर बड़ा परसाद वरसाद लेकर आपके दर्शन करने आया था। उसी ने कहा कि हम इस कोठरी का राम शृंगार करेंगे।

'वाह, बड़ा रामभक्त है। उसका सदैव मंगल हो।

आने के दूसरे दिन बाबा ने विश्वनाथ और बिन्दुमाधव के दर्शन की तीव्र इच्छा प्रकट की। उन्हें ले जाने के लिए डोली का प्रबन्ध हुआ। काशी का मध्य भाग अन्तर्गृही कहलाता था और श्रेष्ठ पण्डितों, सेठ, साहूकारों तथा सम्पन्न हाट-बाटों से सदा जगमगाया करता था। क्षत्री, ब्राह्मण और बनिया की बस्ती इस भाग में अधिक थी। लगभग छत्तीस-सैंतीस वर्ष पहले राजा टोडरमल के पुत्र राजा गोवर्धनधारी ने सुलतानों के समय तोड़े गए काशी विश्वेश्वर के मन्दिर को फिर से बनवाकर नगर का तेज बढ़ा दिया था। भक्तों की भीड़ से मन्दिर में बड़ी चहल-पहल थी। ब्राह्मणों के समवेत मंत्रोच्चार से वह विशाल मन्दिर गूंज रहा था। काशी विश्वेश्वर की पावन मूर्ति के पास पुजारियों और *दर्शनार्थियों की* भीड़ लगी हुई थी। गोसाईं जी महाराज आ रहे हैं। राम बोलवा बाबा आ रहे हैं। हर-हर महादेव, जै-जै सीताराम' आदि ध्वनियों से मन्दिर का आंगन गूंज उठा। कइयों ने घृणा और उपेक्षा से मुंह भी बिचकाए किन्तु बाबा के लिए मार्ग बनता गया और वे मन्दिर में पहुंच गए। मन्दिर के पुजारियों में बाबा के विरोधी अधिक थे किन्तु महन्त जी उनका बड़ा आदर करते थे। कुछ दूर से ही उन्हें देखकर महन्त जी का मुख खिल उठा। बाबा सहारा लेकर बढ़ रहे थे किन्तु शंकर जी की मूर्ति को देखते हुए वे बड़े आनन्द मग्न थे। दर्शन करते ही वे हाथ बढ़ाकर सस्वर काव्यपाठ करने लगे—

खायो कालकूटु भयो अजर अमर तनु
भवनु मसानु गथ गाठरी गरद की ॥
डमरु कपालु कर भूषन कराल व्याल,
बावरे बड़े की रीझ बाहन बरद की ॥
तुलसी बिसाल गोरे गात बिलसति भूति
मानो हिमगिरि चारु चांदनी सरद की ॥

अथ घम-धाम-माच्छ बसत विलावनि म,
कासी करामाति जोगी जागति मरद की ।।

अपना दुख दरद आसपास के वातावरण का अतर वे उभर भावावेश स रगकर मानो सूय के प्रकाश म अधकार-सा विलीन हो गया। दृष्टि के सम्मुख केवल विश्वनाथ थ और वह भी भाव-सरिता व मस्त प्रवाह म बहकर अपना प्रत्यक्ष स्थापित रूप परिवर्तित कर चुके थ। भाव के दूध मे उमग रूपी चीनी जस-जस घुलती गइ वस-वैस ही आखा का स्वाद बदलता चला गया। मूर्ति के स्थान पर जागत जागी मरद की आकृति अपन आप उभरती ही चली गइ। पिगल वर्णी मस्तक पर जटाजूट से प्रवाहित पावन गगाजल, विशाल अरणाभ नेत्रो की ज्योति की दमक, ललाट पर द्वितीया का चद्र, भस्मीभूत, सपभूषित, दिगम्बर वेशधारी, परम कल्याणकारी शिव भालानाथ गोसाइ बाबा की आखो के आग खडे भृगी बजा रह थ, जिसकी गूज उनक रोम रोम म अदभुत नाद जगा रही था। अतमन के आख-काना से दखते-सुनत बाबा अपने म तन्मय हो गए थे। बाबा एक क बाद एक दो-तीन कवित्त सुनात ही चले गए। सारा वातावरण बधकर महाभावयुक्त हो गया। उनके विरोधियो के मन का लोहा तक उनकी भावशक्ति के ताप से पिघलकर रस बन गया था।

अहा ! ए इ शाला भोण्डो गाशाइ ए बार फिर एशे देख ची।

लगभग साठ-पसठ वप क प्रकाण्ड तान्त्रिक पण्डित रविदत्त लाल वस्त्र पहन, लाल टीका लगाए, लाल-लाल आखा स आग बरसाते हुए मदिर म प्रविष्ट हुए। महत जी न हाथ उठाकर उन्ह शात करना चाहा किन्तु रविदत्त जी का क्रोध उस समय और भी अनगल हो गया। वे बाले— हामको आप चुप नही बोरले शक्ता माहात जी। हामका मा बालो ज तुलशीदाश भोण्डा दगाबाज के दाण्ड दाबा रावीदत। ए बार आमि एइ दुष्ट के निश्चोइ मारबो। अपन कमडलु स चुल्लू म जल लकर आम् आम्, आगच्छ आगच्छ, मारय मारय ।' मत्र का पाठ जोर स आरभ करके फिर धीरे धीरे होठो म बुदबुदाते हुए अत म फट् स्वाहा शब्द क साथ झटके स हाथ उठाकर बाबा पर जल छिडकना चाहा, किन्तु पहल स ही सावधान रामू न छपाक्-स आग बढकर उनके उठे हुए चुल्लू का एसा झटका दिया कि पानी स्वय रविदत्त के मुख पर ही पड गया। अब तो रविदत्त के ताप का ठिकाना न रहा। साप का विषदत मानो उसक ही शरीर म सयोग स चुभ गया। महत जी उठे बाबा ने भी दृष्टि फेरकर दखा, रविदत्त रामू का मारने के लिए झपटे। बनीमाधव और बाबा के आग जा युवक खडे थ वे भी उनकी ओर बढ़े। दशनार्थियो की कौतूहल भरी दृष्टि उस नाटक का खडी देखती रही। पडित रविदत्त बावले की तरह स प्रलाप कर रह थे। बाबा शात स्वर म बोले -- रविदत्त जी शात हो। आप जसे सुप्रतिष्ठित तत्रविद्या विशारद '

चुप कोर चुप कोर शाला भोण्डा।'

एक युवक ने ता म आकर पडित रविदत्त की दाढ़ी पकड ली। बाबा ने

उन्हें बरजा—'कहुई दूर हटा।" फिर विनम्र स्वर में रविदत्त जी से कहा—देवस्थान में क्रोध प्रदर्शन न करें। मैं जा रहा हूं। चलो हो, राजा।" कहकर बाबा ने भोले बाबा को प्रणाम किया और रविदत्त की तनिक भी परवाह न करके लंगड़ाते हुए बाहर निकल गए। रविदत्त चिल्लाते रहे। उन्होंने तुलसीदास को पृथ्वी से उठा देने की प्रतिज्ञा की।

मंदिर के आंगन में अनेक भक्त गोस्वामी जी महाराज की महत्ता बखान रहे थे और रविदत्त की निन्दा कर रहे थे। एक ने कहा—"अरे, जब बटेश्वर महाराज जस प्रकाण्ड तांत्रिक गोस्वामी बाबा का कुछ न बिगाड़ सके तो ई रवीदत्तवा का उखाड़ लेगा?'

मन्दिर के भीतर समझानेवालों की भीड़ से घिरे पंडित रविदत्त यह सुनकर बड़ी जोर से उखड़े। अपने शुभचिन्तकों का घेरा तोड़कर बाढ़ के प्रचंड प्रवाह की तरह बाहर निकले—'हाम क्या उखाड़ शाक्ता, देख!' कहकर वे द्वार तक पहुंच जाने वाले बाबा की ओर, एक बूढ़े का लट्ठ उसके हाथ से छीनकर, झपटे किन्तु हड़बड़ी में चौखट लांघते हुए ठोकर खाकर धड़ाम से गिर पड़े। भीड़ में कुछ लोग उन्हें फर्श पर गिरा देखकर एकाएक जोश में बजरंगबली और बाबा विश्वनाथ की जय-जयकार कर उठे।

थोड़ी ही देर में काशी की गली-गली में यह खबर गूंज गई कि विश्वनाथ बाबा के मंदिर में गोस्वामी तुलसीदास जी पर आक्रमण करनेवाले रविदत्त पंडित को हनुमान जी ने उठाकर पटक दिया। बाबा की महिमा इस कारण से और बढ़ गई। नगर में तरह-तरह की बात सुनकर कई शुभचिन्तक बाबा के दर्शनार्थ आए। पंडित गंगाराम ज्योतिषी, पंडित काशीनाथ, कवि कैलास, सेठ जैराम, आदि लोग यह खबर सुनकर आए थे कि रविदत्त पंडित ने बाबा पर लाठी से प्रहार किया और प्रहार होते ही उन्होंने हनुमानजी को गोहराया।

सुनकर बाबा खिलखिलाकर हंस पड़े, बोले—"अरे भैया, बजरंगबली के मारने के लिए अनेक दुष्ट पड़े हैं, बेचारे रविदत्त का तो केवल एक यही दोष है कि वह निर्बुद्धि है। बेचारा अपने ही आवेश में गिरकर चुटीला हो गया। राम करे शीघ्र ही स्वस्थ हो जाए।'

स्वस्थ? अरे महाराज उसकी तो हड्डी-पसलियां तक का चूरा हो जाना चाहिए। दुष्ट दिन रात मां-मां चिल्लाकर ढोंग रचाया करता है और इस उमर में भी महरियों और मेहतरानियों के पीछे मारा मारा डोलता है।'

कैलास कवि की बात सुनकर पंडित गंगाराम मुस्कराकर बोले—आप तो बहुत बढ़ा चढ़ाकर बात कर रहे हैं कवि जी। रविदत्त के कतिपय विरोधियों ने उसके विरुद्ध बहुत-सी झूठी बातें उड़ा रखी हैं। रविदत्त निर्बुद्धि अहंकारी अवश्य है, जगदम्बा के नाम पर वारुणी का सेवन भी करता है। किन्तु वह कट्टर धर्माचारी तांत्रिक है, व्यभिचारी कदापि नहीं। मैं जानता हूं।'

रामू बोला—तब तो महाराज उसे अपने ही मंत्रपूत जल के छींटों से मर जाना चाहिए। पूछे जाने पर उसने सारी कथा सुनाई।

पंडित काशीनाथ बोले—अरे भाई उसके मंत्रपूत जल से शक्ति उत्पन्न नहीं

होती। हा, वारुणी के एक चुल्लू से ही वह कदाचित "

'उल्लू भल ही वन जाता पर मरता तब भी नही काशीनाथ जी। वह बडा ही चीमड है।" कैलास जी ने हसते हुए कहा।

बाबा बोले—"इसके पिता मेरे और गगाराम के सहपाठी थ। ज्योतिष विद्या मे हम लोगो के आगे जब उसकी दाल न गली तब वह हम लोगा से चिढ कर तान्त्रिक बना था। भोला और भडभडिया था।'

किन्तु यह रविदत्त परम कुटिल है, तुलसीदास! स्मरण करो कि इसकी तामसिक सिद्धिया ने तुम्ह कितना सताया है।" गगाराम ने कहा।

'अरे हमका का सतइहै! भूत पिशाच निकट नहि आवै, महावीर जब नाम सुनाव। सकटमोचन क आगे कौन खडा हो सकता है।"

धय ह महात्मन्, आपकी अटल श्रद्धा से हम सदा हो-ना म भूलनवाले मोहात्माओं को ऐसा लगता है जस बद तहखान मे ताजे पवन भकोरे आन लगे हो।" जराम सेठ ने गदगद भाव से वहा।

'वाह कसी वन्यिा बात कही जैराम। हम गव है कि गोस्वामी जी महाराज के निकट आने का सौभाग्य पा सके। पिछले चालीस बरसा से यही ता हमारी सजीवन बूटी है। राम तुम्हारी जय हो!'

पडित काशीनाथ की बात से गव-स्फूर्ति लकर कलास जी बोल—'अरे, हम तो तिहत्तर वर्षों से यह वरदान प्राप्त ह। हम इनसे चार वप छोटे है। पहली बार मेघा भगत के यहा बात भई रही, फिर तो साथ-साथ बद्री-केदार, मान सरोवर द्वारका तक की यात्रा की।"

कलास जी की बातें सुनते हुए गगाराम जी मद मद मुस्करात रह। जब उनकी बात समाप्त हुई तो धीरे-से गदन उठाई और कहने लगे—"इन दवना को मित्र मानकर तुलसी तुलसिया, रामबोला आदि कहकर पुकारने का सौभाग्य आप लागा के बीच म सबसे पहले मुझे ही मिला था। बारह-तेरह वप की आयु स हम दोना साथ-साथ पढ़े ह। राम-भक्ति तो मानो इनकी घुट्टी म ही पडी है। पर भाई भूत स य भी कुछ कम नही सताए गए ह। ह-ह-ह, कही तुलसी, बताव तुम्हरे हारा ?'

वेनीमाधव की उत्सुकता उनकी आखो मे गेंद-सी उछली। बाबा बडो स्नह भरी दृष्टि स अपन सहपाठी को देखते हुए बोले— सुनाओ-सुनाओ। इन सब का मनोरजन और मेरा आत्मालोचन होगा।'

१०

पडित गगाराम ज्योतिषी का मुखमडल हर दृष्टि के लिए चुम्बक बन गया। पालथी पर बाया हाथ थोडा रखकर उसपर अपनी दाहिनी कोहनी टिकाकर अध बढ़ी दाढी पर मुलायमियत से उगलिया फेरते हुए पण्डित गगाराम पिचहत्तर-

छिहत्तर वष पूव के अपने स्मृति आकाश मे शब्दा के पख लगाकर उडने लग ।

बाबा ने अपनी आखें मूद ली । सहपाठी के शब्दा का लगर बाधकर उनकी ध्यानमग्न काया स्मृति के समुद्र म गहरी पठने लगी और अपनी अनुभवगम्य बिम्ब सजीवता को सागर के तल से मोतिया की तरह उवारकर लाने म तल्लीन हो गई ।

गगाराम जी कह रह थ — हमारी इनकी भेंट पूज्यपाद प्रात स्मरणीय शेप जी महाराज की पाठशाला म हुई थी । शीघ्र ही हम लोग ऐसे गहर मित्र बन गए कि अपने मन की एक एक बात एक-दूसरे के आगे कहने लग । उन्ह गुरूजी महाराज के घर म छत पर बनी एक छोटा-सी कोठरी रहने को मिली थी । उस काठरी की दीवार पर एक विशाल पीपल की टहनिया जब हवा से डोलती तब भाड़ू लगाया करती थी । तुलसो भृत्य शिष्य थे । गुरूजी के घर का सारा काम काज भृत्य के रूप म करते तीसर पहर गुरूजी स शिक्षा ग्रहण करत और रात म पतला सीढिया चढकर हथेली की ओट से दिए की लौ को सुरक्षित करके यह तिमजिले की छत पर पहुचते । × × ×

छत के द्वार पर बारह-तरह वप का एक गौरवण वटुक दिया लिए हुए खडा है । अभी ही उसने सीढिया चढकर द्वार पर पहला कदम रखा है । सामने पीपल की टहनिया उसकी कोठरी की छत से लकर इस छत की मुडेर तक दीवार तक हवा के झोका से ऐसे भाड जाती ह माना किसीके बोझ स इतनी नीचे झुकती हा । बालक की भावना म एक विशालकाय मनुष्याकार झलकता है जो क्रमश बडा होते हुए आकाश को छू लता है और फिर तिरोहित हो जाता है । कलेज के अदर धमाके की गूज अब भी सनसनाहट भर रही है । बच्चे का चेहरा फीका पड गया काया काठ हो गई केवल हाथ-पैर भय की सनसनाहट स जल्दी जल्दी काप उठते जिससे हाथो का दिया हिल हिल जाता था ।

अपने भय-जडित स्वर को क्रमश खोलने के प्रयास मे ऊचा उठात हुए बालक के हाथ-परा म गति आई । कदम आगे बढा ज बजरग दूसरा कदम बढा बजरग-बजरग , दो सहमे डग और आगे बढ गए बढने से भय कुछ-कुछ पाछे हटा किन्तु अभी तो भय का आगार वह दीवार ठीक सामने थी जिसके सहारे दस-पाच पल पहले बच्चे ने अति विशालकाय काया देखी थी । भय अपने आप म हाफने लगा, साथ ही उसमे फिर से एक नइ तेजी भी आई भूत पिशाच निकट नहि आव महाबीर जब नाम सुनाव ।' अपने शब्द अपने ही लिए नइ आस्था बनकर बच्चे को आगे बढाने लगे । वह डरता जाता है और डर को जीतते हुए बढता भी जाता है ।

वह अपनी कोठरी के द्वार तक पहुच ही गया । दिये को हवा स बचानेवाला दाहिना हाथ दरवाज की कुण्डी तक लडखडाता हुआ उठा । कापत हाथो कुण्डी खुली फिर झटके से द्वार खुला । बच्चा हवा की तरह भीतर घुस गया और द्वार उडकाकर उसपर अपनी पीठ टेककर अपनी हथेली के दिये को सभालने और अपने आपको निरापद महसूस करने की स्वचालित प्रक्रिया मे रम गया ।

दूसरे दिन पाठशाला में रामबोला ने अपने मित्र गंगाराम से कहा —"गंगा भूत प्रेत सचमुच होते हैं। कल मैंने पीपलवाले ब्रह्मराक्षस को अपनी आंखों से देखा है।"

सायंकाल के समय तुलसी और गंगाराम दोनों ही पाठशाला के आगे का आंगन बुहार रहे हैं। दोनों सूखे पत्ते, गर्द आदि सारा कूड़ा एक जगह लाकर एकत्र कर रहे हैं हथेलियों से कूड़ा एक जगह डाल रहे हैं और बातें कर रहे हैं। तुलसी कह रहे हैं— हमारी कुठरिया की छत पर पीपल की डाल पकड़े हुए बैठा था। उसने जो हमको देखा तो ऐसी जोर से टहनी को झकझोर उठा कि मानो हमें देखकर उसे बड़ा क्रोध आ गया हो। और वो बड़ा होने लगा। मैंने भी जोर ज़ोर से राम राम, बजरंग-बजरंग जपना आरंभ कर दिया। एक पंक्ति भी बन गई भूत पिशाच निकट नहीं आवें महाबीर जब नाम सुनावें'।"

बालक गंगाराम बोले —"हमारी तो भैया ऐसे में सिट्टी पिट्टी ही गुम हो जाय। काशी में विश्व भर के भूत आते हैं।"

तुलसी बोला—'हमारे बाबा कहते थे कि राम मंत्र सिद्ध मंत्र है। हमको तो वही फलता है। जिसके हनुमान और अंगद जैसे महावीर सैनिक हैं जो नाथों के नाथ विश्वनाथ के भी इष्टदेव हैं उनके चरण भला क्यों न गहें ! अरे हम तो कहते हैं गंगा कि ऐसे बड़े मालिक को कष्ट देने की भी आवश्यकता नहीं उनके परम सेवक बजरंगबली से ही हमें रक्षा मिल जाती है। भूत पिशाच निकट नहीं आवें महावीर जब नाम सुनावें। नासै रोग हरै सब पीरा, जपत निरंतर हनुमत बीरा। संकट सेहनुमान छुड़ावै, मन क्रम वचन ध्यान जो लावै।"

पास ही से दो विद्यार्थी साग भाजी लेकर आंगन में प्रवेश कर रहे थे। उन्होंने सुना। एक ने मुस्कराकर कहा—' अरे वाह आशु कवि जी, बड़ी जोर से कविताई हो रही है !

तुलसी झेंप गया गंगा ने हंसकर कहा— भूत-बाधा दूर करने का मंत्र बना रहे हैं।'

दूसरा लड़का हंसकर बोला—'हे हे हे अभी नाक पोंछना तो आता नहीं मंत्र बनावेंगे। अभी पिछवाड़े का पीपलवाला जो इनके सामने आकर खड़ा हो जाय तो डर के मारे इनके वस्त्र बिगड़ जायं। हिं मंत्र बनाने चले हैं।'

तुलसी को ताव आ गया। उस लड़के की ओर देखकर कहा — देखा है देखा है उस पीपलवाले को भी। मेरी कोठरी की दीवार पर ही तो बैठता है। पर मैं जैसे ही जोर से हनुमान जी का नाम लेता हूं। वैसे ही भाग जाता है।

लड़के आंगन में खड़े हो गए। एक ने कहा — अरे जा रे लबार। झूठ मूठ की न हांक।'

मैं गुरु जी के चरणकमलों की सौगंध खाकर कहता हूं। मैंने पीपलवाले को कई बार कई रूपों में देखा है।'

इतनी बड़ी शपथ का प्रभाव उन विद्यार्थियों पर पड़े बिना न रह सका। एक बोला—'अपना कल्लूदर प्रत्येक अमावस्या की रात को श्मशान पर एक कापालिक से भूत क्रिया सीखने के लिए जाता है। वह कहता था कि आधी रात

को वहा शिव जी के मदिर म सारे भूत एकत्र होते हैं और भूतनाथ की आरती उतारते हैं। वह कहता था कि उस समय जो कोई वहा जाकर शख बजा दे तो सारे भूत उसके वश म हो जाए। पर कोई बजा ही नही सकता। बडे-बडे सिद्ध भी यह साहस नही कर सकते।'

गगा बोला— हमारा तुलसी जा सकता है। यह बडा राम भक्त है।'

हि, देखी-देखी इसकी भक्ति। एक ने कहा।

तुलसी की आखें स्वाभिमान से चमक उठी। कूडे वाली डलिया उठाकर उसने कहा— बटेश्वर अमावस्या की रात्रि मे वहा जाते हैं ना ? उनस कहना कि अबकी अमावस्या की रात्रि म मेरा शखघोष व राम जी की दया स सुन लेंगे।'

अरे जा, जा, बडी राम जी की दयावाला बना है। हग भरेगा बच्चू हग भरेगा।

तुलसी के चेहर पर निश्चय की स्फटिक शिला जम गई थी। उसन अपने सिर पर कूडे की डलिया रखी और सधे पाव बाहर की ओर चला। गगा भी उसके साथ ही साथ चला। कुछ-कुछ सहमे स स्वर म उसने पूछा— तुलसी क्या तुम सचमुच अमावस्या की रात म वहा जावोगे ? मैंन बडी गलती की जो आवेश म आकर कह गया। तुम्हें भी जल्दी आवेश म नही आना चाहिए था। हम दोना से चूक हुइ।''

तुलसी चुप रहा। घूरे तक वे लोग चुपचाप आए। तुलसी ने कडा घूरे पर डालकर डला भाडा फिर सयत स्वर म कहा— अब ता अमावस को जाऊगा गगा। नही जाऊगा तो मेरे राम जी हनुमान जी झूठे सिद्ध होग।'

गगा बोला— राम जी समर्थ है। अपनी निन्दा-बडाई को वह आप सभाल सकते हैं। तुम भूत प्रेता से मत खेलो तुलसी।'

नही अब तो बात दे चुका। मैं जाऊगा।

भाई मेरे मते तुम्हें पहले आचार्यपाद से आज्ञा ले लेनी चाहिए।

हा हा निश्चिन्त रहो। गुरु जी स पूछकर ही जाऊगा। मेरा विश्वास है कि वे आज्ञा दे देंगे।'

अभी से यह भरोसा न बाधो। गुरु जी ज्ञान नारायण को धारण करनेवाले साक्षात शेष भगवान हैं।

तभी तो विश्वासपूर्वक यह कह रहा हू कि वे आज्ञा दे देंगे।' × × ×

नीम के पेड तले मिट्टी के चबूतरे पर कुशासन बिछाए विराजमान ज्ञानमूर्ति, तपोपुज आचार्यपाद शेष सनातन जी महाराज अपने सामने बेंत की बनी हुइ चौकी पर रखी पोथी के कुछ पन्ने हाथ म उठाए हुए बाच रहे थे। बालक तुलसी दबे पाव वहा पहुचा और चुपचाप हाथ बाधे खडा हो गया। गुरु जी कुछ समय के अतराल म पोथी क पन्ने पढकर पलटते हैं और आग पढने म तल्लीन हो जाते ह। तुलसीदास की ओर उनका ध्यान तक नही जाता। बालक सिर झुकाए हाथ बाधे खडा रह जाता है। गुरु जी जब उन पृष्ठो को पढकर पोथी म मिलाते हुए आगे के पृष्ठ उठात ह तो उनका ध्यान एकाएक तुलसी की ओर जाता है।

पूछा—"क्या है ?"

हाथ जोडकर तुलसी ने कहा— एक आज्ञा लेने के लिए सेवा म आया हू गुरू जी।"

'कहो।" गुरू जी ने नये पृष्ठ हाथ मे उठा लिए।

दो दिन पहले हरि और केशव से मेरी बदाबदी हो गई थी। वे भूतो का भय दिखला रहे थे। मैंने कहा कि भूत पिशाच बजरगबली से बढकर शक्तिशाली नही हैं। जिसकी भक्ति राम के चरणो मे अटल है वह भूतो से कदापि नही डर सकता। इसपर हरि ने कहा कि जो ऐसे भक्त हो तो हरिश्चन्द्र घाट पर शिव जी के मदिर मे अमावस्या को आधी रात के समय शख बजा आओ तब हम जानें। बटेश्वर वहा किसी भूत विशारद से भूत विद्या सीखने के लिए जाते हैं। वे मेरे शखवादन के साक्षी होंगे। यदि आप आज्ञा दें तो चला जाऊ।"

गुरू जी मौन रहे फिर पूछा—'अपनी कोठरी मे कभी डरे हो कि नही ?'

कुछ-कुछ तो अवश्य डरता हू गुरू जी, परन्तु श्री केसरीकिशोर का ध्यान से मेरे भय के भूत भाग जाते हैं। आपके उपदेश भी मेरे मन को बल देते रहते हैं।"

पनी परख भरी दृष्टि से अपने शिष्य का मुख निहारकर फिर पोथी की ओर देखते हुए गुरू जी गभीर स्वर म बोले—"पीपलवाला तो बडा सभ्य भूत है केवल दुष्टो को ही सताता है परन्तु सब भूत प्रेत ऐसे नही होते। कुटिल और क्रूर भूतों की कमी नही है। हरिश्चन्द्र घाट भूतों की अति भयावनी लीलास्थली है।"

बालक की वाचालता क्षमा हो गुरू जी, बटेश्वर भी तो वहा जाते हैं।'

वटेश्वर मत्र-कवच मडित हैं। तुमको तो भूत फाड खाएग।"

तुलसी एक क्षण तक स्तभित खडा रहा फिर सिर मे कुछ तनाव आया, झटके से स्वर उठा कहा— राम जी के रहते मेरा कोई कुछ नही बिगाड सकेगा। आपके चरणो का ध्यान ही मेरा रक्षा कवच बनेगा।'

'यह तुम्हारा अटल विश्वास है ?"

गुरु के चरणो म शीश नवाकर तुलसी न कहा,— हा गुरू जी, मेरी परीक्षा ले लें।'

तुम्हें स्वय अपनी ही परीक्षा लेनी है तुलसी। यदि तुम्हारी भक्ति अटल है तो भय भूतनाथ तुम्हारी रक्षा करेंगे। जाओ, मेरा आशीर्वाद है।' × × ×

बाबा ध्यानमग्न बैठे अपने पूर्वानुभव के मनोदृश्य देख रहे थे। प० गगाराम का स्वर उन दृश्यो को गति दे रहा था। पण्डित जी कह रहे थे— पाठशाला म सभी छात्रो को धीरे धीरे यह बात विदित हो गई। पाठशाला म केवल हम चार-पाच छात्र ही छोटी आयु के थे। उनम भी केवल तीन बालक गुरू जी के घर म रहकर सेवा-वृत्ति से शिक्षा ग्रहण करते थे बाकी सब स्थानीय निवासी थे और दक्षिणा देकर पढा करते थे। उनकी सख्या आठ थी, उनम भी छ विद्यार्थी सत्तरह अठारह से बीस-पचीस की आयु वाले थे। बटेश्वर मिश्र की

प्रायु २३ २४ वष के लगभग थी। वह श्याम वण का दुबला-पतला क्रोधी और अहकारी युवक था। गुस्सा सदा उसकी नाक पर ही धरा रहता था। धनी पिता का पुत्र था इसलिए अपने आगे किसी को कुछ समझता नही था। जरी काम का दुशाला और लाल मखमल की मिजई पहनकर वह पढने के लिए आया करता था। हरि केशव दोनो ही सदा उसकी चाटुकारी म रहा करते थे। चतुर्दशी के दिन गुरुजी महाराज किसी नरेश के यहां बुलावे पर गए थे। हम सब लोग उस दिन प्राय अनुशासन-मुक्त थे। तभी हरि ने छेड छाड की। × × ×

हरि, केशव बटेश्वर तथा उनके समवयस्क दो और छात्र दालान मे गुरु जी की सूनी चौकी के पास बैठे हुए थे। तीन बडे छात्र एक अलग कोने म बैठे हुए आपस मे साहित्य विवेचना कर रहे थे।

तुलसी, गगाराम और उनके समवयस्क दो छात्र बैठे हुए आपस मे ज्योतिष सबधी चर्चा कर रहे हैं। एक ने पूछा — अच्छा तुलसी बताओ व्यापार के लिए कितने नक्षत्र अच्छे होते हैं ?"

तुलसी बोला— बारह ! श्रवण के तीन हस्ति के तीन फिर पुष्य और पुनर्वसु इसके बाद मृगशिरा अश्विनी रेवती तथा अनुराधा—इन बारह नक्षत्रो म धन धान्य धरोहर धरती का लेन-देन करो तो लाभ होगा।"

उसी समय कुछ दूर पर बठे केशव ने बटेश्वर से हसकर कहा—'ये तुलसिया परसों अमावस्या को अधरात्रि के समय हरिश्चन्द्र घाट के मदिर मे शखघोष करने जाएगा।

सुनकर तुलसी और उसकी मण्डली के बालक चुप हो गए। बटेश्वर उपेक्षा भरी हसी हसा किन्तु कहा कुछ भी नही। हरि न बात आगे बढाई बोला— "कहता था राम शब्द से अधिक सिद्ध और कोई मत्र ही नही है।" कहकर वह जोर से खिलखिलाकर हस पडा।

तुलसी आवेश म आ गया। वही से बोला — हा हा अब भी कहता हू और कल जाकर रामकृपा से अवश्य ही शकर जी के मदिर मे शखनाद करूगा। देखूगा कि भूत बडे हैं या रामसेवक कपि केसरीकिशोर।"

तुलसी का तश देखकर हरि और केशव दोनों ही हो हो करके हस पडे। अरे वाह रे कपि केसरीकिशोर के भक्त। जब शखिनी डकिनी दहाडेंगी तब कहना।' हरि ने व्यग्य कसा और फिर हस पडा।

तुलसी फिर तैश खा गया झटके से उठकर खडा हो गया और हरि की ओर देखते हुए हाथ बढाकर बोला — भूत पिशाच निकट नही आवै महाबीर जब नाम सुनावै। एक भी भूत चुडैल मेरे सामने नही ही आवगी। देख लेना।"

बटेश्वर क्रोध मे आखें निकालकर गरजा—'अच्छा बक-बक बद कर। ससुरा भिखारी की औलाद टहल-मजूरी करके पढता है और हम विद्वानो से उलझता है ? बडा हौसला होय तो आना बटा कल रात म। परसा सवेरे मदिर के नीचे से डोम ही तेरा शव उठाएगे और वही लोग फूकेंगे।'

तुलसी भी ताव खा गया बोला— जाको राखे साइया मार सक नहि

कोय। बाल न बाका कै सकै जो जग बैरी होय। तुमसे जो बन सो कर लेना। मरना बदा होगा तो राम जी के नाम पर मर जाएगे। कौन हमे रोने को बैठा है।"

यह कहकर तुलसी दालान से बाहर चला आया। गगा भी उसके पीछे ही पीछे आया। आवेश मे भरे तुलसी के कधे पर प्रेम से हाथ रखकर गगा ने कहा—"तुलसी मेरे पिता मणिकर्णिका घाट के योगीजी को जानते हैं। मुझे भी उनके कारण योगीजी जानते हैं। चलो चलकर उनसे सारी बात कहें। वे निश्चय ही कोई सिद्ध जडी-बूटी अथवा मत्र तुम्हे दे देंगे।'

"राम सिद्धमत्र है। बधु मुझे अपने स्वगवासी गुरु बाबा की बात ही राजमाग जैसी सरल और सुखद लगती है। तुम जानते नही हो, हनुमान जी बचपन से ही मेरी बांह गहे हुए हैं। अच्छा, अब चलू गायो की सानी करना है फिर माता जी के साथ स्नान के हेतु दो गगरी गगाजल लाना है।"

उस रात तुलसी जब सब कामों से छुट्टी पाकर अपना दिया लिए हुए ऊपर चला तो सीढ़ियो मे ही हवा का ऐसा गूज भरा थपेडा आया कि दीप की लौ झोका खाकर बुझी अब बुझी जैसी हो गई। मन सहम उठा, राम राम का जप स्वर मे हल्की कपकपी के साथ तीव्र गतिशाली हुआ। बत्ती की लौ नन्ही बूद जसी बन गई पर बुझी नही, फिर क्रमश उसम उजाला बढने लगा। उस उजाले से बालक के चेहरे पर आत्मविश्वास का उजाला बढ गया। सीढी पर जमे डग फिर उठे। तुलसी छत के द्वार तक पहुच गया। रात घनी काली थी किंतु सर्दी की स्वच्छ रात में तारों की चमक लुभावनी लग रही थी। नीचे गली से लेकर कोठरी की छत को छूता हुआ पीपल रात की कालिमा मे अधेरे की एक और गहरी पत बनकर खडा था लेकिन आज वह तुलसी के लिए रुकावट न बना। उसकी कोठरी की छत पर आज उसे कोई दीर्घाकार न बैठा दिखलाई दिया, न वह छत पर धम् से कूदा न कोई आवाज ही सुनाई दी। बालक उत्साह मे तनिक जोर से बडबडा उठा— ज बजरगबली। हे बजरगबली, आज हमने तुम्हें सारे दिन भर ध्याया है। भला कौन भूत अब मेरे सामने आने का साहस करेगा?" बडबडाते हुए कुडी खोलकर जो कोठरी मे कदम रखा तो ऐसा लगा कि उसकी चटाई पर कोई लेटा है। सारी आस्था, मन का चन लडखडा गया। एक बार उल्टे पैरों लौटा फिर देखा तो लगा कि कही कुछ भी नही है। बालक के मन मे नये सिरे से उत्साह आया। उसने अपनी कोठरी मे पुन भीतर तक प्रवेश किया। दिये के प्रकाश म कोठरी के चारो कोने और फश से लेकर छत तक सतक नजरो से सब छान मारा, कही कुछ भी न था। मन का विश्वास फिर लौटा। दिया आड म रखा। द्वार खुले होने स ठडी हवा भीतर आ रही थी। तुलसीदास ने दरवाजे अदर स बद कर लिए। छोटी-सी कोठरी की अकेली दुनिया कुछ अजीब-सी लगी। कुछ भय, कुछ अभय मिलकर तरुण मन को सनसनाहट से भरन लगा। भरी सर्दी मे भी माथे पर पसीने की बूदें चुचुआ उठी। फिर आप ही बडबडा उठा—' धत् तर की रामभगतवा। हनुमान जी का ध्यान कर।"

वह अपनी चटाई पर बिछी हुई कथरी पर बैठ गया। मिट्टी की दवात और

सरकंडे की कलम सामने रख ली। कागज उठा लिया और लिखना प्रारंभ किया

जै हनुमान ग्यान-गुन-सागर।
जै कपीस तिहुँ लोक उजागर॥

मध्य रात्रि तक हनुमान चालीसा पूरी की। तुलसी ने अपने अब तक के जीवन में यह पहला लंबा काव्य रचा था। वह बड़ा ही मगन था। जोश में आकर उसने दो-तीन बार अपने चालीसा काव्य को पढ़ा। दो-एक जगह संशोधन भी किए फिर ऐसे सुख से टांगें पसारकर सोया मानो उसने कोई बड़ी भारी दिग्विजय कर ली हो।

दूसरे दिन सुबह जब वह गंगाजल की गगरियों को घर के भीतर पहुंचाने के लिए गया तो गुरु-पत्नी ने पूछा—"रामबोला, हमने सुना है, तुम आज मसान जाने वाले हो?"

तुलसी झेंप गया फिर कहा—"हम राम जी की शक्ति को भूतों की शक्ति से बड़ी मानते हैं भाई। क्या गलती करते हैं?"

"नहीं बेटा भूत तो बनते बिगड़ते रहते हैं वह तुम्हारे मन के विकारों की तरंगें मात्र ही हैं। उनकी चिंता कभी न करना।"

गुरु-पत्नी की बात अच्छी तो लगी पर मन को जैसे विश्वास न हुआ पूछा—"भइया जी रात में पीपल तले कभी-कभी ऐसा उजाला दिखलाई देता है कि हम आपसे क्या बतलाएं। आकार भले भय के हों पर यह उजाला कौन करता है? कभी-कभी हवा शरीर का ऐसे स्पर्श करती है कि लगता है कोई हमारी देह रगड़ता हुआ चला गया है। यह सब क्या होता है भाई?"

"अपने गुरू जी से पूछना।"

"साहस नहीं होता। गुरु जी कहेंगे तुम्हें अभी इन बातों से क्या प्रयोजन। फिर राम जी भी तो हैं।"

गुरु-पत्नी हंसीं कहा—"तुमने राम जी को देखा है रामबोला?"

"नहीं भाई।"

"तुमने भूत को नहीं देखा और राम जी को भी नहीं देखा। जिसपर चाहो विश्वास कर लो। मन माने की बात है।"

तुलसी बोला—"तब फिर मैं राम जी को क्यों न मानूं! भूत मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकता है।"

तुलसी की गंभीर किंतु भोली बातें गुरु-पत्नी को भली लगीं। स्निग्ध दृष्टि से उसकी ओर देखते हुए कहा—"तुम बड़े अच्छे लड़के हो। भगवान तुम्हारा सदा मंगल करें।"

गुरु-पत्नी के आशीर्वाद ने तुलसी के मन को बड़ा बल दिया। किंतु पाठशाला के बड़े विद्यार्थी विशेष रूप से उसे दिन भर डराते और चिढ़ाते रहे। शुभचिंतक साथियों ने न जाने के लिए आग्रह किया। तुलसी के मन में उनके तर्कों से भूत कभी वास्तविकता का आभास कराते थे और कभी अपने हठवश वह उसे नकारने लगता था। गुरू जी से पूछने की इच्छा बार-बार मन में जागी परंतु उनके सम्मुख

होने पर उसका सारा साहस मानो समाप्त हो जाता था। वे कहेंगे कि जब जाने की आज्ञा से ही चुके हो तो स्वयं अनुभव करना। अब शास्त्रार्थ की क्या आवश्यकता है! उनका तेजस्वी, शात और गंभीर मुखमंडल देखते ही उसे मानो अपने न पूछे हुए प्रश्न का उत्तर मिल जाता था किंतु ऊहापोह फिर भी शात न हुआ और बालक मन हां और ना के झूले में झूलता ही रहा। यह होते हुए भी जितना ही उसे डराया या समझाया जाता था उतना ही उसका हठ और दृढ होता जाता था।

शाम आई तुलसी ने गुरु जी के घर का सारा काम-काज पूरा किया, फिर गुरु-पत्नी से कहा—"आई, हमें आज रात के लिए एक शख दे दीजिए।"

तो तुम जाओगे ही रामबोला?

'हां, आई।"

'कोई भी बाधा आए पर डरना मत बेटा।"

"नहीं आई, डरूंगा तो फिर मेरे बजरंगबली रूठ जाएंगे। मुझे उनके रूठने का भय है। रावण का मानमर्दन करनेवाले रामप्रभु मुझसे न रूठें केवल इसी की चिंता है।" अपने इस उत्तर से उसे सहसा वह आस्था मिल गई जिसे वह इतने दिनो से पाने और संगठित करने के लिए सतत् प्रयत्नशील था।

शख लेकर तुलसी अपनी कोठरी मे आया। आज उसके हाथ मे दिया नहीं था। वह बाहर के अंधेरे से लडने के लिए अपने भीतर के प्रकाश का सहारा ले रहा था।

रात का पहला पहर समाप्त हुआ। कसौटी पर चढने का क्षण आ गया। तुलसी ने शख उठाया, अंधेरे मे शख के स्पर्श मात्र से उसके मन मे एक विचित्र सी सनसनाहट भर गई। हृदय धड धड करने लगा, किंतु उसे लगा कि यह धडकन भयकारी नहीं वरन् उत्साहवर्धक है। हृदय 'राम राम' बोल रहा है 'उठ-उठ' कह रहा है। तुलसी खडा हो गया। कोठरी से बाहर निकला, कुडी चढाई। आगे की छोटी-सी छत अधकारमय थी। बाईं ओर का पीपल अंधेरे मे भय की सघन छायामूर्ति बनकर खडा था। तुलसी स्तब्ध होकर उधर ही देखता रहा। मन तेजी से कल्पना करने लगा कि नीचे से बडे-बडे दांतो और सींगो वाला ब्रह्मराक्षस अपना आकार बढाता हुआ मानो अब उठने ही वाला है। वह आएगा और उसके हाथ से शख लेकर चूर चूर कर डालेगा। वह धक्का देगा और तुलसी छत से गिर के नीचे गली में जा पडेगा। उसकी एक-एक हड्डी-पसली चूर-चूर हो जाएगी। इस दुनिया से उसका नाम निशान तक मिट जाएगा। लेकिन तुलसी की कल्पना शक्ति ने उसके भय का साथ न देकर एक नया रूप ही धारण कर लिया। ब्रह्मराक्षस के बजाय उस हनुमान जी अपनी कल्पना मे बढते हुए दिखाई देने लगे। हनुमान जी के दाहिने कंधे पर राम और बायें पर श्री लक्ष्मण जी विराजमान हैं। दोनों ही अपने अपने धनुषो पर बाण चढाए मानो तैयार बैठे हैं। बालक का मन अपनी कल्पना से प्रसन्न हो गया। जहां राम हैं वहां भय कहां? भय ही तो भूत है। चल रे रामबोला चल, आज यह दिखा दे कि तेरा रामबल अनंत भूतो से अधिक शक्तिशाली और विशाल है।

जय बजरंग।'

सकरी घमावदार सीढ़ियों पर वह उतरने लगा। उतरने की सतर्कता मे एक बार भय फिर उमगा। अपने ही मन के धक्के से उसकी देह दीवार से जा टकराई। वह सहमा और फिर सभल गया—'राम-राम जप रे मन। कहाँ लडखडाता है?'

सीढी का एक द्वार पीपलवाली गली की ओर पडता था। वह द्वार यों तो बन्द रहता था किन्तु गुरु-पत्नी से आज्ञा लेकर उस द्वार का ताला तुलसी ने आज शाम ही को खलवा लिया था। तुलसी उसीसे होकर बाहर आया। द्वार बन्द किए कुडी चढाई ताला बन्द किया कुजी अगौछे मे बाधी और अगौछे को कमर पर कसकर बाध लिया जय गणेश जय भूतेश्वर, बजरग, रामभद्र जय जय-जय-जय।' तुलसी पीपल के नीचे से ही गली पार कर रहा है। शीत उसकी रुई की मिजई को भेदकर उसके भीतर कपकपी भर रहा है। ऐसा लगता है कि तुलसी की परीक्षा लेने को सरदी भी आज अपने चरम बिन्दु तक पहुच रही है। पर अब तो चाहे सर्दी सतावे या स्वय भूत ही आकर उसका हाथ क्यो न पकडे तुलसी अपने निश्चय से डिग नही सकता। वह सदा आगे ही बढेगा।

अधेरी-सूनी गलिया पीछे छटती जाती हैं। शीत के मारे कुत्ते भी इधर उधर दुबके हुए बैठे हैं केवल आहट पाकर जहा-तहा भौं भौं कर उठते हैं। गलियों में यत्र-तत्र बैठे हुए साड भी तुलसी के चलने की आहट पाकर अथवा शीत की प्रतिक्रियावश अपनी सासो की फुफ्कारें-सी छोडते हुए मिल जाते हैं। सकरी गलियो मे बन्द घरों की दीवारें मानो साय-साय बोल रही हैं। एक जगह पर छत्ते के नीचे एक साड परी गली घेरे हुए पडा था। घने अधेरे मे वह तुलसी को दिखलाई न पडा। वह जसे ही आगे बढा तो ठोकर खाई। पैर लडखडाया और वह बैल पर ही गिर पडा। शख की नोक बल के शरीर मे चुभी और उसने फुफकारते हुए अपने सीग इधर घुमाए। तुलसी घबरा गया। बैल भी घबराकर उठने का उपक्रम करने लगा। उसकी पीठ पर गिरे हुए बालक की घबराहट इस कारण से और भी बढी। भूत भले न हो पर भूतनाथ के इस नन्दी ने यदि आक्रमण कर दिया तो तुलसी की जान की खैर नही। इस भय ने सुरक्षा की भावना तीव्र कर दी। बैल के पिछले पैरो के पूरी तरह उठने के पहले ही वह फुर्ती से फिसल पडा और फिर घटनो तथा बायें हाथ के पजे के बल पर उठकर वह तेजी से भागा। अपने भय के भाग जाने पर पशु वही का वही खडा रह गया। आगे थोडी ही दूर पर गली समाप्त हो गई खुला मदान आ गया तुलसी की सास में सास आई।

कितना शीत है। सीलन भरी गलियों की बन्दिनी शीत से यह मदान की मुक्त ठिठुरन तुलसी को अपेक्षाकृत भली लगी। तीन साल पहले गुरू जी के एक धनी यजमान के द्वारा विद्यार्थियों को दान में मिली हुई मिजइया अब अपनी गर्मी प्राय खो चुकी थी। तुलसी को लग रहा था कि शीत महाबली योद्धा बनकर हवा के सनसनाते तीर छोड रहा है। मिजई का कवच उसकी रक्षा नही कर पा रहा है। दौडने से गर्मी बढती है और वही उसकी रक्षा भी कर सकती है।

श्मशान तट पास आ गया। विशाल वट-वृक्ष की अनगिनत जटाएं हवा में झूलती हुई ऐसी लग रही थीं मानो सैकड़ों फांसी के फंदे लटक रहे हों। बरगद पर कोई पक्षी इस तरह रिरिया रहा था कि मानो कोई बच्चा पीड़ा से कराह रहा हो। तुलसी के पांव भय से थम गए पर यह भय अब उसके लिए चुनौती बन गया था। वह श्मशान में आ पहुंचा है। बटेश्वर निश्चय ही यहां उपस्थित होगा। वह अपने कापालिक गुरु से मंत्र विद्या सीख रहा होगा। यहां तक पहुंचकर अब यदि तुलसी घबराया तो उसकी लोक हंसाई होगी। कल विद्यार्थियों के सामने बटेश्वर दम्भ भरे ठहाके लगाएगा। नहीं, ऐसा कदापि नहीं होगा। तुलसी के पांव अब पीछे नहीं लौट सकते। यह श्मशान उसके शंखघोष से गूंजना ही चाहिए। तुलसी वट के नीचे से निर्भय होकर गुजरने लगा। लटकती जटाएं उसके सिर और कंधों को छू जाती हैं लेकिन अब वह उनसे तनिक भी भयभीत नहीं हो सकता।

श्मशान की जलती-बुझती चिताएं दिखलाई पड़ रही हैं। एक चिता की लपटों से उसे तरह-तरह के आकार भी दिखाई देते हैं लेकिन तुलसी अब भयभीत नहीं हो सकता। भूत चाहे उसका गला ही क्यों न दबोच दें पर जब तक वह शिव जी के मंदिर में शंखघोष नहीं कर देता तब तक उसके प्राण कदापि नहीं निकलेंगे। 'जय हनुमान ज्ञान-गुन-सागर, जय कपीस तिहुं लोक उजागर।"

तुलसी शिव मंदिर की सीढ़ियां चढ़ता गया। सामने गंगा तट पर जलती हुई चिता के पास उसे दो आकृतियां बैठी हुई दिखलाई दीं। निश्चय ही बटेश्वर और उसके गुरु कापालिक की आकृतियां होंगी। इस विचार ने तुलसी के भीतर मानो नये प्राण फूंक दिए। पर तेजी से ऊपर चढ़े। भूतनाथ अपने इष्टदेव के इस भक्त को कदापि हतोत्साहित नहीं कर सकते—'जय भूतेश्वर, जय बजरंग, जय-जय-जय सीताराम।'

तुलसी ने विशाल शिवलिंग के समक्ष खड़े होकर पूरी शक्ति के साथ अपना शंख बजाया, एक बार नहीं, पूरे तीन बार बजाया। बाहर दूर से एक कड़कड़ाती हुई आवाज आई— कौन है रे ?"

'राम जी का खास सेवक तुलसीदास।" शिव जी के चबूतरे से ही आत्मविश्वास से जगमगाए हुए बालक ने कड़क कर जवाब दिया।

"ठहर तो सही, रे भण्ड।' दूर की आवाज फिर गरजी, लेकिन तुलसी उस चुनौती का सामना करने के लिए फिर खड़ा न रहा। जल्दी से शिवलिंग की परिक्रमा करके सीढ़ियां से उतरकर वह भागा। इस समय भूतों से अधिक किसी जीवित मनुष्य की मार खाने का भय ही उसे अधिक सता रहा था। श्मशान से बाहर निकलकर वह थमा और दम-भर खड़े होकर हांफते हुए वह श्मशान की ओर देखने लगा— आव बच्चू, बटेश्वर होव, चाहे उनके गुरू होवैं, चाहे गुरू के भूत होवैं, हमार कोऊ का बिगाडि सकत है ? अरे हम तौ राम जी का जय-घोष करि आयेन।' तुलसी श्मशान से यों घर लौट रहा था मानो त्रिलोकविजय करके आ रहा हो। इस समय न तो उसे जाड़ा ही सता रहा था और न किसी प्रकार का भय। आस्था प्रबल होकर उसे राममय बना रही थी। × × ×

भूत भय विजय का यह वृत्तान्त सुनाकर पंडित गंगाराम बोले— ऐसे विकट साहसी हैं हमारे यह परममित्र। इनके कारण हम लोगों का भय भी निर्मूल हो गया। उस समय मेरी जान में हम लोग पंद्रह-सोलह वय के बालक रहे होंगे किन्तु हमसे बड़ी आयुवाले विद्यार्थी भी उसके बाद से इनका विशेष आदर करने लगे। और गुरू जी का मन तो इन्होंने फिर ऐसा जीत लिया कि वे इन्हें पुत्रवत् प्यार करने लगे। उसके बाद आई अर्थात् हमारे गुरू जी की पूजनीया पत्नी ने इनसे भृत्य का काम लेना प्राय: बन्द ही कर दिया। वे इन्हें अधिकाधिक अध्ययन करने के लिए प्रोत्साहन देने लगीं।"

पण्डित गंगाराम के द्वारा कथा प्रसंग जब पूरा हुआ तो कवि कैलास मगन मन अपनी पालथी बदलकर पास ही धरती पर रखे अपने अंगौछे की गांठ खोलते हुए बोले— आस्था में तो यह आरम ही से अंगद का पांव रहे हैं। तभी तो इनकी भावना और काव्य प्रतिभा मिलकर इन्हें महाकवियों में बजरंगबली के समान उड़ानें भरने की शक्ति देती है।" वृद्ध कविवर की प्रशंसा का औरों पर अच्छा प्रभाव पड़ा। जब तक बात की सराहना में 'वाह्-वाह' हुई तब तक कैलास जी के अंगौछे की गांठ से पान का दोना निकल आया। गोस्वामी जी के सामने बैठकर पान खानेवाला कवि कैलास जी को छोड़कर इस नगर में और कोई व्यक्ति नहीं था। दो बीड़े पान जमाए और फिर दूसरी छोटी-सी पुड़िया हाथ में उठाकर बोले— 'हमारा हृदय तो इस समय यह कह रहा था कि पवनसुत केसरीकिशोर की जब कवि बनने की इच्छा हुई तो वे हमारे इन मित्र के रूप में अवतार धारण करके हमारे बीच में आ गए।

श्रोतामण्डली यह सुनकर भाव विभोर हो गई। सामने मूर्तिवत् बैठे हुए महापुरुष की स्तुति के खिले-अधखिले शब्द फूल कई मुखों से झरने लगे। रामू बोला— 'अंधभूतविश्वास के प्रति प्रभु जी का एक दोहा भी तो है—

> तुलसी परिहरि हरि हरहिं पाँवर पूजहिं भूत।
> अन्त फजीहत होहिंगे गनिका के से पूत॥
> सेये सीताराम नहिं भजे न संकर गौरि।
> जनम गँवायो बादिहीं, परत पराई पौरि।

फिर वाहवाही का भ्रमर गुंजन हुआ। कवि कैलास की छोटी पुड़िया खुल चुकी थी। एक चुटकी तमाखू उठाकर अपने मुंह में डालते हुए वे बोले— जोतसी जी अब तमाल पत्र छोड़ो, ये खाया करो—तम्बाकू।'

पं० गंगाराम मुस्कराए, बोले— हम केवड़ा डालके ये सुरती खात है कविवर। फिरंगी अच्छी वस्तु लाए। सुना रहा कि पहले कोई एक फिरंगी लायके अकबर बादशाह को नजर किहिसि और अब तो हमारे देखते-देखते पिछले बीस-बाईस वर्षों में इस विश्वनाथपुरी में बस सुरती ही सुरती छाय गई है। बाकी तमालपत्र चूर्ण को स्वास्थ्य की दृष्टि से हम अब भी इससे श्रेष्ठ मानते हैं।"
बातचीत हल्के लौकिक रंग पर उतर आई थी। एक गम्भीर प्रसंग के बाद

दूसरा उठने के बीच मे विनोद की लहर पट-परिवतन के रूप में मुसाहिबी कला का विशिष्ट गुण बनकर मा ही जाती है।

बाबा बडी देर से बाहरी प्रसगा से अलग अपने मन की गुफा म बैठे थे। प्रशंसा, प्रशसा और प्रशसा

११

लोगो के जाने के बाद सन्नाटा होने पर भी बाबा के मन से प्रशंसा का हिमालय न उतरा। वह बोझ उन्हें भारी लग रहा था। अपने दनिक काम काज करते हुए भी वे प्राय गुमसुम ही रहे। भोजनोपरान्त बेनीमाधव जी ने पूछा— आप उदास हैं गुरू जी। कोई बात मन को मथ रही है कदाचित्?"

बाबा हसे—'हा, मन्मथ की बातें मथ रही है। दिन मे जब तुम सब मेरी प्रशसा के पुल बाघ रहे थे तब मेरे मनोलोक म आकर रत्ना मुझसे पूछ रही थी—भूत से जीते पर क्या अपने गुरु से भी जीत सके?' मैंने सोचा, बेनीमाधव के मनोसघष को मेरे प्रथम नारी-आकषण का अनुभव कदाचित् प्रेरणादायक सिद्ध हो सके। लो सुनाता हू।" × × ×

गुरुपाद शेष सनातन महाराज की वही पाठशाला, वही सारा वातावरण। अन्तर केवल इतना ही हो गया था कि रामबोला तुलसीदास शास्त्री हो गया था। उसकी आयु अब तेईस-चौबीस के लगभग पहुच चुकी थी। छोटी-सी दाढ़ी, नोकीली नाक, रहस्यमय अगम मे झांकती हुई प्रश्न भरी आकषक पुतलिया और लहराते बालो वाला उसका उन्नत कपाल ऐसा चमक रहा है कि पूरी पाठशाला मे केवल एक नन्ददास को छोडकर और कोई भी इतना तेजवान स्वरूप नही दिखलाई देता। नन्ददास के चेहरे पर केवल कोमलता है, किन्तु नवयुवा तुलसी के चेहरे पर वज्र की कठोरता और कुसुम की कोमलता एक साथ झलकती है। और यही उसके चेहरे को सबसे अलग विशिष्ट बना देती है।

तुलसी अब पाठशाला के नये विद्यार्थियो का पढ़ाते हैं। वाराहक्षेत्र म उनके भाग्य विधाता गुरु का देहान्त हो चुका है। गुरुपाद शेष सनातन महाराज ही अब उनके अभिभावक हैं। उनका तथा उनकी धमपत्नी का तुलसी के प्रति पुत्रवत् मोह है। तुलसीदास काशी के नये पडितो मे प्रशसा पा रहा है, इससे गुरू जी अत्यधिक सतुष्ट है। गुरू जी के साले—घर और पाठशाला के व्यवस्थापक—भाग, भोजन, और बातो के अनन्य प्रेमी थे। वे तुलसी के विवाह का डौल भी बठान लगे थे पर तुलसी का कहना था कि अभी उसका अध्ययन समाप्त नही हुआ। मामा जी, इस कारण से आजकल कुछ रुष्ट हैं। तुलसी विवाह हो तो मामा जी को समधी के घर ज्योनार का सुख मिले।

गुरू जी की पाठशाला मे भी किसी का न्यौता स्वीकार न करने का अधिकार मामा जी को ही था। मोटा थुलथुल शरीर, गौरवर्ण, बडी-बडी सफेद मूछें। छात्रो के मामा होने के कारण वे अब जगत मामा हो गए थे। उनका आसन डयोढी के पास आगन मे ही जमता था। वही से वे सारे दिन बैठे-बैठे हुकुम चलाया करते थे।

सबेरे का समय था। एक ब्राह्मण युवक न्यौता देने आया था— मामा जी दण्डवत् प्रणाम करता हू। विद्यार्थियो को न्यौता देने आया हू।'

सामने चौकी पर ढेर सारे ठाकुर जी फैलाए, उनपर चन्दन की बिन्दिया लगाते हुए बात सुनकर मामा जी ने चन्दन की कटोरी चौकी पर रख दी। एक नजर उठाकर यजमान को देखा, फिर जनेऊ से पीठ खुजलाते हुए पूछा—' कितने विद्यार्थी चाहिए ?"

कितने विद्यार्थी है महाराज ?"

तुम्हे किस मेल के चाहिए पहिले यह बतलाओ। द्रविड, महाराष्ट्र पुष्करिया गुजर, गौड, मथिल, उडिया, कनौजिया, सारस्वत कौन से मेल का ब्राह्मण जेंवावोगे ?

अरे मामा जी हम सब मेल के ब्राह्मणो को निमत्रण देंगे। पन्द्रह-बीस जितने विद्यार्थी आपके यहा हो सबको लेकर पधारिए। आज मेघा भगत का भडारा है।"

ठाकुरो पर फिर से चन्दन की बिन्दिया टपकाने की क्रिया आरभ करते हुए मामा जी बोले— 'बडी तेजी से पुजन लगा है यह लडका मेघा भी। अच्छा भला पण्डित था अब भगताई सूझी है, राम राम। हमारे तुलसी को भी एक दिन यही पागलपन लगेगा। खैर, तो कौन भडारा दे रहा है ?"

"जैराम साव।"

' कहा होयगा भडारा ? राजघाट मे त्रिलोचन मे, कि दुर्गाघाट, मगलाघाट रामघाट अग्नीश्वरघाट आगे ?'

' बिन्दुमाधव घाट पर होयगा, मामा जी।'

' हू-ऊ हू तो बिन्दुमाधव मे कहा पर होयेगा ? लक्ष्मीनृसिंह के पास कि पचगगेश्वर आदि विश्वेश्वर दक्षेश्वर कि दूधविनायक कि कालभरव, कहा होयगा यह भडारा ?" पूछकर मामा फिर से चदनी सभालकर एक-एक ठाकुर पर चदन थोपते हुए महल्लो के नाम लेते चले।

दूधविनायक के पास। मामा ने बचे-खुचे ठाकुरो को जल्दी से चदन लेपकर अब उनपर फूल चिपकाना आरभ करते हुए कहा— हा तो निमत्रण देने आए हो ? हमारी पाठशाला के विद्यार्थी कुछ ऐसे वैसे नही हैं, जो हर जगह पहुच जाय। क्या समझे ? कोई तत्र मे कोई मत्र मे, कोई ज्योतिष, छादस निरुक्त, व्याकरण मे कोई वशेषिक तर्क, सास्य योग मीमासा, काव्य, नाटक, अलकार आदि मे "

न्यौता देने के लिए आए हुए ब्राह्मण युवक ने हाथ जोडकर मामा जी की बात काटते हुए उत्तर दिया—"मामा जी, मैं केवल आपके विद्यार्थियो को ही

ही बल्कि उनके साथ आपको भी सादर निमत्रण देन आया हू।"

मामा जी का मन तरी म आया। मान भर स्वर म बाल— तो पहले क्यो नही बताया ? क्या नाम है तुम्हारा ?"

'महाराज, इस अकिंचन का नाम अलपियुध्मगजपुरदरगरुडध्वज वाजपेई है।"

मामा नाम सुनत ही सकते म आ गए। मुह और आखें फाडकर उस दखते हुए कहा—' इतना बडा नाम ! दक्षिणा तो अच्छी मिलगी न ? समझ लो, आचार्यों के आचाय परमपडित शेप सनातन जी के शिष्य, और क्या नाम है कि उनके माननीय साले अर्थात् "

मामा, सारी बातें अपन इस भानज क ही ऊपर छाड दीजिए। मैं आपके लिए विजया का गोला भी पीसकर ल आया हू। यह लीजिए, यह भाग, यह बादाम और यह रही केसर की पुड़िया और दूध के पसे "

रहने दे, रहने दे, दूध तो घर म बहुत है। अच्छा तो हम सबको लेकर समय से पहुच जायग।"

निमत्रण के दिन छात्र वग म एक विशप आनद का लहर दौड जाया करती थी। कुछ बातूनी विद्यार्थियो क लिए तो न्यौता पाकर जीमन स पहले तक का समय निमत्रणकर्ता की हैसियत का अनुमान लगाकर उस हिसाब स मिठाई, पकवानो और तरह-तरह के स्वादिष्ट व्यजना की कल्पना करन म बीतता था। न्यौता के पहले मुह से लार टपकाना और उसके बाद सताप स डकारें ले-लकर भोजन का रसालोचन करन म ही वे अपन ज्ञान की चरम सिद्धि मानते थे।

इनकी भीड स अलग बड़े आगन क एक धुर कोन म तुलसी और गगाराम एक गभीर विचार म लीन थ। तुलसीदास कह रह थ— गगाराम, आज बडे भोरहरे ही मैंने पहल नीलकठ के दशन किए और फिर सयोग स एक चकवे को भी देखा। या तो इस घर म न्योल प्राय ही देखन का मिल जाया करते है, फिर भी सयोग की बात है कि आज मैंन उसे बार-बार देखा। बोलो, इन सबका अथ क्या हुआ ?'

गगाराम अपने पालथी बधे दोना परो के तलवा को अपन दोना हाथा से मस्ती म मीजते हुए मुस्कराकर बोल—' फिर क्या है, आनद ही आनद है।

तुलसी को उत्तर से अधिक सताप नही हुआ। वह स्वय ही विचार करत हुए बोले—' शुभ शकुन तो है ही, किंतु जब अलग अलग विचार करके तीनो को एक चित्र म बाधता हू तो अथ निकलता है कि नीलकठ विप को पचाने वाला है चकवा विरही है और नकुल सर्प-सहारक है। सब मिलाकर अथ यह हुआ कि आज का दिन मेरे लिए सघर्ष करन विप पान और पचाने तथा विरह ज्वाला मे दहकने का दिन है। फिर शुभ कहा हुआ ?"

गगाराम मस्ती म थ। मित्र का झिडकत हुए कहा— तुम कवि लोग अपना कल्पनाशीलता म अति पर पहुच जाते हो। यदि शकुन शुभ न होते तो पुरान ज्योतिपाचाय लोग क्या यो ही इन्ह गिना जाते ?"

उस समय घोडू पाटक नाम का एक छात्र आया और बड़े उत्साह से

बोला— 'महा तुलसी जी, शुभ सूचना सुनी काय ?''

'कौन-सी ? '

''दूधविनायक पर मेधा भगत का भंडारा म्हणजे किसी धनी ने भकरा प्रकार च मिष्टान्न भाणि नाना प्रकार के बरसस व्यंजन जिमाने का उत्साह दिखलाया है। हां, जरा हमारा प्रश्न विचारो तो यही गंगाराम भैया, कि मिठाइयां म कौन-कौन-सी वस्तुएं हो सकती हैं ?'

गंगाराम मुस्कराए, बोले— घोड्या फाटक, भभी ज्योतिष ज्ञानरूपी किले के मिठाई वाले फाटक म मेरा प्रवेश नहीं हुआ है। रामबोला से पूछो। इनकी जिम्या से राम बोलत हैं।''

खर आहे। ते भी विसरलोच हो तो। तुलसी भया, हमारा प्रश्न तो तुम्ही विचारो। छात्र मंडलों म तुम्हार विचारने से चांगला प्रभाव पड़ेगा। विचारो, झटपट। हमकूं चौक जाना है।'

तुलसी उस समय भपने ही गुताड म थे, बोले— घोडू फाटक, भौर चाहे जो व्यंजन हो, पर तुम्हारे महाराष्ट्र के वह लक्कड़तोड़ दंत भंजक लड्डू कदापि नहीं होंगे, इतना मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूं। भच्छा अब स्वाद-चर्चा यहीं समाप्त करो।''

फाटक चिढ़ गया, बोला— तुम रसहीनों को, सच पूछो जाए तो भोजन कराना ही पाप है।

'भरे हमारो रोटी-दाल का तो पुण्य बना रहने दो भया।'' गंगाराम ने विनोद म गिड़गिड़ाने का स्वांग किया।

नको। तुम्ही ज्ञानाचो रोटी भाणि ज्ञानाची डाल खाभ्रा। भरे स्वाद चर्चा ब्रह्म चर्चा से तौल म कदापि कम नहीं बठती महाराज, समझते क्या हो ? भौर एक तरह से देखिए तो स्वाद-सुख रति-सुख भाणि ब्रह्म-सुख, इन तीनों प्रकार के सुखों म स्वाद-सुख ही मानव के साथ जन्मता भौर मरता है। बाकी दोनों सुख तो यहीं के यहां पड़े रह जाते हैं।

गंगाराम ने गंभीरता का ढोंग करते हुए कहा— यथार्थ है। किंतु सतमार्ग पर निकल भागने वाले मनुष्य के मगज म यह गूढ़ सत्य कभी समा ही नहीं पाता। मैं भी तुलसी को समझा-समझाकर हार चुका हूं।'

'भच्छा चलूं पाचक ले भाऊं। मैं सदा थोड़ा भधिक ही ले भाता हूं। गंगाराम भया, जिस किसीको भावश्यकता हो वह दस कौड़ी पर हमसे पाचक खरीद सकता है।'

गंगाराम बोले— तब तो तुलसी के कारण तुम्हें भवश्य घाटा होगा, फाटक। इन्होंने हाल ही म ढेर सारा लवणभास्कर चूर्ण बनाकर रखा है।''

बचने के लिए ?''

'नहीं, भोजन भट्टों को दान करके पुण्य कमाएंगे।'

घोडू फाटक तुलसी को गंभीर रहस्यभेदी दृष्टि से घूरने लगा। फिर एकाएक गिड़गिड़ाहट वाली मुद्रा म भा गया भौर कहने लगा— भरे भया, हमारी द्रव्यहानि काहे कराते हो ? थोड़ा-बहुत यही सब करके मैं भपना खर्चा

पानी निकाल लेता हू ।"

तुलसी बोले—"खर्चे-पानी के लिए तुम्हे विशेष द्रव्य आवश्यकता ही क्यो होती है घोडू ?"

अर्थ भरी दृष्टि से फाटक को देखकर गगाराम बडी जोर स खिलखिलाकर हस पडे, कहा—"तुम समझते नही तुलसी, दशाश्वमेध पर एक धोबिन से यह अपनी धुलाई कराने लग है। धुलाई के पैसे भी देने पडते है न।"

तुलसी ने घृणा से नाक भौं सिकोडी और कहा—"विद्यार्थी जीवन म यह सब ।"

फाटक ताव खा गया, बोला— 'बस-बस, ज्यादा ज्ञान मरे आगे न बघारना। तुलसी भया, काशी मधे दोने पडित, मी आणि माझा माऊ। शास्त्राथ म सबको हरा सकता हू।

हमारे सामने सिह की तरह दहाडने का स्वाग मत करो फाटक। अभी परसो-नरसो जब तुम्हारी सन्यासिनी प्रिया तुम्हारे कान उमठ रही थी '

'भैया गगाराम जी, मैं तुम्हें और तुलसी भया को, यह लो साष्टाग दडवत् किए लेता हू, यह लो नाक भी रगडता हू। यह बात किसी से मत कहना। पिता जी आजकल मेरे विवाह की बात चला रहे हैं। व्यर्थ म मेरी बदनामी फल जायगी। अच्छा तो चलू, पाचक ले आऊ। मोहन भोग, श्रीखड और देखो क्या क्या उत्तम सामग्री मिलती है। विश्वनाथ बाबा मेघा भगत की भक्ति, उसके यजमान के धन में बढ़ोत्तरी करें। नित्य ब्रह्मभोज हो।"

फाटक के जाने के बाद तुलसी बोले—'या तो भोजन भट्ट है पर है बडा निष्कपट।'

गगाराम बोले—'घाघ है घाघ। बस देखने मे ही भोला भाला लगता है। उस सन्यासिनी के पास सुना है कि एक हडिया भरके सोन की अशर्फिया हैं। वह अधेड सन्यासिनी विलासिनी और महाकजूस है। उसने इसके ऐसे दो-तीन वटुक प्रेमी पाल रख हैं। उनकी दक्षिणा की सारी राशि वही छीन लेती है और सबको ही लालच देती है कि जिसकी सेवा से मैं अधिक सतुष्ट हाऊगी उसीको अशर्फिया दे दूगी।'

तुलसीदास ठठाकर हस पडे, कहा—'माया महा ठगिनि मैं जानी। कबीर साहब सत्य ही कह गए ह। पर यह मेघा भगत कौन हैं गगाराम? आजकल बडा माहात्म्य सुनाई पडता है इनका।'

गगाराम बोले —'भाई मैंने स्वय ता उन्हे देखा नही है पर सुना अवश्य है कि बडे काव्य-ममज्ञ हैं और मेधावी छात्र थे। कहते हैं कुछ महीनो पहले अयोध्या म इन्हे चतन्य महाप्रभु के समान ही अचानक आनद का दौरा पडा। कहते है उस समय वाल्मीकीय रामायण का कोई प्रसग पढ रहे थे। बस तब से राममय हो रहे हैं। सस्वर भजन सुनकर प्रसन्न होते है, उन्हीके सबध मे प्रवचन करते हैं। आठो पहर रामदीवाने बने रहते हैं। कहते हैं कि उनकी वाणी पर सरस्वती विराजती हैं। किसीको यदि वे वरदान दे देते है तो वह अवश्य पूरा होता है।"

सुनकर तुलसी के मन में मघा भगत के प्रति कौतूहल जागा और स्पर्द्धा भी। मन कहने लगा, मैं भी ऐसा राम राम जपूं कि सारी दुनिया ऐसे ही मुझे भी देखे। होड़ लेने की इस इच्छा के साथ ही साथ नई उमर की बेताबी ने उनके भीतर डाह भी जगाई। सोचने लगे कि अब भी उसकी राम भक्ति में कोई कमी तो है नहीं। वह अपने आस-पास की सारी दुनिया को दिन रात देखा करते हैं पर कोई भी उन्हें अपने समान राम प्रेमी अब तक मिला नहीं है। मुंह से झूठ-मूठ 'राम राम शिव शिव' कह लेने से कहीं भला भक्तिभाव जागता है? फिर अपने घमंड पर ध्यान गया, मन को डांटा—'धत् तेरे की रामभगतवा, झूठ-मूठ ही खिलवाड़ करता है। अभी देखेंगे कि मेघा जी का भक्तिभाव कितना गहरा है।'

सेठ जी की हवेली के एक बड़े कमरे में भीड़ भरी थी। तुलसी झांकने लगे। कुछ हुआ है, सब लोग बीच ही में क्या झुके हैं! पता लगा कि भक्तवर को मूर्च्छा आ गई।

केवड़ाजल के छींटे दिए जा रहे थे। दो व्यक्ति अपने-अपने अंगौछों से हवा कर रहे थे। तुलसी अपनी उत्सुकतावश उस छोटी भीड़ में घुसकर मघा भगत के पास तक तो अवश्य पहुंच गए परंतु हवा डुलाने वाले अंगौछों के कारण उन्हें युवा भगत जी का चेहरा दिखलाई नहीं पड़ रहा था। उनका मन अंगौछा झलने वालों पर झुंझला उठा। गरदन कभी दाहिनी ओर झुकाई, कभी बाईं ओर। कभी एड़ियां उचकाकर तथा आगे की ओर अधिक झुककर देखा। हल्की ललाई लिए गोरा वर्ण और भूरे बालों वाले मुखमंडल की सुन्दरता कुछ-कुछ झलकी। तभी भगत का शरीर हिला। अंगौछे का झला जाना बंद हुआ। भगत जो अब तक बाईं करवट से पड़े हुए थे अब चित्त हो गए। छोटी-सी दाढ़ी वाला लंबा चेहरा अपनी सारी पीड़ा के बावजूद बड़ा तेजस्वी और शांत था। तुलसी उस चेहरे को अपलक दृष्टि से निहारते रहे, मन बार-बार भांपता रहा और अपने-आप से यह कहता भी रहा कि मूर्च्छित व्यक्ति सचमुच भक्त है, अवश्य है।

मूर्च्छा टूटी। आंखें खुलीं। मघा भगत उठने का उपक्रम करने लगे तो भक्तों ने उन्हें सहारा देकर बैठा दिया। तुलसी अपनी दृष्टि से उस चेहरे को पीने लगे। कैसी आत्मलीन दृष्टि है इनकी! देख सामने रहे हैं पर ऐसा लगता है कि मानो वे यहां नहीं बल्कि काल कोसों दूर किसी ऐसी वस्तु को देख रहे हैं जो दूसरों को नहीं दिखलाई देती। क्या यह भगत की अभिनय मुद्रा है? तभी तुलसी ने देखा कि मघा भगत की आंखें झील-सी भर आई हैं और उनके होंठ कुछ बुदबुदा रहे हैं। वे बड़ी छटपटाहट के साथ अपने दायें-बायें देखने लगते हैं मानो उन्हें किसी चीज की तलाश हो। एक बूढ़े-से व्यक्ति ने पूछा—'क्या चाहिए महराज?'

'कुछ नहीं... क्या चाहता हूं, कैसे बतलाऊं? राजमहलों में रहनेवाले सैकड़ों दास-दासियों से सेवित राजकुमार वन की कंकड़-कांटा भरी राह पर चले जा रहे हैं और मैं कुछ भी नहीं कर सकता—निःसहाय। जिनकी इच्छाओं का पालन करने के लिए सैकड़ों दास-दासियां सदा हाथ बांधे खड़े रहते थे, बड़े-बड़े सेठ-साहूकार, राजे-सामंत जिनकी कृपादृष्टि के प्यासे बने सदा उत्सुक नेत्रों से

देखा करते थे उनसे इस गहन वन में कोई यह भी पूछने वाला नहीं कि नाथ, आपको क्या चाहिए ? ''

मेघा भगत रोने लगे। कुछ थमे तो फिर कहना शुरू किया। सीता जी के थके-कांपते लड़खड़ाते पैरों का करुण वर्णन उनकी प्यासजनित व्याकुलता, उनका बार-बार पूछना कि हे स्वामी अब वन कितनी दूर है कुटी कहा छवाई जायगी इत्यादि बातों की कल्पना कर-करके मेघा भगत धारोधार रो पड़ते हैं। उनका कंठ भर आता है और वे दुख की सजीव मूर्ति बने ऐसे विवश हो जाते हैं कि उनसे बोलते भी नही बनता। इस कमरे मे ऐसा कोई नहीं जिसकी आखो से गंगा-जमुना न बह चली हो। सभी रो रहे हैं। उनके साथियो में गंगाराम और नंददास भी आसू बहा रहे हैं। लेकिन तुलसी की आखो मे पानी क्या सीलन तक नहीं है। मन की गुफा गूंजती है देखा यह है राम भक्ति ! तुलसी अपराधी से झुक जाते हैं। दृष्टि पालथी पर रखी हथेलियों पर सधकर अन्तर्मुखी हो जाती है मन मानो एक गुफा है जिसमे सिर झुकाए खड़े हुए तुलसी एक ओर जहा अपराध भावना से सिहरते हैं वहा दूसरी ओर इच्छा की तीव्रता से भी काप-काप उठते हैं 'हे राम जी, मेरे मन मे भी आपके प्रति ऐसी ही चाहना है। भले ही मेरी आखो से इस समय आसू न बह रहे हो पर मेरा कलेजा आठो याम आपके लिए ऐसे ही तड़पता है। यह कहते हुए मन यह भी अनुभव कर रहा था कि उसका स्थूल रूप अब भी उसी तरह भावशून्य पत्थर बना हुआ है जैसा कि अभी तक था। उसमे किसी भी प्रकार का करुण स्पंदन नही है—'इस समय न सही पर क्या मेरे हृदय में राम जी के प्रति ऐसा विरहभाव नही जागता ? जागता है जागता है पर इस ऐन परीक्षा के अवसर पर वह अंतर हो गया है तनिक सी कुनमुनाहट तक नही हो रही। हे प्रभु, मैं बड़ा अपराधी हू। मेरा कलेजा बड़ा ही कठोर है जो ऐसा निर्मल भक्तिभाव भरा वातावरण पाकर भी अब तक उमड़ न सका।'

सारा वातावरण करुणा के अपार सागर मे डूब गया है। तुलसी से कुछ ही दूर बैठी कुछ स्त्रिया रो रही हैं। पुरुषो में अनेक चेहरे अश्रु विगलित दिखाई दे रहे हैं। मेघा भगत के करुणा सागर मे डूबे हुए स्वर का प्रभाव सभी के चेहरों पर बोल रहा है। लेकिन तुलसी की आखें मरुभूमि-सी उजाड़ हैं। मेघा भगत के मौन भावमग्न होते ही सभी कुछ क्षणों तक तो भावावेश मे गूगे बने रहे फिर हल्की हलचल होने लगी।

दर्शनार्थी भक्तमंडली मे एक तरुणी अपनी मा के साथ बैठी हुई थी। तुलसी और गंगाराम और नंददास उससे कुछ ही दूर पर बैठे थे। एक प्रौढ़ व्यक्ति ने प्रौढ़ा से कहा— मोहिनी से कहो एक भजन गाए। महराज को शांति मिलेगी। मेघाभगत आंखें मूदे करुणा मे डूबे बैठे हैं। तरुणी गायिका ने अपनी प्रौढ़ा मा के संकेत पर कुछ क्षणो तक गुनगुनाते रहने के बाद मीराबाई का एक भजन गाना आरम्भ कर दिया—सुनी री मैंने हरि आवन की अवाज।

स्वर मीठा तड़प भरा था। गाने वाली कला निपुण थी और मनमोहक भी। थोड़ी ही देर मे गीत और गायिका की मधुरिमा वातावरण पर जादू बन

कर छा गई। मेघा भगत के भक्तो मे आधे से अधिक लोग राम को भूलकर रागरजित हो गए। गानेवाली के भावमग्न चेहरे पर अनेक आखें लालच के गोंद से चिपक गइ। स्वर सभी के मनों की भौतिक सतह को छेदकर कहीं अदृश्य गहराई में हवा की तरह छू रहा था। लोगों की रसमग्न आंखों मे गायिका का रूप किसी हद तक समाया तो था, किंतु कानों म गूजने वाली मिठास रूप के मोह को बहा ले जाती थी। ऐसा लगता था कि गायिका के स्वर और मीरा के शब्दो ने जन-मानस को त्रिशकु की तरह अधर मे औंधा लटका दिया है। केवल मेघा भगत आखें मूदे पत्थर की मूर्ति बन ध्यानावस्थित हो गए थे।

गायिका का स्वर पवन झकोर बनकर तुलसी के हृदय के पर्दे हिलाने लगा। हरि आवन की अवाज ही मानो गायिका के स्वर मे सुनाई पड रही थी। कठिन कलेजा पिघलकर ऐसा तरगित हो उठा था कि तुलसी का मानस इच्छित गति पाकर बडी शाति और सुख का अनुभव कर रहा था। उस दुख के बहाव म ही गाने वाली के लिए प्रशसा की बिजली भी कौंधी। कितना मधुर गा रही है! भक्तराज इसमे अवश्य ही प्रभावित हो रहे हैं। धन्य है यह रूपसी जो वेश्या होकर भी इतनी भक्तिभावपूर्ण है। मेरे मन मे भी राम रमते हैं। मेघा जी भक्त हैं अब यह भी मानी जायगी। इसम भक्तिभाव जो है सो है पर यह कला-कुशल है। मेरे मन म भाव भी है और मैं गा भी सकता हू। ऐसे ही गा सकता हू।

मन गायिका के स्वर मे स्वर मिलाकर बहने लगा आखें मुद गइ। गानेवाली तुलसी के मन की गुफा में श्रद्धा दीप के पास बठी गा रही थी। और मन वाले तुलसी का स्वर मानो गुप्त सरस्वती की भाति उसके स्वर मे अतर्धारा बनकर प्रवाहित हो रहा था।

तुलसी एक ऐसे मोड पर पहुचकर स्तब्ध हो गए थे जहा फूलो के रगो से भरी हरीतिमा उनके आभ्यतर को अपने म लपेट रही थी। उनके मन प्राण म केवल स्वर और शब्द ही थे और कुछ भी न बचा था।

गायिका का स्वर ज्यों ही अपने पूर्ण विराम पर थमा त्यो ही तुलसी का स्वर अनायास गतिमान हो गया—सुनी री मैंने हरि आवन की अवाज।

गायन शैली वही थी शब्द भी वही किंतु स्वर नया था। सुनने वालो को लगता था कि वे जसे अपने अतर मे हरि के आने की आहट पा रहे हैं। हरि से मिलने की छटपटाहट हर प्राण म बस गई। लोग मुग्ध होकर इस अनजाने युवक को देख रहे थ। गायिका चकित और रसमग्न दृष्टि से एकटक होकर तुलसी को निहार रही थी। तुलसी मेघा भगत की ओर देखते हुए गा रहे थ—मीरा के प्रभु गिरधर नागर वगि मिलो महराज।

महराज तक पहुचते-पहुचते वातावरण प्राय सभी के लिए आत्मविस्मृत-कारी बन गया था। गायिका के स्वर को सुनते हुए जहा मेघा भगत की आखें मुद गई थी वहा तुलसी का स्वर आखें खोल देने वाला बन गया। स्वर म एक ऐसी सचाई थी जो कोरी कला के सिद्ध स सिद्ध रूप की भी पहुच के बाहर थी।

भजन समाप्त होने पर मेघा भगत गद्‌गद स्वर में बोले—"कहा से आ गया रे, तू मेरे स्वरूप ? तू तो मेरी मनचाही चाह बनकर आया है रे ! आ, मैं तेरी बलैया ले लू ।" मेघा भगत भावावेश में उठकर तुलसी के पास आ गए और उसे अपने कलेजे से चिपटाकर रोने लगे। बोले—' मैं जिसे अपने भीतर पुकार रहा था वह यों बहाने से मुझे बाहर प्रत्यक्ष होकर मिल रहा है ! तू बडा दयालु है—बडा ही दयालु है मेरे राम ।"

सब दृष्टिया भगत और तुलसी के मिलनहृदय पर लगी थीं। मेघा की आखें बरस रही थीं ।

तुलसी की आखें प्रयत्न करने पर भी न बरसीं। जिसे रिझाने के प्रयत्न मे उनका कलेजा उमडा था उससे इच्छित प्रशसा पाकर मानो वह फिर घमण्ड की ठसक म ठोस बन गया। अपने प्रति किए गए भगत जी के सबोधन और प्रशसा का विचित्र प्रभाव नवयुवा तुलसी के सद्य सफलता से उल्लसित मन को पहेली-सा उलझा गया। काया पर प्रसन्नता और विनय मुद्रा मन में घमड। अतश्चेतना में घडकी की गूज— सावधान घमड नहीं ।' मन अपराध भावना से सकुच गया और उससे कतराने के लिए ही तुलसी की दृष्टि भीतर से बाहर आ गई। सामने गायिका उन्हें अपलक दृष्टि से देख रही थी ।

उसकी आखों में अपने लिए चमकता हुआ प्रशसा का भाव पाकर वे लोहे की तरह उस चुबक की ओर खिचते ही चले गए। उन्हें ऐसा लगा कि मानो मेघा से अधिक उन्हें गायिका की प्रशसा की ही चाह थी, और उसे उसकी आखो में पाकर वे निहाल हो गए हैं।

ज्योनार का समय हो गया था। बुलावा आने पर शेष जी की शिष्य मडली के साथ ही कुछ और ब्राह्मण गहस्थ भी मेघा भगत को प्रणाम करके उठ खडे हुए। जब तुलसी उनके आगे नतमस्तक हुए तो मेघा ने उनका हाथ पकडकर उठा लिया और उनकी आखों म आखें डालकर देखने लगे। तुलसी का मन अचम्भे में बध गया—'यह इतने ध्यान से मेरी आखों में क्या देख रहे हैं ? मैं तो कुछ भी नहीं समझ पाता।'

मेघा बोले—"अब तुम बराबर आना भाई। तुम्हारे बिना यह मेघ छूछा रहेगा। तुम्हीं मेरी वर्षा हो। वचन दो, कि तुम नित्य आओगे।'

अपनी प्रशसा से तुलसी सकुच गए कहा—"गुरू जी से आज्ञा लेकर अवश्य आऊगा।"

'कौन हैं तुम्हारे गुरु ?"

"परमपूज्यपाद आचार्यपाद शेष सनातन जी महाराज।'

"तुम्हारा नाम क्या है ?"

"रामबोला तुलसी।"

अन्य विद्यार्थी कमरे से बाहर निकलकर दालान म खडे थे। मामा जी की भूल भाग के नशे के साथ ही भडक चुकी थी। उन्हें तुलसी का मेघा से खडे-खडे बतियाना खल रहा था। तुलसी मेघा को प्रणाम करके जो चले तो द्वार की चौखट पर फिर अटक गए। किवाड से टिकी हुई गायिका खडी थी। पास पहुचने

गली के मुहाने पर ही खड़े दिखाई दिए। देखते ही तुलसी का उल्लास रंगीन होकर चमक उठा। लेकिन प्रवेश करते समय से अपने आपको सयत बना लेने का होश रहा। मोहिनीबाई ने वातावरण से बेहोश होकर भर नजर तुलसी को देखा। एक उचकती कनखी से इस आनद के कण समेटकर तुलसी बराबर मेघा भगत से अपनी श्रद्धापूरित आखें मिलाए रखने मे सतक रहे। मेघा भगत के चरण छूते समय उनके मन ने सहसा व्यग्य किया। 'जो भाव कल तक सहज था उसमें आज सतकता क्यो बरती जा रही है ?

मेघा भगत ने तभी दोनों हाथो से प्रेमपूवक तुलसी के दोनो कधे हिलाते हुए कहा—"आ गया आत्मन् ? अरे तुझे तो मैं अपने साथ ही भगा ले जाऊगा। राम और भरत मे कोई अन्तर नही है। वे एक ही अनुशासन के दो परस्पर पूरक रूप हैं। अच्छा, बल बैठ। भाई आज तो तू ही पहले कोई भजन सुना। कल से कोतवाल साहब की गायिका इस भक्तिन के स्वर ने मेरे राममोह मे एक दिव्य मादकता भी भर दी है। तेरा स्वर उस तरल मद को मेरे लिए प्रगाढ कर देता है। गा भाइया गा। अभी वातावरण शात है। भीड नही हुई है। मेरी आत्म-चेतना के कभी-कभी उठ आनेवाले झोकों को सुलाने के लिए तू अपने स्वर और भाव से उसे कवचमडित कर दे भया फिर इस देवी से सुनूगा। एक जगह पर इसका स्वर इसके अनुपम रूप से अधिक सच्चा है।"

अब पहली बार तुलसी और मोहिनी की आखें मिली। चारो आखें एक-दूसरे की प्रशसा मे निछावर हुई जाती थी। मोहिनीबाई ने हसकर कहा— आपका स्वर तो अगम सरोवर का कमल है पडित जी, कल से मेरे कानों मे भी अब तक गूज रहा है।'

तुलसी लजा गये बैठते हुए बोले—"आप जसी शास्त्र निपुण कुशल गायिका के आगे भला मरी हस्ती ही क्या है। एक भिखारिन की गोद मे पला उसने जो भजन सिखा दिए वही जानता हू। फिर थोडा स्वर का अभ्यास पूज्यपाद गोलोक-वासी नरहरि बाबा ने करा दिया था।' यह कहकर तुलसी अपनी गुनगुनाहट में रम गये। आखें मुदने लगीं और नरहरि बाबा द्वारा गाया जानेवाला सत रैदास का एक भजन वे अपने ध्यान मे स्व० नरहरि बाबा की छवि लाकर गाने लगे—

प्रभु जी तुम चदन हम पानी।
जाकी अँग अँग बास समानी॥

यह तुलसीदास नही गा रहे थे उनके ध्यान मे बैठा हुआ उनका जीवनदाता गा रहा था। इस समय तुलसी का स्वर गोलोकवासी गुरु के भाव और स्वर का वाहक मात्र था। मेघा भगत आत्मविभोर हो गए। उनकी बद आखो से अश्रु झर रहे थे। बीच-बीच म उनके होठ कुछ बुदबुदाहट भरी फडकन से भी भर जाते थ। बाकी सारी काया निश्चेष्ट थी।

मोहिनीबाई की काया उसके अन्तर-उल्लास की प्रतिमूर्ति बन गई थी। उसकी चमकती हुई आखें जैसे अपने से निकलकर तुलसी मे समा गई थी। कल

जसे तुलसी मोहिनी के स्वर से आत्मविभोर होकर उसके साथ गा उठे थे वैसे ही मोहिनीबाई भी आज स्वत स्फूत होकर तुलसी के स्वर मे स्वर मिलाकर गा उठी—प्रभुजी तुम मोती हम धागा।

तब तक कुछ और लोग भी आ गए। मेघा भगत आज सगीत सुनने की मौज मे थे, इसलिए मोहिनीबाई ने सगीत का समा बाध दिया। उसकी आखो का यह भाव तुलसी के मन मे स्पष्ट था कि वह केवल उनके लिए ही गा रही है। तुलसी आनन्दमग्न थे। स्वय भी जयदेव रचित एक गीत गाया। उस दिन भक्तो म मोहिनीबाई सरीखी सरनाम गायिका से टक्कर लेनेवाले नय पुरुष-स्वर की घूम मच गई। सभी कोई कहे 'वाह तुलसीदास जी, वाह तुलसीदास जी।'

मोहिनीबाई की सयानी मा ने शीघ्र ही उठने का अदाज साधा। तुलसीदास मुग्धा मोहिनी अनख कर उठी। मेघा भगत के चरणो मे प्रणाम अर्पित करने के बाद द्वार तक जाते-जाते उसने कई बार बडी सफाई से तुलसी पर अपनी कन-खिया और चितवनें डाली। द्वार के हल्के अधेरे म चलने स पहले वे चितवनें ढीठ होकर टकटकी बनकर तुलसी के चेहरे पर सध गइ।

उस दिन तुलसी बीते दिन से भी अधिक गहरे नशे म घर लौटे। रात म अपनी कोठरी के एकान्त मे जब उन्होने अपने मन को देखा तो लगा कि श्रद्धा दीप के चारो ओर अपनी मोहिनी के साथ नाच आरभ करते ही मानो किसी जादुई स्पश से अपना बाल रूप खोकर युवा बन गए थे। उनके मनोलोक मे आज दोनो का आनन्द ताडव अधिक कलापूण और रागरजित था।

तीसरे दिन मेघा भगत के यहा मोहिनीबाई और शेष महाराज के एक शिष्य के भक्ति सगीत होने की चमत्कारी प्रशसाए सुनकर जन समुदाय अपने लिए एक नया आकषण पाकर अधिक सख्या म आया।

इस तरह आते जाते लगभग छ दिन बीत गए। तुलसी के लिए मेघा भगत का स्थान दोहरा आकषण बन गया था। तुलसी को अब यह भी स्पष्ट हो गया था कि दोनो म मोहिनी के प्रति ही उनका आकषण अधिक तीव्र है। यही नही कही पर वह तीव्र से तीव्रतर भी हो उठता है। आज जब पहुचे तो भक्तवर ने उन्हे बडे प्रेम से देखा लेकिन तुलसी की आखें उन्हे न देखकर कुछ और देखना चाहती थी। भक्तराज की प्रशसक मडली मे बहुत से लोग बठे थे पर वह न थी जिसे देखने की लालसा उन्हे यहा ले आई थी। मेघा भगत मुग्धभाव से तुलसी को ही देख रहे थ। उनका इस प्रकार देखना तुलसी के मन म सकोच भर रहा था। उनका मन कचोट रहा था कि वह एसे सात्त्विक भक्त को धोखा दे रहे हैं। पहले जिस उत्सुकता को लेकर वे यहा पर मेघा भगत के दशनाथ आए थे वह उत्सुकता अब उनके प्रति न होकर किसी और के प्रति थी। बीच-बीच म चौंककर चोरी से द्वार की ओर ताक लेते थे, मानो उन्होने मोहिनी आवन की आवाज सुन ली हो।

मघा पूछ रहे थे—'वाल्मीकीय रामायण पढी है तुलसी ?'

"हा महाराज मेरा रसस्रोत उसी से फूटा है।'

'धन्य हो, मेरी दृष्टि मे रामायण से बढकर और कोई काव्य नही, महाकवि

इतने महान् थे कि अन्य कोई भी कवि मुझे उनके आगे ऊचा-पूरा ही नहीं लगता।"

"आप ठीक कहते हैं महाराज।"

'मेरी इच्छा होती है कि वाल्मीकि जी की रामायण का पाठ हो। तुम पाठ करो, मैं सुनू।"

"इसके लिए मुझे गुरू जी से आज्ञा लेनी होगी महाराज।"

मोह अभी कितने वष और पढोगे ?"

"राम जाने महाराज वसे तो अब गुरू जी की पाठशाला म पढ़ाता हू। वही मुझ अनाथ के पिता भी हैं।"

"आखिर कब तक तुम वही रहोगे ?"

तुलसी मुस्कराए कहा— 'जब तक राम रखेंगे।"

तुम मेरे साथ रहो। हम दोनो भाई राम और भरत के समान रह लेंगे। क्या तुम विश्वास मानोगे तुलसी कि इतने ही दिनो के सग मे तुम अब दिन रात मेरे और मेरे राम के साथ ही रहने लगे हो। कल सपने म भी प्रभु ने मुझसे यही कहा कि मेधा मेरी इस धरोहर को तुम बहुत सहेजकर रखना। क्या जाने तुम म ऐसा क्या है जो मेरे राम तुम्हारे प्रति इतने रीझ गए हैं। देखो तो सही तुम्हारी आखो मे कसी अलौकिक मोहनी छिपी है।"

मेधा भगत अपने बावले उत्साह मे तुलसी की बाहें अपने हाथो से थामकर उनकी आखों म आखें डालकर देखने लगे। तुलसी सकोच से जडीभूत हो गए। सारी भक्त मडली उधर ही देख रही थी।

और तुलसी की आखो म सूरज चमक उठा। द्वार पर वह खडी थी जिसे देखने के लिए प्राण तडप रहे थे। ऐसा लगा कि मानो कमरे म प्रकाश ही प्रकाश भर उठा हो। लगा कि वह मुक्त प्रकृति के वातावरण मे पहुच गए हैं जहां सैकडो फूल अपने रग लुटाते हुए आनद के झोको से झूम रहे हैं। बेसुधी को मन की चतुराई ने झकझोर कर चेताया। 'सावधान, ध्यान कर कि तू किसके दरबार म बठा है।

चोर चोरी से तो गया पर हेराफेरी से भला क्योंकर हटे। मोहिनी और उसकी माता ने मेधा भगत के चरणो म झुककर प्रणाम किया। मा ने दासी को सकेत किया। सीक की बुनी हुई रगीन डोलची म सुदर गूथी हुई फूल-माला के साथ रखे फल लेकर वह चट से सामने आ गई। मा ने उसके हाथो से डोलची ली और भक्तराज के चरणो म उसे रखकर फिर सिर झुकाकर प्रणाम किया। बच्चे के समान भोले आनद से वह माला अपने हाथ म उठाकर मेधा भगत देखने लगे। मुग्ध स्वर मे बोले—' वाह कसी सुदर है यह माला। तूने गूथी है बहन ?" उन्होंने मोहिनी की ओर देखकर पूछा।

मोहिनी ने लजाकर अपनी आखें झुका ली। मा बोली—' कल आपके दरबार म गाकर मानो इसके भाग्य की रेखाए ही बदल गईं महाराज। कल शाम ही जौनपुर के राजा साहब के यहा से साई मिली। आपके आसिरबाद से बडे राजदरबार का यह पहला बुलावा मिला है।'

मेघा भगत का ध्यान प्रौढा की बातो पर नही, माला की सुदरता पर था। फूलो मे राम ही राम झलक रहे थे। कुछ देर बाद अपने आप ही कहने लगे—'बहन, तेरा यह श्रम और कला मुझसे अधिक तुलसी के लिए है। इसे पहना दू ?" स्वीकृति के लिए मेघा रुके नही वह माला तुलसी के गले म डाल दी। आनद और सकोच स ऊभचूभ रामबोला की आखें एक बार मुदी फिर बरबस उठकर मोहिनी की आखो से जा अटकी। वह बडे चाव से इन्ही की ओर देख रही थी।

आज फिर गाना हुआ। मोहिनी ने गाया, तुलसी ने गाया और फिर मेघा भगत भी आनन्दमग्न होकर गाने लगे—

आशा नाम नदी मनोरथजला तृष्णा तरगाकुला।
रागग्राहवती वितक विहगा धैर्य द्रुमध्वसिनी ॥
मोहावर्त सुदुस्तरातिगहना प्रोत्तुग चिन्तातटी ।
तस्या पारगता विशुद्ध मनसा नन्दन्ति योगीश्वरा ॥

मेघा भगत के द्वारा गाया गया श्लोक तुलसी के अबीर-गुलाल भरे वसती मन पर पानी-सा पडा। रग उजड गए कीचड हो गई। मेघा भगत स दृष्टि मिलाने मे भय लगता था। मोहिनी के मुख कमल पर पुतलियो के भौरे जा चिपकने के लिए मचलते तो बहुत थे पर इस श्लोक ने सब कीचड कर दिया था। सिर झुकाए हुए युवा तुलसी अपने ही म मन मारे बठे अपने पश्चात्ताप और सत्या चरण के मतवाले मुर्गे लडवाते रहे। मन नीचे से ऊपर की ओर खौल रहा था, ज्यो चूल्हे की आग पर चढा पतीली का पानी खौलता है।

मेघा भगत ने फिर क्रमश अपनी भाव वाचालता मे आना आरभ कर दिया। अपनी कल्पना स्वय अपने ही को सुनाने म तन्मय होकर वे सीता के खो जाने के बाद श्रीराम के विरह प्रसग को लेकर वे अपने जी का दुखडा बाधने लगे—'कुटिया सूनी है। राम का मन भी कुटी की तरह ही सूना हो गया है। भीतर-बाहर के यह सूनपन एक जसे ही भयावह हैं। कहा गइ सीता महारानी ? क्या हो गया उनको ? —राम के भय आसू और विरह की बेसुधी से भरे हुए प्रलापो का वणन मेघा भगत की वाणी मे चलने लगा। बीच-बीच म प्रसग से सम्बन्धित वाल्मीकि के श्लोक भी गाने लगते थे। विरहरूपी रामकीतन बढ रहा है। 'श्रीराम ऐसा कमयोगी केवल आसू बहाता तो बठ नही सकता। विरह भी उनके लिए शक्ति और कमदायक ही बनता है। वे सीता महारानी की खोज कर ही रहेगे। उनकी बुद्धि उन्हे यह निश्चय भी कराती है कि शूपणखा के अपमान और उसके पति की हत्या का बदला लेने के लिए ही किसी ने उनकी प्रिया को हर लिया है। विचारो की इन्ही उथल-पुथल मे उन्ह जटायुराज मिलत हैं जो सीता को हर ले जानेवाले रावण से लडे थे। "

आरभ में तुलसी अपने भीतर के दुख से सन हुए अनमने बठे रहे फिर क्रमश मेघा भगत के शब्द चित्र उनके कानों में गूजन लगे। कल्पना के पट पर मनोपीडा अपने चित्र आकने लगी। कभी मेघा भगत के शब्द के सहारे हूबहू

उन्ही के मन की तरह स छटपटाते हुए श्री राम झलकते और कभी जगले के आरपार अपने और मोहिनी के बिम्ब। राम और तुलसी मन ने पूछा इनमे कौन रहे ?'

मन ने ही अपने कठिन मोह जाल को भेदकर सत्य को सकारा और फिर कुछ पल पश्चात्ताप मे गूगा हो गया। आखें बरसने लगी। मोहिनी की ओर दृष्टि गई।

यह टप-टप आसू टपकाता हुआ गोरा सुन्दर कुवारा चेहरा मोहिनी की आखो मे अटक गया। जो क्षण मेघा भगत के लिए श्रीराम की विरह ज्वाला मे और रामबोला के अपने पहले-पहले विरह ज्वाल म जलने का था, वही क्षण मोहिनी के मन मिलन का भी था। सयोग की विद्युत् त्रिकोण के तीनो कोनो से नाग-नागिना की तरह अपनी जीभें लपलपा रही थी।

आयु मे मोहिनी तुलसी से लगभग दो चार वष बडी ही थी और मन से अभी तक कुवारी भी। उसका तन काशी के बूढे कोतवाल का जुठारा हुआ था। चिरअतृप्तिदायक बूढे हाकिम की गुलामी म घुटी घुटी दाशनिकता और भक्ति-भावना मे वह मेघा भगत का माहात्म्य सुनकर उनके दशन करने आती थी। सहज प्यास म तुलसी जसे सुन्दर जवान का रूप-कूप अचानक मिल गया। हाय, कितना प्यारा कितना सुहाना चेहरा है। ये सपन भरी बडी-बडी काली पुत-लियो वाली आम की फाकों जसी आखें ये लम्बी सुतवा नाक ठोडी, रोएदार जवानी भरा भोला भोला सुहाना मुखडा, ये कसरती बदन ! हाय जो कही इसे वह खाना नसीब हो जो हमारे बुढऊ सया को खाने और फेंकने के लिए रोज मिलता है तो चार ही दिन मे ये गबरू जवान हुस्न के मदान में रुस्तम की तरह जूझने लगे। हाय गाता भी खूब है।

मघा भगत के वणन मे विरही राम और सेवक हनुमान की भेंट हो चुकी है। तुलसी के आसू सूख चुके है। झुका सिर उठकर मेघा भगत को एकटक निहारने लगा है। मेघा के चेहर का आधार उनकी कल्पना को रामबिम्ब मे रहने के लिए आत्मबल देकर साधता है। इस समय जस मेघा भगत के मन म वसे ही तुलसी के मन मे भी हनुमान हाथ जोडे हुए वीरासन पर विराज मान है। उनके पास ही पीपल तले बने अनगढ़ पत्थरो और मिट्टी के चबूतरे पर शोक चिन्ता मग्न श्री राम विराजमान हैं। बाइ ओर चबूतर से सटकर वीर लखनलाल क्रोध और चिन्ता स भरे हुए खड है। और मेघा भगत के हनुमान जी कह रहे है, तुलसी के हनुमान जी सुन रहे है— नाथ आपके चरणो की कृपा से एक रावण तो क्या मैं सौ रावणो से एक साथ जूझकर जगज्जननी को छुडा लाऊगा।" आश्वासन पाकर मेघा न राम की आखें आनन्द से छलछला उठती हैं— मेरी प्रिया अब मुझे अवश्य मिल जाएगी। हनुमान के लिए कुछ भी असमभव नही है।'

तुलसी के मनोबिम्व मे अपने लाडले वीर हनुमान के पीछे तुलसी भी हाथ जोड अर्जी लगाए बठ गए है। वह कहना ही चाहते हैं कि हनुमान जी मेरा भी विरह ताप हरो। पर सहसा हिचक जाते हैं। मनोबिम्ब मे तुलसी चोर-से

हनुमान के पीछे से गायब हो जाते हैं और उनके गायब होते ही सारा मनोबिम्ब अंधेरे मे डूब जाता है, मन सूना हो जाता है।

उधर मेघा की वाणी म श्रीराम सहारा पाकर अपनी प्रिया के शोक भरे चिन्तन मे डूब जाते हैं—"न जाने कसे होगी वहा होगी मेरी प्राणवल्लभा जानकी, जिसे मैंने अपनी पलका की सेज पर सदा सुलाया, सहलाया जिसकी एक दृष्टि में ही मुझे अनन्त ब्रह्माण्डो का साम्राज्य प्राप्त हो जाता था, वह प्रिया की हसती हुई आखें इस समय दु खों का अपार सागर बनकर वहा लहरा रही होगी ? प्रिये प्राणवल्लभे, मैं कैसे तुम्हारा दु ख हरू ? कैसे तुम्हें झटपट अपने अक म भरकर तुम्हारा और अपना दुर्भाग्य मोचन करू ? सिया सुकुमारी, तुम्हारे बिना यह राम जगल के ठूठ की तरह जल रहा है। तुम कब वर्षामगल मनाने आओगी ?"

मोहिनी का मनभावना मुखडा फिर आसू टपका रहा है। हाय, कितना भावुक है यह जवान ! ऐसा सलोना मद रो रहा है, हाय जी चाहता है यहा अकेलापन हो जाय और मैं इसे लिपटाकर चूम लू।

मेघा भगत का राम विरह वणन पूण हो चुका था। आखें ब द किए आसू बहाते हुए वे होठो ही होठों में बुदबुदा रहे थे। उनका मुख अपार शोकमग्न होकर और भी अधिक तेजस्वी हो उठा था। सहसा तुलसी ने धरती पर साष्टाग लेटकर भगत जी को प्रणाम किया और उठकर चल पडे।

मोहिनी की प्यासी आखें अपने पानी के पीछे-पीछे तडपकर भागी। तुलसी दरवाजे तक पहुच गए थे। मोहिनी ने अपना सबसे तीव्र शक्तिशाली तीर चलाया। तडपकर सत रदास का भजन गाने लगी—अब कैसे छूटै राम नाम रट लागी—नाम रट लागी।

प्रभुजी तुम चदन हम पानी।
जाकी अँग अँग बास समानी॥
प्रभुजी तुम घन हम बनमोरा।
जसे चितवत चन्द चकोरा॥
अब कसे छूटै राम नाम रट लागी।

मोहिनी के स्वर ने तुलसी के पाव बाध दिए। वह वहीं के वहा खडे हो गए। गाते हुए मोहिनी के मुखडे पर हसी खिल उठी। सभा चतुर आखें मेघा भगत के चेहरे स लेकर भीड मे जिस तिस की आखा की डइया छूती हुई अपने मनभावन की आखों से जा टकराती थी और उन टकराहटों से राम का तुलसी मोहिनी का तुलसी बना जा रहा था—'मोहिनी तुम चदन हम पानी, जाकी अँग अँग बास समानी। छि, कोई देख लेगा। क्या कहेगा ? भागो।' और तुलसी तेजी से बाहर निकल गए।

गलिया पार करते जाते हैं। अपने घर भी पहुच जाते हैं। दोनों की जिस तिस बातों का जवाब देने के लिए मजबूर होते हैं। नददास अपनी किसी दार्शनिक गुत्थी को लेकर आ गया, वह भी सुलझानी पडी। उसके जाने के बाद किताब

खोलकर पढ़ने का प्रयत्न किया, मगर सब कुछ करते-धरते हुए भी तुलसी के कानों में अपने मन बसी मोहिनी की आवाज़ ही सुनाई पड़ती जा रही है— अब कस छूटै राम नाम रट लागी। और यह नाम राम नहीं मोहिनी है। मोहिनी! मोहिनी!! मोहिनी!!! अब कसे छूट राम '

शाम को गुरु-पत्नी ने कहा— 'जान पड़ता है यह भी एक दिन मेघा जैसा ही राम बावला हो जायगा। रात में अपनी कोठरी में आने से पहले नित्य नियम के अनुसार मामा जी के लिए जब वह दूध का गिलास लेकर पहुंचा तो वे बोले— 'अबे, अभी से ज्यादा भगतबाजी के फेर में न पड़। मेघा के यहां जाना छोड़। सरयू मिश्र की लड़की पर तेरे लिए मैं आंख गड़ाए बैठा हूं बे। इकलौती लड़की है, देखने में भी तेरे ही जमी गोरी चिकनी है। अबे बीस-पच्चीस हज़ार से कम की माया नहीं होगी सरयू की विधवा के पास। यहां से जान पर सीधा अपने ही घर घरनी और हजारों की सपदा का मालिक बनकर बैठ जायगा। काशी के पंडितों में पुज जायगा। पहले दस-पांच चेले और दस-पांच बाल-बच्चे तो पैदा कर ले रे फिर भगतबाजी करना।'

भांग के नशे में तुलसी के प्रति अपनी चिन्तनाओं का प्रसार करते हुए मामा जी जरा गहरे रस के बहाव में भी बह आए, कहने लगे—'अबे, जवानी में मद को औरत की छाती में ही शरण मिलती है। राम की शरण तो बुढ़ापे में ही खोजनी चाहिए। अभी तूने दुनिया देखी ही कहां है बेटा।'

तुलसी के लिए यह सारी बातें दोहरी मार थीं। ऊपर अपनी कोठरी में जब वह अकेले बैठे तो मुक्त निरालेपन में अपनी ओर प्यार भरी दृष्टि से ताकती हुई मोहिनी झलक भर के लिए मांसल होकर उनकी आंखों के सामने उभर आई। मन की बाछें खिल गइं— मोहिनी तुम चंदन हम पानी नहीं राम! नहीं! यह धोखा है। मैं जग को धोखा दे रहा हूं। लोग समझे हैं कि यह मेरा राम विरह है। मुझे ऐसा ढोंग भी नहीं करना चाहिए।

परंतु मन के भीतर वाला अतृप्त कामी तुलसी विद्रोह करता है। कहता है माहिनी मुझे चाहती है। नगर की सर्वश्रेष्ठ गायिका, हाकिम के ऊपर भी राज करनेवाली सलोनी प्रियतमा मुझे चाहती है। तब मैं क्यों न उसे चाहूं! प्रेम का प्रतिदान देना क्या पाप है?'

विवेकी तुलसी समझाता है, वह कोतवाल की चहेती है। उससे आंख लड़ाओगे तो कोड़े बरसेंगे कोड़े। दुनिया तब तेरे मुंह पर थूकेगी। तेरी यह सारी धोखा धड़ी लोक-उजागर हो जायगी।' सुनकर विरही तुलसी का विद्रोह ठिठक गया। लोहे की मोटी सांकल में फंसे हुए पैर वाला जंगली गजराज बरगद के मोटे तने से बंधी अपनी जंजीर को तोड़ने के लिए रात भर मचलता रहा— अब कल से वहां नहीं जाऊंगा। नहीं जाऊंगा। नहीं जाऊंगा।

लेकिन दूसरा दिन आया समय हुआ तो तुलसी के पैर अपने आप ही मेघा भगत के घर की ओर भागने लगे। जब सड़क पार कर वे गली की ओर मुड़ने लगे तो रथ से उतरकर मोहिनी अपनी एक दासी के साथ गली की ओर बढ़ रही थी। मोहिनी ने तुलसी को देखा तो खिल उठी। आंखों की पुतलियों से खुशी

वे सुनहरे तार चमक उठे। देखते ही सब कुछ भूलकर तुलसी भी मोहिनी मग्न हो उठे। सामने मोहिनी थी। उसकी जादू-भरी हसी थी और मन मे अनमोल उपलब्धि का अपार आनद था। मोहिनी आतुर डग भरकर पास आई। आखो म आखें डालकर कहा—'आपका कण्ठ बडा ही सुरीला है। कानो मे अमरित घोल देते हैं।'

मोहिनी की बात न तुलसी के कानो मे अमृत घोला और आखो ने उसकी आखो मे रस के सागर पर सागर उडेल डाले। हर्षातिरेक मे तुलसी का रोया-रोया खडा हो गया। भाव रुद्ध हो गए। गदगद वाणी म कहा— गाती तो आप हैं। मैं मैं मैं "

कदम आगे बढाकर तुलसी को अपने साथ साथ चलने के लिए उकसावा देती हुई मोहिनी बोली—"थोडा सगीत का अभ्यास कर लें तो तानसेन और बजूबावरा की शोहरत आपके आगे फीकी पड जायगी। कसम भगवान की, मैं तनिक भी झूठ नही कहती।'

अपनी प्रिया की बात सुनकर तुलसी का सारा अतर जोश और आनद से ऐसा उमडा कि उनका वश चलता तो वही के वही सगीत के उस्ताद बनकर अपनी मनमोहिनी की तुष्टि के लिए तानसेन और बैजूबावरा को पछाड देते पर बेवसी म झेंपकर वह बोले—'मुझ निधन को भला कौन सिखाएगा ?"

'मैं! मेरे यहा आया करो।' शब्दो के न्यौते से अधिक उतावले आग्रह भरा निमत्रण मोहिनी की आकर्षक आखो मे था। देखकर तुलसी का मन रीझकर उमडा। चलते चलते बेहोशी म वह मोहिनी के इतने पास सरक आए कि बाह से बाह छू गई। सस्कारी ब्रह्मचारी का मन सिहर उठा, वे हट गए विवश स्वर म कहा— कसे आऊ ? विद्यार्थी हू।

ब्रह्मचारी तुलसी के सकोच को देखकर मोहिनी इठलाकर चली। अच्छा मैं उपाय करूगी।" धीरे से कहा और कनखी का बाका तीर मारा कि उसी दिन तुलसी से मेघा भगत के यहा अधिक देर तक बैठा न गया। मेघा भगत का राम प्रेम तुलसी के मन के नारी प्रेम को कोडे मारता हुआ-सा लगता था, और मोहिनी का गायन तथा उसकी प्यासी ललचाने वाली आखें तुलसी का पीछा नही छोडती थी। भरी भीड म सबकी दृष्टियो को छलकर चतुर नगरवधू नौजवान तुलसी की आखो म आखें डालकर ऐसा मादक सकेत करती थी कि तुलसी का मन उमड-उमड पडता था। वह सारी दुनिया को यह घोषित करने के लिए उतावले हो उठते थे कि दुनियावालो सुन लो मैं मोहिनी का दास हू। मोहिनी मेरी है, मेरी है, मेरी है।

उस दिन नगर म कुछ मुगल सिपाहियो ने दर्शनार्थ जाती हुई कुछ स्त्रियो को देखकर छेडछाड भरे गन्दे शब्द कहे थे। एक अहिर युवक सिपाहियो की इस अभद्रता को सहन न कर सका। उसने अपनी लाठी तानकर उन्हें चुनौती दी। गली मे आते-जाते कुछ भद्र पुरुष आगे बढकर समझा-बुझाकर करने लगे। उन्होंने मुगलो से क्षमा मागी और अहिर युवक को डाट डपटकर भगा दिया। एक व्यक्ति ने मेघा भगत के सामने इस प्रसग की चर्चा की। इस पर भद्र लोग कसिवाल का

रोना रोने लगे। मेघा भगत ने इसी प्रसग को लेकर राम के शौर्य को बखानना आरभ कर दिया। राम अनाचार को कदापि सहन नहीं कर सकते। उन्होंने ऋक्ष वानर जैसी अध-सभ्य जातियो का सहयोग लेकर प्रबल प्रतापी अनाचारी रावण को दण्ड दिया था। मेघा भगत के प्रवचन म आज करुणा नही वरन् ओज बरसा। उन्होने राम रावण के युद्ध का ऐसा चामत्कारिक वणन किया कि कमरे म बठे हुए हर व्यक्ति को उनके शब्दो की सम्मोहिनी शक्ति ने बाध दिया। हर दृष्टि मेघा भगत के मुख पर मानो टग गई थी। केवल तुलसी की टकटकी मोहिनी के मोहक मुखड से ही बधी रही। नवयुवक तुलसी के लिए ससार म मानो मोहिनी को छोडकर और कुछ भी देखने योग्य न था।

मोहिनी चतुर खिलाडिन थी किन्तु आज वह भी कही पर अपने आप से खेलन गई थी। बीच-बीच म उसकी दृष्टि घूमकर तुलसी को देखने लगती। दृष्टि मिलते ही तुलसी के चेहरे पर मुस्कुराहट खिल उठती थी। मोहिनी कभी मुस्कराती और कभी उसकी आखें तुलसी को मुस्करा के बरजने लगती थी। उसके नयन सकेतो स सावधान होकर तुलसी भी मेघा की ओर देखने लगते किंतु कुछ ही क्षणों म फिर वह मोहिनी के मोहजाल मे फस जाते थे। अब तक जीवन म चोरी शब्द का अथ न जाननेवाला नवयुवक आज मन से चोर हो गया, ढीठ चोर। उपस्थित मडली म कुछ नजरें इधर से उधर डोलने की आदी भी थी। उन्हे आचायपाद शेष सनातन जी के एक ब्रह्मचारी की यह ताक भाक मेघा भगत के ओजस्वी प्रवचन से अधिक लुभा रही थी। ऐसे लोगों म एक तरुण कवि भी था। वह भी नित्य के आनेवालो मे था। नाम था कलासनाथ। वह अपने पास बठे एक अन्य युवक को कोचकर तुलसी-मोहिनी का नयन-समर दिखलाने लगा। उन दोना के चेहरो पर रसीली मुस्कानें और आखों मे जासूसी जैसी सतकता बार-बार उभर आती थी। मोहिनी की मा भी अपनी बेटी के इस खेल से अनभिज्ञ न रह सकी। उसने अपनी बेटी के घुटने को दबाकर उसे बरज दिया और मोहमुग्ध तुलसी को दृष्टि को अपनी आखो की कठोर मुद्रा से डाटा।

मन के रगीन आकाश मे स्वच्छन्द उडानें भरते हुए नवयुवक की आखो के आगे सहसा अधेरा छा गया। ऐसा लगा मानो सतखडी हवेली की छत पर खडे होकर पतग उडानेवाला बच्चा अचानक ही नीचे गली मे आ गिरा हो। तुलसी आत्मग्लानि से भर उठे उनका सिर फिर ऐसा झुका कि मानो उनके गले मे किसीने भारी बोझ लटका दिया हो। 'मरा पाप पकडा गया। अब वह अवश्य ही गुरु जी के पास जाकर मरा अपराध बखानेगी। कैसा गहरा धक्का लगेगा गुरूजी को! विद्यार्थी समुदाय मेरी खिल्ली उडाएगा। मैंने यह क्या किया राम! मुझसे ऐसा अपराध क्यो हुआ? पर-नारी को क्यों ताका? पर मोहिनी पराई कहा वह तो मरी है। छि, अपने को छलते हो, रामबोला? उसका स्वामी कोतवाल है। देख पाए तो तेरी बोटी-बोटी कटवाकर कुत्तो के आगे फेंक दे। तेरे कारण मोहिनी की भी यही दुदशा होगी। इस विचार मात्र से तुलसी का मन थरथरा उठा, 'नही यह प्राणप्यारा रूपकमल कभी न मुरझाए। ऐसा कभी न हो राम!' आखें मोहिना के मुखडे को देखने के लिए मचलने लगी पर कैसे देखें? अपनी

बेबसी मे तुलसी के अरमान घुटने लगे। सास लेना पहाड ढकेलने के बराबर हो गया।

मेधा भगत बोलते बोलते सहसा मौन हो गए थे। मोहिनी ने दबी कनखी से तुलसी को देखा, पीडा के समुद्र मे तल पर बठा हुआ मोती-सा वह प्रिय मला मोहिनी से क्योकर देखा जा सकता था। न किसीने कहा न सुना, पर मोहिनी अपनी तडप म आप ही आप गाने के लिए मचल उठी—

हरि तुम हरो जन की पीर।
द्रोपदी की लाज राखी, तुम बढाए चीर॥

मोहिनी के स्वर मे ऐसी टीस थी कि किसीका भी मन उससे अछूता न बच सका। तुलसी शब्दों से अधिक स्वर से बधे थे। उन्हें लग रहा था कि जो पीडा वह भोग रहे हैं वही पीडा उनकी प्राणप्रिया को भी सता रही है। हे राम अपनी चाहत म बाधकर मैंने यह क्या अन्याय किया? जिसे सुखी देखने के लिए मैं अपने प्राण तक निछावर कर सकता हू उसे ही इतना दुख पहुचाया। मैं सचमुच बडा अभागा हू। मेरे छू-भर लेने से सोना मिट्टी बन जाता है।' तुलसी की आखें भर आइ। मन ऐसा उमडा कि फूट-फूटकर रोने को जी चाहा। तुलसी से फिर वहा बठा न जा सका। गायन समाप्त भी नही हुआ था कि सारे शिष्टाचार भुलाकर वह सहमा उठकर बाहर चले आए। उन्हे ऐसा लगा कि उनके बाहर आने से गाने वाली का स्वर लडखडा गया है। उन्हें लगा कि वह स्वर उन्हे पुकार पुकारकर कह रहा है, 'मत जाओ।' लेकिन पश्चाताप का आवेश इतना प्रबल था कि तुलसी के पर तेजी से आग बढते ही रहे। वह घर वह गली दो-तीन और गलिया भी पार हो गइ परन्तु तुलसी के कानों को मोहिनी का स्वर वैसे ही सुनाइ पडता चला जा रहा था। जितनी ही तेजी से जाते उतनी ही तेजी से वह स्वर उनका पीछा करता चला जा रहा था।

घर आया। मामा जी ड्योढी की भीतर वाली अपनी कोठरी म चौकी पर बैठे हुए किसी दासी पर गरमा रहे थ। आगन के चारों ओर बने दालानो मे विद्यार्थीगण पाठमग्न थे। तुलसी इस समय न किसीको देखना चाहते हैं और न किसीस बालना ही चाहत है। सबकी नजरे कतरा कर वह सीधे तिमजिले की सीढ़िया पर चढ गए। अपनी कोठरी में पहुचकर उन्होने भीतर से किवाड बद कर लिए और धम्म स अपनी बिछावन पर बैठ गए। मोहिनी का स्वर उनका पीछा नहीं छोड रहा था। हरि तुम हरो जन की पीर।

भोजन का समय हुआ पर तुलसी भोजनशाला म न पहुचे। मामा जी ने दासी की लडकी बेला को उन्ह बुलाने के लिए भेजा। कोठरी के बाहर एक महीन-मीठी आवाज सुनाई दी— भैया मामा बुलाय रहे हैं।'

तुलसी के कानों म शब्द तो पहुचे ही नही और स्वर भी दासी-पुत्री का होकर न पहुच सका। उन्हें लगा कि द्वारे खडी हुई मोहिनी पुकार रही है। नहीं नहीं, यह छलावा है। उठ देख कौन आया है। तुलसी बडी कठिनाई से उठे। इस समय उनके मन पर एक सुन्दर कोमल फूल का इतना भारी बोझ लदा

वाल साहब की लडैतिन नही आई ?"

'कोतवाल साहब ने मना कर दिया होगा।'

"काशी म इसके टक्कर की दूसरी गानेवाली नही है।"

क्या कहे ये मोहिनिया अब तक हमारी हो चुकी होती। मैंने दस हजार सोने की अशर्फियो पर इसका सौदा कर लिया था। पर तब तक कोतवाल निगोडा बूढा बैल इसपर जान देने लगा। मैं हाथ मलकर रह गया। बस तभी से तो मेरे मन म बैराग उपजा। सब माया मोह छोड दिया। बाकी मोहिनी मन से अब भी नही उतरती।"

'यह विद्यारथी भी बडा रामभगत है। एक दिन मेघा जी के समान ही नाम करेगा देख लेना।'

'ये रामभगत नही मोहिनीभगत है। बूढे की रखल इसकी चढती जवानी को दाना चुगा रही है।"

सच ?"

'हमने अपनी आखों से देखा है। मोहिनी इस लडके को देख-देखकर आखें मारती है मुस्कुराती है।"

तुलसी अपने पीछे बठे हुए दो मनुष्यो की यह न्बे दबे स्वरों वाली बातें सुन रहे थे। मेघा की बातो से इन बाता तक ग्लानि का अथाह सागर फैला हुआ था। मन कहने लगा तुलसी तेरी बदनामी फल चुकी है। दुनिया कहने लगी कि तू रामभगत नही है। छि छि, क्या मोहिनी सचमुच मुझे जान-बूझ कर अपने आकर्षण-पाश मे फसाना चाहती है ?' वह चाहे या न चाहे, तू तो फस ही गया।' 'नही मैं नही फसा। मेरा मन अब भी राम चरण-लीन है। मैं यह कभी नही सह पाऊगा कि लोग-बाग मुझ पर अगुली उठाकर कहे कि यह किसी अन्य का दास है। यह ग्लानि यह पश्चात्ताप मैं कदापि नही सह पाऊगा। हे राम मुझे इस पाप पक मे पडने से बचाओ। राम मैं तुम्हारा हू और किसी का नही।

पर इन पश्चात्ताप भरे शब्दो की तह मे भी मोहिनी का आकर्षण अगद के पाव की तरह जमा हुआ था। तुलसी को स्वय ही लगता था कि उनके ग्लानि और पछतावे के भाव मोहिनी के ध्यान के सामने यदि झूठे नही तो फीके अवश्य ही हैं। ऊहापोह म फसत-फसते मन यहा तक पहुच गया कि राम का ध्यान करें तो छवि मोहिनी की दिखलाई पडे— छिटक छिटक, कहा जा रहा है रे मन ? भाग भाग।' तुलसी सचमुच भाग खडे हुए। वह वातावरण उन्हे काट रहा था।

गली के मोहाने पर एक युवक ने बडे आदर से उन्हें प्रणाम किया किन्तु तुलसी ने ध्यान न दिया। युवक ने उनके कधे को छूकर उनका ध्यान आकर्षित किया और कहा— आज आप बडी जल्दी चल दिए।'

इस युवक को तुलसी ने मेघा भगत के यहा देखा कई बार है किन्तु परिचय नही था। एक अपरिचित-परिचित के टोकने स तुलसी ने सहसा कडे सयम से मन की लगाम साधी यथाशक्ति प्रसन्न मुख बनाकर कहा— मुझे एक काम है।"

आपने जब स बटेश्वर के भूतो को मिथ्या सिद्ध कर दिया तभी से मैं आपसे मिलना चाहता था। भगत जी के यहा अब आपकी उच्चकोटि की भावुकता से

भी प्रभावित हुआ हू । कई दिनो से सोच रहा था कि आपसे बातें करू । पर वहा तो रस ऐसा गाढा बरसता है कि मन म उठनेवाली और बहुत-सी बातें बिसर-बिसर जाती हैं ।"

ध्यान साधते-साधते भी उड-उड जाता था, कुछ सुना, कुछ न सुना । चेहरे पर रूखी यात्रिक मुस्कान आई हाथ जोडे कहा— अच्छा तो चलू ।"

उडी-उडी आखें, खोया-खोया चेहरा देखकर युवक ने अचानक मुस्कुराकर कहा—'जान पडता है आज आपकी जोडीदार नही आई । इसीसे आपका मन ठिकाने नही है।"

तुलसी ने चौंककर युवक को देखा । वह हसकर बोला—"हमारी आयु मे ऐसे खेल पाप नहीं हैं । वह भी आप पर जान देती है । मैंने देखा है । ह-हँ, आपकी तरह मैं भी अभी हाल ही मे पापड बेल चुका हू न, सो सब समझता हू। बस भी कवि हू । मेरा नाम कैलासनाथ है ।"

चोर के आगे चोरी बखानकर कवि जी और भी घुटन दे गए । यह सारी दुनिया तुलसी को एक पिंजरे जसी घुटन भरी लग रही थी । उन्हें ऐसा लगता जसे गलियों म आता-जाता हुआ हर व्यक्ति पिंजरे मे बन्द तुलसी रूपी केहरी को निन्दा भरी, नोकीले भालो-सी दृष्टि से देख रहा हो । गलियो मे व्यापा जगत कलरव अपने मन के भीतर उन्ह पश्चात्ताप और निन्दा भरे शोर-सा लग रहा था, 'यह देखो श्री राम के चरण-कमल छाडकर वेश्या के तलवे चाटनेवाला यह तुलसी चला जा रहा है । यह तुलसी जूठी पत्तल चाटनेवाला कुत्ता है । यह अपने पूज्यपाद गुरुओ को कलकित करनेवाला अधम कीडा है । इसे जीवित नही रहना चाहिए । इसे मर जाना चाहिए । डूब मर रामबोला डूब मर !' मन अपनी ही प्रताडना से बिलख पडा ।

गलियो म लोग देख रहे थे कि एक सुन्दर युवक अपने आप मे रोता-बडबडाता चला जा रहा है । वह अपने आपे म नही है । राह चलते मनुष्यो से टकरा जाता है । कोई झिडकता है, कोई समझाकर कहता है कि देखके चलो बचकर चलो ।

अरे तुलसी, इधर कहा जा रहे हो ?'

गगाराम का स्वर मानो तुलसी तक पहुच न सका । जो गली गुरू जी के घर जाती थी उसे छोडकर वह सामने गगा जी की ओर जानेवाली गली की दिशा म बढ रहे थ । जब गगाराम ने अपनी बात तुलसी के कानों मे पडती न देखी तो उनका ध्यान भग करने के लिए तेजी से आग बढकर उनका रास्ता रोक लिया । गति म बाधा पडन से तुलसी की बहकी आखें सचकर ऊपर उठी । गगाराम का चेहरा उनकी चौंध म समाया ?

'यह कसी धज बना रखी है तुमने ? इधर कहा जा रहे थ ?'

कहीं नहीं । मुझे जाने दो ।

पागल तो नहीं हो गए हो तुलसी ? रो क्या रहे हो ? कोई देखगा ता क्या समझेगा ? क्या हुआ ?"

तुलसी तब तक बहुत कुछ सावधान हो चुके थे । प्रिय मित्र को देखकर उन्हें

एक सहारा मिला था फिर भी मन का ग्लानि प्रवाह अभी पूरी तरह से थम नहीं पाया था। कहने लगे— मुझे जाने दो गंगा।'

"अरे पर कहां जाओगे ? अच्छा चलो कहीं एकान्त में चलें। यहां कोई देख लेगा तो क्या कहेगा ? सभी तो पहचानते हैं।" गंगाराम ने उनका हाथ झिंझोडकर कहा—'आंसू पोंछो और सावधान होकर हमारे साथ चलो। आज तुम्हें हो क्या गया है ?"

मित्र के आग्रह से बंधे हुए तुलसी ऐसे चल पड़े जैसे किसी का नटखट पालतू बछडा रस्सी में बंधा हुआ उसके साथ खिंचा चला जा रहा हो। गंगा-तट पर पहुंचकर दोनों मित्र नाव पर सवार हुए और उस पार पहुंच गए। निर्जन एकान्त में तुलसी ने मित्र के आगे अपना मन पूरी तरह से खोलकर रख दिया। बड़ी देर तक तुलसी अपना मन सुना-सुना कर हल्का करते रहे और गंगाराम गंभीर भाव से सुनते रहे। फिर अकस्मात उंगली से बालू पर कुछ अंक लिखे, हिसाब फैलाया और कहा— विषय चिंतनीय नहीं है मित्र। अपने उस दिन के शुभ शकुनों का ध्यान करो जिस दिन तुम इस मिथ्या मोहपाश से नियति के द्वारा जकड़े गए थे। तुम्हारा भविष्य बहुत उज्ज्वल है।"

गंगाराम के मिथ्या मोह कहते ही तुलसी के मन को धक्का लगा। जिस पाप-पंक को वह अभी स्वयं ही अपने मुख से नकार रहे थे उसे ही उनका अहंकार जोर जोर से सकारने लगा— मिथ्या नहीं ! मोहिनी सत्य है। मैं मोहिनी को ही चाहता हूं। उसके बिना यह जीवन निःसार है।' हृदय की धड़कन में ध्वनि गूंजी— राम राम राम।' तुलसी एक क्षण के लिए निस्तब्ध हुए, हतप्रभ हुए, फिर आंखें भर आईं। पूरी तड़प के साथ अपनी धड़कनों की गूंज पर अपनी दीवानी महत्ता को आरोपित करते हुए उनका मन मोहिनी-मोहिनी कहकर विलाप करने लगा। उन्हें लगा कि बिंब-दृष्टि में एक ओर राम-जानकी-लक्ष्मण और हनुमान खड़े हैं और दूसरी ओर मोहिनी बड़ी ही आकर्षक मुद्रा में खड़ी है। उन्होंने देखा कि श्रीराम के संकेत पर हनुमान जी उनकी हृदयहारिणी को निर्मम भाव से झोंटे पकड़कर बाहर निकाल रहे हैं और विवश विरही तुलसी प्रभु के आगे कुछ कहने का साहस न करके चुपचाप खड़े चौधार आंसू बहा रहे हैं। प्राण गूंजते हैं क्या चाहते हो ? मोहिनी या राम ? मोहिनी या राम ?' तुलसी विकल होते हैं राम को कदापि नहीं छोड़ूंगा पर मोहिनी को भी कैसे छोड़ दूं ?' अपने प्रबलतम मनोद्वंद्व को खोई हुई दृष्टि से निहारता हुआ रामबोला काठ के पुतले सा बैठ रहा।

कुछ दिनों तक तुलसी के मन कर्म और वचन त्रिशंकु की तरह आठों याम अधर ही में लटके रहे। तन सूखकर कांटा होने लगा। आंखें ऐसे डोला करतीं जैसे उन्हें किसी खोई हुई वस्तु की तलाश हो। गुरु-पत्नी पूछतीं— तुझे क्या हो गया है रे रामबोला ? दिनादिन सूखता चला जा रहा है।' उत्तर में 'कुछ नहीं' आई कहकर वह आंसुओं को अपनी आंखों में आने से रोकने का प्रयत्न करने लगते। कुछ सहपाठी उनके मुंह पर और पीठ पीछे भी प्रमाण सहित यह कहते नहीं थकते थे कि बटेश्वर मिश्र ने तुलसी पर उच्चाटन मंत्र का प्रयोग किया

है। कुछ ही दिनो मे यह बावले होकर गली-गली डोलेंगे। मामाजी का यह विचार और भी दृढ हो गया था कि इसे मेघा भगत का छुतहा रोग लग गया है। उन्होंने अपनी बहन से कई बार कहा कि इसका विवाह हो जाना चाहिए। मैंने लडकी ठीक कर ली है। इसे घर भी मिलेगा और धन-सम्पत्ति से भी हैसियत बढ़ेगी। जीजी, तुम जीजा जी से कहो कि इसे विवाह करने की आज्ञा दें। शेष गुरू जी की पत्नी ने अपने पति से इस सबध मे चर्चा भी चलाई। वे बोले—'खिलती कली को तोडकर हार मे गूथना बुद्धिमत्ता नही होती। अभी इसका अत सौंदर्य विकसित होने दो।"

तुलसी के अनन्य साथी गगाराम ने ज्योतिष से विचार करके एक दिन तुलसी से कहा— मित्र, तुम्हारे जीवन मे एक विराट परिवतन आनेवाला है। तुम निश्चय ही अपनी इष्ट वस्तु को पाओगे।"

'इष्ट वस्तु! क्या सचमुच ही मुझे मोहिनी मिल जाएगी ?—अरे पगले, झूठा मोह क्यो करता है ? वह हाकिम की प्राणवल्लभा सुख से सोने की सेज पर सोती है। हीरे-जवाहरातो से मढी है। वह तेरे जैसे दीन-हीन भिक्षुक के पास भला क्यो आने लगी ? नही नही, वह मेरी प्राणवल्लभा है। असुर कोतवाल अनाचार करके उसे अपने बधन में बाधे हुए है। वह मुझे मिलेगी। जिसका जिस पर सत्य स्नेह होता है वह उसे अवश्य मिलता है, इसमे तनिक भी सदेह नहीं।' तुलसी दिन रात ऐसी बातें सोचा करते। कभी अतश्चेतना भडकती और प्रश्न करती, क्या यही है तेरी इष्ट वस्तु ? छि, तू रहा भिखारी का भिखारी ही। जनम भर जूठन खाता रहा और अब जबकि सोने के थाल मे छप्पन भोग तेरे सामने आए हैं तब भी तू अभागा जूठी पत्तल की ओर ही ताक रहा है। धिक तेरा जीवन! धिक तेरे सस्कार! तू डूबकर मर क्यो नही जाता रामबोला ?'

आत्महत्या का विचार उनके मन मे रह-रहकर बादलो का घटाटोप बनकर छाने लगा। मोहिनी को देखे दस दिन बीत चुके थे। वह मेघा भगत के यहा जानबूझ कर नही गए थे। उन्हे पूरा विश्वास था कि भगत जी उनके मन की बात जान गए हैं। यही नहीं भगत जी के यहा आने जाने वाले लोगो मे से भी कुछ व्यक्ति उनका मोहिनी प्रेम पहचान गए हैं।

दो-तीन दिना के बाद मामा जी के आदेशानुसार इच्छा न होते हुए भी तुलसी को एक निमत्रण मे जाना पडा। मार्ग मे कलास से भेंट हो गई। उनसे पता चला कि मेघा भगत इस नगर को छोडकर अचानक अयोध्या चले गए हैं। तुलसी को इस सूचना से अपार शाति मिली, यद्यपि इस शांति की तह दर तह म मोहिनी की याद का भूत अब तक लिपटा हुआ था।

एक महीने से ऊपर दिन बीत गए। तुलसी के मन की हलचल अब प्राय थम चुकी थी। दिल का दर्द अब विवशता मे कुछ-कुछ दूर का दर्द लगने लगा था। मन अभी बहला नहीं था पर चुप अवश्य हो गया था।

गुरू जी के घर के पास ही रहनेवाले सोमेश्वर उपाध्याय नामक एक धनाढ्य और प्रतिष्ठित ब्राह्मण के घर पर पौत्र-जन्म की खुशी म एक प्रीतिभोज और गायन का प्रबध हुआ। पीपलवाली गली म मडप सजाया गया। शामियाने-तकिये

लगे चहचहाते पंछियों के पिंजरे टांगे गए, वही सजावट हुई। शाम से ही सुनने में आ रहा था कि कोतवाल साहब स्वयं पधारेंगे और उनकी रखैल मोहिनी बाई का गाना होगा। खबर सुनकर तुलसी धक से रह गए। महीने भर के सारे व्रत-नियम बालू की दीवार से ढह गए। मेघा भगत उन्हें धिक्कारेंगे। गुरु जी महाराज सुनेंगे तो उन्हें कितना कष्ट होगा! भाई को कितना कष्ट होगा! बजरंगबली धिक्कारेंगे, राम जी सदा के लिए विमुख हो जाएंगे—आदि बातों से चेताकर साधा गया मन इस सूचना से क्षण-मात्र में फुर हो गया। परंतु अंतश्चेतना शिकारी कुत्ते की तरह भ्रम का पीछा कर रही थी। मैं क्या करूं राम, कैसे छुटकारा पाऊं? हे बजरंगबली, हे संकटमोचन, दलदल में फंसे हुए इस जीव को उबारो। को नहिं जानत है जग में प्रभु संकटमोचन नाम तिहारो।

रात को महफिल हुई पर कोतवाल और—'और' नहीं आई। वहां तो मोहिनी के आने की सूचना से वह धड़क रहा था और वहां अब उसके न आने से छटपटा उठा। किसी करवट चैन नहीं।

एक पखवारे का समय तुलसी के लिए अनेक लंबे-लंबे युगों का योग बनकर बीता। फिर एक दिन मेघा भगत के दरबार में मिलनेवाले एक नवयुवक कवि कैलासनाथ दोपहर के समय उनके पास आए। उन्हीं गंगाराम से भेंट हुई। गंगा ने कहा—"वह आजकल एकांत सेवन कर रहा है, हम लोगों से भी प्रायः नहीं मिलता। आप उससे क्या चाहते हैं?"

"तुलसी जी से कहिएगा कि भगत जी अयोध्या से लौट आए हैं और उन्हें देखने के लिए तड़प रहे हैं।"

गंगाराम कवि कैलास को लेकर तुलसी की कोठरी में गए, किंतु कोठरी सूनी थी।

उस समय तुलसी अपनी प्रिया मोहिनी के प्रति कल रात रचे गए दो दोहे एक पर्ची पर लिखकर उन्हें स्वयं अपने हाथों चुपचाप अर्पित करने की तीव्र कामना लिए उसकी कोठी के द्वारे पर चक्कर काट रहे थे। बूढ़े कोतवाल उसमान खां ने मोहिनी के लिए बस्ती से कुछ हटकर गंगा-तट पर एक बगीचीदार हवेली बनवा दी थी। वह ऊंची संगीन चहारदीवारी से घिरी थी। द्वार पर यमदूत-से पहरेदार डटे हुए थे। तुलसी मन ही मन छटपटा रहे थे—मैं क्या करूं, कैसे करूं कि मुझे इसके भीतर प्रवेश मिल जाय? मोहिनी देखेगी तो कितनी प्रसन्न होगी! फिर दोनों बैठकर गान गायेंगे, हंसेंगे, बोलें-बतियाएंगे। अरे, फिर तो धरती पर स्वर्ग ही उतर आयगा। जाऊं, पहरेदार से कहूं कि भीतर की ड्योढ़ी में संदेशा भिजवा दे कि तुलसी आया है।—पर हिम्मत नहीं पड़ी। उनकी दीन हीन दशा देखकर पहरेदार ने यदि उन्हें झिड़क दिया तो? 'अरे नहीं रे, इतना कायर न बन। जिन खोजा तिन पाइया गहरे पानी पैठ। तू चलकर संदेशा तो भिजवा। मोहिनी मिलेगी।' अपने आप का बार बार हौसला दिलाकर तुलसी फाटक पर पहुंचे, पहरेदार से कहा—"मोहिनीबाई से कह दो कि शेष महाराज की पाठशाला से तुलसी आया है।"

"क्या काम है?"

"मिलना है।"

'कुछ दान-दच्छना लेने आए हो ?"

तुलसी के अहकार को इससे ठेस लगी। वह औरो की तरह साधारण भिक्षुक न थे वरन कोतवाल उसमान खा की तरह ही मोहिनी के प्रेम भिखारी थे। मोहिनीबाई ने अपनी चाहन भरी दृष्टि से देखकर उन्हें ससार का सर्वश्रेष्ठ धनी बना दिया था। यह मूख पहरेदार उन्हे समझता क्या है ? किंतु मन के इस नेहे को दबाकर तुलसी ने बात बनाने के लिए झूठ का सहारा लिया कहा—वह मुझे मेघा भगत के यहा मिली थी। उन्होंने मुझे मिलने के लिए यहा बुलाया था।"

"वह घर पर किसीसे मिलती नही हैं। दान-दच्छना लेनी हो तो कल सबेरे आकर दीवान जी से मिल लेना।'

"मुझे दान-दक्षिणा नही चाहिए मोहिनीबाई से मिलना है।'

"अरे तो मिलके क्या करोगे भाई ? आखें लडाओगे ?"

दरबान ने ऐसी भद्दी हसी हसकर यह प्रश्न किया कि तुलसी को ताव आ गया। बोले—'मैं ब्रह्मचारी हू। मोहिनीबाई ने मुझे सगीतशास्त्र की चर्चा के लिए यहा बुलाया था। तुम जाकर उन्हे खबर तो दे दो।" पहरेदार ने एक बार बडी तीखी दृष्टि से तुलसी को देखा और फिर बगीचे मे काम करते हुए माली को गुहारकर बोला—"बाई जी को खबर कराय देव कि मेघा भगत के हिया से कोई आया है।"

तुलसी के मन मे पहले तो ठडक पडी कि मिलन-क्षण बस आने ही वाला है फिर ऊहापोह मचने लगा, 'बुलाएगी या नही ? जिसके इतने नौकर चाकर हैं इतनी बडी जायदाद है वह क्या मुझे इतने दिनो तक याद रख सकी होगी। वह नही बुलाएगी तब तो इन पहरेदारो के आगे तेरी बडी किरकिरी हो जायगी तुलसी । नही-नही, बुलाएगी। अवश्य बुलाएगी। कितनी प्यारी दृष्टि से उसने मुझे देखा था। बडी देर तक प्रतीक्षा करने के बाद भीतर से खबर आई कि भेज दो। तुलसी का मन यह सुनकर धड धड करने लगा।

फुलवारी पार करके कोठी में प्रवेश किया। कोठी के नीचे का खड सूना था। बाइ ओर के दालान म बडे-बडे झाड फानूसो पर लाल कपडे के गिलाफ चढे हुए थे। दीवारो पर बडे-बडे आईने लग हुए थे। रगीन बेल-बूटो की चित्रकारी हो रही थी। फर्श पर कोई बिछात न थी। सगमरमर और सगमूसा के चौके अपने सूनेपन म भी चमक रहे थे। आगन के दाहिनी ओर वाला दालान भी एसी ही सजावट का था और सूना था। आगन मे शतरज की बिसात-से जडे काले-सफेद पत्थर तुलसी को मानो चुनौती दे रहे थे कि आओ, हम पर शतरज खेलो। इस वभव से गुजर कर ऊपर चढते हुए तुलसी की अन्तश्चेतना गूजी—दसा ! भला बौना कभी चन्द्रमा को छू सकता है ?'

चेतना की ललकार ने तुलसी की आसा को झील बना दिया। तभी ऊपर से मोहिनी की आवाज सुनाई दी— अम्मा आज हम भगत जी के दर्शन करने जरूर जाएगे हमे कोई रोक नही सकेगा।' प्रिया के स्वर ने तुलसी के रोम

रोम को उन्मत्त बना दिया। मन बोला— तेरे ही लिए जा रही थी वहा। वह भी तुझे चाहती है। बस अभी भेंट होने वाली है तुझे अपना मन चाहा वैभव बस अब मिलने ही वाला है।'

ऊपर एक बडे कमरे मे तुलसी को बैठा दिया गया। कमरा खूब सजा हुआ था। दीवालों पर सुनहले रुपहले रगों से पच्चीकारी हो रही थी। फर्श पर बेदाग चादनी बिछी हुई थी उसपर ईरानी कालीन तथा तोशक-तकिये लगे हुए थे। झाड फानूसों और बडे-बडे दर्पणो की सजावट हो रही थी। कमरे के बाहर दालान मे चहचहाते पक्षियो के पिंजडे लटक रहे थे। नौकरानी तुलसी को कमरे का द्वार दिखाकर भीतर यह कहती हुई चली गई कि यहा बठिए बाई जी अभी आती हैं।

तुलसी को अपने धूल भरे गदे पैरा का ध्यान हो आया। यहा पैर धोने के लिए पानी तो मिलने से रहा। वह भीतर कैसे जाए ? क्या करें ? कधे पर रखे अगौछे पर उनका ध्यान गया। वह उससे अपने पैरों की धूल झाडने लगे। उन्होंने अपने तलवो को खूब रगड रगडकर पोछा। इतने मे मोहिनीबाई की मा आ गई। उन्होने हाथ जोडकर कहा— 'पालगन महाराज कहो कसे पधारे ?"

तुलसी सकपका गए। घबराहट मे हकलाते हुए कहा— अ उ-उ-उ उन्होने गाना सिखाने के लिए कहा था।"

बडी बाई जी हसीं बोली—"अरे वो तो अभी आप ही बच्ची है गाना सीख रही है। तुम ऐसा करो महाराज कि मदनपुर चले जाओ। वहा पर एक उस्ताद जी रहते हैं मीर जशन नाम है। वह तुम्हें सिखायेंगे। अभी जाओ तो हम अपना आदमी तम्हारे साथ कर दें।"

तुलसी का मन मुरझा गया, बुझे हुए स्वर मे कहा— 'कल जाऊगा। आज वहा आने-जाने मे देर हो जायगी।"

पैनी दृष्टि से बडी बाई जी तुलसी को ऐसी उपेक्षित मुद्रा मे ताक रही थी जैसे समुद्र किसी ऐसे तुच्छ नाले को देख रहा हो जो बरसाती पानी की बाढ मे फैलकर उससे मिलने के लिए आया हो। वह बोली— अच्छा कल ही सही। मैं आज उन्हें कहला दूगी। तुम्हें कुछ देना-लेना नही पडेगा। गडा बधवा लेना और बाकी सब मैं देख लूगी। तुम्हें और जो कुछ चाहिए सो हमे बता देना, भला।" कहकर बडी बाई जी ने फिर हाथ जोडे और चलने के लिए उद्यत होते हुए कहा—'अच्छा तो मैं चलू महाराज मुझे काम है पालागन।"

बेचारे तुलसी की आशा पर तुषारपात हो गया। बडे ही मरे हुए स्वर मे कहा—'अच्छा।" बडी बाई जी ने जाने के लिए पीठ मोडी ही थी कि तुलसी ने फिर कहा—'ए-ए-ए-एक बार माहिनीबाई जी से मिल लेता " तुलसी के स्वर मे दीनता भरी गिडगिडाहट आ गई थी।

बाई जी के हाठो पर एक कुटिल मुस्कान खेल गई। बडे हीरेवाली अपनी नाक की लौंग को बडी अदा से घुमाते हुए प्रौढा ने कहा— ब्रह्मचारी को नारी से दूर रहना चाहिए महाराज। पालागन। बाई जी ने फिर पीठ मोड ली और दालान की ओर चली गई।

तुलसी की आखो मे क्रोध और क्षोभ झलक उठा। मन बदला लेने के लिए

बावला हो गया। इस दुष्टा को दण्ड देना चाहिए। तुलसी, ऊंचे स्वर मे गाना आरंभ कर ! वह अभी दौड़ी हुई चली आएगी।' और दीवाने आवेश म तुलसी गाने भी लगे—"सुनी री मैंने हरि आवन की "

बडी बाई जी त्यौरियां चढाकर झपटती हुई आईं। उनकी दृष्टि ने मानो तुलसी का गला घोट दिया। वह भय की टकटकी बधी आखो से बडी बाई जी को वैसे ही देखने लगे, जसे खूखार शेर के सामने उसका शिकार भयस्तब्ध होकर टकटकी बाध लेता है। तभी कुछ दूर से आवाज आई—"कौन आया है, अम्मा ?"

"कोई नही ! तू अपना काम कर।' फिर तुलसी की ओर बढते हुए बाई जी ने धीमे किंतु कठोर स्वर मे कहा—"खबरदार, जो फिर कभी इस घर मे आए। कोतवाल साहब को खबर लग जायगी तो तुम्हारी इस सुदर काया से तुम्हारा सिर कटकर पल-भर मे ही अलग जा पडेगा। विधर्मियो को ब्रह्महत्या का दोष भी नही लगता। जाओ, भागो। पालागन। जोगी-ब्रह्मचारियो की सिद्धी म देवता विघ्न भी डालते हैं। विश्वामित्र मुनि को जसे मेनका से फसा कर कुत्ता बनाया था वैसे ही राड मेरी लडकी तुम्हारे पीछे पड गई है। जाओ, जाओ। भागो, भागो।' कहकर चली गई।

तुलसी के स्वाभिमान को वर्षों से ऐसा करारा आघात नही लगा था। बचपन में जब मारपीट कर, मडया उजाडकर, वह गाव से निकाले गए थे, तब उनका मन जसे लडखडाया और छटपटाया था, ठीक वैसा ही अनुभव इस नये परिवेश म इस क्षण हुआ। उनकी संपूर्ण चेतना एकदम से जड हो गई थी। वह काठ के पुतला बने खडे के खडे रह गए। मुट्ठी म अनमोल रतन की तरह बडे प्यार से सभाली हुई छोटी-सी कागज की पर्ची ककड की तरह बेमोल होकर फश पर गिर गई। एक बार सिर म तेज चक्कर आया, दूर पर मा-बेटी की तीखी बातो के कुछ स्वर सुनाई दिए। आस्था की डिगी हुई नीव को मानो हल्का-सा सधाव मिला। उनकी आखों मे आसू आ गए। यह आंसू मानो उनकी जड़ काया के लिए नये प्राण थे। तुलसी अपने यथार्थ-बोध में आ गए और तेजी से सीढ़ियां उतरकर ड्योढ़ी-फाटक पार कर बाहर निकल आए।

१४

मोहिनीबाई के घर से निकलते समय तुलसी का बावला मन कह रहा था—'अब यह जीवन नि सार है। यह अपमान असह्य है अब नही जीऊगा—कदापि नही जीऊगा।' आखें पोछते, किन्तु वे फिर भर उठती थीं—'डूब मर रामबोला डूब मर ! तू सचमुच अभागा है। डूब मर ! तुझे गगा ही शरण देंगी और कोई नहा।

तुलसी दशाश्वमेध घाट के पास पहुच गए। यहा एक गली से बाहर निक

लते हुए उनके पुराने सहपाठी महाराष्ट्रीय मित्र घोडू फाटक ने उन्हें देखकर आवाज लगाई—'अहो, तुलसी भया! तुलसी भया!'

स्वर ने कानों को झटका दिया। उन्होंने चाहा कि वह फाटक के स्वर को अनसुना करके आगे बढ़ जाए पर घोडू फाटक भला मानने वाला था। उसने फिर हाक लगाई— अरे सुनो तो, सुनो तो। मैं आ रहा हूं।" फाटक लपककर पास आ गया। तुलसी की दशा देखकर पूछा—'क्या बात है मित्र, चेहरा क्यों तमतमाया हुआ है? तुम्हारी आखें भी भरी हुई हैं। क्या किसी से लडाई हो गई है?'

'कुछ नहीं कुछ नहीं।' फिर आखें पोछते हुए एकाएक नाटकीय ढंग से हंसकर बोले— पीछेवाली गली में इतना धुआ था इतना धुआ था कि आखें भर आईं। तुम कहां से आ रहे हो?'

घोडू फाटक मुस्कराया बोला— अपनी धोबिन के यहां से। उस दिन गगाराम ने बडी सच्ची बात कही थी मित्र। प्रेमिका सचमुच धोबिन ही होती है। वह कामी पुरुष के मन को ऐसे पछाड़-पछाडकर धोती है कि बस पूछो मत। तुम कभी इसके फेर में न पडना तुलसी भया। श्रीमदशकराचार्य भगवान सत्य ही कह गए हैं कि—द्वार किमेक नरकस्य "

नारी की व्यर्थ ही निन्दा क्यों करते हो फाटक?'

काए कू? म्हणजे—कोई धोबिन-वाबिन हो गई है काय?" कहकर घोडू फाटक हो हो करके हंस पडा। वह हंसी तुलसी के कलेजे पर हाथी के पाव-सी धमाधम पडी। घोडू का वाक्य मानो सदेह होकर उन्हें बडी सतर्कता के साथ घूर रहा था। तुलसी दोनों ही प्रकार के मानसिक खिंचावों से अत्यधिक पीडित हुए। बात का उत्तर दिए बिना फिर आत्महत्या की धुन में फाटक से पीछा छुडाकर तुलसी ने गंगा जी की ओर कदम बढाया ही था कि पास की एक दूसरी गली से उनके नव परिचित कैलासनाथ आते हुए दिखलाई दिए। दोनों की दृष्टि एक-दूसरे पर प्रायः साथ ही साथ पडी। तुलसी की आखों में कतरा जाने का पैतरा चमका और कैलास की आखों में मिलने की ललक उदय हुई। दूर ही से वे उत्साहित स्वर में बोले— 'नमस्कार! वाह इस समय आपसे खूब भेंट हो गई। मैं आपको ढूढ भी रहा था। इधर कहा जा रहे हैं?'

झूठ बोलने के पहले तुलसी का मन तेजी से ऊंचा-नीचा हुआ, पर झूठ का सहारा लिए बिना उन्हें गति न मिल सकी, कुछ हकलाकर कहा— ऐसे ही बस खाली मन की बहक में इधर आ निकला।

खाली हैं तो हमारे साथ चलिए। भगत जी के यहां जा रहा हूं। आज तो मैं आपके यहां गया भी था आप मिले नहीं। भगत जी अयोध्या से लौट आए हैं, आपको बुलाया है आइए!"

कहीं भी विशेष रूप से मेघा भगत के यहां जाने के लिए तुलसी का मन इस समय राजी न था बस मरने के लिए धुन समाई थी। पर कैलास ने उनके मुख से कोई बात निकलने से पहले ही उछाह भरे स्वर में कहा—' भगत जी ने आपके सबध में कल एक बडी ही विचित्र बात कही।'

तुलसी का मन धड़का कि कहीं उन्होंने उनके मन का चोर न उदघाटित कर दिया हो। तभी कैलास ने गदगद स्वर में कहा—"वे बोले कि पहली बार देखने पर मुझे लगा कि मानो परशुराम के सामने राम आ गए हैं।"

धोंडू फाटक सुनकर जोर से हंस पड़ा, कहा—'लो तुलसी भइया, तुम तो रामचन्द्र के अवतार हो गए। जाओ-जाओ, भगतबाजी करो। आज वहां भोजन दक्षिणा का डौल तो है नहीं, अन्यथा मैं भी तुम्हारे साथ चलता।"

कैलास की आंखों से यह भाव स्पष्ट था कि उसे धोंडू फाटक की हंसी अच्छी नहीं लगी। उसने बड़ी आत्मीयता से तुलसी का हाथ पकड़ते हुए कहा—'आइए आइए।"

कैलास के द्वारा हाथ पकड़कर खींचे जाने पर तुलसी ऐसे बढ़े जैसे बलि का बकरा कसाई के द्वारा खींचे जाने पर अड़ अड़ कर बढ़ता है। उनका मन इस समय केवल मृत्युमोहिनी की भावना से अभिभूत है। वह राम से कतराना चाहता है। किसी प्रकार का अपराध करने के बाद घर से भागा हुआ दगई बच्चा जैसे लौटकर घर जाने में हिचकता है वैसे ही तुलसी भी हिचक रहे थे। रास्ते भर कैलास उनसे मेघाभगत की चर्चा ही करता रहा। बातों के प्रसंग में उसने कहा— नदिया के चैतन्य महाप्रभु के कृष्ण प्रेम की चर्चा बहुत सुनी थी परन्तु भगत जी का राम प्रेम तो प्रत्यक्ष देख रहा हूं। इस कलिकाल में ऐसा भगवत प्रेम मुझे तो कहीं देखने को नहीं मिला। क्या आपने कोई ऐसा दूसरा व्यक्ति देखा है ?'

तुलसी की महत्ता को चुभन हुई। मेरा राम प्रेम क्या किसीसे कम है ?' फिर आत्म-ग्लानि उपजी— अब कहां रहा वह अनन्य भाव ! मोहिनी मेरे राम प्रेम का हिस्सा बटा ले गई। मेघा भगत खरा सोना है जबकि मुझमें तांबा मिल चुका है। राम के आगे मोहिनी ? परब्रह्म मर्यादा पुरुषोत्तम के आगे वेश्या ? छि छि। तुलसी गंगा-स्नान करने के बाद कीच-कूड़ा भरे नाले में डुबकी लगाने की ललक रखते हो ? किन्तु मोहिनी हाय मोहिनी। नहीं नहीं। राम-राम राम राम मोह रा मोह राम।' ऊहापोह चलता रहा कदम आगे बढ़ते रहे।

जिस समय तुलसी और कैलास भगत जी के यहां पहुंचे उस समय संयोग से सेठ जैराम को छोड़कर वहां और कोई न था। भगत जी तकिये के सहारे अध-लेटे आंखें मींचे धीमे स्वर में संस्कृत का कोई श्लोक गुनगुना रहे थे। जैराम सेठ चुपचाप बैठे सूनी दृष्टि से छत की ओर ताक रहे थे। कैलास को देखकर जैराम बोले—"आओ आओ कविराज "

मेघा भगत ने आंखें खोलकर आगन्तुकों को देखा। तुलसी कैलास की पीठ की आड़ में अपना चेहरा भरसक छिपाने का प्रयत्न करते हुए कमरे में आगे बढ़ रहे थे। मेघा भगत उन्हें देखकर आह्लादित हो गए। झटपट बैठते हुए कहा—मेरे प्रभु मेरे स्वरूप तू कहां भटक गया था ?

तुलसी को बड़ी लज्जा लग रही थी। भगत जी की बात सुनकर उन्हें लगा कि वे अपनी किसी अलौकिक सिद्धि के द्वारा उनके मन का सारा हाल जान

हैं। इससे उनका लज्जाबोध और अधिक गहरा हो गया। कैलासनाथ तेजी से डग बढ़ाकर भगत जी के पास तक पहुंच चुका था इसलिए उसकी पीठ की आड़ लेकर अपना मुह छिपाना अब सभव न था। आत्मग्लानि से पीडित तुलसी लज्जावश आंखें झुकाए हुए भगत जी की ओर बढ़े। कैलास उनके पैर छूकर पीछे हट चुका था। तुलसी ने आगे बढ़कर उनके पैरों में अपना सिर झुका दिया। मेघा भगत ने झटपट अपने दोनो हाथों से उनके दोनों कधे छूकर गद्-गद स्वर म कहा—"बस रे बस भाई, तू मेरे पैर छूयेगा तो मैं भी तेरे पैर छूने लगूगा। प्रेम म कोई छोटा-बड़ा नही होता।

दोऊ पर पैंया, दोऊ लेत हैं बलैयां।
उन्हें भूलि गई गइया, इन्हें गागरी उठाइबो॥"

तुलसी तब तक भगत जी के चरणो मे अपना मुह छिपा चुके थे। तुलसी को पैर छूने से रोकने के लिए कंधों पर रखी हथेलियां फिसलकर उनकी पीठ पर आ चुकी थी। अपनी बात पूरी करने पर उनकी पीठ थपथपाकर भगत जी बोले—"अरे बस करो, उठो मेरे रामरूप, अपना मुखड़ा तो दिखाओ। तुझे तो मैं बहुत याद कर रहा था भइया। मैं कहूं कि जल तो मछली से खेल रहा है फिर मेघ बरसे कसे? देख, अरे मेरी आखों मे आखें डालकर देख, तेरी सिद्धि का प्रसाद मुझे भी तो मिले भाई।"

भगत जी के आग्रह पर तुलसी अपनी आंखें उठाने का जितना प्रयत्न करते हैं उतनी ही वह और भी झुकी झुकी पड़ती हैं। भगत जी के अत्याग्रहवश उनकी आंखें मिली तो अवश्य, पर इस तरह, जैसे तुरत पकड़ा गया पक्षी बहेलिये को देखता है। भगत जी मुस्कराए कहने लगे— अरे चार ही दिनो मे तेरी आखों की मोहिनी बदल गई है रे? इनम तो एक पूरा ब्रह्माण्ड चमकने लगा है।"

मन की भयजनित शका तुरत आखों मे चमकी, क्या यह इनका व्यग्य है? विवशता मे आख भर आईं, कहा— मैं बडा अपराधी हू महाराज।"

भगत जी हसे कहा— अरे मेरे भोले भइया तू पानी के बहाव को न देखकर उसके ऊपर तैरने वाल मल को क्यो देख रहा है? बहाव देख, बहाव। यह मल तो लहरा के थपेडो से आप ही आप बह जायगा। यह कहकर भगत जी जराम सेठ की ओर देखते हुए बोले— सेठ मेघा रहे न रहे पर तुम अवश्य देखोगे कि ससार मेघा को भूल जायगा और तुलसी को याद करेगा। भक्ति तो कोई मेरे इस छोटे भाई से सीखे। यह पृथ्वीवासियों के हेतु स्वग से आया हुआ राम का प्रसाद है।"

तुलसी अब रोने लगे थे। सिसककर बोले— अब नहीं महाराज। आपकी बातो से मैं अत्यधिक दण्डित अनुभव करता हू। मैं बहुत ही अधिक पीडित हू।' कहकर उनकी आखें सोतो-सी फूट पडी।

यह लो तुम तो रोने लगे। फिर मेरी आखें भी बरस पडेंगी भइया। य आसू बडे छुतहे होते हैं। आसू पोछ पोछ! मैं रात भर रोया हू रे मेरी थकी आखो को तनिक विश्राम करने दो।'

तुलसी ने अपनी आखे पोंछ लीं। कैलास बोला—' महाराज, अभी थोडी

देर पहले इनके एक मित्र ने नारी को, कदाचित् अपनी प्रेमिका को, धोबिन कहकर उसे गहरा अर्थ दे दिया था।"

मेघा भगत हंसे, कहा—'वाह, यह कविया जैसी बात है। ठीक कहा, माया सचमुच धोबिन ही है। वह जीव में लिपटे अज्ञान रूपी मैल को धोकर उसका निर्मल रूप निखार देती है।'

कुछ देर रुक मेघा भगत फिर कहने लगे—'मैं अभी अयोध्या गया था। वहां पर, जहां पावन जन्मभूमि का मन्दिर तोड़कर बाबर बादशाह ने एक पावन मस्जिद बनवाई है, उसी के पास एक टीले पर एक नवयुवा रामदीवाना मिला। अरे, बड़ा ही सुन्दर और सौम्य मुख वाला था, रामबोला। फीकी काया में से ऐसा दिव्य तेज मैंने पहले कभी नहीं देखा था। और उसकी आंखें क्या थीं मानो चुम्बक थीं। उनसे दृष्टि मिल जाय, फिर तो नजर छुड़ाए नहीं छूटती थी। आयु में वह मुझसे लगभग ५-६ वर्ष छोटा था। बस यह समझ लो कि तुम्हारी ही आयु का था। तुम्हें देखकर मुझे बरबस उसकी याद हो आती है। वह सूर्योदय से सूर्यास्त तक पेड़ की आड़ में बैठा हुआ मस्जिद की ओर टकटकी बांध कर देखा करता था। कभी हंसता, कभी रोता, और कभी योगी-सा समाधिस्थ हो जाया करता था। तो, मेरी उससे भेंट हुई, फिर आकर्षण हो गया। मैं रोज सूर्यास्त के बाद उसके पास जाने लगा। एक दिन मैंने उससे पूछा कि तुमने कौन-सा योग-साधन कर ऐसा उत्कट राम प्रेम सिद्ध किया? कहने लगा किसी वस्तु पर रीझ जाओ और फिर रीझते ही चले जाओ, तुम्हें तुम्हारा अभीष्ट मिल जायगा।' इसके बाद प्रसंग बढ़ने पर उसने मुझे अपनी कथा सुनाई। कहने लगा कि एक राजरमणी मुझपर रीझ गई थी। मैं भी उसके रूप सौंदर्य, हाव भाव उसकी अमल दृष्टि और दासियों द्वारा भेजे गये गुप्त संदेशों को पाकर ऐसा मस्त हुआ कि राम रहीम सब भूल गया। उसने मुझसे कहलाया कि तुम अपना धर्म परिवर्तित कर लो और मेरे चाकर बनकर दिल्ली चलो। मैं बिलकुल तैयार हो गया था। वह रीझकर मुझे देखती मैं उसे देखता। वह हंस पड़ी, मैं भी उसका प्रतिबिम्ब बनकर हंस पड़ता। दूर से देख-देखकर मिलन आकांक्षा में वह आहें भरती, मेरी भी सांसें भर उठती थीं। उसकी आंखों में आंसू देखकर मेरी आंखों की भी वही दशा हो जाती थी। अपनी तन्मयता में वह कभी भय से चौंक उठती थी कि किसी ने देख न लिया हो, मैं भी वैसे ही चौंक उठता था। उसके विरह में आठों याम बावला बना रहता था। एक दिन वह तो चली गई और मैंने विरह ज्वाला में जलते-जलते यह देखा कि मैं अपने राम के संकेतों को बूझने लगा हूं। कभी-कभी बातों के अर्थ और यथार्थ में अद्भुत अन्तर होता है।"

आभ्यन्तर चौकन्नी एकाग्रता के साथ तुलसी ने यह कथा सुनी। मन बोला यह तो तत्काल गढ़े हुए रूपक-सा लगता है। भगत जी कदाचित् मेरे ऊपर बीती हुई को लेकर ही यह रूपक सुना गए। मोहिनी का प्रेम क्या मुझे भी राम भक्ति का मर्म समझा देगा? मोहिनी सुन्दर है। गुणवती है। वेश्या होते हुए भी शीलवती है। वह बहुत मोहक है।' अन्तश्चेतना गूंजी, श्री रामलली मोहिनी से भी कई गुना अधिक सुन्दर और मोहक हैं। माया का सौंदर्य मोहक—

होता अवश्य है परन्तु वह सुन्दरता मन ही की होती है जो काया की सुन्दरता पर अपन आप को मढ़कर उसे असख्य गुना अधिक सुन्दर बना देती है।' 'क्या किसी स्त्री से प्रेम किए बिना राम को पाया जा सकता है?' यह बात मन मे उठते ही चेतना न सहज प्रश्न किया, 'क्या स्त्री ही राम तक पहुचने का साधन है?' चचल मन पत दर पत म प्रश्नो से जूझने लगा।

भगत जी ठठाकर हस पडे कहा— नही नही। मुझे तो श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण के शक्ति, शील और सौन्दयमय काव्य पर रीझकर राम की डयोढी तक पहुचने की राह मिली। तब से अब तक वही पर बैठा अपना सिर धुन रहा हू कि राम जी द्वार खोलो दर्शन दो। पर कुसुम से कोमल मेरे राम प्रभु वज्र से अधिक कठोर भी है। शासवा मे भी वे मर्यादा पुरुषोत्तम है। देखो कब मेरी गोहार उनके दरबार तक पहुचती है। कब मुझे वह शक्ति और सौन्य पुज देखने को मिलता है जिसके आगे उत्तम से उत्तम कविता भी लजा जाती है। कब वह दिन लाओगे राम? अब तो ले आओ रे मेरे राम! तुम्हारे बिना मैं बडा दुखी हू। बडा ही दुखी हू।" मेघा भगत आंसू बहाने लगे।

कुछ देर बाद कलास ने तुलसी के हाथ पर हाथ रखकर धीरे से झिझोडा। तुलसी भगत जी की विरह वेदना मे तन्मय हो गए थे। विरह समान था पर विरह के आलम्बनो मे अन्तर था। भगत जी के और स्वय अपने भी राम के आगे उन्हें अपनी मोहिनी की कल्पना तक इस समय अच्छी नही लग रही थी। मक्खी और क्षेमकरी पक्षी की उडान मे अपार अन्तर का बोध उन्हे अब हो रहा था। अपनी मोहिनी की यह क्षुद्रता एक ओर जहा तुलसी की अहमभाव रहित चेतना को अपार आनन्द दे रही थी, वही उनकी अहता की तह दर तह मे नन्ही फास की तरह तीखा चुभन भी दे रही थी। उनका अति मोह कही पर अपनी प्रबुद्ध चेतना से कुठित था। कलासनाथ के द्वारा अपने हाथ का झिझोडा जाना पहली बार तो उन्हे व्याप ही न सका फिर जब दुबारा उनका हाथ दबाया गया तो वह चौंककर कैलास की ओर देखने लगे। कलास ने उनके कान म कहा, ऐसा भजन सुनाओ जिससे इनका रस अश्रु भवर से निकल कर आगे बहे।

तुलसी सोचने लगे फिर आख मूदकर मीरा का एक भजन गाना आरम्भ किया— हरी मैं तो प्रेम दीवानी मेरो दरद न जान कोय।'

उस दिन तुलसी को ऐसा लगा कि जैसे उनके मन का मल कट गया है। मन की सारी थकन मिट गई है। ऐसा लगता है कि जसे एक रम्य किन्तु कठिन यात्रा के बाद वे नहा धोकर चगे हो गए हो। मोहिनी मन मे टीस की तरह सतत विराजमान थी किन्तु राम की याद वे सप्रयत्न बढा रहे थ।

मेघा भगत के यहा उनका नित्यप्रति जाना फिर से आरम्भ हो गया। गुरु जी के नये विद्यार्थियो को पढाने मे उनका मन अब पहले से अधिक सावधान हो गया था। इसी बीच म मामा ने दोबारा और गुरु-पत्नी माई ने भी एक बार तुलसी के आगे विवाह का पुराना प्रस्ताव दोहराया। तुलसी के मन मे बसी एक नारी छवि अभी इतनी धुधली नही हुई थी कि उसके ऊपर किसी अन्य जीवन-सगिनी की कल्पना को आरोपित कर पाते। यह बात उनके मिजाज मे तुनुक भर देती

थी। उन्होंने भाई से कहा—'मेरी जन्मकुण्डली मे साधु होने का योग लिखा है भाई। विवाह करूंगा तो भी मुझे सुख नही मिलेगा।'

बात आई-गई हो गई। तुलसी दृढ़तापूर्वक अपने आपको साधकर राम के प्रति अपनी अनुरक्ति बढाने की साधना मे लगे। उन्होंने इस बीच म अध्यात्म रामायण पढना आरम्भ कर दिया। इन पाच-छ दिना म वह पहले से अधिक गम्भीर हो गए थे।

१५

साधक तुलसीदास एक दिन बडे भोरहरे जब गगास्नान के लिए नन्ददास के साथ घाट पर पहुचे तो एक अनजानी स्त्री ने उनके पास से गुजरते हुए अचानक धीरे से कहा—"एक बात सुन लीजिए।" कहकर वह घाट पर बनी बुर्जी की आड म चली गई।

तुलसी क्षण भर के लिए ठगे से खडे रह गए। 'जाऊ या न जाऊ' का प्रश्न उठा। फिर उनके पर आप ही आप उधर बढ गए। मोहिनीबाई की दासी ने कहा—'बाई जी आपसे मिलन के लिए तडप रही हैं। आज दिया-बत्ती जले दुर्गाकुण्ड पर पहुच जाइएगा। उत्तर के कोने मे भेंट होगी।" सुनकर तुलसी के मन मे एक बार फिर अधेरे-उजाले की लुका छिपी चल पडी। राम धुधल पडने लगे, मोहिनी चमकने लगी।

नहाने के लिए सीढ़ियो पर उतरे तो नन्ददास न पूछा—'तुलसी भैया, यह कौन थी?"

"माया!" तुलसी ने गहरे डूबे हुए स्वर म उत्तर दिया। वे पानी म उतर रहे थ। एकाएक उनके सामने ब्राह्म वेला के गहरे धुधलके मे पानी की सतह पर रहस्यमय रूप से चमकते हुए एक ओर दीर्घाकार राम और दूसरी ओर नन्ही सी मोहिनी खडी झलकने लगी। मोहिनी मुग्ध दृष्टि से तुलसी को अपलक देखकर मुस्करा रही थी, आखो आखों म बुला रही थी। राम के मुख की ओर एक बार आखें उठाकर देखा पर वह सहसा अति दीर्घाकार हो जाने से तुलसी के लिए लगभग अदृश्य हो गए थे। इधर मोहिनी और भी अधिक आकर्षक लगने लगी थी। ध्यान म उसे देख देखकर वे मुस्कराने लगे थे। गगा म वह ऐसी तेजी से तैरकर आगे बढे मानो मोहिनी के बुलावे पर वे अभी ही मिलने के लिए जा रहे हों। भोला मन साधना से छिटककर फिर खिलवाड म रम गया। नन्ददास भी उन्ही के साथ तैर रहे। बिलकुल पास ही मे किसी के तैरने की ध्वनि व छपाके सुनकर तुलसीदास की मनोबिम्ब-लीला बिखर गई। काना मे नन्ददास की आवाज भी पडी— तुलसी भइया कबीर साहब कह गए हैं कि माया महा ठगिनि मैं जानी। इसपर तुम्हारा विचार क्या कहता है?

तुलसी सकपका गए। फिर कुछ उखडे-से स्वर म उत्तर दिया—"अब माया

मुझे ठग लेगी तब बतलाऊंगा।"

"तुलसी भइया, किसी के द्वारा अपना ठगा जाना तुम्हें अच्छा लगेगा ?"

तुलसी ने उत्तर न दिया। पानी के भीतर डुबकी मारकर तरते हुए आगे निकल गए। नहाकर जब दोनों घाट पर पहुंचे तो देह पोंछने के लिए अपना अंगौछा उठाते हुए नंददास ने कहा—'हमारे नटनागर ब्रजचन्द को भी परकीया राधा की माया ने ही लुभाया था। ऐसा लगता है भइया कि प्रेम में चोरी का भाव उद्दीपन रस बन जाता है। पर भइया, ज्ञान और मोह का साथ कैसा ? उजाले और अंधेरे का योग कैसा ? माया का खेल समझ में नहीं आता। अपने नन्ददुलारे के साथ वृषभानु किशोरी का नाता मेरे मन में बड़े प्रश्न उठाता है।"

तुलसी अपनी देह पोंछते-पोंछते सहसा रुक गए, गंभीर स्वर में कहा—"नंददास, इन प्रश्नों का जाल फैलाकर मेरे रहस्य को पकड़ने का प्रयत्न न करो। यदि तुम कुछ जान भी गए हो तो मेरे हित में उसे गोपन ही रहने दो।"

"तुलसी भइया मेरे रसिया गोपीरमण राधावल्लभ तो क्षमा भी कर सकते हैं पर तुम्हारे मर्यादा पुरुषोत्तम इष्टदेव ऐसा खेल कदापि सहन नहीं करेंगे। बिचारी सूपणखा उनसे अपना प्रेम निवेदन करने गई तो नाक-कान कटा के ही लौट पाई थी।"

तुलसी चुप रहे। उनका मन गहरे ऊहापोह में फंस गया था। इससे वे कुछ-कुछ चिड़चिड़ा भी उठे। इस समय वह निर्द्वन्द्व होकर मोहिनी मुग्ध बने रहना चाहते थे। उसने मुझे बुलाया है, क्या कहेगी ? कदाचित् यही कहेगी कि मेरे साथ भाग चलो। भागकर कहां जायेंगे ? कोतवाल पकड़वा मंगाएगा। काशी के बाहर कोतवाल का राज्य थोड़े ही है। काशी के बाहर यदि निकल गए तो फिर कौन पकड़ेगा। कहीं किसी अन्य गांव या नगर में जा रहेंगे। मैं पत्रा बांचूंगा, लड़के पढ़ाऊंगा और थोड़ा-बहुत ज्योतिष का चमत्कार फैलाकर दोनों के गुजारे लायक कमा लिया करूंगा। इसमें कौन झंझट है, पर मान लो काशी से बाहर हम लोग न निकल पाए, पकड़ लिए गए! तब क्या होगा? अरे बड़ी मार पड़ेगी। मार तो खैर सही भी जा सकती है पर जो बदनामी होगी, विशेष रूप से गुरु जी की बदनामी होगी, वह कैसे सही जाएगी ? मोहिनी की तो वह गरदन ही कटवा डालेगा। हाकिम बड़े जल्लाद होते हैं। फिर उसमान खां तो कोतवाल ठहरा, शहर का राजा। अरे राम बचा लेंगे। राम ? कठोर संयमी अनुशासक, जिन्होंने रावण को मारने के बाद यह कहा था कि अब सीता के प्रति मेरा लोभ नहीं रहा। मैंने क्षत्रिय के नाते अपनी पत्नी का हरण करने वाले दुष्ट को मारकर अपना बदला ले लिया है, उसे भरत या लक्ष्मण कोई भी ग्रहण कर सकते हैं।—मेरा मन यह सहन नहीं कर सकता कि मेरी प्रिया को फिर कोतवाल ग्रहण कर ले, अथवा उसे मेरी आंखों के आगे ही मरवा डाले। पर कोतवाल समर्थ है और मैं असहाय। खैर, मेरे ऊपर जो बीते सो बीत जाय पर बेचारी मोहिनी को मुझे चाहने के लिए प्राणदंड क्यों मिले ? नहीं-नहीं, व्यर्थ का मोह बढ़ाना ठीक नहीं। यदि मैं ब्रह्म के राम-रूप को छोड़कर श्रीकृष्ण के शृंगारी रूप को भजूं तो क्या वे मुझे बचा लेंगे ? छि छि, तुलसी, मिथ्या मोह में पड़कर

तू इतना निबुद्धि हो गया है कि ऐसी अकल्पनीय बातें तक सोच डालता है ! खबरदार, जो मोहिनी से मिलने गया तो ! अपना मन सावधान कर राम-राम जप !'

उस दिन न तो उनका पूजा अचना मे ध्यान लगा, न पढ़ने-पढ़ाने या मित्रो से बात करने म ही। दिन भर मोहिनीरूपी अपनी पीठ की खुजली को वे राम-रट रूपी जनेऊ से खुजलाते रहे। मन के हाथ हार गए पर खुजली मिटाए न मिटी। साझ होते-न होते वे स्वय अपनी ही चेतना से लुक-छिप कर जाने के लिए उतावले हो उठे।

दुर्गाकुड के उत्तरी कोने पर वे झुटपुटा समय होने से कुछ पहले ही पहुच गए थे। आखें चौकन्नी होकर चारो ओर निहारती कि मोहिनी अब आई, अब आई। प्रतीक्षा में एक-एक क्षण पहले एक एक युग-सा लम्बा बीता फिर शताब्दियो जसा और फिर सहस्राब्दियो के समान बीतने लगा। फिर समय का बीतना भी मानो बन्द हो गया था। समय पहाड हो गया था जो ढकेले नही ढकिलता था। आखें बिना पानी की मछली जसी तडपती रह गईं। मोहिनी न आई। अधेरा होने के बहुत देर बाद भी तुलसीदास वहा बैठे रहे पर आस पूरी न हो सकी। सुख लेने गए थे दुख पाकर ही लौटे। घर के पाठशाला वाले आगन मे प्रवेश करते ही मामा बोले—'रामबोला ! अरे कहा चला गया था रे ?"

'कहीं नही।"

"बस, यह 'कहीं नहीं' में रहकर ही तू अपना भविष्य चौपट करेगा। मेरी तो एक ज्योनार ही जाएगी किन्तु तेरा सब कुछ चौपट हो जाएगा। कहता हू जवानी मे बहुत अधिक भगवत् भजन करना अच्छा नही होता। यह सब तो हम जैसे बूढो के लिए है। अरे कोतवाल साहब ने तुम्हारा कीतन सुनने खातिर आदमी दौडा कर यहा भेजा पर तू तो अभी से 'सब तज हर भज' के फेर मे 'कहीं नहीं' मे रहने लगा है। छि छि बिन मौसम की बरसात भला कहीं अच्छी लगती है।"

मामा जी की झिडकियों से तुलसीदास ने यह समझा कि अपने यहा कोतवाल के अचानक आ जाने के कारण ही मोहिनीबाई उससे दुर्गाकुड पर मिलने न आ सकी। हाय कसा बुरा सयोग था कि मोहिनी मुझे न यहा मिल सकी न वहा। अभागे का भाग्य बडी कठिनाई से खुलता है।

उस रात उन्हे एक पल के लिए भी नींद न आई। हा मोहिनी से न मिल पाने के कष्ट में उनकी आखें बार-बार भर आती थी। अपने जीवन का सारा अभागापन सिमटकर मोहिनी की आड मे उन्हें रात भर रुलाता रहा। भरे-पूरे होश मे अपने दुर्भाग्य के कारण तुलसी कभी इस प्रकार नही रोये थे। सवेरा होने तक उनका निश्चय फिर मोहिनी का आकषण-पाश तोडकर राम शरण मे आ गया था और अब मोह की पीडा से कुठित थे।

अगले दिन गगा जी के लिए नियत समय पर तुलसी भइया जब नीचे न आए तो नददास अधेरे मे सीढ़िया टोते हुए उनकी कोठरी म पहुच गए। तुलसीदास उस समय तन्मय होकर सूरदास का एक पद गा रहे थे—

मेरो मन अनत कहां सुख पाव ।
जैसे उडि जहाज को पछी पुनि जहाज पै आवै ।।

नददास द्वार पर खडे-खडे सुनते रहे । तुलसी के स्वर मे इतनी करुणा थी कि नददास भावविभोर होकर आसू बहाने लगे । गायन समाप्त होने पर बाहर ही से नददास ने कहा— तुम्हारे राम प्रेम की सौं भइया मैं अपने नद के दुलारे से लड झगडकर अब तो ऐसी ही प्रीति मागूगा । प्रेम उपजे तो ऐसा ही उपजे ।'

झटपट द्वार खोलकर तुलसी ने कहा—"आज तुम्हे आना पड गया नद ! मैं तो माया में सब कुछ बिसार बैठा ।'

'माया बिना हरि नही मिलते भैया । मेरा श्याम राधा बिना आधा है ।"

कोठरी के अदर से अपना अगौछा और लगोट उठाकर कोठरी के द्वार बद करके कुडी चढाते हुए तुलसी ने कहा—' किंतु तुम्हारे श्याम और मेरे राम की माया बडी कठिन है नददास । उसपर रीझते भी दुख और उसे रिझाते हुए भी दुख ! केवल दुख ही दुख व्यापता है ।" फिर सीढी के पास पहुचकर वे थम गए । सिर झुकाकर गहरे स्वर में कुछ स्वगत और कुछ-कुछ नददास को भी सुनाते हुए तुलसी ने कहा— जी चाहता है डूब मरू । आयु के यह पहाड से चौबीस वष ढकेलते-ढकेलते मैं अब ऊब गया हू । न माया मिलती है न राम । मैं बहुत अभागा हू ।' दुखावेश में उनका कठ भर आया और आखें छलछला उठी । इस मन स्थिति के बहाव में आकर वह तेजी से सीढिया उतरने लगे ।

घाट पर पहुचने में आज नित्य से कुछ विलम्ब हो गया था । रोज जब आते हैं तो तारो भरा आकाश काला रहता है किंतु इस समय वह खुलता सावला लग रहा था । वस्तुए और चेहरे कुछ कुछ स्पष्ट हो चले थे । घाट पर फिर कल वाली दासी मिली— आपसे एक बात कहनी है ।'

कल दासी की सूरत ठीक तरह से नही देखी थी । केवल उसके स्वर के सहारे ही तुलसीदास ने उसे पहचाना, चेहरा तमतमा उठा कहा— जो कुछ कहना है यही कह दो ।"

दासी हिचकी । नददास तुलसी को वहा छोडकर आगे बढ गए । दासी ने कहा — बाई जी ने कल के लिए क्षमा मागी है । उनके मालिक अचानक आ गए थे ।'

मालिक शब्द सुनकर सहसा ईर्ष्या और फिर क्रोध उमडा । अपनी मुद्रा को कठिनाई से सयत करते हुए तुलसीदास ने कहा— तो ? इन बातो से मुझे क्या प्रयोजन ?"

चतुर दासी ने एक बार आख उठाकर पनी दृष्टि से तुलसी की मुखमुद्रा को ध्यानपूर्वक देखा फिर स्वर में गिडगिडाहट लाकर कहा— अबला पर यो गुस्सा न हो महाराज ! मेरी मालकिन आपके दर्शनो के लिए ऐसी तडप रही हैं जैसे पानी बिना मछली । कल रात उनकी पलक तक नही लगी । बहुत तडपी हैं । कहते हुए दासी का गला और आखें भर गइ ।

तुलसीदास का क्रोध सहानुभूति मे कुछ थमा तो अवश्य किंतु मन का भाव न गया । मुह फुलाकर कहा— तो यहा ही किसे नीद आई है ?'

पीछे की सीढ़ियों पर पाच छ आदमियों की टोली नीचे उतर रही थी। दासी ने उधर देखकर हड़बड़ी म कहा— कोतवाल साहब आन फिर आपको बुलाएगे। आपके लिए रथ आएगा। मालकिन ने कहा है कि जो आज आपने उन्हें दर्शन न दिए तो रात म वह जहर खा लेंगी।" कहकर वह प्रणाम करने के लिए झुकी। तुलसीदास की ईर्ष्या फिर चढ गई बोले— मैं किसी सेठ अमले या हाकिम के लिए तुम्हारी बाई जी की तरह गाना नही गाता। ऐसा प्रस्ताव फिर कभी मरे सामन न लाना।" कहकर वे तेजी से सीढिया उतरने लगे। भावो की हलचल म तुलसी का मन फिर राम-दास से मोहिनी-दास हो चला था। मोहिनी उनके कलेज म गुलाबी गुदगुदी बनकर आनन्द उमगाने लगी। राम अब बहुत दूर की गुहार बनकर उन्हें सुनाई पड रहे थे। उनका मन मोहिनी के प्रति सहानुभूतिवश राम को अनसुना करके राग रंजित हो गया, 'बचारी पर नाहक ही रोष किया। वह म्लेच्छ तो बहाना भर ही है, मेरा गायन सुनकर जो रीझती और फिर मुझे रिझाती वह तो मोहिनी ही होती। मैंने चूक की। मैं बडा मूख हू। बडा अभागा हू।

स्नान व्यायाम औ सध्या आदि प्रात कर्मों से छुट्टी पाकर तुलसी और नन्द दास जब घर की ओर चले तब तक तुलसी का मन फिर मोहिनी के फदे से मुक्त होने के लिए अपने आपको कसने लगा था। अन्तर्द्वन्द्ववश वे उस समय अत्यधिक गभीर हो गये थे।

सीढिया पार कर चुकने के बाद गली म आने पर नददास ने एकाएक कहा— अब मेरा मन काशी से ऊब गया भइया। सोरो जाना चाहता हू।"

'अपना अध्ययन तो समाप्त कर ला ?'

पढ लिया जो कुछ पढना था। अब ऊब गया हू। पढ़ने का अत नही। अब केवल कृष्ण-नाम ही पढूगा। तुम भी मेरे साथ सोरों चलते तो मुझे बडा सुख मिलता।'

'तुम्हारा तो वहा घर है। मेरे लिए भला कौन-सा आकषण है ?"

'मेरे लिए चलो भइया। मेरे मन के लिए श्रीकृष्ण परमात्मा के बाद तुम ही सबस बडा सहारा बन गए हो। तुम भी मिथ्या माया से छूटोगे। वहा चलकर घर बसाना। नृसिंह चौधरी महाराज नाम के एक बडे ही राम भक्त विद्वान वहा रहते हैं। काशी आन से पूव मैं उन्हींकी पाठशाला मे पढता था। वे अब बहुत वृद्ध हो गए हैं। अपनी पाठशाला चलाने के लिए उन्ह एक अच्छा विद्वान मिलेगा और तुम्हारी जीविका का सहारा हो जाएगा। चलोगे भइया ?'

"तुम्हारे इस आग्रह का मम तो पहचानता हू नदू किंतु क्या कहू ? नदू तुम मुझे बडे भाई की तरह मानते हो मेरा एक आदेश भी मानोगे ?

"कृष्ण को छोडकर राम भजने को मत कहना बस और तो तुम्हारी आज्ञा पर सिर कटाने को भी तयार हू।

'मेरा भेद किसी से न कहना।'

'मुझे लगता है यह तुम्हारा असली भेद नही है भइया। तुम अपने राम को छोडकर रह नहीं सकते।

'यह प्रसग म छेडो नदू। मैं इस समय कुछ नहीं सुनना चाहता।" तुलसीदास के स्वर म चिडचिडाहट भर गई थी। स्वय उन्ह भी लगा कि यह चिडचिडापन अनावश्यक और अप्रत्याशित था।

लगभग डेढ पहर दिन चढ़े घर के भीतर से आई का बुलावा आया। तुलसीदास उस समय दो विद्यार्थियो को कालिदास का मेघदूत पढा रहे थे। गुरुपत्नी का आदेश पाते ही वे अपना आसन छोडकर उठ खडे हुए। भीतर की ड्योढी में प्रवेश करते ही उनके कानो मे जो स्वर तरंगित होकर आया वह वह तुलसी नाम न लेंगे उस नाम की मिठास को गूगे के गुड की तरह वह अपने रोम रोम म चखेंगे। मोहिनीबाई गुरु-पत्नी को जयदेव रचित एक गीत सुना रही थी—

'नाथ हरे। सीदति राधा वास गृहे।"

मोहिनी के स्वर ने तुलसी को न तो तुलसी ही रहने दिया और न राम बोला। उनका अस्तित्व ही मानो उस स्वर-रस धार मे घुलमिल कर बह गया। मोहिनी का स्वर बाढ के पानी की तरह उनकी चेतना पर आच्छादित हो गया। सब कुछ डूब गया सिर्फ दहलीज मे एक काया खडी थी और उसमे मोहिनी का स्वर गूज रहा था। कई दिनो के बाद उनके लिए ऐसा आनंददायक क्षण आया था।

मोहिनीबाई ने गुरु पत्नी को रिझा लिया। उसने चिरौरी करके, आखों मे आसू भरके गुरु-पत्नी को यह भी समझा दिया था कि यदि तुलसीदास ने कोतवाल महोदय को अपना कीतन न सुनाया तो वे मोहिनी से अवश्य ही रुष्ट हो जाएंगे। तुलसी जब भीतर पहुचे तो अपनी दृष्टि भरसक मोहिनी से दूर ही रखी। यद्यपि वह उसका मुखचन्द्र देखने के लिए चकोर की तरह तडप रहे थे। उन्होंने पूछा—

'आई मुझे बुलाया ?

"रामबोला इस स्त्री का अपराध केवल इतना ही है कि इसने कोतवाल साहब से तेरी गायन-कला की प्रशसा कर रखी है। सुना है कि तू किसी हाकिम के लिए न गाने की बात इससे कह चुका है। भविष्य मे भले ही ऐसा न करना पर आज तो इस लडकी की मान और प्राण की रक्षा के लिए तुझे इसके यहा जाना ही पडेगा। तेरा भोजन भी वही होगा। मैं तेरी ओर से निमत्रण स्वीकार कर चुकी हू।'

आई का आदेश सुनकर तुलसीदास को सचमुच खरा आश्चय हुआ उस आश्चय मे वे मोहिनी के प्रति अपने आकषण की बात तक भूल गए। उन्होंने कहा— आई काशी के गौरव गुरुपाद का कोई शिष्य भला "

मैं तुम लोगा की आई हू। तुम्हारी और कर्ता महाराज की मान प्रतिष्ठा का ध्यान रखना मेरा कत य है। जो मैंने कहा है वही कर। प्रतिष्ठा हृदय की होनी चाहिए जवाहर वही है। बुद्धि अहकार आदि तो केवल जौहरी मात्र हैं।' तुलसी स इतना कहकर आई ने मोहिनी से कहा—'जा मगलामुखी, तेरी मान रक्षा हो गई। भविष्य म कभी किसी ब्रह्मचारी के प्रति एसा आग्रह न करना। तुलसी को छोडकर मैं अपनी पाठशाला के अन्य किसी युवक को तेरी जसी रूपसी और चतुर गायिका के घर भेजने की बात तक नही सोच सकती थी। उसके

लिए आचार्य जी से आज्ञा लेनी पड़ती। किंतु तुलसी पर मुझे पूरा भरोसा है। वह समुद्र-तल में डूबकर भी उबर सकता है और आग की लपटों में घिर करके भी सुरक्षित बाहर निकल सकता है। तुलसी मेरा बेटा है।" कहकर आई ने तुलसी को ऐसी स्नेह दृष्टि से देखा कि उसे देखते ही तुलसी का दुलार भूखा मन नन्हा मुन्ना बालक बनकर आनंदमग्न हो गया। यह एक ऐसा आनन्द था जो तुलसी को रसातीत लगा।

परन्तु रास्ते तक आते ही मन फिर से अपने गिलवाड़ में बंध गया। दो रथ दूरी सड़क छेंककर मंथर गति से दौड़ रहे थे। चार घुड़सवार आगे चार पीछे चल रहे थे। एक रथ पर मखमली जरी काम के पर्दे पड़े थे और दूसरे पर ब्रह्मचारी तुलसीदास शास्त्री विराजमान थे। पर्दे के झरोखे से दो आंखें चमक रही थीं जो अपनी चाहत उड़ेलकर दरिद्र, अभागे ब्रह्मचारी रामबोला का अहंता को एक अतुलनीय वैभव से समृद्ध कर रही थी। चलती सड़क, हाट-बाजार वालों की नजरों और अपने ब्रह्मचारी वेश की मान रक्षा के प्रति सतर्क रहकर अपने आपको उन नजरों से बचाकर तुलसी संयत रहने के अपार जतन तो करते थे मगर शृंगार रस उन्हें बराबर बहा-बहा ले जाता था। आंखों से आंखें चुराते चुराते भी कनखियां मिलने ही बनती थीं। दो चेहरों पर एक साथ मुस्कराहट की बिजलियां कौंध जातीं। दो रथों की दूरी पर्दे की आड़ राह चलतों की नजरों का ध्यान सब कुछ पल भर में विलीन हो जाता। मोहिनी तुलसी के मन प्राण और काया में रमकर गुनगुना रही थी— 'नाथ हरे सीन्ति राधा वास गृहे।"

कोठी पर पहुंचे। इस बार पहरुओं का कोई डर नहीं था। रथ से उतरते ही व तुलसी को झुक झुककर जुहारें करने लगे। तुलसीदास ने त्रिलोकीनाथ के समान अपनी माया मोहिनी के साथ अपने 'वैकुंठ' में प्रवेश किया। दहलीज में घुसकर फिर सीढ़ियों में चढ़ते हुए मोहिनी ने अपनी आंखों में तुलसी के प्रति ऐसी गहरी रीझ उंडेली कि वह बिन मोल उसके हाथों बिक गए। बीच सीढ़ियों पर वह ऐसे चढ़ी कि हाथ से हाथ टकराए। तुलसी की काया को स्पर्श में चकाचौंध हुआ। दूसरी सीढ़ी पर बांह से बांह रगड़ गई, तुलसी के मन में गुदगुदाहट हुई। फिर ऊपर के द्वार का उजाला आने के पहले मोहिनी ऐसे चली कि मानो पैर की लड़खड़ाहट में बरबस उसकी देह तुलसी की देह से सट गई हो। मेंहदी रची हथेली ने तुलसी के कंधे का सहारा लिया, आंखें आंखों से ऐसे लिपटीं जैसे वृक्ष से लता लिपटी हो। तुलसी के मन में बिजलियां कौंध गई, जीवन को एक नया अर्थ मिल गया। अब तुलसी की आंखों में भी वही नंगी तृष्णा थी जो मोहिनी की आंखों में आरंभ ही से झलक रही थी। तुलसी ने मोहिनी की कलाई धीरे से दाब ली। तभी ऊपर के उजाले से अम्मा की आंखें मानो छनकर टपक पड़ीं। ऐसा विशेष रूप से तुलसी सहम गए। अम्मा ने कहा—'उसमान मियां आ गए हैं।

चार नजरों का खेल खतम हो गया लेकिन उससे दो दिलों में इतनी ताजगी आ गई थी कि वे अब देर तक मुरझा नहीं सकते थे।

लगभग साठ-पैंसठ की आयु वाले लंबे चौड़े मोटे थुलथुल शरीर के मंगोल

मुखी उमसान खा मसनद के सहारे अधलेटे हुए गडेरिया चूस रहे थे । उन्होंने तुलसीदास को पनी नज़र से देखा । कमरे म तुलसी के साथ केवल अम्मा ही आई थी, मोहिनीबाई पोशाक बदलने के लिए दूसरे कमरे मे चली गई थी । अम्मा ने कमरे मे पहले ही से लाकर रखी गई कुशासन मृग छाला बिछी चौकी पर तुलसीदास को सादर बिठलाया । फिर कोतवाल से कहा "हुज़ूर इनके गुरु महराज काशी के पडितो के सिरमौर हैं । बडी मुश्किल से मोहिनी इनके गुरु की इजाज़त लेकर इन्हे यहा लाई है । वसे सगीत तो इन्होने किसी से नही सीखा, मगर क्या गाते हैं कि अब आप से क्या अज करू सरकार ।" कोतवाल से कहकर अम्मा फिर तुलसी की ओर मुडी और हाथ जोडकर गिडगिडाते हुए कहा— हुज़ूर के बहाने हमको भी आपके सगीत की प्रसादी मिल जाएगी । महात्माओं की भभूत जहा भड जाती है वही बकुठ बस जाता है । पहले वही मीरा का भजन सुनाए महाराज हरि आवन की अवाज । आप देखेंगे हुज़ूर कि हूबहू हमारी मोहिनी के गदाज म गाया है और उसम भी एक अनोखी बात पदा कर दी है ।

मोहिनी कमरे म न थी पर तुलसी के लिए मोहिनी के सिवा कमरे म और कोई न था । तुलसी की दृष्टि मे उसमान खा कमरे मे खटमल की तरह मसनद से चिपका था और अम्मा मक्खी की तरह भनभना रही थी । पर इक्का-दुक्का मक्खी-खटमल के अस्तित्व का कोई विशेष बोध नही होता । रस के कसाव म ध्यान छोटी मोटी चीजो पर जम ही नहा पाता । तुलसीदास गा तो रहे थे 'हरि आवन की अवाज पर उनका मन मोहिनी आवन की अवाज सुनने की आशा कर रहा था और उस आशा मे उनका स्वर आग्रह रस मे भीगकर भारी होता चला गया । एक भजन समाप्त होने तक मोहिनी कमरे म न आई । उसमान खा ने गडेरी चूसते हुए कहा— माशाअल्लाह खूब गाते हो ।"

प्रशसा सुनकर तुलसी की अहता को मद चढ आया सदभ बोले— अपने राम को रिझाने के लिए गाता हू ।' मन ने झिड़का यह क्यो नही कहते कि मोहिनी को रिझाने के लिए गाता हू । तभी मन पर उसमान खा का दम्भ भरा रोबीला स्वर आरोपित हुआ । उसमान खा ने गडेरी उठाते हुए कहा— हम तुम्हारी तालीम के लिए कुछ वज़ीफा मुकर्रर कर देंगे ।"

तुलसी के स्वाभिमान को ठेस लगी । मन म ताव आया कि 'अबे खटमल तू मुझे क्या दे सकता है ? मैं किस बात में कम हू ? जिसके पीछे तू आला हाकिम होकर भी कुत्ते की तरह दुम हिलाता डोलता है वह मुझ भिखारी को रिझाने के लिए दीवानी बनी डोलती है । तेरे पास तलवार है मेरे पास ज्ञान है । तेरा भरोसा दिल्ली के बादशाह पर है और मैं निद्वन्द्व राम के भरोसे रहता हू ।' मन अपने तेहे में खटाखट चढते हुए दम्भ की ऊची अटारी पर पहुच गया । उसमान खा के चुप होकर गडेरी चूसने की मुद्रा में आते ही तुलसीदास ने सिर तानकर कहा— 'कोतवाल साहब जसे आप बादशाह के चाकर है वसे मैं राम का चाकर हू । मेरा मालिक मुझे अपने गुजारे के लिए सब कुछ देता है । फिर भी आपकी इस उदारता के लिए मैं आपका बडा-बडा शुक्रिया अदा करता हू ।'

सुनते हुए उसमान खा की आँखें लाल हुइ, पैनी हुईं और फिर गडेरियो-सी ठडी-मीठी हो गईं, बोले—'अच्छा है बरखुरदार, आजाद रहोगे, वरना इस दुनिया में रहकर सभी को चाकरी करनी पडती है। एक सलाह तुम्हें और दूगा। किसी औरत के गुलाम मत बनना। हर तरह की आजादी पसद करनेवाले लाग भी अक्सर अपनी बेहोशी में औरत के गुलाम बन जाते हैं। तुम जवान हो तन्दुरुस्त और खूबसूरत हो और फिर माशाअल्लाह, गला भी खूब सुरीला पाया है। लेकिन तुम्हारी इन्ही खूबियो की तीलिया बनाकर कोई हुस्नवाली तुम्हारे वास्ते खूबसूरत पिजडा भी बना सकती है। फिर जब होश म आओगे तो पछताओगे।"

तुलसीदास को लगा कि यह बूढा अपनी कोतवाली के रोब मे मरा शिक्षक बनने की चेष्टा कर रहा है। यह आजन्म भोग विलास मे डूबा रहनेवाला व्यक्ति भला मेरे जसे पडित और तपस्वी को शिक्षा देने का अधिकार रखता है ! मूख कहीं का पर क्या मुह लगू इसके। खीर में ककड की तरह आकर पडा है। कैसा अन्याय भरा है विधि का विधान कि मर जैस गुणी व्यक्ति के लिए तो मोहिनी का प्रम चोरी की वस्तु है और इसके समान मूख और दम्भी पुरुष सीना जोरी से उसके ऊपर अधिकार करता है। मर गुणों की आभा दब गई। बस करू कि इसके सामने से हट जाऊ ? मोहिनी के घर म रहकर मोहिनी से दूर रहना मुझे अच्छा नही लगता। देखो पडे-पडे गधे-सा झपकने लगा। सुना है अफीम बहुत खाता है। असुर कहीं का।

तुलसीदास का मन ईर्ष्या दम्भ और मोहिनी की प्रतीक्षा म बीतता रहा। उसमान खा अपनी तोंद पर दाना हाथ रखे मुह फाडे अधलेटी मुद्रा म ही खुराट भरने लगा था। अम्मा पहले ही कमरे से गायब हो चुकी थी। तुलसीदास ऊब चले थे। उसमान खा का मुख देखना उन्ह अच्छा नहीं लग रहा था। वह शिष्टा चारवश कोतवाल की ओर पीठ घुमाकर तो न बैठे पर मुह मोड लिया। फिर भी तुलसी के शृगार पर वीभत्स रस का घिनौना आवरण पडा ही रहा।

सहसा आय ! क्या कहा ?' बडबडाते हुए उसमान खा चौंककर जाग पडे। तुलसीदास को मजबूरन उधर मुह घुमाना पडा। उन्होंने पूछा— श्रीमान ने मुझ से कुछ कहा ?

अपनी दाना आखें मलते हुए उसमान खा बोले— नहीं।' फिर सुचिन्त होकर आवाज लगाई— 'कोई है !' तुरन्त ही दरवाजे का परदा हटाकर एक दासी ने प्रवेश किया। 'मोहिनीबाई कहा रह गइ ?' कोतवाल न पूछा।

दासी अदब से आगे बढी और धीमे स्वर म उसमान खा स कुछ कहा। उसमान खा सुनकर बैठते हुए गभीर स्वर म बोला— अच्छा हमारा घाडा कसन के लिए कह दो। अब हम जाएगे। इस ब्रह्मचारी को कुछ खिलाओ पिलाओ भाई। इसकी कुछ खातिर करो। वो बूढी, खुर्राट कहा है ? उसे बुलाओ।' दासी अदब स सिर झुकाकर बाहर चली गई। मोहिनी की अम्मा के लिए उसमान खा के द्वारा खुर्राट शब्द कहा जाना तुलसीदास को बडा अच्छा लगा। उन्ह वह दिन याद आया जब मोहिनी से मिलने की तडप म वह यहा आए थे और अम्मा

के खुर्राट स्वभाव का पहला अनुभव पाया था ।

खुर्राट ने कमरे में प्रवेश किया । आते ही पूछा—"हुजूर ने मुझे याद फरमाया था ?"

"अरे भई इस बेचारे बरमचारी की कुछ खातिर-तवाज़ोह तो करो । इससे मिलकर मुझे बहुत खुशी हुई । लेकिन मेरी यह समझ में नहीं आता कि मैं इसको किस तरह से खुश करूं । किसी ने सच कहा है कि शाह की हैसियत अगर हारती है तो फकीर की हैसियत से ही हारती है ।"

"सरकार बेफिक्र रहें । ये महाराज जी यहां से खुश होके आपको दुआएं देते हुए ही जाएंगे ।" कहकर अम्मा ने तुलसीदास की ओर ऐसी कड़ी दृष्टि से देखा कि वह सहसा क्रुद्ध हो गए । तभी एक दासी ने कोतवाल को घोड़े के तैयार होने की सूचना दी । कोतवाल जाने के लिए उठा । तुलसीदास को भी उसे विदा देने के लिए चौकी से उठना पड़ा । चलते हुए बूढ़ा उसमान खां जब बुढ़िया अम्मा के पास से गुजरा तो तुलसी को लगा कि तुलना में अम्मा की मुखमुद्रा ही अधिक कठोर और आसुरी है । उसमान खां की बातों ने सब मिलाकर तुलसी के मन में उसके प्रति एक कोमल भाव उत्पन्न कर दिया था ।

उसमान खां चला गया । अम्मा उसे विदा करने के लिए गई । दासी भी चली गई । कमरा सूना हो गया तुलसीदास का सूना मन उतावली से भर उठा, अब वह निश्चय ही आएगी कब आएगी ? आई वह आई । नहीं आई । मन ऊपर-नीचे होने लगा । तुलसीदास ने झरोखे से देखा कोतवाल अपने घोड़े पर सवार हो चुका था । फाटक पर लगभग पन्द्रह-बीस घुड़सवार सिपाही खड़े थे जो उसमान खां के बाहर निकलते ही उसके पीछे-पीछे घोड़े दौड़ाने लगे । सरकारी रौब की आवाजाही की हलचल मिटते ही बगिया में चिड़िया की चहचहाहट की गूंज फिर कानों में जाग उठी । तुलसीदास ने जो झरोखे की ओर से मुड़कर देखा तो द्वार पर सोलहों सिंगार सजी स्वर्ग की अप्सरा-सी मोहिनी दिखलाई दी । तुलसी का रोम रोम खिल उठा । ऐसा लगा कि उनका हृदय हिरनों का झुंड बनकर दसों दिशाओं में एक साथ कुलाचें भर रहा है ।

"अरी अपने जरा से स्वार्थ के पीछे काहे इस बिचारे भोले बामन का धरम बिगाड़ती है ? तेरा कुछ भी नहीं जायगा उस बेचारे का लोक-परलोक सभी बिगड़ जायगा ।" मोहिनी कमरे के भीतर आई भी न थी कि पीछे से अम्मा का कड़ा स्वर सुनाई पड़ा ।

मोहिनी ने मां की ओर मुड़कर देखा तक नहीं । हां, चेहरे पर तेहा जरूर चमक उठा । तुलसीदास की आंखों में आंखें डालकर मोहिनी ने उनसे पूछा—"मैं क्या आपका लोक परलोक बिगाड़ सकती हूं ? यदि ऐसा हो तो"

"प्रेम शुद्ध हो तो लोक और परलोक दोनों सुधर जाते हैं । और तुम्हारे बिना तो मेरे अब बिगड़ ही जाएंगे मोहिनी । मैंने अपने मन के सत्य को पहचान लिया है ।"

मोतियों टंके धूपछांही रंग के लहराते घाघरे चोली और ओढ़नी में हीरे, पन्ना और मानिकों से मढ़ी हुई मानवती मोहिनी के चेहरे पर यह सुनकर सुहाग

चढ़ गया। दर्प भरी मुस्कराहट, रीझ-भरी आँखें और मद भरी लचकती इठलाती काया ज्यों-ज्यों तुलसी की ओर बढ़ती चली त्यों-त्यों तुलसी का मनोवेग बढ़ने लगा। उन्हें ऐसा लगता था मानो मोहिनी उनकी सांस के फर्श पर पग रखती हुई चली आ रही है। एकटक, सपना भरी नजर से वह मोहिनी का रूप पीने लगे। दरवाजे पर अम्मा आ खड़ी हुई। उसने वहीं से कुछ ऊंची और कड़कदार आवाज में कहा—'कान खोलकर सुन लो महराज, जवानी का यह मद उतर जाने के बाद फिर यह मत कहना कि वेश्या ने तुम्हें ठग लिया। मैं विश्वनाथ बाबा की साक्षी में यह बात तुमसे कहे जाती हूं। और तू भी सुन ले मोहिनी, मेरा अन्तकाल अब जरूर पास आ चला है, पर जल्लाद के हाथों अपना सिर कटाकर नहीं मरूंगी। दो रोटियों के लिए गंगा जी के किसी भी घाट की सीढ़ियां मेरी अन्नपूर्णा बन जाएंगी। मैं तेरा घर छोड़कर जाती हूं।" कहकर अम्मा तेजी से बाहर निकल गई।

तुलसीदास का मन कुछ-कुछ भयभीत हो गया। मोहिनी ने इठलाते हुए उनका हाथ पकड़ा और आखों की मोहिनी से बांधकर उन्हें उनके आसन पर बैठा दिया। हाथ का स्पर्श मन से चाहते हुए भी, तुलसी को आनन्द के बजाय भय से चौंकाने लगा। मस्तिष्क की शिराओं में ऐसा विचार कम्पन हो रहा था कि जैसे बिजलियां लपलपा रही हों। मस्तिष्क में एक साथ बहुत कुछ गूंज रहा था। अर्थ शब्दों के बिना भी अपना बोध करा रहे थे। उन्होंने दाहिने हाथ से अपनी वह बांह कलाई धीरे धीरे रगड़ना आरंभ कर दिया था, मानो वह मोहिनी के स्पर्श को मिटा रहे हों। उनकी आंखें कहीं अदृश्य में टंग गई थीं। मुखमुद्रा की प्रसन्नता और गंभीरता में बंटकर बिखर गई थी।

मोहिनी की प्यासी आंखें अपने प्रिय के मुख को मृग-मरीचिका के समान निहार रही थीं। प्रिय का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के लिए उसने सहसा गाना आरम्भ कर दिया—

तन तरफत तुव मिलन बिन अरु दरसन बिन नैन।
श्रुति तरफत तुव बचन बिन सुनु तरुणी रसऐन॥

आनन्द और आश्चर्य से ऊभचूभ, तुलसी मानो ठगे-से ताकते रह गए। जो दोहे वह कभी मोहिनी को अर्पित करने लाए थे, उसे मिल गए थे। अपने शब्दों को दूसरे के द्वारा गाए जाते हुए सुनने का उन्हें यह पहला ही अवसर मिला था। वह अपने आनन्द और गर्व में उस समय दिल्ली के मुगल बादशाह से भी बड़ी गद्दी पर बैठे थे। गाते हुए मोहिनीबाई ने तुलसी के 'तरुणी' शब्द को बदलकर बड़ी छेड़ भरी अदा के साथ 'सुन्दर' और 'तुलसी' की जगह 'मम मन' शब्द जोड़कर बड़े नखरे के साथ गाया—

बड़ो नेह तुलसी सम्या और न कछू सुहाय।
तुलसी चढ़ चकोर ज्यों तलफत रैन बिहाय॥

मोहिनी के जादू भरे स्वर की डोर के सहारे तुलसी का ध्यान मानो घुटने

भरी भूलभुलया स निकलने की राह पाकर उतावली से दौडा हुआ बाहर चला आया। मोहिनी के स्वर म सचमुच ही वडा आकर्पण था। तुलसी के प्राण सगात के स्वर म लहरा उठे। एक साथ एक स्वर म चहकते ही दोनो खिलखिला उठे। हसी का यह छोटा किन्तु भरा-पूरा दौर बीता।

मोहिनी को मानो सब कुछ मिल गया था। पूण तृप्ति के साथ प्रिय का देखती हुई वह खिलकर बोली — इन दोहा म आपने मेरा मन ज्या का त्यों दर्शा दिया है।'

तुलसी हसे कहा—'अब मरा और तुम्हारा मन अलग तो रहा नही मोहिनी।'

'कम से कम मैं तो यही अनुभव करती हू। अच्छा उठिए भोजन कर लीजिए। ससुर का राज्य है। यह सारे दास-दासी उसी के है मैं शीघ्र से शीघ्र आपको लेकर यहा से निकल जाना चाहती हू।"

सुनत ही तुलसी चौंक उठे पूछा— हम कहा जाएगे ?"

काशी राज्य की सीमा से बाहर जहा उसमान खा का शासन न हो।'

तुलसी और गभीर हो गए कहा— पानी सब जगह है एक ही, फिर एक सिरे की शक्तिशाली तरग को दूसरे सिरे पर तरग उठाते दर नही लग सकती। मैं अपने प्राण देकर भी तुम्हारे शक्ति-सम्पन्न सरक्षक से तुम्ह मुक्ति नही दिला सकता।"

मोहिनी का आनन्द से चमकता मुख इस यथार्थ-बोध से स्याह पड गया। आखो की ज्योति बुझ-सी गई। परन्तु मन के उल्लास ने इतनी जल्दी सहसा अपने ऊपर भय का आरोपण पसद नही किया। अपनी बेबसी पर क्रोध चढ़ आया, झुभलाकर उत्तर दिया— हम यदि सुख से साथ जी नही सकते तो मर तो सकते हैं। तुम्हारे साथ रहकर मरने म भी मुझे सुख है।

तुलसी अब तक गहरे विचारो म उतर चुके थे। मोहिनी की बात सुनकर कहा— व्यथ म मरकर तुम्ह भला क्या सुख मिलगा ? यह धन-वभव, यह मान सभ्रम तुम्हे भले ही मरे साथ न मिले पर यदि हम सुख से जी सकें तब तो भाग चलने मे साथकता भी है अन्यथा हमारा भागना एक निरी मूखता का काम होगा।"

मोहिनीबाई सुनकर एकाएक बडे आवेश मे आ गई। कडवा मुह बनाकर व्यग्य भरे स्वर म बोली— मैं यह भूल ही गई थी कि पडित लोग बडे ही कायर होते हैं।

तुलसी को बुरा लगा आत्मतेज जागा किंतु शात स्वर म समझाते हुए कहा— 'प्रश्न कायरता का नही, तुम्हारी रक्षा का है मोहिनी। जिसे मैंने चाहा है उसे विवश मरते या अपमानित होकर बदी बनते देखना क्या मेरे या किसी के लिए सुखकर हो सकता है ?

मोहिनी चुप रही। उसका चेहरा आवेश से फडफडा रहा था। आखें ऐसी लग रही थीं जैसे पानी मे आग लगी हो। तुलसी का हृदय उसे देखकर सहानु भूति से उमड पडा। मन उसे अपने कलेजे से लिपटा लेने के लिए लपका, दो

डग आगे बढ़ भी गए, फिर सस्कारो ने पैरो के आ। मानो लक्ष्मण-लीक खीच दी। ठिठककर रह गए मन फिर विचारमग्न हो गया। मोहिनी के आसू आखो से ढुलक पडे, गालो पर बहने लगे होठो के किनारो पर सुबकियो की फुरकन बनने लगी।

तुलसी उसे देखकर बोले— 'तुम्हारी विवशता निश्चय ही किसी भी न्याय शील व्यक्ति के हृदय मे सहानुभूति जगा देगी। मैं छोटा-मोटा राजा-सामत होता, मेरे पास सौ-पचास लठैत होते तो एक बार तुम्हे लेकर निकल चलने की बात सोच भी सकता था। धन और प्रभुता के दुग म तुम्हारे रूप गुण और यौवन का भलीभाति सुरक्षित कर लेता किंतु इस स्थिति म तो प्राण देकर भी तुम्हें न बचा पाऊगा। तुमने अभी मेरी कायरता की बात कही। हा मोह-वश मनुष्य कायर भी हो जाता है। अपने सामने तुम्हारे प्राण जाते मैं कदापि नही देख सकूगा।'

चुपचाप खडी आसू बहाती हुई मोहिनी का कलजा फिर तडपा। रुधे हुए कण्ठ से बोली—'प्रेम विचार विचरण मात्र से नही होता ब्रह्मचारी जी, वह मनुष्य को कम-सलग्न करना जानता है।'

इस व्यग्य स तुलसी का आत्मतेज भडक उठा बोले— तुम्हारा कृतज्ञ हू मोहिनीबाई तुम्हारी इस बात ने मेरे मन म प्रेम का स्वरूप उजागर कर दिया। नही मैंने तुमसे प्रेम नही किया। मैं वस्तुत तुम्हारे रूप और गायन कला पर आसक्त होकर तुमसे वह अनुभव पाने का अभिलाषी हू जिसे पाकर ब्रह्म-चारी गृहस्थ हो जाता है। और तुम भी निश्चय ही काम-क्षुधावश मुझ पर आसक्त हो। यह प्रेम नही है, तृष्णा है। प्रेम मैं राम से करता हू। तुम्हे पाकर कदाचित् शीघ्र ही मेरे मन म यह असतोष भडकेगा कि नारी तृष्णा के कारण मैंने राम को खो दिया।'

मोहिनी दीवानी-सी दौडकर तुलसी स लिपट गई और बिलखकर कहने लगी— यह न कहो प्राणधन! मेरे मोह-मडित काच के महल को सन्यास के पत्थर न मारो। यह रूप, यह यौवन, यह देह भोगने के लिए है। इसे भोगकर ही प्रेम उपजता है।'

नारी का प्रथम आलिंगन तुलसी को मदमत्त बनाने लगा साथ ही नयेपन का अनुभव उन्हे भयभीत भी करने लगा। मन की इस दोहरी स्थिति म कहा मोह की प्रक्रिया का जाग उठने का सहज अवसर मिल गया। सुख की वसुधी के वातावरण म उनके अतर का स्वर नरहरि बाबा का स्वर बनकर बोल उठा —'कौडी के लालच म अपनी गाठ-बधी मोहर गवाएगा मूढ? वेश्या के लिए राम को त्यागेगा?'— ना, ना। मुझे जाने दो मोहिनीबाई। मैं अप्राप्य वस्तु के प्रलोभन म अपने-आपको कदापि नही डालूगा।' कहकर अपने-आपको बाहो के बधन से मुक्त कर लिया और एक डग पीछे चल गए कहा— 'तुम अपनी अभिलाषाए किसी और से पूरी करो मोहिनीबाई। मैं राम का गुलाम हू तुम उसमान खां की चाकर। हम दोनो अपने-अपने बधनो से बधे हैं। तुम मेरे लिए इस समय भले ही अति आकर्षण भरी हो किंतु तुम्हारे लिए अपने जीवन का

श्रेष्ठतम आकर्षण भाव छोड़ना मेरे वास्ते असंभव है। यदि मैं अपनी और तुम्हारी कायिक भूख के वश में होकर उसे इस समय भूल जाऊं तो भविष्य में मैं उसके कारण निश्चय ही पछतावे में आकर तुमसे घृणा भी कर सकता हूं। यह अनुचित होगा। किसी भी कारण से सही हमने एक-दूसरे को चाहा है। इतने दिनों में हमारे बहुत-से क्षण एक-दूसरे के प्रति समर्पित सुन्दरतम भावों में बहते हुए बीते हैं। मैं सांस लेता था तो लगता था कि जैसे हवा में बहकर तुम्हारी ही सांसें मेरे प्राणों में आकर समा रही हैं। तुम्हारे संगीत ने आठों पहर मेरे कानों में गूंज गूंज कर इतना सौंदर्य जगाया है कि उसे भूलने को जी नहीं चाहता। मैं यह कदापि नहीं चाहता कि मेरा वह सोना कल मिट्टी साबित हो जाए। दुविधा में माया और राम दोनों ही चले जायं।

रोते हुए मोहिनी ने कहा— मनुष्य के मन से सुन्दर और कुछ भी नहीं होता। ईश्वर यदि है तो मनुष्य के मन में ही समाए हैं। उस ताडकर जाओगे पण्डित जी तो तुम्हें राम कदापि नहीं मिलेंगे। एक अबला का शाप तुम्हें खा जायगा।

तुलसी को बुरा लगा। व्यंग्य भरी हंसी हंसकर बोले—'जब महाश्मशान के सारे भूत मिलकर मेरे राम प्रेम को न खा सके तो तुम्हारा वासना प्रेरित शाप भला मेरा क्या बिगाड़ लेगा? अब मुझे और अपने को व्यर्थ के छलावे में न बांधो। मैं जाता हूं। जै सियाराम।

तुलसी की गम्भीर बातों के यथार्थ में मोहिनी बंध गई थी। उसकी मनोदशा उस हरनी के समान थी जो जंगल के प्रेम में अपना पिंजड़ा तुड़ाकर भागी हो और फिर पकड़ी जाकर दोबारा पिंजरे में बंद करने के लिए बाध्य की जा रही हो। अपनी विवशता के बोझ से अभागी मोहिनी का मन आंसुओं के समुद्र में डूबने लगा। वह अपने आपे में नहीं थी। एक सीमा के बाद तुलसी के शब्द भी उसके लिए निकम्मे हो गए थे। बाहर से सब कुछ जल रहा था और भीतर आंसुओं का सागर था। तुलसी जाने लगे तो उसकी आंसू-डूबी आंखों पर छाया पड़ी। चौंककर होश आया, हाथ बढ़ाकर आगे बढ़ी, भर्राए हुए स्वर में कहा— भोजन तो करते जाइए"

तुलसी रुके मुस्कराए, कहा—'आज की यह पार्थिव भूख ही मेरा वैचारिक भोजन बन गई है। तुम हर तरह से सुखी रहो शुभ-मोहिनी, मुझे तुमसे बहुत कुछ मिला है। मैं तुम्हें भूल न सकूंगा।'

तुलसी ने सीढ़ियां पार कीं ड्योढ़ी बगीचा और फाटक पार किया, बाहर निकल आए। सड़क पर कुछ दूर जाकर उन्होंने एक बार और उस घर को दृष्टि डाली। लगा कि जैसे जीव का अपने एक जन्म से साथ छूट रहा हो। मन अब भी सब कुछ वही चाहता है किन्तु ज्ञान यथार्थ-बोध कराता है। जो मनुष्य बनकर जन्मता है उसके मन को यह हक है कि वह असम्भव से असम्भव वस्तु को चाहना भी कर ले पर उसे पाने की शक्ति और औचित्य के बिना क्या वह हक यथार्थ है? अपनी परिस्थितियों पर विचार न करनेवाला व्यक्ति मूर्ख होता है। तुलसीदास इस समय मन के दर्द से ज्ञान की गूंज से बचना चाहते थे। इससे तो अच्छा था कि मन राम में रमता पर अभी राम लौटकर नहीं आते और

मोहिनी छूटकर भी नहीं छूटती। तुलसी का अहम् बुरी तरह सिसक रहा था और इस सिसकन म ज्ञान की गूज सहारा-सी बनकर आती थी। तुलसीदास अटूला अधीरा-सा मन लेकर सीधे मेघा भगत के यहां ही पहुंचे।

दिन का समय था। मेघा भगत भोजन करके अपने भीतर वाले कमरे की चौकी पर लेटे कुछ गुनगुना रहे थे। बाहर से किसी भक्त की आवाज कानो म आई— नहा नहीं, यह उनके विश्राम का समय है। इस समय कष्ट न दीजिए।

'कौन है, सवठा ?" मेघा भगत ने तकिये के सहारे बैठते हुए पूछा।

तुलसी पंडित हैं महाराज।'

'अरे आ रे, मेरे भइया।' कहकर मेघा भगत उछलकर अपनी चौकी से उठ खड़े हुए और बदहवास से आगे बढ़े। उसी समय तुलसी ने भीतर प्रवेश किया। एक बार आखों का आमना-सामना हुआ। तुलसी की आखें छलछला आई, फिर नीची हो गई, फिर जैसे भटका बच्चा अपनी मा की गोद म आया हो वैसे ही झपटकर वे आगे बढ़े। थोड़ी देर तक दोनो एक-दूसरे से चिपके आसू बहाते रहे।

ऐसे ही कुछ क्षण बीत जाने पर मेघा भगत ने हंसकर कहा— कहते हंसी आती है पर मेरे राम प्रभु अनन्त ब्रह्माण्डों के स्वामी होकर भी अपने भक्तों के लिए काम धोबी का करते हैं। जीव को जहा उसमें मैल होता है ऐसा पछाड़-पछाड़ कर धोते हैं कि बस देखते ही बनता है। मैं तो उनके इसी सौंदर्य पर रीझा हूं रे। बोल, तुलसी आज चलू पूज्यपाद शेष महाराज जी के यहां ? तेरी ओर से मैं क्षमा मागूगा। चल तीर्थाटन कर आ।'

तुलसी बोले— आप मेरे जी की बात कह रहे हैं। इस समय काशी म मेरा मन नहीं लगता। मेरा वातावरण बदलना ही चाहिए।' × × ×

स्मृति-पट से मोहिनी का प्रसग बीत जाने के बाद बाबा को ऐसा लगा मानो उनका एक जन्म बीत गया हो। ध्यान म वे फिर से एक बार मोहिनी के वर्षों पुराने चेहरे को खींचकर लाने का प्रयत्न करने लगे। वह बांकी चितवनों से तुलसी को ताकने वाली मीनाक्षी मोहिनी अब सजीव देहधारी न होकर मात्र एक मूर्ति-भर ही रह गई थी जिसमें प्राण नहीं केवल कलात्मक शक्ति से उत्पन्न प्राण का आभास मात्र ही था। तुलसी अब उसमें वीतराग हो चुके थे। आकर्षण अब वहां नहीं वरन् ज्योति के पर्ने पर टिके हुए श्यामल-गौर पाद-पद्मों पर था। सीता माता के अलक्तक से रंगे हुए अरुणाभ चरणों म मणियों जड़ा आभूषण तुलसी की आखों म अपनी चौंध भर रहा था। पैरों की दसों उगलियों अगूठों म सोने के जड़ाऊ छल्ले और टखनों पर बधी पायलों में पिरोई हुई हीरे-मोती जड़ी सोने की लड़ियों की चमक म बाबा का अपने ही चेहरे झिलमिलाई देने थे। जगदम्बा ने मानो अपने चरणों म तुलसी को गहना बना पहन रखा हो। पास ही दाहिनी ओर धरती पर टिके हुए धनुष के पास ही व तेजपुञ्ज श्याम चरण थे जिन्हें देखते ही बाबा की आनन्द समाधि लग गई।

सत बेनीमाधव का निरंतर जूझता रहनेवाला मन बाबा की

इस प्रसग को सुनकर गम्भीर हो गया ।

१६

सूयनारायण धीर धीर अस्ताचलगामी हो रहे थ । आकाश रगीन बादलो की चित्रपटी बन गया था । बाबा अस्सी घाट के एक तख्त पर सूय भगवान से टकटकी लगाए, हाथ जोडे बैठे हुए मौन प्रायना-लीन थ । घाट पर उनके साथ बेनीमाधव विराजमान थे । रामू गगाजल के निकट सीढी पर बठा हुआ ताबे की कलसी को बालू से चमचमा रहा था । एक-दो व्यक्तिया को छोडकर घाट प्राय सूना था । स्नान करनेवालों की भीड से मुक्त होने के कारण गगा इस समय वैसी ही सतोषभरी शान्त लग रही थी जसी कि दुहे जाने के बाद गाय लगती ह । अस्त हाते हुए सूय की ओर दूर पर एक नाव जा रही थी । परन्तु उससे नदी और वातावरण पर छाई हुई मनोरम शाति को कोई व्याघात नही पहुच रहा था । रामू से दो सीढी ऊपर बठा भाग घोंटता हुआ एक अधेड व्यक्ति किसी पहले से चलती हुई बात के प्रसग मे कह रहा था— अरे, हमने अपनी आखो से देखा है । य कोने वाली दीवाल से सटा हुआ वह रात भर एक टाग पर खडा रहता था । बस हाथ जोडे हुए ध्यानमग्न होकर जप किया कर, न हिल न डुल—ऐसा कठोर तपस्वी रहा ।

उस व्यक्ति के पास ही, गीले बादामो से छिलके उतारत हुए दूसरे अधेड व्यक्ति ने कहा— दिन म भी वह अपनी कुठरिया म बठे-बठे जप किया करता था । मैंन तो उसे कभी सोते हुए देखा नही भैया । ऐसी कठिन तपस्या करके भी बडा अभागा रहा बेचारा ।"

कलसी को पानी से घोते घोते तनिक रुककर रामू ने बातें करनेवाले व्यक्तियों की ओर सिर घुमाकर पूछा— 'अभागा क्या था, मुन्नू काका ?"

अरे एक सठ की जवान-जवान विधवा लडकी रही । वह उसके पीछे लगी । रोज आव फल फलारी मेवा मिष्ठान लावै । बिचारा बहुत भागा उससे पर उस लौंडिया ने छोडा नही । ऐसी दावानी बनके उसकी सेवा म लगी कि उसका जोगजप सब उस लौंडिया की मद भरी आखो म बूड गया ।

बादाम छीलनवाला व्यक्ति बोला—' राम जी जिस तिस को अपनी भक्ति भी नही देते हैं भया । जो ऐसा होता तो सब कोई हमारे गुसाइं बाबा की तरह से न हो जाते । क्या हम कुछ झूठ कहा बाबा ? अपने से दो-तीन सीढिया ऊपर तखत पर बैठे बाबा की ओर देखकर उसने पूछा । बाबा बोले— राम तो सब पर कृपा करते है देवतादीन । हानि लाभ जीवन मरण, जस अप जस बिधि हाथ । अपने प्रतिफलन के लिए पूवजन्म के शुभाशुभ कर्मों का भी हमारे इस जीवन के कम मे प्रबल आकषण हाता है । यही तो माया है । इस माया का विषला तीर एक-न एक बार सभी को लगता है—

'श्रीमद् वक्र न कीन्ह केहि
प्रभुता बधिर न काहि,
मृगनयनी के नयनसर
को अस लाग न जाहि।"

दोहा पढ़ते हुए बाबा की आंखों में एक बार वर्षों पहले की मोहिनी छवि मांसल होकर उभर आई। उसने दोनों हाथ नृत्य की मुद्रा में ऊंचे उठाए और देखते ही देखते मोहिनी चांदी चमकती सीढ़ी बन गई। जिसपर चढ़ते हुए तुलसीदास अपने राम के पास आधी दूरी तक पहुंच गए। राम अब भी आकाश में थे किन्तु सीढ़ी चुक गई थी। बाबा के ध्यान-पट पर अपना युवारूप सीढ़ी के आखिरी डण्डे पर खड़ा हुआ अपने राम तक पहुंचने के लिए अधीर दिखलाई दिया। युवा तुलसी के अपने और अपने इष्टदेव के बीच में रहस्य की सतरंगी पारदर्शी घटाओं में रतना का चेहरा चमक उठा।

अपने मन:तद्रूप को देखकर बाबा मुस्कराए। पर के तलुए पर धीमे से हथेली रगड़ते हुए मुख से भाव भरा 'श्रीराम' शब्द उच्चारित किया। तभी नीचे से देवतादीन सिल की भांग समेटकर उसका गोला बनाते हुए बोले— सांच कह्यो बाबा, जवानी ससुर ववंडर होत है ववंडर। जहिका राम बचाय लें जाय वहै भागमान है। हम लखनऊ मा रहत रहे महराज। तब हमैं कसरत-कुस्ती का बड़ा सौक रहा। तौन एक नउनिया हमारे ऊपर आसिक हुइ गई। वहै हमका यू भांग का सौख लगाइस रहै। राम जी की किरपा भई, हम एक बपारी की नौकरी पाय गयन तब हियां चले आयन। उइ निगोड़ी का साथ छूटा। पर ई महारानी बिजया महामाया हमरे सगे एस लिपट गइ कि देखौ, आपौ क लाज-सरम हम नाहिं करिति है। मुदा एक बात है बाबा, हम जब भांग पीसित हई तो 'ओम नम सिवाय ओम नम सिवाय' जपत रहिति है। यहिते माया हमका लिपटाय न सकी।"

लिपटाए तो हुए है। बरसों से देखता आ रहा हूं, सांझ-सवेरे दो घड़ी का समय तुम अपनी उस माया से लिपटने में नष्ट कर देते हो। तुम जो इतना समय अकेले मंत्र जपने में लगाते तो तुम्हें उस समय के सदुपयोग का अधिक सुफल मिलता।'

बाबा की बात सुनकर देवतादीन अपनी झेंप को अपनी मस्ती से दबाकर बोला— अरे बाबा अब दोस है तो दोसै सही हमार, का करी? जोरू न जाता, राम जी से नाता। ई नातेदारी के कारन हमका आपके नित्य दरसन मिलत हैं और आपके चरनन म हम भांग घोटिति है। दिन मा चार घंटा गल्ले की दलाली और हिआं ते जाइके दुई घड़ी

अरे बसकर अपनी बक-बक! नहीं तो आज ओम् नम शिवाय के बजाय यह बक-बक ही भांग के साथ तेरे पेट में जाएगी।

सब लोग हंस पड़े। संत बेनीमाधव ने बाबा से पूछा—'गुरु जी आपने यह व्यसन कभी नहीं किया?'

नटखट बच्चे का तरह बनीमाधव की ओर देखकर बाबा मुस्कराए, फिर अपनी उगलिया स अपनी छाती को छूकर कहा— 'अरे यह काया भाग का पौधा बनकर ही उपजी थी, तुलसी ता राम-कृपा से हुइ है। हमारी पाठशाला के व्यवस्थापक मामा जी की भाग घोटते घोटते ही मुझे उसका इतना नशा चढ गया कि फिर पीकर क्या करता।' कहकर बाबा हसे। बनीमाधव जी ने पूछा— 'आपने कहा-कहा तीर्थाटन किया प्रभु?'

'अरे राम भगत कहा तक हिसाब बतावें। तब हमारी मन की आखें कुछ काल के लिए अधी हो गई थी। मेघा भगत अधे की लाठी के समान थ। आयु मे भी हमसे लगभग आठ दस वर्ष बड थ। राम जी ने अपनी डयोढी तक लाने के लिए हमारे लिए नेह नाते की जो सीढिया बनाई थीं उनमे पार्वती अम्मा थी सूकरखेत वाले बाबा थे और यहा पूज्यपाद गुरु जी महराज के रूप म मुझे पिता मिले। बजरगबली को मैंने सदा अपना सगा बडा भाई करके ही मन से माना है। बडा घुटन म उनसे गिडगिडाकर कहता था कि कभी प्रत्यक्ष होकर भी मरी बाह गह लो मैं यह मानता हू कि मेरे लिए बजरगी ही मेघा भगत का रूप धरकर मुझे नय प्राण देने क लिए आ गए थे।'

'आप भगत जी से बहुत अभिभूत है?'

'अभिभूत तो इस भूतभावन की परमपावन काशी नगरी से हू। काशी के वायुमण्डल न ही तुलसी को तुलसीदास बनाया। इसने मुझे गुरु, माता पिता, मित्र भाई यश अपयश और राम-पद-नेह सभी कुछ दिया।' कहकर बाबा रुके। फिर हसकर कहा—'हम तुम्हारे जी की उतावली जान रहे हैं बनीमाधव। तुम्हारा मन हमारे तीर्थाटन का वत्तात जानने म लगा है। किन्तु भाई हमारा भी तो मन है। जब हम उन बीत क्षणो का द्वार खोलते है तो एक-एक क्षण के अनत भडारो से तुम्हारे प्रश्न के उत्तर खोज लाने के सिवा हमे और भी बहुत कुछ आकृष्ट कर सकता है। अब हमारा अन्तकाल आ गया समझो। बहाने बहाने से पुराने दिन पुराने लोग इन नब्बे वर्षों के अनगिनत क्षणों का हिसाब लगाने को जी अधिक चाहता है। कितना करना था कितना किया, आगे के लिए धम की आर किस तरह स साधें कि जिससे इसी जन्म मे अधिकाधिक सिद्धि मिल जाय। राम-पद-नेह प्राप्त करने का उछाह मेरी सासो मे एकरस होकर ही इस देह से बाहर जाय, बस यही एक कामना है। अधेरा झुक आया है रामू आ जाय तो भीतर चलें। पहर भर रात बीते आ जाना बनीमाधव, आज रात तुम्ह और रामू को अपने बीते क्षण अर्पित करूगा।'

रात के समय बाबा आपनी चौकी पर सुख से लेटे हुए थे। बनीमाधव चौकी के नीचे आसन पर बैठे थे और रामू उनके पर दबा रहा था। दीवाल पर पडते हुए दिय के प्रकाश म हनुमान की मूर्ति चमक रही थी। बाबा कह रहे थे— जब मैंने काशी छोडकर तीर्थाटन करने का निश्चय किया तो मेरी मइया, गुरु भगवान की सहधर्मिणी बहुत दुखी हुई थी। मामा न तो क्रोध म आकर मुझे और मेरी ही लपेट म भगत जी को भी शाप तक दे डाला था। (खिल

मिलाकर हंस पड़ते हैं) कैसे-कैसे निम्न लोग थे! मामा तो, बस क्या कहें, उनमें बाल युवा, प्रौढ़ और वृद्ध सभी रूप ऐसे स्पष्ट होकर आविर्भूत होते थे कि देख-देखकर मन खिन्न उठता था। हम आई की चौकी के नीचे दालान में बैठे थे। आई कह रही थीं × × ×

'मेरी इच्छा तो यही थी कि तुम यहीं रहते। एक बार तुम्हारे गुरु महाराज ने मुझसे कहा था कि रामबोला के संरक्षण में बड़े मनुवा छोटे मनुवा हमारे बाद भी सुरक्षित रहेंगे। हम दोनों का तुम्हारे प्रति जो मोह है वह तुम जानते ही हो।"

गला और आँखें भर आईं। भइया पहले से आँसू पोंछ रही ही थी कि मामा भीतर आए। उनके हाथ में सोटा भी था। आते ही परशुरामी मुद्रा में तुलसी को देखकर अपनी बहन से कहा—'तुम इस मूढ़ के लिए रोती हो जीजी! हजार उल्लू के पट्ठे जब पैदा होकर मरते हैं तब उनकी मिट्टी गूंथकर भगवान एक तुलसी गढ़ता है। अच्छा भला विवाह तै किया इसका। लड़की ऐसी सुन्दर कि रूप में उस कोतवाल की पतली को भी लजवावै। और वेद पढ़ने में तो मानो सुग्गा है सुग्गा! बीस-पच्चीस हजार की माया—रूप, गुण, लक्ष्मी सरस्वती सब एक साथ। और एक सास-ससुर घेलुवे में। सो इनसे सहा नहीं गया। अब मेघा भगत के साथ गाँव-गाँव डोलेंगे। लाख दुख सहेंगे। कलिकाल के लड़कों की बुद्धि बिलकुल भ्रष्ट है जिज्जी। इनसे बात करना ही वृथा है।'

भइया बोली— इसकी बुद्धि नष्ट तो नहीं है भइया यह राम मार्ग पर जा रहा है बेचारा।'

'राम नहीं भाड़ भड़साई मार्ग कहो। अरे घर गृहस्थी लेकर क्या लोग राम राम नहीं जपते हैं? अब मेघा और तुलसी जैसे लड़के घर गृहस्थी की राह छोड़कर भगतबाजी की बात करेंगे तो इनसे पूछो कि सरऊ पढ़े क्यों थे फिर? राम राम तो मूरख भी रट सकता है।'

क्या कहूँ मामा श्रीगुरु-चरणरूपी पारसमणि का स्पर्श पाकर भी यह अभागा जंग लगा लोहा ही बना रहा।'

मामा लाठी तानकर आँखें निकालते हुए बोले— देख बे, मेरे सामने जो तूने ज्ञान-ध्यान बघारा तो मारते मारते अभी भुरकुस निकाल दूंगा तेरा।'

'रहै देव भइया अपनी भाग का क्रोध इसके ऊपर न डालो।

अरे क्या जिज्जी मैं सरजू मिसिर की पत्नी से पक्का कर आया था कि चाहे और कुछ न देना लेना पर बड़हार में ग्यारह मिठाइयां परोस देना। हम सन्तुष्ट हो जाएंगे। चुन्नी साव से पक्का किया रहा कि सरऊ उस दिन जो तू हम कस्तूरी में भाग छनाय दओगे तो तुम्हें हम शुद्ध अन्तःकरण से बेटा होने का आशीर्वाद देंगे। सो वह हाथ जोड़कर राजी हो गया था। अब यह हमारी सारी योजना मिट्टी में मिलाकर घर से भागा चला जा रहा है। जा अभागे अब इस ब्राह्मण का भी शाप है कि तू गृहस्थ न बनकर भगत ही बनेगा।'

तुलसी हँस पड़े मामा के पैर छूकर कहा— गुरुजन प्रेमवश जब शाप भी

नटखट बच्चे की तरह बेनीमाधव की ओर देखकर बाबा मुस्कराए, फिर अपनी उंगलियों से अपनी छाती को छूकर कहा—'अरे यह काया भांग का पौधा बनकर ही उपजी थी, तुलसी तो राम-कृपा से हुई है। हमारी पाठशाला के व्यवस्थापक मामा जी की भांग घोटते घोटते ही मुझे उसका इतना नशा चढ गया कि फिर पीकर क्या करता।' कहकर बाबा हंसे। बेनीमाधव जी ने पूछा—"आपने कहां-कहां तीर्थाटन किया प्रभु ?'

'अरे राम भगत कहां तक हिसाब बतावें। तब हमारी मन की आंखें कुछ काल के लिए अंधी हो गई थीं। मेघा भगत, अंधे की लाठी के समान थे। आयु में भी हमसे लगभग आठ-दस वर्ष बडे थे। राम जी ने अपनी ड्योढ़ी तक लाने के लिए हमारे लिए नेह-नातों की जो सीढ़ियां बनाई थीं उनमें पार्वती अम्मा थीं सूकरखेत वाले बाबा थे और यहां पूज्यपाद गुरु जी महराज के रूप में मुझे पिता मिले। बजरंगबली को मैंने सदा अपना सगा बडा भाई करके ही मन से माना है। बडी घुटन में उनसे गिडगिडाकर कहता था कि कभी प्रत्यक्ष होकर भी मेरी बांह गह लो मैं यह मानता हूं कि मेरे लिए बजरंगी ही मेघा भगत का रूप धरकर मुझे नये प्राण देने के लिए आ गए थे।"

आप भगत जी से बहुत अभिभूत हैं ?"

'अभिभूत तो इस भूतभावन की परमपावन काशी नगरी से हूं। काशी के वायुमण्डल ने ही तुलसी को तुलसीदास बनाया। इसने मुझे गुरु, माता पिता मित्र, भाई यश, अपयश और राम-पद-नेह सभी कुछ दिया।' कहकर बाबा रुके। फिर हंसकर कहा—'हम तुम्हारे जी की उतावली जान रहे हैं बेनीमाधव। तुम्हारा मन हमारे तीर्थाटन का वृत्तांत जानने में लगा है। किन्तु भाई हमारा भी तो मन है। जब हम उन बीते क्षणों का द्वार खोलते हैं तो एक एक क्षण के अनंत गडारों से तुम्हारे प्रश्न के उत्तर खोज लाने के सिवा हम और भी बहुत कुछ आकृष्ट कर सकता है। अब हमारा अन्तकाल आ गया समझो। बहाने बहाने से पुराने दिन पुराने लोग इन नब्बे वर्षों के अनगिनत क्षणों का हिसाब लगाने को जी अधिक चाहता है। कितना करना था कितना किया आगे के लिए धर्म को और किस तरह से साधें कि जिससे इसी जन्म में अधिकाधिक सिद्धि मिल जाय। राम-पद-नेह प्राप्त करने का उछाह मेरी सांसों में एकरस होकर ही इस देह से बाहर जाय, बस यही एक कामना है। अंधेरा झुक आया है रामू आ जाय तो भीतर चलें। पहर भर रात बीते आ जाना बेनीमाधव, आज रात तुम्हें और रामू को अपने बीते क्षण अर्पित करूंगा।

रात के समय बाबा अपनी चौकी पर सुख से लेटे हुए थे। बेनीमाधव चौकी के नीचे आसन पर बैठे थे और रामू उनके पैर दबा रहा था। दीवाल पर पडते हुए दिये के प्रकाश में हनुमान की मूर्ति चमक रही थी। बाबा कह रहे थे— जब मैंने काशी छोडकर तीर्थाटन करने का निश्चय किया तो मेरी अइया, गुरु भगवान की सहधर्मिणी बहुत दुखी हुई थीं। मामा ने तो क्रोध में आकर मुझे और मेरी ही लपेट में भगत जी को भी शाप तक दे डाला था। (खिल

मिलाकर हस पडते हैं) कैसे-कैसे निमल लोग थे ! मामा तो, वस क्या कहे, उनमें बाल, युवा, प्रौढ और वृद्ध सभी रूप ऐसे स्पष्ट होकर आविभूत होते थे कि देख-देखकर मन खिल उठता था। हम आई की चौकी के नीचे दालान में बैठे थे। आई कह रही थी × × ×

'मेरी इच्छा तो यही थी कि तुम यही रहते। एक बार तुम्हारे गुरु महाराज ने मुझसे कहा था कि रामबोला के सरक्षण मे बडे मुनुवा, छोटे मुनुवा हमारे बाद भी सुरक्षित रहेंगे। हम दोनो का तुम्हारे प्रति जो मोह है वह तुम जानते ही हो।"

गला और आखें भर आइ। अइया पल्ले से आसू पोछ रही ही थी कि मामा भीतर आए। उनके हाथ मे सोटा भी था। आते ही परशुरामी मुद्रा मे तुलसी को देखकर अपनी बहन से कहा—'तुम इस मूरख के लिए रोती हो जीजी! हजार उल्लू के पटठे जब पैदा होकर मरते हैं तब उनकी मिट्टी गूथकर भगवान एक तुलसी गढता है। अच्छा भला विवाह तै किया इसका। लडकी ऐसी सुन्दर कि रूप म उस कोतवाल की चहती को भी लजवावे। और वेद पढने मे तो मानो सुग्गा है सुग्गा। बीस पच्चीस हजार की माया—रूप, गुण लक्ष्मी, सरस्वती सब एक साथ। और एक सास-ससुर घेलुवे म। सो इनसे सहा नही गया। अब मेघा भगत के साथ गाव-गाव डोलेंगे। लात दुख सहेंगे। कलिकाल के इनका की बुद्धि बिलकुल भ्रष्ट है जिज्जी। इनसे बात करना ही वृथा है।"

अइया बोलीं— इसकी बुद्धि भ्रष्ट तो नही है भइया यह राम माग पर जा रहा है बेचारा।'

राम नही भाड भडसाई माग कहो। अरे घर गृहस्थी लेकर क्या लोग राम राम नही जपते हैं? अब मेघा और तुलसी जसे लडके घर-गहस्थी की राह छाडकर भगतबाजी की बात करेंगे तो इनसे पूछो कि सरऊ पढे क्यो थे फिर? राम राम तो मूरख भी रट सकता है।'

क्या वह मामा श्रीगुरु चरणरूपी पारसमणि का स्पर्श पाकर भी यह अभागा जग लगा लोहा ही बना रहा।"

मामा लाठी तानकर आखें निकालते हुए बोले— देख वे, मेरे सामने जो तून ज्ञान ध्यान बघारा तो मारते-मारते अभी भुरकुस निकाल दूगा तेरा।'

"रहने देव भइया अपनी भाग का क्रोध इसके ऊपर न डालो।"

अरे क्या जिज्जी मैं सरजू मिसिर की पत्नी से पक्का कर आया था कि चाहे और कुछ न देना लेना पर बडहार म ग्यारह मिठाइया परोस देना। हम सतुष्ट हो जाएगे। चुन्नी साव से पक्का किया रहा कि सरऊ उस दिन जो तू हम कस्तूरी मे भाग छनाय दमोगे, तो तुम्ह हम शुद्ध अन्त करण से बेटा होन का आशीर्वाद देंगे। सो वह हाथ जोडकर राजी हो गया था। अब यह हमारी सारी योजना मिट्टी म मिलाकर घर से भागा चला जा रहा है। जा अभागे अब इस ब्राह्मण का भी शाप है कि तू गृहस्थ न बनकर भगत ही बनेगा।

तभी हम दुखे मामा के पर छूकर कहा— गुरुजन प्रेमवश जब शाप भी

देते हैं तो ऐसा कि वह वरदान बन जाता है।" × × ×

१७

रामू पैर दबाते हुए अचानक उत्साह मे बोला—"एक बार आप बताते रहे कि तीर्थाटन म भगत जी के साथ आपको मुगल फौज न बगार म पकड़ा था।

बाबा मुस्कराए आखो मे स्मृतिया झलझला उठी। बोले—"हा रे उसकी तो याद मात्र से ही मेरी पीठ इस समय भी भारी हो उठी है। हमारे उत्साह के कारण बेचारे भगत जी को भी बोझा ढोना पड गया था।'

बेनीमाधव जी के चेहरे पर उत्सुकता झलक उठी, कहा—'हम उस प्रसग को सुनाने की कृपा करेंगे गुरू जी।"

बाबा बोले— जब जीवन का मूल्याकन करने बैठा हू तो उसे भी सुना दूगा। जीवन-यात्रा की प्रत्येक मजिल पर मुझे श्री रामचरणानुराग मिला। अत कथा मेरी न होकर भक्ति धारा के प्रवाह की ही है। फिर उसे सुनाने म मुझे सकोच क्या हो।" कहकर बाबा चुप हो गए। क्षण भर ऐसे ही बीता फिर वे रामू के हाथो से अपना पर झटका देकर छुड़ाते हुए सहसा उठ बैठे। उनकी दृष्टि किसी दूरागत दृश्य को देख रही थी। स्मृति लोक म नगाडे बज रहे थे और अधकार क्रमश उजाले म परिवर्तित होता चला जा रहा था। मनो दृष्टि मे हिमाच्छादित कैलास पवत और मानसरोवर का परमपावन और सुहा वन दृश्य झलका। नगाडो की ध्वनि मानो हर-हर कर रही थी। × × ×

तुलसी मेघा भगत और कलासनाथ के साथ मानसरोवर के किनारे खडे थे। कलास बोल-- अपने नाम के पवत को तो दूर से देख रहा हू, किन्तु यदि इसके ऊपर डमरू त्रिशूल धारी गगाधर चन्द्रशेखर जी मुझे दिखलाई पड जाय तो फिर यह यात्रा ही नही यह सारा जीवन सफल हो जाय।'

अपनी इच्छा को तीव्र करो कलास, जिस वस्तु पर जिसका सत्य स्नेह होता है वह उसे अवश्यमेव मिलती है।

तुलसी मेघा भगत की बात सुनते हुए झील के प्रवाह को देख रहे थे। हिलोर लेती हुई लहरें सहसा नाचते हुए नतकी के परो की घुघरू-सी लगने लगती है। नत्यरत पगो म बडा चाचल्य बडी मादकता बडी कविता है। पर झील की लहरो पर नाचते नाचते मोहिनी के पर बन जाते हैं। ऐसा लगता है जस मोहिनी मानस झील का मूर्तिमान सौन्दय बनी, लहरो पर नाचती हुई तुलसी को रिझा रही है। सुनी री मैने हरि आवन की अवाज। तुलसी के विम्ब और गूज दाना ही मोहिनीमुग्ध हो रहे ह। चेहर पर अपार सुख बरस रहा है। तभी मघा भगत का स्वर काना म पडता है वे कह रहे थ— मरे लिए यह मानसरोवर राम उजागर बन गया। लहर-लहर म सीताराम-सीता

राम सीताराम "

तुलसी की अंतश्चेतना गूंजी—'देखा, यह है सत्य स्नेह ! तू झूठे ही राम भक्त बनने का ढोंग करता है।'

तुलसी की मनमोहिनी नृत्यरता कामिनी खंडित मूर्ति की तरह छपाक से पानी में गिरकर ओझल हो गई। तुलसी की पलकें नीचे झुक जाती हैं दृष्टि आत्मस्थ हो जाती है। अपना ही होश डाटता है—'मोह भंग कर रामबोला ! तेरी प्रीति क्या क्षणभंगुर पर है ?'

'नहीं-नहीं' प्राणों के भीतर विकल सत्य गूंज उठा।

तब फिर राम को देख ! जैसे प्रबल उत्साह से तेरे भीतर यह मोहिनी भाव उठती है ऐसे जब राम जी के दर्शन होने लगेंगे तब तेरा जन्म सार्थक हो जाएगा। राम को देख।

तुलसी सावधान होकर राम का ध्यान करते हैं। पहले ध्यान-पट पर कुछ भी नहीं आता फिर एक धनुर्धारी आकर झाई-सा झलकता है। क्रमश उभरता है किन्तु पूर्ण रूप से नहीं, और जब उभरता है तो वह आकार अचानक हंसती हुई मोहिनी का बन जाता है। मन गूंजा 'राम राम'। तुलसी की काया पर सिहरन आ गई। ध्यान-पट फिर शून्य हो गया। मनोलोक में नया दृश्य आरंभ हुआ। तुलसी अपने हाथों मानो एक मूर्ति गढ़ रहे हों। मूर्ति बिजली की रेखाओं से गढ़ती चली जाती है। सारी मूर्ति गढ़ गई। धनुष, तीरों भरा तरकश, मुकुट, राजसी वेश—किन्तु चेहरा फिर मोहिनी का बन गया। ना-ना-ना। तुलसी की बहिश्चेतना तक थरथरा उठी। उनकी यह नकारने की ध्वनि इतनी स्पष्ट थी कि कैलास और मेघा भगत चौंककर उनकी ओर देखने लगे।

क्या हुआ तुलसी ?' कैलास ने पूछा।

कुछ नहीं।'

"कुछ तो अवश्य था तुलसी। किसको घबरा के नन्ना कहा ?'

'किसी को नहीं।' तुलसी ने घबराहट भरा उत्तर दिया।

'छलना बड़ी विकट होती है राम। बड़ा नाच नचाती है।" मेघा भगत मानो अपने आप ही से कह उठे।

हारे, घबराये हुए तुलसी उन्हें करुण दृष्टि से देखने लगे। दृष्टि मिलते ही उन्होंने कहा— घबरा मत मेरा भइया ! सत्य भी सहसा प्रकट नहीं होता। एक बार तो वह मन में ऐसा प्रकट होता है कि जैसे प्रत्यक्ष हो हो परन्तु फिर उस प्रत्यक्ष को वस्तुत प्रत्यक्ष करने में मनुष्य को लोहे के चने चबाने पड़ते हैं। जिन खोजा तिन पाइया गहरे पानी पैठ।'

तुलसी गंभीर भाव से सिर झुकाकर सुनते हैं। इस समय उनके प्राण राम ही राम रट रहे हैं। × × ×

राम राम !' बाबा अपने गम्भीर चिंतनलोक से उबरकर बहिश्चेतना के धरातल पर आ गए। एक बार रामू की ओर देखा फिर बेनीमाधव से दृष्टि मिलाते हुए बोले— "मन अपनी गहरी थाह लेने चला गया था। अस्तु तो मैं क्या

क्षेत्र से दूर इस गाव मे लगाए गए हैं। इस प्रकार एक पथ दो काज सिद्ध किए गए हैं। स्त्रिया सुरक्षित जगह पर टिक गइ। साथ ही शत्रुओं का रसद भण्डार भी मुगलो के हाथ म आ गया।

गधो और खच्चरों के साथ उनके चरवाहों की निगरानी में इन तीनो को भी अन्य बन्दियों के साथ छोड दिया गया था। विचित्र वातावरण था। मनुष्य दासता की विवशता मे पशु बना दिए गए थे। उनका हाकिम अब्दुल्ला बेग नामक एक तुर्क था। वह दो पीढिया से यहा बसा था हमारी भाषा ही अधिक बोलता था। बडा जल्लाद था वह अब्दुल्ला।

इन तीना को कुछ और भी व्यक्ति वहा बैठे हुए मिले। बातें होने लगी। वे लोग मथुरा वृन्दावन के निवासी थे और लगभग एक महीने से बन्दी होकर बेगार ढो रहे थे। दिन भर वे या तो सामान की ढुलाई करते अथवा छावनियो में सफाई आदि अनेक काम करते हुए अपने दिन बिता रहे थे। उन्होंने बतलाया कि रात म रूखी-सूखी खिलाकर उन्हें गधो के घेरे मे छोड दिया जाता है।

तुलसी बोले—'तब तो हमारी भी यही दशा होने वाली है कलास। भाई जी ने सच ही कहा था। *अपना रण छोडकर हमे पराये रण क्षेत्र मे नहीं आना* चाहिए था।'

मथुरावासी बन्दी बोला— हम लोग भी पछता रहे हैं भइया। ऐसी मनहूस साइत म द्वारका जी की यात्रा करने चले कि माग मे एक नही सकडो छोटी बडी विपत्तिया सामने आइ। हमारे एक साथी को बाघ खा गया। हम दो चार आदमी उससे लडने झगडने म घायल हुए। एक गाव के लोग हम उठाकर ले गए। अपने वहा रखा। दवा-दारू से हमारा चोला चगा किया। वहा एक सुन्दर खतरानी पर हमारे एक साथी लट्टू हो गए। हमने लाख समझाया कि नन्ददास ऐसा न करो पर जब किसी की आखें किसी से लड जाती हैं तो वह फिर थोडे कुछ सुनता है भया हमने सोचा कि इसके फेर म हम सभी मारे जाएगे। आखिर गाव वालो का हम लोगो पर बडा उपकार था। सो प्रेमनीवाने साथी को वही छोडकर चले आए। फिर इन सिपाहियों की पकडाई म आ गए, तब से बेगार ढो रहे है। तीरथ-यात्रा का यह फल पाया।"

तुलसी ने कहा—'आपने एक स्त्री पर आसक्त हो जाने वाले अपने साथी का नाम नन्ददास ही बतलाया न ?"

हा !

'वह कवि भी है ?"

हा हा बडी अच्छी कविताई करता है और गाता भी खूब है। अरे उसकी सगत म रस बरसता था भइया रस ! क्या कह अपनी आबरू बचाने के लिए हमने उसका साथ छोडा। पर यह अच्छा नही किया। उसीका दण्ड अब बन्दी बनकर पा रहे हैं।

तुलसी ने फिर प्रश्न किया—'वह गोरा-गोरा बडी-बडी आखो वाला है न?"

हा। सनाढय ब्राह्मण है सोरो के पास कही का रहने वाला है।"

रामपुर का है ! तुम उसे जानते हो ?' एक अन्य बन्दी ने पूछा।

"वह मेरा गुरुभाई है। काशी जी मे साथ पढ़ता था।"

'ठीक है। वह काशी पढने गए थे। हमे मालुम है। काशी नाम सुनके तुम हमारे साथी को पहचाने खूब महराज!"

वह अब भी उसी गाव मे है?'

'अगर मार-पीट कर निकाल न दिया होगा तो वही होगा।"

'क्या कहा जाय, भले घर का लडका पर प्रेम तो उल्लू बना देता है उल्लू।"

तुलसी गभीर हो गए पूछा— उस गाव का क्या नाम है?"

'सिहपुर! यहा से लगभग पच्चीस कोस पूरब मे है।"

तुलसी ने फिर कुछ न पूछा। वह विचारमग्न हो गए। कुछ देर के बाद उन्होने कैलास से कहा—"अब तो कुछ भी हो कैलास यहा से मुक्त हुए बिना हमारा काम चल ही नही सकता। नन्ददास को बचाना ही है। तुम्हें भगत जी के पास छोडकर मैं एक बार नन्ददास की खोज मे अवश्य जाऊगा। वह मुझे भाई के समान प्रिय है।'

कैलास बोले—"यह तो ठीक है पर मुख्य प्रश्न तो प्याऊ के ठौर का है। मुक्त होने का उपाय क्या हो सकता है?'

'एक ही उपाय है। मैं किसी पर अपनी ज्योतिष की माया फैलाता हू। आडे समय मे यह विद्या बडे काम आती है। कल से छोटे-मोटो के हाथ देखकर उनके प्रश्नादि विचार कर मैं उन्हे सहज ही मे अपना प्रचारक बना लूगा और फिर शीघ्र ही किसी बडे ओहदेदार तक मेरी पहुच अवश्य हो जाएगी।'

पानीपत का युद्ध समाप्त हुआ। रात मे हरम के पडाव पर समाचार आया कि मुगल सेना जीत गई। हमचन्द्र विक्रमादित्य पकडा और मारा गया। दासो और बदियो के यमराज अब्दुल्ला को पानीपत से आए हुए किसी व्यक्ति ने हेमू की लडाई का वर्णन किया। उससे खबरें ही खबरें फैल गई। हेमू अपने हवाई नामक हाथी पर सवार हो सेना के मध्य खडा सैन्य सचालन कर रहा था। मुगल सेनापति खानेजमा अपनी जगह पर खडा दूरबीन से देख रहा था। उसने हेमू को देखा। एकाएक सेना को ललकारकर खानेजमा ने उसपर हमला किया। हेमू हाथियो की दूसरी पात मे था। उसके चारो ओर बहादुर पठानों का झुण्ड था। खानेजमा ने फिर घेरे को ही तोडने का निश्चय किया। तुर्क तीरो की बौछार करते हुए बढे। हाथियो के हमले को हौसले और हिम्मत से रोका। वे तैयार होकर आगे बढे। जब देखा कि घोडे हाथियो से बिदकते हैं तो कूद पडे और तलवारें खीचकर शत्रु की पक्तियों में घुस गए। उन्होने बाणो की बौछार से हाथियो के मुह फेर दिए और उन काले पहाडो को मिट्टी का ढेर-सा बना दिया। अद्भुत घमासान रन पडा। हेमू की बहादुरी तारीफ के लायक थी। हौदे के बीच मे नगे सिर खडा वह सेना की हिम्मत बढा रहा था

शादीखान पठान हेमू के सरदारों की नाक था। वह धरती पर गिर पडा। सेना अनाज के दानो की तरह बिखर गई। फिर भी हेमू ने हिम्मत न हारी। हाथी पर सवार चारो तरफ फिरता था सरदारो के नाम ले-लेकर हौसले

बढाता था। वह अपनी भागती सेना को फिर से एकत्रित करने के लिए भर सक प्रयत्न कर रहा था। इतने म एक तीर उसकी आख मे लगा। तब भी वह हिम्मत न हारा। उसने अपने हाथ से तीर खीचकर निकाला और आख पर रूमाल बाधते हुए भी अपनी सेना को हौसला देता रहा। मगर घाव इतना भीषण था कि कुछ ही पलो मे बेहोश होकर हौदे म गिर पडा। यह देखकर उसके अनुयायियो की हिम्मत टूट गई सब तितर बितर हो गए।

दूसरे ही दिन दिल्ली के लिए कूच का हुकुम हुआ। शाही हरम और उसके साथ ही बडे-बडे सरदारो की पत्नियो रखलो तथा दासियो नाचने-गानेवालियो और कुछ दूसरे तीसरे दर्जे के ओहदेदारो की स्त्रिया के खेमे थे। उनके अगले पड़ाव के लिए तम्बू-कनात आदि गृहस्थी का बोझ ढोकर बन्दी लोग भोर पहर ब्राह्म वेला मे ही चल पडे। इन राम श्याम भक्त बन्दियो का स्नान ध्यान कुछ भी न होने पाया। तुलसी और कलास मेघा भगत के लिए चिन्तित थे। वे बेचारे इतने सुकुमार और क्षीण गात थे कि उनके लिए बोझ ढोना असम्भव था। इसके अतिरिक्त वे चलते चलते ही भाव-समाधि-लीन होकर गिर पडते थे, जिसके कारण प्रादुलना यमराज का सिपाही उन्हे कोडे लगाने से न चूकता था। तुलसी और कलास इस कारण से विशेष दुखी थे।

सिपाही उजबक जाति का था। वह मुसलमान ही था किन्तु उसके देश मे प्रचलित सनातन बौद्ध सस्कार भी उसमे थे। तुलसी ने उसको समझाया— 'यह आदमी सूफी है कलन्दर है। इसको कष्ट दोगे तो अल्लाह तुम्हारा बुरा करेगा।'

स्वय सिपाही को भी मेघा भगत के लिए कदाचित कुछ ऐसा ही आभास अपने मन मे हो रहा था। कुछ सोचकर बोला— 'इसका बोझा तुम लोग आपस म बाट लो और इससे कहो कि कुलिया की कनार से निकलकर गाव की ओर चला जाय।'

मेघा भगत पहले तो राजी न हुए किन्तु तुलसी और कलास के आग्रह से अन्त मे उन्हे यह करना ही पडा। उन्हे पीछे छोडकर यह दोनो कुन्नियो के काफिले के साथ आगे बढते गए। मेघा भगत बन्दियो से अलग होकर भी उसी दिशा म अकेले बढ चले।

तुलसी और कलास दोनो कविबन्धु अपनी इस मुसीबत मे बडे ही विक्षुब्ध थे किन्तु उससे भी अधिक वे विवश थे। यह विवशता तुलसी को मथ रही थी। एक मन कहता राम को बिसारकर नारी म रमा यह उसी का दण्ड है। दूसरा मन क्षुब्ध होकर कहता कि यह दुष्ट असुर जो कामिनी-काचन-सत्ता और ऐश्वय के मद मे आठों पहर डूबे रहत है कभी एक क्षण के शतान मे भी जा ईश्वर को नही भजते इनको दण्ड क्यो नही मिलता ?

दूसरो का क्या होगा या क्या हो रहा है यह प्रश्न अप्रासगिक और मिथ्या है।'

मुझे नन्ददास को बचाना ही है। अपने स्नेही बन्धु को बचाए बिना मरना भी मेरे लिए बडा कठिन हो जाएगा। मुक्ति का प्रयत्न करो। राम है राम है।'

बोझ लादे सिर और कमर झुकाए हुए जा रहे तुलसी के मुख पर छाई हुई कठोर गम्भीरता मे मन की आस्था से तरावट आई। वे बोझ स दबी पीठ को

तनिक सीधा करने का प्रयत्न करते हुए एक क्षण के लिए थम गए। उसी समय संयोग से कुलियों का जमादार अब्दुल्ला बेग अपना कोड़ा लिए हुए वहां आ पहुंचा। उसने कड़ककर कहा— क्यों बे हरामखोरी सूझी है ?"

तुलसी ने जमादार के मुंह खोलते ही उसके अक्षर गिनने आरम्भ कर दिए थे। अक्षरों से राशियां गिनीं और समय का अनुमान करके फुर्ती से लग्न बिचारी, फिर मुस्कराकर कहा— जमादार जी, अगले पड़ाव पर आप जब पहुंचेंगे तो आपका हाकिम आपको अपनी एक गर्भवती दासी से जबरदस्ती ब्याह देगा। *अभी से सावधान होना हो तो हो जाइए।"*

जमादार का रौब तुलसी की बात सुनकर क्षण भर के लिए तो चकरा गया परन्तु फिर अपनी अकड़ के सूत्र बटोरते हुए उसने कहा—'मेरी बात का यही जवाब है ? लगाऊं दो चार ?'

तुलसी मुस्कराए, कहा— इस समय आपके ताव में हूं जमादार जी, मारिएगा तो वह भी सहना ही पड़ेगा। किन्तु मैं फिर कहता हूं कि किस्मत की मार से अपने को बचाइयो।"

जमादार फिर चौंक से बंध गया, ठंडे स्वर में पूछा—"तू नजूमी है ?'

'जी हां।"

"अगर तेरी बात सच न हुई तो कोई न कोई इल्जाम लगाकर मैं तेरा सिर कलम करवा दूंगा याद रखना।

बात मेरी नहीं जमादार जी, ज्योतिष विद्या की है। यह झूठ हो ही नहीं सकती। मैं आपका दर्द विचार रहा हूं।' कहकर तुलसी बढ़ चले। कैलासनाथ उनसे लगभग बीस-पच्चीस कदम अपनी पीठ पर लदे बोझ के साथ रेंग चुके थे। जमादार विचार में खोया हुआ सिर झुकाए आगे बढ़ गया। तुलसी ने उत्साह से तेज कदम बढ़ाए। और जब तक वह अपने मित्र के पास पहुंचे कि जमादार फिर पलटकर उसके पास आया। पूछा— 'नजूमी, तुम उस बादी का नाम बतला सकते हो ?'

तुलसी ने फिर अक्षर गिन और मीन-मेष विचारकर कहा—"ग अक्षर से उसका नाम आरम्भ होगा, सरकार। वह सुन्दर होगी और कलाकार भी।"

जमादार की आंख चमक उठी, फिर सोच में पड़ गया, पूछा— यह शादी मेरे हक में होगी ?"

नागिन नागा में ही अपना जोड़ा ढूंढती है, जमादार जी। आपके हक में वह जहरीली है।'

इससे बच निकलने का क्या मेरे लिए कोई रास्ता नहीं है ?'

तुलसी ने अपनी पीठ का बोझ धम्म से धरती पर पटक दिया। *अब्दुल्ला बेग* यह देखकर चौंका। लेकिन बोला नहीं। तुलसी की मुख मुद्रा गम्भीर थी और वह अपनी उंगलियों के पोरों को अंगूठे से गिन रहे थे। गणित करके उन्होंने कहा—

एक बात पूछूं ? गुस्सा तो न होंगे ?'

'पूछो।'

यह स्त्री चोरी का माल है ? आपके मालिक ने इस कहीं से चुराया है ?''
हा, ठीक है।'
जमादार जी आग से न खेलिए, आपकी जान खतरे म पड जाएगी। अभी स जतन करें तो बच भी सकते है।'
'लेकिन वह औरत जिसके पास है वह बहुत ताकतवर आदमी है।''
हो सकता है लेकिन नियति का चक्र मनुष्यो से अधिक ताकतवर होता है।'' कहकर वे अपना बोझ फिर लादने लगे। अब्दुल्ला बेग पीछे की ओर लौट गया। तुलसी फिर से कलास के साथ हो लिए। कलास ने पूछा —'यमदूत तुमसे क्या कह रहा था ?''
अरे वह हमारे लिए रामदूत सिद्ध होगा। मेरी ज्योतिष कहती है कि उसे राम ने ही हमें सकट से उबारने के लिए भेजा था।'
बात क्या हुई ?
उसका भविष्य मैंने विचारा था। गहरे सकट म है।''
क्या वह तुमसे प्रभावित हुआ ?
लगता तो है।
हा मुक्ति का कुछ उपाय अब तो शीघ्र ही होना चाहिए। इतना बोझ उठाने का पहले कभी अवसर नही पड़ा था। कमर झुकी जाती है। पैर साधते साधते भी लडखडा जाते है। जाने कौन पाप किए थे राम !' कहते हुए कलासनाथ की आखें भर आई।
तुलसी ने सान्त्वना देते हुए कहा—'हारिए न हिम्मत बिसारिए न राम। हनुमान जी अवश्य ही हमारी रक्षा करने के लिए आएगे। मेरा मन कहता है।
दूसरा के पापो की गठरी अपनी पीठ पर लादकर चलना मेरे मन को मर्मांतक कष्ट दे रहा है। तुलसी भाई दासता अति कठिन होती है। मृत्यु उसके सामने बहुत ही रमणीय लगती है। भगत जी की बात न मानकर हमने अच्छा नही किया।
दुख सुख कहते रोते-हसते राम राम करते दोपहर म कुलियो के चने चबेने का समय आ पहुचा। एक बडी बावली के निकट सबने अपनी अपनी पीठो पर लदे बोझो को उतारा। पीठ सीधी की और सबेरे चलते समय बाटे गए गुड चने की अपनी अपनी पोटलिया खोलने लगे। जमादार उसी समय फिर तुलसी के पास आ पहुचा और कहा— मेरे साथ चलो।'
साहब मेरे साथी को भी ले चलिए।
नही तू अकेला चल।
तब तो आप मुझे मार भी डालें तो भी मैं नहा जाऊगा।
'अच्छा तुम दोनो चलो। मैं अभी तुम्हारे बोझो का ढोने का इतजाम करके आता हू।
दोनो मित्र आगे बढ़कर एक जगह खडे हो गए। कलास का चेहरा खिल उठा था कहने लगे— लगता है कि राम जी हमारी रक्षा कर लेंगे।'
जमादार तुर्क था मगर दो पीढी से हिन्दुस्तान में बसा हुआ था। ऊच उठने

के लालच मे वह एक कच्चा खल खेल गया था जिसके अन्तिम परिणाम पर तुलसी की ज्योतिष के उजाले मे नजर जाते ही जमादार अपने होश मे आ गया।

गुलनार ठेठ आजरबैजानी माल थी, कही काहकाफ के आसपास की। कहते हैं कि गुलाब के आसपास की मिट्टी मे भी महक आ जाती है, गुलनार म भी कोहकाफ की परियां का, ऐसे ही कुछ दूर-दराज का असर अवश्य दीख पडता था। नायब सूबेदार करीम खा ने उसे लाहौर के बाजार मे खरीदा था।

अब्दुल्ला बेग का हाकिम नायब सूबेदार अदहम खा था। वह अकबर को दूध पिलाने वाली धाय माहमअनका का पुत्र था। स्वभाव से कुटिल, स्वार्थी और विलासी। आयु मे वह अभी सोलह-सत्रह वष से अधिक नही था। अकबर का उसके प्रति ममत्व था, यद्यपि वह उसके स्वभाव को पसन्द नही करता था। अकबर के सरक्षक बैरम खा ने माहमअनका के इस बेटे को कभी पसन्द नही किया। लेकिन बादशाह की सिफारिश से उसने शाही जनानखाने और मालखाने की रक्षक और प्रबन्धक सेना मे उसे नायब का पद दे रखा था। करीम खा यद्यपि भारतीय पजाबी मुसलमान था फिर भी बैरम खा उसकी स्वामिभक्ति और योग्यता से सन्तुष्ट था। अनेक ईरानी, तूरानी नायबो से अधिक वह उसका विश्वास करता था। बादशाह के दूधभाई अदहम खा को किसी हिन्दुस्तानी मुसलमान के आधीन रहकर काम करना बहुत अपमानजनक लगता था। लेकिन इस अपमान से न तो उसकी मा उसे बचा सकती थी और न स्वय बादशाह ही। करीम खा ने जिस दिन गुलनार को खरीदा था उसी दिन अदहम खा की कुदृष्टि उसपर पड गई थी। उसने अपने विश्वासपात्र अनुचर अब्दुल्ला से कहा कि करीम खा इस दासी का भोग न करने पाए। रात होने से पहले ही गुलनार उसके यहा से गायब होकर अदहम खा के पास पहुच जाए।

अब्दुल्ला बेग महत्त्वाकाक्षी था। बादशाह के दूधभाई का महत्त्व जानता था। इसीलिए उसने अदहम खा से भी बडे हाकिम की खरीदी हुई बादी को उडा लाने का दुस्साहस किया। करीम खा की एक दासी युवक और अविवाहित अब्दुल्ला बेग पर अनुराग रखती थी। अब्दुल्ला ने उसे अपने प्रेम और अदहम खा के पैसे से दबा लिया। झुटपुटे मे गुलनार उडा ली गई और आदमखोर बाघ ले गया-ले गया की धूम मच गई। दूसरे ही दिन सयोग से फौज को लाहौर से दिल्ली की ओर कूच करना पडा। सेना चूकि तेजी से गति कर रही थी इसलिए करीम खा अपनी दासी के सबध म गहरी खोजबीन न कर पाया। फिर भी पानीपत के करीब पहुचते तक उसे यह मालूम हो चुका था कि गुलनार को आदमखोर बाघ नही बल्कि अधम अदहम खा उडा ले गया है। वह बडे ही क्रोध मे था। उसने अदहम खा के पास तक यह सूचना भेज दी कि वह उसकी आजरबैजानी दासी को यदि शीघ्र ही लौटाकर उससे क्षमा नहा मागेगा तो युद्ध समाप्त होते ही वह बैरम खा अतालीक से निश्चय ही इस बात की शिकायत करेगा। ऐसी हालत म उसे बादशाह का दूधभाई होने के बावजूद जो नतीजा भुगतना पडेगा अदहम खा उसे अच्छी तरह से जानता है।

अहमद खा करीम खा से क्षमा मागने को किसी भी तरह तैयार न था।

दूसर गुलनार न उससे यह भी कह दिया था कि वह उसका गभ धारण कर चुकी है। अदहम खा के लिए फिर यह सोचना तक असह्य था कि उसकी सतान उसके दुश्मन की दास कहलाए। गुलनार स्वय भी अब अदहम खा को नही छोडना चाहती थी। लेकिन अदहम खा को अपनी नौकरी और जान भी प्यारी थी। अपनी आन और जान दोनो की रक्षा करने के लिए अदहम खा ने एक उपाय सोचा। उसने गुलनार का विवाह अब्दुल्ला बग से कराने की युक्ति सोची। योजना बनी कि कह दिया जाएगा कि रात को यह औरत भाग कर अब्दुल्ला के खेम म घुस गई और गिडगडाकर शरण मागने लगी। वहा कि हेमू बक्काल के महलो की दासी हू हाल ही म खरीदी गई थी। अब्दुल्ला ने देखा कि औरत अच्छी है मुसलमान है, बाप-दादो के इलाके की है और वह चूकि कुवारा था इसलिए उसने जब अदहम खा से सारी बात कही तो उसने दोना का निकाह पढ़वा दिया। अब वह एक तुर्की मुसलमान की ब्याहता बीवी है। उस कोई नही छीन सकता। यह योजना बनाकर अदहम खा ने सोचा था कि कुछ दिनो के बाद मामला जब ठडा पड जाएगा और अगर उसे गुलनार से बेटा हुआ, तो अब्दुल्ला स तलाक दिलवाकर वह उसे अपने पास फिर से ले आएगा।

अदहम खा की इसी युक्ति म नियति न तुलसी और कलासनाथ के भाग्य का सयोग भी जोड दिया था। तुलसी की भविष्यवाणी सुनकर अब्दुल्ला जमादार अपनी जान बचाने के लिए मन म कुलाबे भिडाने लगा। अब्दुल्ला महत्त्वाकाक्षी अवश्य था, जीहुजूर भी था मगर पराया पाप बिना किसी लज्जत के अपने सिर पर मढे जाना उसे तनिक भी स्वीकार न था। वह अदहम खा की सारी चतुराइ भाप गया था। झूठा निकाह पढवाकर हाकिम की धरोहर अपने पास रखन के लिए वह हरगिस तयार नही था। मगर वह अदहम खा के सामने इनकार करने का साहस भी नही कर सकता था। हिन्दुस्तानी तुक अब्दुल्ला भी अपनी आन और जान बचान के लिए खालिस तुक अदहम खा का दुश्मन बन गया। उसने नायब करीम खा को बतला दिया कि अगर वह इसी वक्त सरकारी दौड ले आए तो अदहम खा के खेमा से गुलनार बरामद की जा सकती है।

सयाग स अदहम खा ने तय की हुई योजना उसी दिन बदल दी। उसक एक साथी तुक मानेम खा की फूफी शाहजादे की तातारी बेगम के महल की बादी थी। अदहम खा न मोनेम खा की सलाह से गुलनार को शाही डोली पर चुपचाप शाही बादिया के महल्ल म भिजवा दिया था। जब नायब करीम खा सिपाहियो की दौड लेकर उसके यहा तलाशी लने आया तो चिडिया उड चुकी थी। अदहम खा न त्योरिया चढाकर करीम खा को सरेआम कहनी-न कहनी सुनाई।

बेचारे अब्दुल्ला की जान अब सीधी दो चक्कियो के पाटों म आ गई थी। उसका हाकिम नायब अदहम खा और आलाहाकिम नायब करीम खा दोना ही उसपर शक कर रहे थे इसलिए तुलसी की भविष्यवाणी का उसपर तात्कालिक

प्रभाव पड़ा था और उसने अपनी दौड़ धूप आरम्भ की थी।

कैलास और तुलसी को एक जगह अलग खड़ा करके तथा उनपर लदे माल को दूसरा पर लदवाने का प्रबन्ध करके अब्दुल्ला उन दोनों को लेकर एक सन्नाटे की जगह में चला गया। उसने घबराकर कहा— नजूमी, तुम्हारी बतलाई हुई बात सच निकली, मगर उसका असर बड़ा भयानक हुआ जा रहा है। तनिक बिचारो कि मेरी जान को तो कोई खतरा नहीं है ?"

तुलसीदास ने गणना करके कहा—'जमादार जी आप लम्बी तान कर सोइए। आपके दोनों दुश्मनों का आज ही तबादला हो जाएगा। शाम के अगले पड़ाव तक आपका हाकिम बदल जायगा।

सुनकर अब्दुल्ला बहुत प्रसन्न हुआ, बोला—'नजूमी, अगर तुम्हारी बात सच निकली तो मैं आज रात में तुमको और तुम्हारे साथी को आजाद कर दूंगा और बाकी रास्ते में तुमसे अब बोझा ढोने की बेगार भी नहीं ली जाएगी। लेकिन तुम्हें मेरा एक काम करना होगा।'

'क्या करना होगा ?'

'मैं तुमको अदहम खां के पास लिए चलता हूं। तुम्हें किसी जुगत से यह बात अदहम खां के मन में बैठानी ही होगी कि उनके यहां तलाशी लाने में मेरा तनिक भी हाथ नहीं था। अदहम खां बादशाह का दूधभाई है। अबतक मुझसे खूब राजी भी रहा है आगे भी वह मेरी मदद कर सकता है। मैं उससे बिगाड़ हरगिज नहीं करना चाहता।

सुनकर तुलसीदास ने सलाह के लिए कैलासनाथ की ओर देखा। कैलास ने आंखों ही से संकेत करके अपनी सहमति प्रदान की और अब्दुल्ला एक मातहत को कुलियों का काफिला आगे बढ़ाने का हुकुम देकर उन दोनों के साथ नायब अदहम खां की ओर चल दिया।

शाही बेगमों, रखलों, नाचनेवालियों, बांदियों तथा दूसरे-तीसरे वर्ग तक के ओहदेदारों की स्त्रियों का काफिला एक साथ चलता था। उनकी रक्षा के लिए सेना की दो टुकड़ियां चलती थीं। अदहम खां उन्हींके साथ पीछे आ रहा था। वह उस समय बहुत ही तैश में भरा हुआ था। अब्दुल्ला पर यद्यपि इस समय तक उसके मन में कोई खास शक तो पड़ा नहीं हुआ था ताहम इस समय अपने सौभाग्य से दीपित आवेश में यह हर एक को अपने आगे तुच्छ बना रहा था। अब्दुल्ला तो मातहत होने की वजह से यों भी तुच्छ ही था। उसको देखते ही वह भड़क पड़ा— तू अपना काम छोड़कर यहां क्यों आया ?'

अब्दुल्ला गिड़गिड़ा कर बोला— सरकार को मुबारकबाद देने आया हूं। मुझे तो इस नजूमी ने बतला दिया था कि आप पर खुदा मेहरबान हैं तनिक भी आंच नहीं आएगी। मैं इसीलिए इनको आपकी खिदमत में ले आया हूं। मगर वल्लाह तारीफ है उस हुजूर की दूरदेशी की जो पहले ही से उन आने वाले खतरों को भांप लेती है। कल तक तो हुजूर ने मुझसे कुछ और ही बात कह रखी थी।

अदहम खां खुशामद से ढीला पड़ा बोला—'अल्लाह का शुक्र है। वही

दुश्मनो को तबाह करता है। नजूमी, यह बतलाओ कि अभी हाल मे ही हमने जो काम किया है उसका आखिरी अन्जाम क्या होगा ?"

तुलसी विचार करके बोले—'हुजूर जिस वस्तु को आप अपने यहा से निकाल चुके वह अब आपके पास लौटकर नही आयेगी।"

सुनकर अदहम खा की त्योरिया कुछ-कुछ चढ गइ। मन म इस समय अपने जीत के नशे म गुलनार बहुत ही प्यारी लग रही थी। वह उसे छोडने के लिए तयार नही था। इसीलिए तुलसी की बात सुनकर उसका मिजाज बिगडने लगा।

कलासनाथ का ध्यान उधर गया। उन्होने तुरन्त ही हाथ जोडकर कहा—हुजूर, मरे साथी अल्लाह ईश्वर के बडे भगत भी है। इनकी बात म आपकी भलाई के सिवा और कुछ नही हो सकता।'

अदहम खा के क्रोध के उबाल पर मानो ठडे पानी का छीटा-सा पडा। पल भर चुप रहकर उसने फिर पूछा— वह माल कौन ल जाएगा ?"

तुलसीदास ने विचार कर कहा— किसी बहुत ऊचे घराने का आदमी।

'उसकी औलाद क्या होगी ?"

लडका ! ' तुलसीदास ने विचार कर फिर कहा—'वह राजा बनेगा।

'क्या उसस या उसकी वालिदा स मरी फिर कभी मुलाकात होगी ?'

"मा से कभी नही किन्तु बेटे से होगी । न होती तो अच्छा होता।"

क्यो ?'

'लडाई के मैदान म या तो वह आपकी हत्या करेगा या आप उसे मारेंगे।

अदहम खा का तेहा फिर भडका आखें लाल हुइ। वह तुलसी के प्रति कोई कडा आदेश देने ही जा रहा था कि अचानक कुछ विचार आते ही गम्भीर हो गया बोला— ऐ बिरहमन, मुझे तुम्हारी सच्चाई का इम्तहान लेना होगा। तुम मुझे कोइ ऐसी बात बतलाओ जो घडी आध घडी या सूरज ढले से पहले तक होने वाली हो।

तुलसी न तुरन्त उत्तर दिया— थोडी ही देर म सरकार का तबादला दूसरी फौज म हो जाएगा।

अदहम खा चौंका फिर उसके चेहरे पर आश्चय भरी खुशी झलकी पूछा—'क्या मेरी तरक्की होगी ?"

'जी हा।'

'मेरे दुश्मन का क्या अन्जाम होगा ?

उसका भी तबादला होगा हुजूर और आज ही होगा।

क्या उसकी भी तरक्की होगी ?

हा, अन्नदाता ! लेकिन वह शीघ्र ही मारा जाएगा।

अदहम खा के चेहरे पर तुलसी की बात के पूर्वार्द्ध ने ईर्ष्या की भडक उठाई और बाद की बात न सन्तोष की झलक भी। वह दो पल चुप रहा फिर कहा—'अब्दुल्ला इन ब्रह्मनो को आज शाम तक अपनी निगरानी म रक्खो।'

शाम को पडाव पर पहुचने तक जमादार अब्दुल्ला को अदहम और करीम

खा के तबादले का समाचार मिल चुका था। करीम खा बैरम खा के अग रक्षकों में नियुक्त हो गएथे और अदहम खा को सूबेदारी मिली थी। अब्दुल्ला का नया हाकिम एक अधेड तातारी था जो मदक पीने के लिए खासा बदनाम भी था। अपने ज्योतिषी बन्दी के प्रति अब्दुल्ला की आस्था अब बहुत बढ गई थी, इसलिए मुक्त करने से पहले वह तुलसी को अपने नये हाकिम के पास भी ले जाना चाहता था। उसने तुलसी से अपने नये हाकिम के सम्बन्ध में पूछा कि उसके साथ उसकी कैसी निभेगी ?

तुलसी ने कहा—'सूर्यास्त के बाद मैं ज्योतिष की गणना नहीं करता। अपने वचन के अनुसार आप मुझे अब मुक्ति प्रदान करें।'

सुनकर अब्दुल्ला का क्रोध आ गया उसने कहा—'तब फिर तुम्हें भी कल ही आजादी मिलेगी।"

दूसरे दिन नये हाकिम ने, जिसे सब लोग पीठपीछे मदकची बेग के नाम से पुकारते थे, कुलियों के जमादार अब्दुल्ला को सुबह मुहअंधेरे ही बुलवा भेजा। उसके सामने पहुचते ही मदकची बेग ने एकाएक भडककर कहा—'क्यों बे उल्लू के पट्ठे ऐसी बेहूदा औरत कल रात तूने मेरे पास भेजी जो कि सोते में खुर्राटे भर भरकर सारी रात मुझे परेशान करती रही।"

अब्दुल्ला जमादार डर के मारे थर थर काप उठा। उसने गाव से पकडी गई हेमू के रसद व्यवस्थापक की रखैल को मदकची के पास भेजा था। वह अफीम, भग आदि अमल तैयार करने और अपने बूढे मालिक को कोरी बातों से ही सतुष्ट करके सुला देने के लिए गाव मे सविनोद प्रख्यात थी। अब्दुल्ला ने तो उसकी यह मनोरंजक ख्याति सुनकर तथा उसका नाक-नक्शा सिजल देख कर ही भेजा था। मगर नरगिस आतसियों की सरदारिनी भी थी यह उसे नहीं मालूम था। नरगिस से चूक यह हुई कि उसने मदकची बेग के अमल की मात्रा को कम समझा। आधी रात तक तो उसने मदकची बेग को रिझाने का अच्छा प्रयत्न किया किंतु उसके बाद वह सो गई। मदकची बेग का नशा जल्दी ही उचट गया। पिनक से होश में आने पर उसने देखा कि नरगिस खुर्राटे भर रही है। उसने जगाकर उसे अफीम घोलने का हुक्म दिया। नींद की माती नरगिस अनख कर उठी और उसने दो कटोरियों में चटपट अफीम उडेली। दुर्भाग्य से कम अफीम वाली कटोरी जो कि उसने अपने वास्ते घोली थी, बूढे तातारी को दे गई और गहरी वाली खुद पी गई। इसके बाद वह तो अटागफील होकर खुर्राटे भरने लगी और मदकची बेग थोडी देर के बाद ही फिर अपनी पिनक से जाग पडा और अपनी अकशायिनी के खुर्राटों से परेशान होता रहा।

तातारी हाकिम के गुस्से का कारण उसी की उबलन भरी बातों से जान-कर अब्दुल्ला समझ गया कि नया हाकिम खासा बोडम आदमी है। उसे अपने मातहतों पर हुकूमत करना नहीं आता। उसका भय कुछ-कुछ कम हुआ। उसने खुशामदाना अन्दाज मे झुककर कहा—'हुजूरेआली यह कम्बख्त हिंदुस्तानी औरत हुजूर के अमल करने की ताकत को सही तरीके से आक न सकी। मैं

आज ही उसका कत्ल करवा दूंगा।"

'नहीं नहीं वह बेवकूफ भले ही हो मगर सेज पर मौजे-दरिया की तरह लहराती है। मैं उसको एक मौका और देना चाहता हूं। तुम उसे सिर्फ इतना ही समझा दो कि मैं बहुत बड़ा हाकिम हूं और अगर उसने मेरी खिदमत ठीक तरह से नहीं की तो मैं उसकी बोटी बोटी नुचवा दूंगा।"

जी बहुत अच्छा हुजूर।"

उसे इसी वक्त जाकर जगा दो। कम्बख्त मुझसे जागती भी तो नहीं।'

अब्दुल्ला ने उसे भीतर जाकर चुटकियां काट-काटकर बाद मे तमाचे मार कर जगाने की कोशिश की मगर वह मुर्दों से बाजी लगाकर सो रही थी। अब्दुल्ला को कुछ न सूझा तो तैश मे आकर उसकी एक टांग और हाथ पकड़ कर धम्म से जमीन पर गिरा दिया। तब नरगिस की नींद टूटी।

धमाके की आवाज सुनकर मदकची बेग भीतर पहुच गया और उसे जमीन पर गिरा हुआ देखकर अब्दुल्ला पर नाराज हुआ। अब्दुल्ला ने बात बनाई कहा— हुजूर इसे मैंने नहीं गिराया बल्कि मौजे-दरिया की तरह यह इतनी जोर से उठी कि आप ही आप उछलकर जमीन पर गिर पड़ी।'

नरगिस बड़बड़ाई। उसके चेहरे पर गिड़गिड़ाहट का अन्दाज था। मदकची बेग ने अब्दुल्ला से पूछा— 'यह क्या कह रही है?

अब्दुल्ला ने चूंकि नरगिस की बात को स्वयं भी न समझा था इसलिए बात बनाई हाथ बांधकर कहा— हुजूरेआली यह कहती है कि इसने आपको उड़न खटोले की सैर कराने के ख्याल से छलांग लगाई थी लेकिन मुझे देखते ही शर्म और नफरत के मारे गिर पड़ी।"

ठीक है ठीक है। उससे कहो कि हमको यों ही खुश किया करे।"

अब्दुल्ला ने नरगिस को अमल तैयार करने की आज्ञा दी और हिन्दी मे उससे कहा— इसे गहरा नशा पिला, नहीं तो सवेरा होते ही यह तेरी और मेरी गर्दन उड़वा देगा।' नरगिस ने फिर मदकची बेग को गहरी घोलकर ऐसी नशीली चितवन से पिलाई कि सुबह पड़ाव उठने तक वह जाग ही न पाया। सवेरे अब्दुल्ला ने आकर तुलसी से कहा— बिरहमन फौरन मेरे साथ चलो। सूबेदार साहब ने तुम्हें याद फर्माया है।

तुलसी और कलासनाथ को लेकर अब्दुल्ला बेग चला। नया सूबेदार अदहम खां अपने खेमे के अन्दर बैठा हुआ एक मुगल बुजुर्ग से बातें कर रहा था। तुलसी को भीतर बुला लिया। कलासनाथ खेमे से बाहर ही रहे। खेमे में प्रवेश करते हुए तुलसी को अब्दुल्ला बेग की तरह ही झुककर दोनों हाथों से सलाम करनी पड़ी। अदहम खां ने मुस्कराकर कहा—' बिरहमन तुम होशियार नजूमी हो हम तुमसे खुश है।"

तो श्रीमान् जी फिर मुझे और मेरे साथियों को मुक्त करें।

हमने तुम्हें एक जायचा देखने के लिए बुलवाया है।' कहकर उसने तख्ती और लिखने की बत्ती मंगवाई। उसके आने पर मुगल बुजुर्ग ने एक राशि चक्र खींचा। तुलसी को थोड़ी देर मुश्तरी को बृहस्पति और जोहरा को शुक्र के रूप

में समझने में लगी। ग्रहों और राशियों के भारतीय नाम समझकर तुलसी कुण्डली विचारने लग गए। कुछ ही पलों में वह प्रसन्न होकर बोले— यह कुण्डली किसी बड़े ही चमत्कारी पुरुष की लगती है। ऐसे लोग कम देखने में आते हैं। वाह! यह किसकी कुण्डली है सूबेदार साहब?"

'इससे तुम्हें कोई वास्ता नहीं। तुम खुद ही बतलाओ कि यह कौन हो सकता है।"

अब्दुल्ला बेग ने अदहम खां और मुगल बुजुर्ग को तुलसी की हिन्दी में कही हुई बात को फारसी भाषा में समझाया। सुनकर मुगल बोला— इसके कुछ गुजिश्ता हालात बयान करो।'

'साहब यह है तो अभी बालक ही परन्तु अद्भुत नक्षत्रधारी है। यह व्यक्ति परम अभागा और परम सौभाग्यवान एक साथ है। इसके जन्म के समय इसके माता पिता पर बड़ा संकट आया होगा। बचपन में इसे अपने माता पिता से अनेक वर्षों तक अलग भी रहना पड़ा होगा। और इसने अपने माता पिता का राज्य भी छोटी आयु में ही पाया होगा।"

अदहम खां ने पूछा— इसकी मौत कब होगी?'

तुलसी कुण्डली देखते हुए हंसे बोले— जिसके राम रखवारे हों उसे कोई मार नहीं सकता। इस बालक नृपति ने अब तक अनेक बार यमदूतों को पछाड़ा होगा। यह राम जी का आदमी है इस संसार में उन्हीं का काम करने के लिए जन्मा है।' तुलसी की बात सुनकर मुगल का चेहरा खिल उठा किन्तु अदहम खां का चेहरा कठोर हो गया। उसने पूछा—' मैं कब बादशाह बनूंगा, नजूमी?"

तुलसी ने विचारकर कहा— इस जन्म में कदापि नहीं।"

खुशामदी अब्दुल्ला बेग अपनी स्वामी से ऐसी स्पष्ट बात कहने का साहस न कर सका। उसका अनुवाद करते हुए अदहम खां से कहा— 'हजरतेआली यह कहता है हुजूर बादशाह पर हुकूमत करेंगे।"

अदहम खां को बात सुनकर क्रोध तो न आया किन्तु संताप भी न हुआ। उसने फिर पूछा— बैरम खां कब मरेंगे?"

'चार वर्ष बाद।

'क्या मुझे बादशाह से वही दर्जा मिलेगा जो बैरम खां का हासिल है?"

हुजूर सिपहसालार बनेंगे अच्छे दिन देखेंगे और अगर संभल कर चलेंगे तो इस कुण्डली वाले प्रतापी पुरुष की छत्रछाया में बड़ा सुख भोगेंगे। लेकिन जान पड़ता है अन्नदाता वह सुख भोग नहीं पाएंगे।'

अब्दुल्ला बेग फिर उलझन में पड़ा। उसने तुलसी से हिन्दी में कहा— नजूमी, अगर तुम्हें अपनी जान प्यारी हो तो ऐसी बातें मुंह से न निकालो।

मैं क्या करूं नमाज़गार जो प्रश्न का समय इनके अनुकूल नहीं है। अपने दम्भ के कारण यह ऊंचे दिन देखकर गिरेंगे और सम्राट की ओर से इन्हें प्राण दण्ड भी दिया जाएगा।

अदहम खां ने अब्दुल्ला से पूछा— यह क्या कह रहा है?'

अब्दुल्ला ने सभलकर उत्तर दिया— हुजूर इसका कहना है कि सरकार बादशाह को कभी नाखुश न करें। आपको जो कुछ भी हासिल होगा वह आखुदग्रालम की मेहरबानी से ही हासिल होगा।"

कुण्डली देखते-देखते एकाएक तुलसी बोले— राजो सम्राटों म भी ऐसी जमकुण्डली किसी बिरले पुरुष की ही होती है सूबेदार जी ' यह सम्राटों का समाट हागा। लेकिन पदल चलने मे इसके समान कोई दूसरा आदमी नही हो सकता। जब यह किसी पर दयालु होगा तो उसे निहाल कर देगा लेकिन क्रोध आने पर इसकी क्रूरता को देखकर स्वय यमराज भी सिहर उठेंगे। यह परम धार्मिक और परम विलासी होगा।"

अदहम खा हसा बोला— दीनपरस्त यह चाहे हो या न हो मगर नफ्स परस्त तो यकीनन है। आफ्ताब खा यह काफिर नजूमी तुम्हे यकीनन खुश कर रहा होगा क्योंकि तुम भी तो थोडी देर पहल यही सब कह रहे थे।"

आफ्ताब खा बोले— यकीनन यह जवान अपने फन म माहिर है। इसकी पेशानी देखकर मैं यह सोचता हू कि यह नजूमी भी अकबरशाह की तरह ही दुनिया मे कुछ कर गुजरने के लिए ही आया है। एक दिन सारी दुनिया इसके कदम चूमेगी और एक मानी म यह अकबरशाह से ज्यादा बडी सल्तनत का मालिक बनगा।

अदहम खा की त्योरिया चढ गइ। घृणा भरी दृष्टि म तुलसी की ओर देख कर उसन आफ्ताब खा से कहा— आफ्ताब मिया जरा यह तो बतलाइए कि इस नजूमी का सर अपने धड पर और कितनी देर कायम रहगा ?

यह काफिर जल्द मरने के लिए पदा नही हुआ है खा साहब इसे कोई नही मार सकता।

अदहम खा को ताव आ गया लाल आखें निकालकर बोला— अब्दुल्ला बेग इस नजूमी को बाहर ल जाओ और इसकी गदन काटकर मेरे आग पेश करो।

लेकिन उसी समय एक दासी आई उसने कहा— हुजूरेआलिया ने हुजूर फज गजूर को याद फर्माया है।

अदहम खा क माथे पर बल पडा पूछा—'ऐसा क्या काम आ पडा ?

हुजूर मरियम मकानी ने हुजूरेआलिया का अभी अपन खेम म बुलवाया था। वहा से तशरीफ लाते ही जनाबेमालिया ने इस कनीज को आपकी खिदमत मे भेजा है।'

म दुल्ला बेग इस नजूमी का फिलहाल अपनी नजरबदी मे रक्खो। कल सुबह यहा स कूच करने के पेश्तर मैं इसका सर धड़ से जुदा देखना चाहता हू। इसके कत्ल का कोई अच्छा-सा बहाना भी तुम्हें खोजना होगा।'

अब्दुल्ला ने सिर झुकाकर सूबेदार का आज्ञा सुन ली। आफताब मिया फिर हसे बोले— आलीजनाब मैं फिर अर्ज करता हू कि इस शख्स को कोई मार नहीं सकता।'

मसनद से उठते हुए नौजवान अदहम खा की त्योरियो म फिर बल पडा

बोला—' आफताब मिर्जा आप बुजुर्ग हैं, मुझे चुनौती मत दीजिए।"

आफताब मिर्जा ने फिर उसी बेफिक्री से कहा—"जनाबेआली, अल्लाह से बड़े होने की कोशिश न करें।"

अदहम खां की आंखें क्रोध से लाल हो उठीं। खड़े होकर तलवार म्यान से निकालते हुए तुलसी की तरफ आवेश में झपटा। तुलसी एक पग पीछे हटे लेकिन अदहम खां का शरीर झपटते ही अचानक थरथराया और धड़ाम् से गिर पड़ा। वह बेहोश हो गया, उसका मुंह टेढ़ा पड़ने लगा था। उसके बायें अंग पर फालिज गिरा था।

बांदी घबराकर अपनी स्वामिनी के पुत्र को देखने लगी। अब्दुल्ला भी नीचे झुका। आफताब मिर्जा बोले—"अब्दुल्ला, खुदा से बैर मोल न लो। इसे फौरन ही आजाद कर दो। यह काफिर फकीरों का शाहंशाह है।"

तुलसी और कलास ही नहीं वरन् उनके आग्रह से ब्रज की यात्री मण्डली भी छोड़ दी गई। अब्दुल्ला ने चलते समय तुलसी के प्रति बड़ा आदर-भाव दिखलाया और कहा—' नजूमी, हमारे हक में अपने खुदा से दुआ मांगना। आफताब मिर्जा बहुत बड़े नजूमी हैं। माहमअनका इन्हें बहुत मानती हैं। लेकिन यह नालायक अदहम खां बड़ा मगरूर और बेवकूफ है।"

१८

अब्दुल्ला ने मुक्त करते समय तुलसी को चांदी के बीस दिरहम सिक्के भी नजर किए थे। तुलसी अपने तथा अपने साथियों के मुक्त हो जाने के कारण बड़े ही प्रसन्न थे।

छूटते ही वे मेघा भगत की टोह में लगे। उन्हें खोजने में विशेष कठिनाई न हुई। सेना से लगभग पांच कोस अलग हटकर वे बराबर साथ ही साथ चल रहे थे। पास पहुंचकर मेघा भगत के पैर छूकर कहा—' आपकी कृपा से ही यह संकट टला है। अद्भुत चमत्कार हुआ। मुझे ऐसा लगता है कि राम जी ने नन्ददास की रक्षा करने के लिए ही मुझे इस अकाल मृत्यु से बचाया है।'

भगत जी हंसे, कहा—' राम जी को तुमसे अभी बड़ी सेवा लेनी है भइया। न जाने कितनी विपत्तियों से वे तुम्हें मुक्ति दिलाएंगे। किन्तु अब मैं काशी जाना चाहता हूं। अब और कहीं नहीं जाऊंगा।

'किन्तु "

चिन्ता की आवश्यकता नहीं। तुम्हें नन्ददास के पास जाना ही है। कलासनाथ मेरे रक्षक बनेंगे।

अब्दुल्ला बेग से पाए हुए रुपये तुलसी ने कैलासनाथ को दे दिए और ब्रज की यात्री मण्डली से सिंहपुर ग्राम का मार्ग पूछकर वे पीछे की ओर लौटकर चल दिए। तीसरे दिन दोपहर के समय वह सिंहपुर के निकट पहुंच गए।

क्या भाई इस गाव म कोई ऐसा परदेशी पडा है जिसका मन बावला "

"हा-हा, वह बावला क्या हुआ है महराज सारे गाव को बावला बना दिया है। आप उसे ढून्ते हुए आए हैं ?'

"हा।"

'उसके नातेदार हैं ?"

हा।"

'भाई ?"

'हा गुरुभाई। वह इस समय कहा होगा ?"

प्रौढ किसान ने फीकी हसी हसकर कहा— वह हर समय नन्हेमल के घर के आगे ही पडा रहता है। उसे ले जाइए महराज, सारी बस्ती के लोग दुखी है। बाह्मन पण्डित, रूपवान मीठा भला, कोई ऐब नही। बाकी ऐबो का ऐब यही लग गया है कि उस भत्री खतरानी के रूप का दीवाना हो गया है। वहा भी कोई उत्पात नही करता बस बैठा-बैठा या तो गाता है, या हसता है या रोता है। घर वालो की हसी होती है। वह औरत बिचारी आप आठो पहर रो रोकर घुली जाती है। नन्हेमल परदेस गए है। लोगो को क्रोध भी आता है दया भी आती है क्या करें कुछ समझ म नही आता। उसके साथी छोडकर चले गए। और यहा के लोग मुसीबत म पडे हैं।

सुनकर तुलसीदास अत्यन्त गम्भीर हो गए। वह व्यक्ति कहने लगा—' आप उसे जल्दी से जल्दी यहा से ले जाइए। आठ आठ दस दस दिन न खाता है न पीता है। सास बिचारी भख मारके बहू के हाथो परोसी पत्तल भिजवाती रही पर अब बहू बाहर नही आती। हठ करती है कि जो मुझे नाहक बदनाम करता है उसे खिलाने नही जाऊगी चाहे मरे चाहे जिये। गाज कई दिना स भूखा पडा है।

तुलसीदास अब बातें नही सुनना चाहत थ, वे नन्ददास के पास पहुचने के लिए उतावले हो उठ थे पूछा— उस ठिकाने तक क्या आप मुझे पहुचा देंगे।'

मैं पहुचा तो जरूर देता महराज पर नन्हेमल के यहा जाना नही चाहता। एक असामी के कारण हम लोगो म दो बरस से खीचतान चल रही है। उनकी गरहाजिरी म आपका लेकर मेरा वहा जाना ठीक नही होगा।

'खर कोई बात नही, आप उस जगह का अता-पता ही बतलाने की कृपा करें।'

हा-हा सामने चले जाइए। नरम नरम आधा कोस है। वहा भरोपुर बजार है। बस वहा पहुचकर उत्तर की ओर मुड जाइएगा। हनुमान जी का मन्दिर पूछ लीजिएगा। बस मन्दिर स लगी जो पगडटी दिखाई पडे पूरब की ओर उसी पर चल पडिएगा। जस वह घूमे वसे आप भी घूमिए। सामने नन्हेमल का घर आ गया। उनका घर सबसे अलग कोने मे है। बस उसीके सामने नीम के पेड तने आपको अपने गुरभाई मिल जाएग।"

भद्र व्यक्ति के द्वारा बतलाए गए पते पर पहुचने म तुलसीदास को कठिनाई न हुई। नन्ददास धूल मे मुह गडाए कराहत हुए स्वर म कुछ बडबडा रह थे। तुलसी को अपार पीडा हुई। वह सुन्दर गौरवर्ण कान्तियुक्त शरीर इस समय

धूलभरा म्लान और दुबल हो रहा है। शिखा धूल-पसीने से सन-सनकर जटा हो गई है दाढ़ी भी बढ़ी हुई है। तुलसीदास उसके पास बैठ गए, सिर पर हाथ फेरकर पुकारा—"नन्ददास !"

अपनी रुदन भरी बडबडाहट मे ही नन्ददास ने उत्तर जोड दिया—"मर गया नन्ददास। अपनी राह लगो। मेरा जी अपने बस म नही है बाबा। मैं तो आप ही मरा जा रहा हू।" कहकर वैसे ही मुह गडाए हुए रोने लगे।

"इधर देखो नन्ददास। मैं तुलसी हू।" तुलसीदास की बात ने नन्ददास पर इच्छित प्रभाव किया। उनका रोना-बडबडाना रुक गया। तुलसीदास उनके सिर पर हाथ फेरते हुए बोले—"काशी के बाद यहा इस दशा म तुमसे मिलना होगा, इसकी तो मैं कभी कल्पना भी नही कर सकता था।"

सिर उठा। चौंकी कनखियो से देखा, फिर काया मे कुछ फुर्ती आई गदन भी तनी रूखी फीकी आखो मे स्निग्धता आई, जीवन चमका। होठो पर ऐसी करुण मुसकान थी कि देखकर तुलसीदास का हृदय भर आया। नन्ददास अपने आपको सभालते हुए बोले—"तुम कैसे आ गए भैया ?"

"प्रीति-डोर म बधकर।"

नन्ददास की आखें छलछला उठीं, भरे कण्ठ से कहा—"उसी मे बधकर तो मेरी ऐसी दशा हुई है।"

"कितने दिना से यहा हो ?"

प्रश्न सुनकर नन्ददास सामने वाले घर की ओर देखने लगे। द्वार की ओर देखा तो आखें दोबारा उमडीं कापते स्वर मे कहा—"पता नही।"

"तुम्हें क्या कष्ट है ?"

"कुछ नहीं।"

"तुम फिर यहा क्या पड़े हो ?"

"पता नहीं।" कहते हुए नन्ददास की आखें सामने द्वार से लगी रहीं। आखें भरी तो थीं ही और भर उठीं। गोरे भले गालों पर धारें बह चली। तुलसी के कलेजे मे मोहिनी को लेकर अपनी दीवानी टीस याद आई। एक बार तो बीते हुए क्षणों मे एक साथ सिमट कर लीन हो गए परन्तु वैसे ही मन के भीतर 'हर-हर' की आवाज सुनी। तुलसी को लगा कि यह स्वर उनके सरक्षक गुरु नरहरि बाबा का है। इस चेतावनी से मन और विकल हुआ, दृष्टि भी चचल हुई, पर जिधर जाती थी उधर मोहिनी ही मोहिनी दिखलाई देती थी। बिम्ब मे मोहिनी और ध्वनि म गुरु-स्वर एक-दूसरे के पीछे दौडते चले। 'हे राम' शब्द बडी करुणा से फूटे और आखें मिच गई।

ध्यान मे युगल चरण देखने का उपक्रम चला। मोहिनी यहा भी धसने का प्रयत्न करने लगी किन्तु तुलसी अब सचेत और सुस्थिर थे। ध्यान युगल चरणो को ही अपने में लाकर सतोष पाएगा। और वह सतोष अन्ततोगत्वा उन्हें मिलने लगा। मन की मुद्रा शान्त हुई। नन्ददास एक विरह भरा पद गाने लगे थे। तुलसी का ध्यान उनके दद भरे स्वर से भग हुआ। वे नन्ददास को भावभीनी दृष्टि से देखने लगे। साक्षात् वेदनामूर्ति बने हुए नन्ददास बड़ी तडप के साथ गा रहे थे।

उनकी आखें मुदी हुई थी और चेहरे पर अपार शान्ति विराज रही थी।

तुलसीदास को लगा कि राम को देखने की ऐसी अनन्य लगन जो मुझे लग जाय तो फिर बेडा ही पार हो जाय। धन्य है नन्ददास की यह प्रीति। धन्य है वह आलबन जिसके सहारे यह प्रीति-बेल चढी।

तुलसी की सराहना की तरग अभी नीची भी नही हुई थी कि सामने का बन्द द्वार खुला। आधे घूघट से ढका एक सुन्दर शालीन मुखडा झलका। उसके हाथ मे भोजन का थाल है। युवती के पीछे उसकी बुढिया सास भी आ रही है। तुलसी समझ गए कि नवयुवती नन्हेमल की तीसरी पत्नी है और नन्ददास की प्रिया है।

युवती ने नन्ददास के पास एक और व्यक्ति को बठे देखा तो ठिठक गई। दानो हाथ थाली म फसे थ। वह अपने घूघट को और गिरा नही सकती थी, हाथ केवल उचक कर फिर बेबसी की हालत मे आ गए। आखो की पुतलियो म एक नई ज्योति और चेहरे पर कसाव आया। झिझकते हुए पैर फिर तेजी मे आगे बढ गए।

नन्ददास आखें मूदे अपने गीत म रमे हुए थे। उन्ह यह होश नहीं था कि उनके सामने उनकी इष्टदेवी आ गई है।

तुलसीदास ने एक बार फिर युवती को देखा। वह सचमुच सुन्दरी थी। उसका सौन्दर्य इस समय वेदना स तपकर और भी निखर उठा था। नन्ददास पर एक दृष्टि डालकर उसने तुलसीदास की ओर एक बार गहरी सतेज दृष्टि से देखा फिर आखें झुका ली। कहा—"पालागन महराज, क्या आप इनके कोई लगते हैं ?"

'हा माई। आप इसे क्षमा करें। दरअसल इसे भक्ति का अचेत उन्माद हुआ है। मेरे भाई को आपके रूप म साक्षात दवीशक्ति के दशन हुए हैं। यह अभी अपनी उपलब्धि को समझ नही पाया है। इसे कृपापूर्वक क्षमा कर दें।"

नन्ददास युवती का स्वर कानो मे पडते ही गाना रोककर उसकी ओर अपलक दृष्टि से देखने लगे थे। उनकी आखो की पुतलिया मे तृप्ति और प्यास दोनो ही झलक रही थी और दोनो ही अथाह थी। रूखे गालो पर आनन्द की काति विराज रही थी। भया ने कहा कि दैवी रूप मे दशन किए हैं। इस भाव सकेत को लेकर नन्ददास सचमुच ही अपनी चितचोर को देवी के रूप म देखने लगे और फिर स्वय ही बडबडा उठे—' भैया ने सच कहा—दवी रूप है। मैं तुमसे कुछ नही मागता भागवान बस यो ही दशन दे दिया करो।

दशन करने की अभिलाष है तो मथुरा जाइए जहा भगवान बसते हैं। यहा आदमी डरते हैं उनकी अपनी समझ अपना मान-सम्मान होता है। युवती के स्वर में अगारे भडक रहे थे। सास ने समझाना चाहा तो और तेज हुई कहा—'नही अम्मां जी इतने दिनो से घुटते घुटते अब मैं पक गई हू। या तो ये भाजन करें और यहा से जाय अभी के अभी चले जाय। नही तो मैं सच कहती हू, यही कटार मार कर आज मैं अपने प्राण तज दूगी।

सास जो पीछे गडुवा लेकर खडी थी घबराकर बोली— न-न बहू ऐसा गजब न करना। तुम्ही समझाओ महाराज! हे भगवान यह तो कोई बडी बुरी गिरह-दसा आई है।"

"बुरी हो या भली पर अम्मा जी, आज या तो यह यहा से जाएंगे या फिर मेरी जान ही जाएगी। अब मैं नही सहूगी। एक नही मानूगी।"

नन्ददास यह सुनकर थरथर कापने लगे, उनकी आखें भर आई अश्रुकपित स्वर मे कहा—'मैंने ऐसा क्या अपराध किया है देवी?"

देवी क्रोध म अबोली ही रही। तुलसीदास ने नन्ददास की बाह पकडकर उठाते हुए कहा—'जो कुछ अपराध अनजाने मे हुआ भी है उसके लिए इस देवी के चरणा म गिरकर क्षमा मागो। मैं इसे अभी ही ले जाऊगा भाई।"

अपनी बाह छुडाकर नन्ददास दोना हाथ जोडकर और धरती पर अपना सिर झुकाकर बोले—'मैं तुमसे बार-बार क्षमा मागता हू। तुम और जो चाहो सो दण्ड मुझे दो पर न तो अपने प्राण दो और और न मुझसे जाने को कहो।"

तुलसीदास ने फिर झुककर नन्ददास का हाथ पकड लिया और कहा—'उठो नन्ददास क्या एक भद्र महिला की आत्महत्या का कारण बनोगे? प्रेम क्या इसी का नाम है? फिर इस देवी के साथ मैं भी प्राण दूगा।"

नन्ददास की बहकी आखें यह धमकिया सुनकर इतने दिनो म पहली बार अपना सधाव पा सकीं। नन्ददास की नवजाग्रत लोक चेतना को यह सारी बाहरी स्थिति अत्यन्त विचित्र लग रही थी। सयत, गम्भीर स्वर म उन्हाने कहा—'तुम सदा सुख से जियो, देवी मैं जाता हू। मेरी चूक क्षमा करो। मेरे भइया मुझे लेने आ गए हैं।"

नन्ददास अपने बायें हाथ का पजा धरती पर टेककर उठने का उपक्रम करने लगे। बुढिया सास बोली—"भोजन करके जाओ महराज। मेरे द्वारे से बामन भूखा जायगा तो मेरा रोया बहुत दुखेगा।"

तुलसी सुनकर एक क्षण चुप रहे, फिर कहा—"अब भोजन का आग्रह न करें। इसे मैं एक बार स्नान कराना चाहता हू।"

'तब भी भोजन की जरूरत पडेगी ही। कई दिनो से खाया नही है इन्होने, आप भी भूखे जाएगे।" युवती के स्वर मे अब शान्ति और सहजता आ गई थी। उसकी आखें बातें करते हुए बराबर नीचे झुकी रही।

तुलसीदास ने नन्ददास की बाह पकडकर अपना डग बढाते हुए कहा—'पडोस के गाव म मेरे एक परिचित रहते हैं। वही इसके स्नान भोजन आदि की व्यवस्था हो जाएगी। आओ नन्ददास भाई। आशीर्वाद दीजिए कि इसे भगवत्भक्ति मिले। राम जी सदा आपका कल्याण करें।"

तुलसीदास अपने गुरुभाई की बाह कसकर थामे हुए आगे बढ़ गए। नन्ददास की काया तुलसी के सहारे जा रही थी, वह स्वय कहा थे इसका पता न था। कुछ डग चलने के बाद नन्ददास खडे हो गए। तुलसी उन्हें देखने लगे। नन्ददास ने अपनी गर्दन युवती की ओर घुमाई फिर बिना उसे देखे ही पलट पड़े। नजरें जो झुकी तो फिर झुकी ही रहीं। तुलसीदास की दृष्टि ही नन्ददास की

सरक्षिका थी।

युवती करुण दृष्टि से उन्हे जाते हुए देखती रही। उसके दोनो हाथो मे अस्वीकृत भोजन का थाल था और आखो मे अयाचित आसू उमड आए थे। × ×

१९

सुनाते हुए बाबा के वर्षों पहले बीते हुए क्षण अपनी अनुभूतियो के अणुओ को बटोर कर स्मृति मे इतने सप्राण हो चुके थे कि उनसे उनका मन अब भी गूज रहा था। वे कुछ क्षण आखें मूदे चित्त को सुस्थिर करने के लिए अपने भीतर निमग्न हो गए। भूत से वतमान म ध्यान को लाते हुए वे बोले— 'भूतकाल के जीवन को देखते हुए मुझे अपनी जवानी म एक अयोध्यावासी सत के मुख से सुनी हुई बात इस समय अचानक ही याद आ गई। हम उन दिनो बहुत दुखी थे। रामघाट पर एक दिन वे हमसे अपने आप ही कहने लगे 'तुलसीदास यह कभी न भूलना कि जो देवमूर्ति मन्दिर मे प्रतिष्ठित होकर लाखो के द्वारा पूजी जाती है वह पहल शिल्पी के हजारो हथौडा की चोटें भी सहती है।"

रामू बोल उठा— पहले ही क्या प्रभु जी इन कलिकाल के नराधमो ने आपको अब तक चन नही लेने दिया। आप पुजते भी जा रहे हैं और हथौडो की मार भी सहते जा रहे हैं। ऐसा अनोखा देवता किसी देश न किसी काल म अब तक नही देखा था।"

बेनीमाधव जी रामू की बात सुनकर गद्‌गद हो गए। रामू की पीठ पर हाथ रखकर वे कुछ कहने ही जा रहे थ कि बाबा मुस्कराकर बोल उठे—' अब वह हथौड मुझे फूला जसे ही लगते हैं। और सच बात तो यह है रामू कि साधक को सिद्ध होकर भी तप से नही चूकना चाहिए। तीथकर महावीर वद्धमान का यह सिद्धान्त सत्य है। रामभद्र परम उदार हैं। निन्दको की कटु आलोचना से प्रतिपल प्रतिछिन मल घुलता ही रहता है। एक जगह पर पीडा मेरे लिए रत्ना वली के समान ही सचेतक बन जाती है। जैसे रत्ना का दाहकम करके मानव धम से उऋण हुआ था वसे ही इस काया के धम से उऋण होकर अपने स्वामी की सेवा मे जाऊगा।"

मौका पाते ही तुलसी-कथा प्रेमी बनीमाधव ने बात को फिर अपने रस मे बहाव देना चाहा। बाबा की बात पूरी होते-न होते बेनीमाधव जी बोल उठे— मैं आपके ववाहिक जीवन की कथाए सुनने को आतुर हो रहा हू गुरू जी।'

बाबा मुस्कराए फिर कहा— मेरा विवाह राजा ने कराया था। वह कथा इन्ही से सुनो। रामू मेरी जाघ की गिल्टी बहुत कष्ट दे रही है। लेप लगा दे बेटा।

रामू तुरन्त ही लेप लाने के लिए उठकर गया। राजा बोले —"भया तुम्हारी यह गिल्टिया हैं तो कमतो डु जमी ही पर इतने बलतोड एव राध भला कसे हो

सकते हैं ? हमें तो कोई और ही रोग लगता है।"

रामू तब तक कोने मे रखी लेप की कटोरी लेकर आ गया और उनके दाहिने घुटने के पास झुककर गिल्टी पर लेप लगाने लगा। बाबा बोले—"तुम्हारा अनुमान सही हो सकता है, राजा। एक बार सोरों में भी हमे ऐसे ही दो गिल्टिया निकली थीं। तब वहा लालमणि वैद्य ने इन्हे वात रोग का परिणाम ही बतलाया था। उन्होंने जाने कौन-सा चूर्ण दिया कि दो ही पुडियों मे मुझे चैन पड गया।"

"तो किसी को सोरों भेजकर लालमणि का पता "

"अरे वह तो मेरे सामने ही वैकुण्ठवासी हो गए थे। वह बूढे थे और बडे भले थे।'

"तो नन्ददास जी को लेकर आप सीधे सोरों ही गए थे ?" बेनीमाधव जी ने पूछा।

"नही, पहले मथुरा गया था। बात यह है कि नन्ददास ने अपनी प्रिया की बात टेक-सी साध ली कि भइया मुझे मथुरा ले चलो। इसपर हम नरा क्या आपत्ति हो सकती थी। वही ले गए।"

राजा बोले— पागल को साथ लेकर चलना भी अपने आप मे बडी कठिन तपस्या होती है। एक बार हमको भी एक पागल को लेकर चित्रकूट से विक्रमपुर तक आना पडा था। हम उस कष्ट को जानते हैं।'

बाबा बोले— 'नही, वैसा कोई विशेष कष्ट नन्ददास ने मुझे नहीं दिया। वे प्राय गुमसुम ही बने रहते थे। मैं जैसा कहता था वैसा वे कर लेते थे। उस स्त्री की फटकार से उनके दीवानेपन को एक करारा झटका लगा था। अजीब स्थिति थी, न इधर मे थे-न उधर म। खर हम लाग मथुरा आ गए। नन्ददास वहा आकर मगन हुए। मुझे गोस्वामी गोकुलनाथ जी के यहा ले गए।"

रामू बोला— उस समय उनकी क्या आयु रही होगी प्रभु जी आप से तो छोटे ही होंगे ?"

'गोस्वामी जी महाराज उस समय नौजवान थे। हमसे आयु मे छोटे थे, पर प्रखर बुद्धि और समर्पित व्यक्तित्वशाली थे। उनसे मिलकर बडा सुख पाया, लेकिन सर्वाधिक सुख तो भक्तवर सूरदास जी के दर्शन पाकर हुआ था।' × × ×

मन्दिर का एक दालान। पत्थर के एक मेहराबोदार दालान में खम्भे से टिके एक छोटी-सी गुदडी बिछाए सूरदास जी बठे हैं। उनका इकतारा दाहिने हाथ की ओर पास ही रखा हुआ है। बाइ ओर उनकी लठिया और लौंग मिश्री की डिबिया रखी है। देह दुबली मुह पोपला, हजामत थोडी-थोडी बढी हुई, बाल सफेद बुर्राक और देह मजे हुए तावे-सी दमकती हुई। उनकी आयु लगभग छियासी सत्तासी वष की होगी। सूरदास अपने उठे हुए दाहिने घुटने पर हाथ की उगलियो-से थपकिया देते हुए किसी भाव म मगन बठे हुए हैं। उस बडे दालान और आगन मे कई सेवक-सेविकाए काम करते दिखलाई दे रहे हैं। उनकी बातें भी चल रही हैं परन्तु सूरदास जी सारे वातावरण से अलिप्त हैं। तुलसी और नन्ददास प्रवेश करते हैं। दोनो ही वयोवृद्ध सत-महाकवि के आगे भूमिष्ठ होकर प्रणाम करते हैं।

सूरदास सजग होते हुए, पूछते हैं—"कौन है भैया ?"

"मैं हूं बाबा रामपुर का नन्ददास !"

"अरे आओ आओ नन्ददास, हमने सुना था कि तुम द्वारिकापुरी के दर्शन करने गए थे ! '

नन्ददास के चेहरे पर एक बार लज्जा की लालिमा झलकी फिर सभलकर उत्तर दिया— हां विचार तो यही था बाबा पर श्रीनाथजी बीच रस्ते से घसीट लाए। और मेरे साथ मेरे एक पूज्य प्रिय और अग्रज गुरभाई पण्डित तुलसी दास जी शास्त्री भी आपके दर्शन करने के लिए पधारे हैं।'

शास्त्री उपाधि सुनकर सूरदास जी झटपट अदब से बैठ गए और हाथ जोड़कर कहा— जै माखनचोर की, शास्त्री जी महाराज ! '

जै माखनचोर की बाबा ! जै सियाराम ! आप मुझे यों हाथ न जोड़ें। मैं आपके बच्चे के समान हूं।

'अरे नहीं भैया विद्या बड़ी चीज है। अब हमारे गोसाईं गोकुलनाथ जी महाराज को देख लो। आयु देखी जाए तो अभी निरे बालक ही हैं।'

वे महात्मा और प्रखर प्रतिभाशाली हैं बड़े बाप के बेटे हैं। मैंने तो बाबा, अपने को पालनेवाली भिखारिन अम्मा से आपके पद सीखकर और उन्हें गा गा कर भीख मांगी है भैया मेरी कबहिं बढ़ेगी चोटी।"

सूरदास अपने पोपले मुह से खिलखिलाकर हंस पड़े, फिर कहा— अरे तुम तो हमारे ही जी की बात कह गए भैया। मैं तरह-तरह से गीत गाकर उस बंसीवाले के द्वारे पर भीख ही मांगता हूं। मेरा जनम इसी में बीत गया।"

नन्ददास बोले— तुलसी भैया बड़े राम भक्त और बड़े अच्छे कवि हैं। संस्कृत और भाषा दोनों ही में कविता करते हैं।"

सूरदास के चेहरे पर आनन्द छा गया, कहा— भला ! तब तो हमे कुछ जरूर सुनाओ भैया।' × × ×

सूरदास की स्मृति से बाबा गद्‌गद थे कहने लगे—' मुझे सूरदास जी के श्रीमुख से उनका एक पद सुनने का सौभाग्य भी मिला था। वाह कैसा रसमय स्वर था उनका !"

(गाकर) अब मैं नाच्यो बहुत गोपाल।
काम क्रोध को पहिर चोलना कंठविषय की माल।

गाते हुए बाबा तन्मय हो गए। यद्यपि उनकी आंखें खुली हुई थीं पर यह लगता था कि वह अपने सामने के दृश्य से अलिप्त हैं। राजा भगत ने बेनीमाधव को सकेत किया, दोनों चुपचाप उठे। रामू भी उनके साथ ही साथ उठा किन्तु द्वार पर आकर ठहर गया कहा— मैं यहीं रहूंगा। पर भगत जी, एक अरदास है, राजापुर की कथा अकेले संत जी को ही न सुनाइएगा।"

राजा भगत और बेनीमाधव जी दोनों ही मुस्कराए। भीतर कोठरी में ध्यान

मग्न बाबा पर एक दृष्टि डालकर बेनीमाधव जी ने कहा—"अभी तो सोरो-प्रसंग भी सुनना है।"

२०

उस रात बाबा की पीड़ा कुछ अधिक बढ़ गई थी। पीठ और बाईं बांह में कुछ नई गिल्टियां उभर आई थीं। उनका तनाव उन्हें कष्ट दे रहा था। बार-बार वे करवट बदलकर कराह उठते थे। रामू दिये के उजाले में उन गिल्टियों पर लेप लगा रहा था। बाबा बोले—"अब हम अधिक दिनों तक इस जर्जर काया में रह नहीं पाएंगे, रामू। इसमें रहने में अब हमें कष्ट हो रहा है। हे राम।"

रामू विचलित हो उठा, कण्ठ भर आया। उसने कहा—"आप इस तरह से हताश होंगे गुरु जी तो हमारी कौन गति होगी?"

"हताश नहीं होता पुत्र, मैं अपना यथार्थ बखान रहा हूं। मेरे मन की नित्य बढ़ती हुई तरुणाई का साथ अब यह शरीर नहीं दे पाता। मेरा काम वेग अति प्रखर रहा था। गार्हस्थ्य जीवन बिताने के बाद फिर से ब्रह्मचर्य व्रत धारण करना ही मेरे लिए अति कठिन चढ़ाई के समान सिद्ध हुआ। काम से सभी राग जागते हैं और उसीसे समस्त विभूतियों का भी उदय होता है। मैंने अपने कामलौह को रामरसायन से सोना बना लिया है, यह सच है, पर शरीर को तो उसके आघात सहने ही पड़ेंगे। (कराह कर) हे राम! बजरंग! कहां हो प्रभु?"

रामू बोला—"मैं वैद्य जी के पास जाऊं प्रभु जी?"

"क्या करोगे। मेरा वैद्य तो हनुमान बली है। मेरे रोम रोम में तनाव बढ़ रहा है। ऐसा लगता है कि अभी और गिल्टियां निकलेंगी। मैं कल्पना करता था कि ऐसा बन जाऊं कि मेरे रोम रोम में राम बस जाएं। उनके अतिरिक्त और कुछ न सोचूं, कुछ न कहूं, कुछ न करूं। पर लौकिक जीवन में रहकर ऐसा संभव नहीं हो सका। राग विराग में पड़ते, लड़ते-जूझते आयु का बहुत-सा भाग नष्ट कर दिया। अब रोयां रोयां अपने आपको दिए गए विफल प्रलोभन से कुण्ठित और क्षुब्ध होकर मुझे यों दण्ड दे रहा है। राम! राम!"

"प्रभु जी, यों तो मैं आपके मर्म को समझने में समर्थ नहीं हूं फिर भी लोक में आपके समान समर्पित जीवन का दूसरा दृष्टान्त नहीं दिखलाई देता। आपके क्रोध, शोक, लोभादि मानवीय विकार भी राम-स्वार्थ ही से जागते हैं, मैं स्वयं साक्षी हूं। फिर आपका यह पछतावा मुझे क्षमा करें प्रभु, स्वयं आपके प्रति अन्याय लगता है। मेरा कलेजा जब अधिक सह न पाया तो कह दिया।" कहते-कहते रामू का कण्ठ भर आया। उसने उनकी बांह पर अपना सिर टिका लिया।

बाबा शांत स्वर में बोले—"अपने संकल्प और कर्म को सदा तौलते रहना मेरा धर्म है। इससे साधु को शक्ति मिलती है। छोड़ो इसे तुम्हें एक विचित्र

संयोग सुनाऊँ रामू। जिन दिनों में लंका काण्ड में लक्ष्मण-शक्ति वाला प्रसंग रच रहा था उन दिनों भी मुझे वातपीड़ा ने बहुत सताया था। मैंने अपनी पीड़ित बाँह से जूझकर श्रीराम के संताप विलाप वाली चौपाइयाँ लिखी थीं। मेरी पीड़ा राम के प्रताप में घुल जाती थी। जितनी देर लिखता उतनी देर बाँह में दरद नहीं होता था। रामू सुनाओ तो बेटा यह प्रसंग। राम रसायन ही मेरी वेदना हरेगा।"

रामू गाने लगा—

उहाँ राम लछिमनहिं निहारी। बोले बचन मनुज अनुसारी॥

रामू के स्वर के सहारे बाबा के बिम्ब सजग हो रहे थे। मूर्च्छित लक्ष्मण का सिर अपनी गोद में रखे हुए श्रीराम विलाप कर रहे हैं। सुग्रीव, अंगद सुषेण वैद्य विभीषण आदि चिन्तामग्न मुद्रा में बैठे हैं। एकाएक हनुमान को पर्वत उठाए आकाश-मार्ग से आते हुए देखकर सबके मुखों पर उल्लास चमक उठता है। और उन मनोबिम्बों का सारा उल्लास सिमटकर बाबा के चेहरे पर आ जाता है। वे प्रार्थना करने लगते हैं—"आओ बजरंगी, मेरी बेर भी ऐसे ही राम संजीवनी बूटी लेकर आओ! धाओ नाथ! अन्तकाल में कष्ट न दो।'

बाबा फिर आँख मूँदकर ध्यानमग्न हो गए। प्राणगुफा में अखण्ड दिया जल रहा है। लौ में राम-कथा की अनेक झलकियाँ झिलमिलाती हैं फिर हृदय में स्थिरता आती है। लक्ष्मण और हनुमान-सेवित श्रीसीताराम मनहर तुलसी के सामने है। गुफा असंख्य मृदंग-वादन से गूँज रही है—राम राम राम। बाबा समाधिस्थ हो जाते हैं।

ब्राह्मवेला में बाबा ने आवाज़ दी— रामू!'

रामू शायद तभी सोया था। बाबा ने दूसरी बार पुकारा। रामू चौंककर जागा। बाबा ने उसे सहारा देकर उठाने को कहा। जब उसने उनका हाथ छुआ तो बोला— 'आपको तो ज्वर हो रहा है प्रभु जी!"

'हाँ, गिल्टियों के कारण है।"

आज आप यदि स्नान न करें तो "

'जब तक शरीर में शक्ति है तब तक अपनी चाकरी से चूकूँ? चल, उठा मुझे।"

रामू हिचका बोला— वैद्य जी मेरे ऊपर बिल्लाएँगे।"

'शाही नौकर नहीं हूँ जो हराम की खाऊँ। जब तक शरीर में उठने की शक्ति रहेगी तब तक राम का यह चाकर अपने कर्त्तव्यों से विमुख न होगा। वैद्य चाहे जो कहें।"

बाबा ने स्नान किया। कसरत भी करनी चाही पर पहली ही डंड लगाते हुए वे गिर पड़े। रामू ने उन्हें उठाकर कहा— 'अब कोठरी में चलिए प्रभु जी सेवक की बात इस समय आपको माननी ही पड़ेगी। वहीं बैठकर ध्यान कीजिए।

बाबा कराहते हुए बोले— अरे हमने सोचा कि व्यायाम करने से शरीर में रक्त-सञ्चार होगा तो यह गिल्टियाँ दबेंगी। राम जी की इच्छा।"

धृष्टता क्षमा हो प्रभु जी, पर मैं समझता हूँ कि गिल्टियों को आपके नियमित व्यायाम के कारण ही "

'धत्तेरे की रामभगतवा, तू भी शिवचरण वद्य की तरह स बोलने लगा। अरे तुलसी के वैद्य रघुनाथ जी हैं। यह मूढ़ मतिमन्द चूंकि हठ के सहारे ही रामचरणानुगामी होता रहा है इसीलिए अंधेरे म चलने के समान इसे एकाध ठोकर बीच-बीच में लग जाती है। उसकी क्या चिंता ?

बाबा को आसन पर बिठाकर रामू फिर घाट पर पडी रह गई बाबा की लगोटी और अगोछे को धोने तथा एक गोता मारकर जल्दी से लौट आने के लिए लपका। राजा भगत और बेनीमाधव जी उस समय घाट की सीढ़ियां उतर रहे थे। रामू पडित के रामजुहार करने पर राजा ने पूछा "भैया कहां हैं ?"

"उन्हें कोठरी मे बिठला के आ रहा हू। ज्वर मे भी नहाने का आग्रह किया फिर गिल्टियो भरी बाह से डड लगाने लगे, सो गिर गए। मैं जल्दी में हू भगत जी एक गोता मारके बाबा के पास पहुचना चाहता हू।" कहकर रामू तेजी से नीचे उतर गया। भगत जी बेनीमाधव से बोले— भैया इतने बडे ज्ञानी और महात्मा हैं पर कभी-कभी बच्चो जैसा हठ करने लगते हैं। क्या कहे ?"

बेनीमाधव जी बोले—' खेल का दीवाना बच्चा कष्ट को महत्त्व नही देता, भगत जी। ऐसा शिशु बनना भी बडा कठिन होता है।"

सवेरे स्नान-पूजादि से निवृत्त होकर बाबा अपने अखाडे के चबूतरे पर बैठते हैं। वही अपने रोग-शोक निवारण के लिए जनता उनके पास आती है। आज उनके न पहुचने पर तथा ज्वर का हाल सुनकर कुछ लडके उनके पास पहुचे। दण्डवत् प्रणाम आदि करने के बाद एक लडके ने पूछा—' कसी तबीयत है बाबा ?"

हसकर बाबा बोले— अच्छे हैं। आओ, हमसे पजा लडाओगे ?'

सब लोग हस पडे एक बोला— अरे ये मगलुआ आपसे हार जाएगा बाबा आपके हजारो बार मना करने पर भी इसने अभी तक गाली बकना नही छोडा ?"

पहला युवक मगल, मित्र की बात सुनकर चिढ गया। उसकी ओर आखें निकालकर देखता हुआ बोला— कौन उल्लू का पट्ठा साला गाली बकता है ?"

कोठरी म उपस्थित सभी लोग फिर हस पडे। बाबा हसत हुए हाथ उठाकर बोले— अरे भाई ये गाली मगल थोडे बक रहा है। इसका कुसस्कार बक रहा है।

मगल झेंपकर खोपडी खुजलाते हुए बोला—"क्या करें बाबा, लाख जतन करते हैं पर मुह से निकल ही जाती है साली।"

एकाध लोग हसने लगे पर मगल ने अपनी बात को स्वर मे नया जोर देकर आगे बढाया, बोला—' आपका यह सारा कष्ट उस दुष्ट रवीदत्त के कारण ही है बाबा जी। वह मणिकर्णिका पर आपको मारने के लिए बडा भारी अनुष्ठान कर रहा है।"

'हा बाबा, मगल ठीक ही कह रहा है। हमने भी कल सुना था। दस-बीस लोग उसकी पीठ पर हैं, रुपिया खरच कर रहे हैं। पर बाकी लोग उन पर थू-थू कर रहे हैं बाबा।"

बाबा हंसे कहा—"भया किसीके करने धरने से कुछ भी नही होता मैं अपने पापों का दण्ड भोग रहा हू।"

मगल की त्योरिया फिर चढ गइ, बोला—"बाबा जब तुम इन साले दुष्टो की बात लेकर अपने को पापी कहते हो तब मेरे रोए रोए मे आग लग जाती है। तुम्हारे विरुद्ध हम तुमसे भी नही सुनेंगे, बताए देते हैं।"

बाबा हसकर चुप हो गए। मगलू गरमाता रहा— इतने बडे महात्मा हैं, आप जरा एक सराप मुह से निकाल देव कि मर ससुरे रवीदत्त भसम हुइ जा। काठ के उल्लू के पट्ठे।' बाबा बीच मे हसकर बोल उठे—"अरे भाई, उसका बाप काठ का नही, हाड मास का था उल्लू भी नही था। वह मेरा सहपाठी था।'

मगल फिर गरमाया। हवा मे मुक्का तानते हुए उसने कहा—' आप न सही पर मैं आज उस साले को उठाकर किसी जलती चिता मे जरूर फेंक आऊगा। मुझसे आपका यह कष्ट देखा नही जा रहा है।"

बाबा गम्भीर हो गए बोले— मगल जा व्यायाम कर मैं इन सत बेनी माधव जी से कुछ आवश्यक बात करना चाहता हू। विश्वास रखो मैं अभी किसी के मारे नही मरूगा। रविदत्त के साथ कोई खिलवाड न करना। उसे अपना मन बहलाने दो। जाओ।" युवको के चले जाने पर बाबा ने राजा भगत से कहा— राजा बेनीमाधव को हमारे राजापुर पहुचने का प्रसग तुम्ही सुनाओ। हम एकात दो पर इसका आशय यह भी नही है कि मेरी सेवा चाहने वाला कोई दीन-दुखी मेरे पास आ नही पाएगा।'

सब लोग उठने लगे तभी बनीमाधव जी बोले— हमने सुना था कि आप कुछ काल तक सोरो मे भी रहे थे। फिर वहा से आपका कसे आना हुआ ? यह प्रश्न भगत जी कदाचित न सुना सकेंगे।'

हा, पर वहा कोई विशेष प्रसग नही घटा। वसे सोरो रम्य स्थान है। भरत खण्ड के समीप सुरसरि के तट पर बसी हुई सस्कार-सम्पन्न पुरी है। फिर हमे वहा सगति भी भली मिल गई थी। हम वहा कथा बाचते अध्यापन करते तथा अपनी साधना म रत रहते थ। केवल एक ही विघ्न पडा। वहा हमारी राम-सेवा का जब थोडा-बहुत माहात्म्य फला तो नन्ददास हमारे राम से अपने श्याम को लडान लगे थे। वे स्वस्थ तो अवश्य हो गए थे पर उनकी श्याम धुन बढ गई थी। उन्होने बडा आदोलन मचाकर अपने गाव का नाम रामपुर मे बदलकर श्यामपुर कर दिया। मैंने सोचा कि मेरे सामने रहने से इनकी कृष्ण भक्ति प्रतिद्वन्द्विता म केवल अखाडिया बनकर ही रह जाएगी। यह अच्छा न होगा। नन्ददास उच्चकोटि के भावुक पुरुष थे। मैं उन्हे और स्वय अपने को भी मार्गच्युत नही करना चाहता था। तभी एक रात हनुमान स्वामी ने स्वप्न म आदेश दिया कि अपनी जन्मभूमि मे जाकर रह। सो चला आया। पहले अयोध्या गया फिर बाराह क्षेत्र म कुछ दिन उसी स्थान पर बिताए जहा नरहरि बाबा की कुटिया थी। मेरे काशी मे अध्ययन करते समय बाबा जी के भक्तो ने वहा एक सीताराम जी का मन्दिर भी बनवा दिया था। फिर घूमते घामते प्रयाग पहुचा और वहा से राजापुर। वह दिन हमारी आखो के सामने ऐसा स्पष्ट भलक रहा है जसे आज अभी ही की बात हो। × × ×

२१

यमुना तट पर एक बड़ी नाव आकर घाट से लगती है। उस पर बैठे हुए यात्री उतरने की हड़बड़ाहट में आ जाते हैं। घाट पर बैठे हुए एक अधेड़ सज्जन अपने दुपट्टे को पंखे की तरह हिलाते हुए आगे बढ़कर नाव के मल्लाह से पूछते हैं—'यह नाव कहां से आई है भैया ?"

'परयागराज से।"

'अरे हमारा माल लाए हो जोराखन साहु का ?"

हां-हां साहु जी ये बोरिया रग्घूमल बटुकपरसाद ने यहां से आप ही के '

ठीक है, ठीक है।" आश्वस्त भाव से साहु जी ने पलटकर सीढ़ियों के ऊपर खड़े अपने नौकर पलटू को चिल्लाकर मजदूरों को भेजने का आदेश दिया। तभी नाव से उतरकर कुछ क्षणों तक इधर-उधर देखने के बाद तुलसी ने अपने पास ही खड़े हुए साहु जी से पूछा— 'यहां किसी साधु-संत के स्थान या किसी धर्मशाला का पता बतलाएंगे साव जी ?

'धरमशाला तो कोई नहीं, बाकी साधू ! लेव, नाम मन में आते ही दिखाई पड़े। अरे भगत जी यहां आओ।"

सीढ़िया उतरते हुए एक बलिष्ठ और तेजस्वी श्याम वर्ण का युवक जोराखन साहु की बात पूरी होते ही बोला—'अरे हम तो आप ही तुम्हारे पास आ रहे हैं। हमारे बिनौले आए कि नहीं ?"

'देखो, अब माल आया है। चार दिनों से रोज निरास लौट जाते थे हम। अबकी तो ऐसा बहुत पड़ा है कि कोई चीज ही नहीं मिल रही है। सीढ़िया उतरते हुए ही राजा भगत की आंखें तुलसीदास की आंखों से जा मिली थीं। दोनों व्यक्ति मानो एक-दूसरे को परख रहे थे और दोनों ही एक-दूसरे के लिए चुम्बक भी बन गए थे। पास आकर राजा ने तुलसीदास को झुककर प्रणाम किया। तब तक साहु जी बोल पड़े— 'अरे भगत जी, यह ब्रह्मचारी जी हमसे साधू का अस्थान पूछ रहे थे। (तुलसीदास से) महराज, वसे म हैं तो गिरिस्त और चार पसे वाले भी हैं—सौ-पचास गायें हैं खेती है। ससुराल का माल भी इन्हीं को मिला है। बाकी हैं यह साधू ही।

राजा की सरल भावना में आंखें डालकर तुलसीदास ने प्रसन्न मुद्रा में कहा—इनकी आंखों म राम झलक रहे हैं। मैं तो देखते ही पहचान गया।"

अपनी प्रशंसा से अति संकुचित होकर राजा भगत हाथ जोड़कर बोले—'मैं तो महराज साधू-संतों का सेवक हूं। आइए मेरी कुटिया म अपनी चरन धूर डालिए।"

तुलसीराम एक डग आगे बढ़ाकर फिर मुड़े और साहु जी से राम राम की। साहु जी अपने गरये रंगे दांतों की बत्तीसी दिखाकर बोले— हे-हे, मैं तो

आपको अपने यहा ही ठहरा लेता पर आपने साधू का अस्थान पूछा "

भगत ने सीढी चढते हुए कहा— ठीक है ठीक है बातो मे कौडी थोडे ही खच होती है साहु जी । मीठी बातो का दान दे देते हो यही क्या कम है !" सीढिया चढते हुए भगत ने तुलसी से पूछा —"कहा से पधारना हुआ महराज ?"

कई वर्षों से तीर्थाटन पर था भाई । पहले काशी म रहा और इस समय सोरो से आ रहा हू । बीच म अयोध्या-सूकरखेत आदि के भी दशन किए ।"

चित्रकूट जाने के लिए इधर आना हुआ है ?"

हा, चित्रकूट के दशन का प्रलोभन तो है ही पर विशेष रूप से मैं अपनी जन्मभूमि के दशन करने आया हू ।

'आपकी जलमभूमी कहा है महराज ?"

यही विक्रमपुर गाव मे ।'

राजा भगत चलते चलते थम गए और चकित दृष्टि से देखकर कहा— 'यहा ?"

'हा भाई पर जन्मते ही यह स्थान मुझसे छूट गया था ।

'आपके पिता का क्या नाम था महराज ? '

'पडित आत्माराम ! '

'अरे तो आप ही हैं जो मूल नछत्र म जन्मे रहे ?"

आपने ठीक पहचाना ।"

तब तो तुम हमारे भैया हो । हमसे एक दिन बडे । हम अहिर हैं नाम है राजा । औ आपसे चार दिन बडे बकरीदी भया हैं । जुलाहे हैं । दस करघे चलते हैं और दर्जी का काम भी करते है । पुराने लोग सब बताते रहे अब कोई नही रहा । पुराना बिक्रमपुर गाव तो हमारे-तुम्हारे जलम के बखत ही उजड गया था । कुछ बरस हुए वो पुरानी बस्ती भी जमना जी की बाढ मे बह गई ।'

बह जाने दो राजा । मेरी जन्मभूमि के पुण्यस्वरूप तुम तो हो ।'

'अरे हम तो सतो की चरनधूल हैं । बाकी भगवान ने तुम्हे यहा खूब भेज दिया । पहले हमारे गाव मे ब्राह्मनो के कई घर थे । अब सब इधर उधर चले गए । ऐसा जी होता है भया कि एक बार यह बस्ती फिर से बस जाय ।'

राजा भगत के वाक्य के अक्षर गिनकर और मन ही मन मे मीन मेख विचार कर तुलसी बोले— तुम्हारी इच्छा अवश्य पूरी होगी भाई । बडे शुभ मुहूत मे यह बात तुम्हारे मन म उत्पन्न हुई है ।"

खेतो के किनारे चलते चलते राजा भगत थमकर आनदचकित मुद्रा म तुलसीदास को देखने लगे—' बस्ती बसेगी तो तुम्हारे नाम पर ही अबकी उसका नाम रक्खा जायगा, तुम्हारा नाम क्या है भया ?"

मेरा नाम तुलसी है पर गाव का नाम राजापुर होगा । तुम इस गाव की आत्मा के रूप मे ही मुझे मिले हो ।'

दो-तीन दिनो मे राजा तुलसी ऐसे घुल मिल गए कि मानो अब तक वे साथ ही साथ रहे हो, तुलसी की ज्ञान भक्ति भरी बातें सुन-सुनकर राजा और उनके कुनबे के लोग बडे ही प्रभावित हुए । राजा बोले— अब तो भया, हम

तुम्हे कही जाने न देंगे। यही जमना जी के किनारे तुम्हारे लिए कुटिया बना देंगे। मजे से कथा बाचना और सुख से रहना।"

"अरे, बहते पानी और रमते जोगी को कौन रोक पाया है भगत ? जन्म-भूमि देखने की लालसा पूरी हो गई, अब चित्रकूट जाऊंगा।"

'चित्रकूट हम तुम्हें ले चलेंगे। चार दिन वहां रहना फिर यहीं आ जाना।"

राजा भगत की यह बात सुनकर तुलसीदास चिन्तामग्न मुद्रा मे फीकी हसी हसकर बोले—"जान पडता है कि मैं जिस स्थिति से बचना चाहता हू उसमे फसे बिना मेरी और कोई गति नही। फिर भी यह देखना है राजा कि हममे से कौन जीतता है।'

तुलसीदास की बात राजा भगत ठीक तरह से समझ न पाए। अचम्भे भरी दृष्टि स पल भर उनको देखते रहने के बाद राजा बोले—"मैं ठीक तरह से यह समझ नही पाया कि तुम काहे से बचना चाहते हो ? साइति घर गिरस्ती मे फसने का डर तुम्हारे मन में है है न ?"

'तुमने ठीक सोचा। असल मे बात यह है राजा कि जन्मकुडली के अनुसार मेरा विवाह यदि होगा तो मुझे दुख सहना पडेगा। यह जानकर ही मैं उससे बचना चाहता हू। यह जीवन रामचरणानुरागी होकर ही बीत जाय बस इससे अधिक मैं और कुछ भी नही चाहता।"

सुनकर भगत हसने लगे, कहा—'साधू के लिए घर गिरिस्ती का सपना बडा डरावना होता है। हम भी ब्याह नही करना चाहते थे भइया। चौदह बरस की उमिर मे हम गाव के कुछ लोगों के साथ चित्रकूट गए थे। वही एक साधू की सगत मे हमारे मन मे बैराग उपजा। यह देखकर हमारे बप्पा और काका ने झटपट हमारा ब्याह कर दिया। पहले तो हम दुखी भए पर अब ऐसा लगता है कि अच्छा ही हुआ, घरैतिन मेरे जप-तप को अपने भगती भाव से बढावा देती है। हम दोना के लिए घर गिरिस्ती के काम भी भगवान की पूजा के समान ही हैं।'

राम करे तुम्हारे सुख म निरन्तर वद्धि हो, पर मुझे यदि इस प्रलोभन से बांधने का जतन करोगे राजा, तो विश्वास मानो, मैं यहा से ऐसा भागूगा कि तुम मुझे फिर कभी खोज भी न पाओगे।

राजा हसने लगे कहा—'सूत न कपास कोरियों से लटठमलटठा। अरे भइया, हम तुम्हारा ब्याव अभी थोडी ही रचा रहे हैं जो तुम भागने की सोचने लगे। हमने तुम्हारी कुटी बनाने के लिए एक ऐसी पवित्र जगह चुनी है कि तुम मगन हो जाओगे। चित्रकूट जाते समय राम जी जिस जगह नाव से उतरे थे और जहा उन्होंने जानकी मइया तथा लछमन जी के साथ बिसराम किया था वही तुम्हारी कुटी छवाऊगा।'

"सच ?"

'हा हमारे गाव के लोग पीढी दर पीढी से यह बात दोहराते चले आए हैं।'

'राजा, तुम मुझे शीघ्र से शीघ्र उस जगह पर ले चलो।'

'आज नही भया। आज हम तुम्हारे लिए कुटी बनाने का लग्गा जरूर

लगा देंगे। दा दिनो म वहा सब कुछ तयार हो जायगा। तेरस से पूनो तक बडी भारी पठ लगती है। हमारा विचार है कि भ्राज-कल मे हम भ्रास-पास के गाव मे मब जगह यह कहला दें कि तेरस से पूनो तक यहा कथा होगी। बस उसी दिन तुम्हें वह जगह दिखा ही नही देंगे वहा तुम्हें वसा भी देंगे। वही कथा बाचना श्रौर भ्रान द से ध्यान रमाना।'

व दो दिन तुलसीदास ने बच्चो जसी भ्रकुलाहट के साथ बिताए। वह स्थान जहा राम जी भाई भ्रौर सहधर्मिणी के साथ उनकी ज मभूमि के गाव मे कुछ देर रहे थे भ्रौर जहा भ्रब वे भ्राठों याम रहगे उनके मन को वैसा ही विरहा कुल बनान लगा जसा मोहिनी ने बनाया था। विरह-साम्य से मोहिनी दो-तीन बार ध्यान मे झलकी, पर तुलसी के राम प्रेम ने उसकी याद को दबा दिया। इस समय राम-बल भ्रधिक था।

राजा भगत ने सचमुच ही बडी सु दर प्रचार-व्यवस्था की थी। काशी जी से एक बडे भारी व्यास जी क पधारने की बात दो ही दिना मे दूर-दूर तक पहुच गई। यह काशी के नाम का महात्म्य ही था कि पैठ के दिन हर बार की भ्रौसत भीड से भ्रधिक लोग विक्रमपुर भ्राए थे। तीसरे पहर बालू पर तुलसी दास की नई बनी हुई कुटी के भ्रागे, खासी भीड बैठी हुई थी।

तुलसीदास ने भ्रपने प्रवचन का भ्रारम्भ इसी जगह श्रीराम-लक्ष्मण भ्रौर जानकी के पधारने की बात ही से भ्रारम्भ किया।

भूमि प्रेम जगाते हुए उ होंने सियाराम लक्ष्मण के भ्रागमन का शब्दचित्र खीचना भ्रारम्भ किया। तीन लोक के नाथ सचराचर के स्वामी भ्रपनी ही लीला के वशीभूत होकर बनवास करने के लिए पधार रहे हैं। भ्रास-पास के गावो म धूम मच गई है कि कोई भ्रनोखे राजकुमार भ्रा रहे है। कसे हैं वे कुमार, कि—

> जलजनयन जलजानन जटा है सिर
> जौवन उमग भ्रग उदित उदार है।
> सावरे गोरे के बीच भामिनी सुदामिनी-सी,
> मुनिपट धार उर फूलनि के हार हैं॥
> करनि सरासन सितीमुख, निषग कटि
> भ्रति ही भ्रनूप काहू भूप के कुमार हैं।
> तुलसी बिलोकि कै तिलोक के तिलक तीनि,
> रहे नरनारि ज्यो चितेरे चित्रसार हैं॥

राम जी उनके सकोच को दूर करके उनसे ऐसे प्रेमपूवक भेंट रहे है कि मानो भ्रपने सगे-सबधियो को भेंट रहे हो। भगवान भ्रौर जगदम्बा के दशन करके लोग निहाल हो रहे ह। उसी समय एक तापस वहा पर भ्राया। वह सबसे पीछे खडा हुभ्रा भ्रपलक दृष्टि से भ्रपने भ्राराध्य दव को देखता रहा। भगवान का ध्यान तापस की भ्रोर गया। उ होने बडे प्रेम से उसको भ्रपने पास बुलाया भ्रौर उसे हृदय से लगाया।

तापस के वेश में तुलसीदास स्वयं अपनी ही कल्पना कर रहे थे। तुलसीदास इस तरह स तन्मय होकर सियाराम के शुभागमन का दर्शन कर रहे थे कि जैसे उनके सामने यह दृश्य प्रत्यक्ष हो और न देख पाने वालों के हित में वे उसे बखान रहे हों। उस दिन का प्रवचन उन्होंने यह कहकर समाप्त किया कि 'राम दीन-बन्धु हैं। जिसका कोई सहारा नहीं है उसके राम सहाय हैं।।" तुलसी के स्वर में इतनी सचाई और वर्णन में इतनी सजीवता थी कि सभा में सम्मोहिनी बंध गई।

चार दिन की पठ में तुलसीदास के प्रवचनों की धूम मच गई। लोगों को यह भी मालूम हो गया कि यह ब्यास जी दरअसल इसी गाव के हैं। वे काशी पढ़ने गए थे। बदरी-केदार-मानसरोवर के दर्शन करके अब यहीं बसने के विचार से आए हैं।

प्रवचन के इन तीन दिनों में आरती में चढ़त भी अच्छी हुई। चांदी और तांबे के टके चढ़े और पठ के अन्तिम दिन तुलसीदास जी की कुटी में अनाज और फल फूलों का भी अच्छा ढेर लग गया। तुलसीदास संतुष्ट हुए। कुछ लोगों को अपनी ज्योतिष विद्या से भी उन्होंने प्रभावित किया। बस फिर तो धूम मच गई। कोई दिन ऐसा नहीं जाता था कि बाबा की कुटी में दस-पांच आदमी न आते हों। तुलसीदास अपनी आय के बारे में तनिक भी चिन्ता नहीं करते थे। इधर आया और उधर किसी दीन-दुखी को दे दिया। राजा को यह रुचिकर न लगा, एक दिन कहा—"भैया आज से जो कौड़ी टके सेवा में चढ़ें उन्हें तुम अपनी रकम मानकर खरच मत करो।"

"ठीक है वह राशि तुम्हारी है।'

मेरी भी नहीं है भैया, वह मेरी आनेवाली भौजी की है।'

तुलसी त्यौरियां चढ़ाकर बोले—"देखो राजा तुम अपने मन से इस प्रकार के विचार निकाल दो। मैं इस माया में नहीं पड़ूंगा।

राजा हंसे कहा—"जमनापार एक बड़े पण्डित जी रहते हैं, वो भी बड़े भारी जातसी हैं। आपके पिता से उनका नेह-नाता रहा। वह हमसे कहते थे रजिया इस लड़के का ब्याह जरूर होगा।

तुलसीदास खिलखिला कर हंस पड़े और बोले—'राजा, साधु जब हंसी में भी ठग बनने का स्वांग करता है तो वह तुरत पकड़ाई में आ जाता है।

यह सुनकर राजा भी हंस पड़े, फिर कहा—"हंसी मसखरी में हम कभी कभी झूठ जरूर बोलते हैं भैया पर हमारी यह बात झूठी नहीं है।

खैर, हम आज से यहां चढ़ने वाला दमड़ी-टका अपने हाथ से न छुएंगे। वह तुम्हारा है तुम्हीं खरच करना। बाकी हमको ब्याह के प्रलोभन में फंसाने का प्रयत्न मत करो।'

राजा बोले—"कमाना तो प्रारब्ध है भैया। जोड़ियां पुरबले जनम के संस्कारों से बनती हैं और हमारे दीनबन्धु पाठक महराज कोई ऐसे-वैसे थोड़े ही हैं, एकदम राज-जोतसी हैं भइया। पक्का घर है। बड़ी खेती-बारी है। एक राजा इन्हें हाथी भी दे रहे थे पर ये बोले कि आप लोग जब मुझे बुलाते हैं तो

अपना हाथी भेज ही देते हैं और बाकी हमारे कोई लडका तो है नही एक बिटिया है। सो हम हाथी बाघ के क्या करेंगे ? बडे भले आदमी हैं।"

बात आई-गई हो गई। उस दिन से तुलसीदास ने पैसा को छूना भी बद कर दिया। यो पसे-टके चार दिनो की पैंठ के समय ही चला करते थे। बीच म राजा भगत की माफत जमनापार के पाठक महराज ने दो वषफल बनाने का काम भी तुलसीदास के पास भेजा था। ताजिक रमल शास्त्र के कुछ ही जान कार थे। उन वषफलो के बनाने की दक्षिणा मे उन्हें ग्यारह स्वणमुद्राए मिलीं। *तुलसीदास के जीवन मे इतनी बडी कमाई पहली ही बार हुई थी।* सोना छूकर प्रसन्न हुए। अशर्फिया अपने हाथ म उठाकर उन्होने प्रसन्न भाव से उन्हें एक हथेली से दूसरी हथेली को दे देने का बार-बार खिलवाड किया। फिर एका एक चौंककर राजा से पूछा— क्यो जी दो यजमाना के यहा से आई हागी तो पाच पाच मोहरें आई होगी फिर यह एक ऊपर से हमारे पास कैसे आ गई ?"

राजा हसे बोले— हम तो समझते रहे भया कि तुम एकदम भोलानाथ हो तुम्हारा ध्यान ही नही जाएगा। यह बढ़ोत्तरी की असर्फी पाठक महराज ने अपनी तरफ से मिलाके भेंट भेजी है। कहने लगे, बडे महराज का नाम लेके, कि उनका लडका सो हमारा लडका। ऐसा बढिया काम करके उसने हमें जिज मानो से जस दिलाया तो हम भी उसे इनाम दे रहे हैं।"

तुलसी प्रसन्न हुए कहा— 'रजिया एक दिन हमे पाठक जी महाराज के पास ले चलो। मैंने अपने पिता को नही देखा तो कम से कम अपने पिता के एक मित्र को ही देख लू।"

अरे वह तो आप ही तुमसे मिलना चाहते हैं। कहने लगे कि हमारी रतना जो लडकी न होकर लडका हुई होती तो मैं उसे तुलसीदास के पास ही सीखने के लिए भेजता। पाठक जी महराज ने अपनी बिटिया को अपनी सारी विद्या दी है भैया। सब लोग रतना रतना कहते हैं उसे। सुना है पूरी पण्डित हुइ गई है।'

तुलसीदास ने हसकर राजा का हाथ पकडकर हल्के से घसीटते हुए कहा— तुम हमसे चाइपना न करो रजिया। हम ब्याह के फेर म नही पडेंगे नही पडेंगे—बताए दते हैं। मैं कह नही सकता राजा कि इस जगह मेरी कुटी छवाकर तुमने मुझे क्या दे दिया है ! जानते हो मैं यहा एक पल के लिए भी अकेला नही रहता। बिना जतन किए अति सहज भाव से मुझे सियाराम जी और लखनलाल के दशन सुलभ होते रहते हैं। मेरे मन पर यहा मल जम ही नही सकता। तुमसे सच कहता हू।

राजा हसकर बोले— तुम ऊची आत्मा हो भइया। बाकी एक बात कहें तुम्हारे आस पास अब ऐसी भगनिनें मडराने लगी हैं जो साधु सन्यासियो का ही सिकार खेलती हैं।'

तुलसीदास खिलखिलाकर हस पड़े और देर तक हसते रहे फिर कहा— 'रजिया नदी-नाला म डूब न जाऊ इसलिए राम जी ने दया करके मुझे बहुत पहले ही समुद्र म डुबाकर फिर उबार लिया था। अब इन लका की निशाचरियो के घेरे म भी मरी आत्मा जनकदुलारी के साथ राम के ध्यान मे ही रमती है।

यह स्त्रिया आती हैं तो मानो मेरे ध्यान को और अधिक एकाग्र करने के लिए ही आती हैं। खैर, अब यह प्रसग छोडो, यह धन तुम्हे सौंप रहा हू पर यह मेरा है। रजिया, इस गाव म सकटमोचन महावीर जी की स्थापना होगी। जब तक वह स्थापित नही होंगे तब तक यहा बस्ती भी नही बसेगी।'

यह सुनकर राजा उल्लास और आनन्द की सजीव मूर्ति बन गए। तुरत तुलसीदास के पैर छूकर कहा—"भैया तुम्हारी यह इच्छा बहुत जल्दी पूरी होगी।"

राजापुर पहुचकर तुलसीदास के जीवन म एक नया मोड आ गया था। यहा उनका अधिकाश समय अपने ध्यान-योग ही मे बीतता था। बाजार के चार दिनो को छोडकर दोपहर के बाद तुलसीदास की कुटी के द्वार बन्द हो जाते और वे एकात साधना मे रम जाते थे। राजा भगत भोजन करने के उपरात बाबा की कुटी के आगे एक पेड के नीचे अपनी चटाई डालकर पड रहा करते थे। कुटी का द्वार बद हो जाने के बाद वे न तो स्वय ही भीतर जाते और न किसीको भीतर जाने देते थे। कुछ राजा भगत के इस प्रतिबन्ध के कारण और विशेष रूप से तुलसीदास की प्रवचन-कला तथा आकर्षक व्यक्तित्व के कारण आसपास के क्षेत्रो मे उनकी महिमा बहुत बढ गई थी। स्त्रिया भी उनकी कथा सुनने तथा उनसे अपने दुख-सुख निवेदन करने के लिए आया ही करती थी।

हाजीपुर की चम्मो सहुवाइन तुलसीदास शास्त्री पर बेपनाह रीझ उठी थी। वह पहली बार पैठ मे उनका प्रवचन होने पर आई थी। फिर जब-तब आने लगी। उसकी एक आख ऐंचीतानी थी। काया भी भगवान की दया से घी के कुप्पे के समान थी। यो रग गोरा और चेहरे का नक्शा एक हद तक सुदर और आकर्षक भी था। भरी जवानी में चार वर्ष पहले विधवा हो गई पर उछलते अरमानो और पैसे की गर्मी ने उसे कभी वैधव्य अनुभव न करने दिया। अपनी तेलघानी चलाती, खेतों मे काम कराती और लोक-व्यवहार के सारे काम मर्दों की तरह बेझिझक होकर स्वय ही कर लेती थी। जब से तुलसी पण्डित की तेजवान सूरत और गोरी-चिट्टी कसरती देह पर उसकी डेढ आख गडी है तब से सहुवाइन को हाजीपुर में रहना तक अखरता है। पहले तो हफ्ते म एक बार और फिर तो दो-दो तीन-तीन बार वह विक्रमपुर आने लगी। जब आती तब घी, अनाज, तेल आदि कुछ-न कुछ साथ लेकर ही आती थी। वह सदा इस जतन मे रहती कि जहा तक बने तुलसी पण्डित से अकेले म कथा सुने या बातें करे। वह उन्हे ऐसी रसीली दृष्टि से टकटकी बाधकर देखती कि तुलसीदास शास्त्री के मन का सारा रस ही सूख जाता था। कभी-कभी मौका पाकर चरण छूने के बहाने उसके हाथ बहककर घुटना के ऊपर जाघ तक पहुच जाते और तुलसी को उलझन होने लगती थी उन्होंने चम्मो सहुवाइन को कई बार इशारो म समझाया, उसे अपने से दूर रखने का जतन भी किया या एक बार झिडक तक दिया पर सहुवाइन का प्रेम उसको आख की तरह ही ऐंचाताना था। तुलसी जितना ही उससे खिंचते थे वह उतनी ही उनके प्रति बावली होकर खिंचती चली जाती थी।

चम्मो सहुवाइन के समान ही एक राजकुवरी भी तुलसी के प्रति आकृष्ट हो

गई थी। वह भी विधवा थी, अपने मके मे ही रहती थी किन्तु अभी तक किसी पर पुरुष के लगाव से उसका तन-मन अशुद्ध नही हुआ था। देखने मे भी बुरी न थी। दो एक बार ऐसा सयोग हुआ कि चम्मो सहुवाइन की उपस्थिति मे ही राजकुवरी भी अपनी भावनाओ का कचनथाल सजोए हुए आई। चम्मो के प्रेमपाश से सताया हुआ तुलसी का मन ऐसे मौकों पर सहज सुख के साथ राजकुवरी को देखने लगा। और एक दिन तुलसी को यह लगा कि उनका सहज आनन्द राज कुमारी के लिए कुछ और अर्थ रखता है, और वह अर्थ तुलसी के मन मे अनर्थ करता है। नहीं, अब प्रपच म कदापि नहीं पड़ूगा। मोहिनी, राजकुवरी एँचीतानी—आकर्षण विकर्षण, ऊहापोह और उससे मुक्ति पाने के लिए ध्यान-योग की कठिन साधना मे तुलसी के दिन गुजरने लगे।

राजा भगत चम्मो और राजकुवरी के व्यवहार को ध्यान से देख रहे थे। एक दिन सहुवाइन स उनकी कहा-सुनी भी हो गई। राजा ने अन्त मे उसे डण्डे मारने की धमकी देकर भगा दिया। इस बीच चिल्लाहट से तुलसीदास का ध्यान भग हुआ, द्वार खोलकर उन्होंने पूछा—"क्या हुआ रजिया ?"

राजा भगत ने कहा—'जब तक भौजी घर म न आएगी तब तक मुझे तुम्हारी इच्छा के लिए ऐसियो से लडाई झगडे भी मोल लेने पडेंगे।"

तुलसी हसे, कहा—भाई तुम्हारी भौजी तो मुझे इस कुटी मे आती दिखलाई नही देती और रही चौकीदारी की बात सो तुमने यह बेकार की चिंता ओढ रखी है। नदिया पहाड को बहा नही सकती राजा।'

"हा पर धीरे धीरे उसे काटती जरूर हैं भइया। हम तो कहते हैं कि न हम तुम्हारी चौकीदारी करें न तुम्हें ही खुद अपनी चौकीदारी करनी पडे। भौजी आ जाएगी तो सब ठीक हो जाएगा।'

तुलसी बोले—'एक ओर तो विलासिनी स्त्रिया मुझे तग करती हैं और दूसरी ओर तुम्हारी यह 'भौजी भौजी' की रट पीछा नहीं छोडती। मैं यहा से चला जाऊगा, राजा।'

राजा हसे बोले—अब यहा से तुम्हारा निकलकर जाना सरल नही है भइया। महराज ने हमसे कह दिया है कि तुम्हारा ब्याह अवश्य होगा। देखो न, ब्याह की बात जब से उठी उठी है तभी से तुम्हारे पास कितना काम आने लगा है।

यह सच था कि तुलसी पण्डित को पाठक जी के कारण ही पहले-पहल ज्योतिष-सम्बन्धी काम मिला। फिर तो बादा से लेकर चित्रकूट तक राजे रजवाडे और साहूकारो म वे प्राय बुलाए जाते थ। कथा और प्रवचन आदि क अलावा उनकी ज्योतिष विद्या तथा साहित्य पाण्डित्य की ख्याति भी फैली हुई थी। मान के साथ ही साथ धन भी धीरे धीरे बढन लगा था। आमदनी अच्छी होने लगी थी। वह सारा रुपया-पसा राजा के पास ही रहता था। उस दिन तुलसीदास राजा की बात को सहसा काट न सके। उनके मन का सघर्ष इस स्थिति पर पहुच गया था कि वे विवाह का प्रस्ताव हल्के-फुलके ढग से टाल नही सकते थे।

सकटमोचन महावीर जी की स्थापना का आयोजन जोर शोर से होने लगा।

मूर्ति की प्राणप्रतिष्ठा और हवन आदि कराने के लिए पण्डित मण्डली का चयन करने की बात उठी। राजा बोले— 'तुम हमारे साथ पाठक महराज के यहा चलो।"

तुलसी बोले—'तुम्हारी चालें मुझपर सफल नहीं होगी रजिया।"

राजा बोले— अरे हमारी होय चाहे न होय पर राम जी जो चाल चलेंगे उससे बचना तो तुम्हारे लिए भी कठिन होगा। खैर, ब्याह की बात करने के लिए मैं तुम्हें वहा नहीं ले जाऊगा, पर पडितों के सबध म सलाह-सूत लेने के लिए तुम्हें पाठक महराज से मिलना ही चाहिए।"

तुलसी पण्डित ने राजा भगत की बात मान ली।

पाठक जी ने तुलसीदास का बडा सत्कार किया। तुलसी पण्डित भी उनके सत्कार से बहुत सुखी हुए।

पाठक जी बोले—' आपको देखकर मुझे आपके पिता की याद आ गई। पहली बार जब मैंने आपको कथा सुनाते हुए देखा तो लगा कि पण्डित आत्माराम जी बैठे हैं। तभी तो मैंने भगत से आपके विषय में पूछताछ की थी।"

तुलसीदास गद्गद होकर बोले—"स्व० पिताजी के सम्बन्ध मे कुछ बतलाने वाले आप पहले व्यक्ति हैं। ऐसा लगता है कि जसे मैं उन्हीं से मिल रहा हू।"

'वे मुझसे साल-सवा साल बडे थे। अभागे थे बेचारे, अन्यथा उनके समान ज्योतिषी इस क्षत्र मे दूसरा कोई न था। अपने यजमानों की जन्म-पत्रिकाए आपके पिता से बनवाकर कई पण्डित पण्डितराज बनकर पुज गए और वे बेचारे राम-राम।"

'मैं भी अभागा ही हू। अपने पिता के साथ यहा मेरा भी साम्य है, मैं कदाचित् अधिक ही अभागा हू। मेरा जन्म अभुक्तमूल नक्षत्र में हुआ था।" तुलसीदास ने इस विचार से कहा कि पाठक जी यह सुनकर उनसे अपनी कन्या का विवाह करने की बात अपने मन से उतार देंगे, किन्तु पाठक जी हसकर बोले—"आयुष्मन् आपकी कुण्डली मैंने भी बनाई थी। अभुक्तमूल नक्षत्र मे जन्मे बालक की ग्रह-दशा पर विचार करने का लोभ भला कौन ज्योतिषी छोड सकता था। मैं समझता हू कि इस क्षेत्र के तीन चार पण्डितों के पास आपका टेवा अवश्य मिल जाएगा।'

तुलसी बोले— 'तब तो आप मेरे सम्बन्ध में सभी कुछ विचार कर चुके होंगे। मैंने स्वय अपनी कुण्डली पर कभी विचार नहीं किया। केवल पार्वती अम्मा के मुख से यह सुना भर था कि मेरे ग्रह-नक्षत्र विचारकर, मुझे मातृ पितृ घाती और महा अभागा जानकर ही पिताजी ने मुझे घर से निकाला था।"

पाठक जी बोले—' आपके जन्म के समय आपके गाव पर घोर विपत्ति आई हुई थी। आपके पिताजी अपने बहनोई की धोखेबाजी के कारण उस समय अत्यन्त त्रस्त थे, उन्होंने कदाचित् मूढमरप से आपकी कुण्डली पर विचार नही किया था।"

"आप बडे हैं। मेरे पिता के परिचितो म मे हैं। मैं आपकी बात काटने की धृष्टता नहीं कर रहा, फिर भी अपने अब तक के जीवन को देखते हुए स्वय मुझे

भी मानना पड़ता है कि मैं महा अभागा हूं।"

'नहीं बेटा, भाग्य का चमत्कार केवल लौकिक स्तर पर ही नहीं दिखलाई देता। मेरी धारणा है कि आपके समान परम भाग्यशाली व्यक्ति जगत में कदाचित् ही कोई हो। जो सिद्धि किसीको नहीं मिलती वह आपके लिए सहज सुलभ होगी। अभी आपने अपने जीवन में देखा ही क्या है। खैर, इस सम्बन्ध में हम लोग फिर कभी बातें करेंगे। आपके द्वारा मारुति मन्दिर की स्थापना का विचार अत्यन्त सराहनीय है। आप चिन्ता न करें, सब प्रबन्ध हो जाएगा।"

पाठक जी के द्वारा हनुमान जी की प्रतिष्ठापना का भार उठाने पर उत्सव सचमुच ही बड़ी धूमधाम से हुआ। अनेक कंगलों ने भोजन पाया, अनेक ब्राह्मणों को भूयसी दक्षिणा मिली, ब्रह्मभोज हुआ, तुलसीदास का प्रवचन भी हुआ। उस दिन उनकी प्रवचन कला ने अपने सहज उल्लास में ऐसा चमत्कार प्रकट किया कि चित्रकूट, बादा आदि के बड़े-बड़े सेठ-साहूकार और पण्डितगण उनकी प्रशंसा करने लगे। पाठक जी बेहद प्रसन्न थे। सायंकाल के समय जब वे जाने लगे तो तुलसीदास ने कहा—'आपने तो अभी तक भोजन भी नहीं किया। पहले प्रसाद ग्रहण कर लीजिए तब जाइएगा।"

पाठक जी मुस्कराकर बोले— मेरे कई यजमानों ने मुझसे यहां पर एक पक्की हाट और बस्ती बसाने की बात कही है। बस्ती फिर से बस जाए तो कभी भोजन करने भी आ जाऊंगा। अभी जल्दी क्या है।" इस बात की आड़ में छिपी पाठक जी की बात को तुलसीदास समझ न पाए। उन्होंने फिर आग्रह किया— मुझे अपार कष्ट होगा '

बेटा, मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि इस प्रसंग को यहीं तक रहने दें। मैं एक और प्रार्थना भी करना चाहता हूं।'

आप मेरे पिता समान हैं कृपया मुझे लज्जित करनेवाले शब्दों का प्रयोग न करें।'

पाठक जी हंसे तुलसीदास की पीठ पर हाथ रखकर उन्होंने कहा— अच्छा मैं तुम्हारी ही बात रखूंगा। तुमसे मुझे यह कहना है कि मेरे गांव में श्रीमद् वाल्मीकीय रामायण बांचो।"

'आपकी आज्ञा का निश्चय ही पालन करूंगा। आप जब भी मुझे आज्ञा देंगे, मैं आ जाऊंगा।"

२२

संकटमोचन महावीर की स्थापना के उपरांत शीघ्र ही पुराने विक्रमपुर के पास एक नया बाजार बनने लगा। राजा बहुत प्रसन्न थे। अपने उत्साह में वे अपना बहुत-सा समय नये बनते हुए बाजार में ही बिताने लगे। विधवा राजकुंवरी ने तब प्रायः नित्य ही दोपहर के बाद तुलसीदास की कुटी में आना आरम्भ कर

दिया। वह अपने लिए भी एक मकान बनवा रही थी। वह आकर तुलसीदास के चरणों में अपना मस्तक झुकाती और फिर उनके कक्ष से अलग रसोईघर की आड़ में बैठ जाया करती थी। तुलसीदास के ध्यान में इससे व्याघात पड़ने लगा। सियाराम का बिम्ब उनके ध्यान-पट से मिट मिट जाता था। राजकुंवरी के सुंदर-सलोने-श्याम मुख की छवि उनकी आंखों में बार-बार आने लगी। आंखों में राजकुंवरी और कानों में राम राम की गूंज उनके मन में परस्पर विरोधी तरंगें उठाने लगी। तुलसीदास इससे त्रस्त और भयभीत हो गए। वे अब मोहिनी के समान किसी स्त्री के ध्यान में अपना जीवन नष्ट नहीं करना चाहते थे। भक्तिरस और यौवन की तृष्णा उनके मन में फिर उथल-पुथल मचाने लगी।

एक रात स्वप्न में उन्होंने देखा कि वह माला जप रहे हैं और मोहिनीबाई राजकुंवरी का हाथ पकड़े मुस्कराती हुई आती है। माला थम जाती है, मोह आंखों में चंचल गति करता है। मोहिनी कहती है—"इसे तुम्हें सौंपती हूं।"

तुलसी एक बार चाहत-भरी नजरों से उन्हें देखते हैं। दोनों सुंदरियां मुस्करा रही हैं। वे मूर्तिमान प्रलोभन बनी हुई उन्हें ताक रही हैं। मोहिनी कुंवरी का हाथ पकड़कर उनकी ओर बढ़ाती है। तुलसी की तृष्णामग्न आंखें उन्हें विशेषरूप से राजकुंवरी को अपलक ताक रही हैं। तभी न जाने कहां से चम्मो सहुवाइन भी वहां पहुंच गई। वह भी भंगी आंखों में अपनी चाहत का सत निचोड़कर उन्हें देख रही है। रूप कुरूप से बचे एक ही लालच को सामने देखकर तुलसी के मन का सौंदर्य बोध बिखर जाता है। शरीर हिल उठता है। आंखें खुल जाती हैं। तुलसी राम कहते हुए उठ बैठते हैं। कुछ पल साथ बैठे रहते हैं फिर आंखें भर आती हैं। करुण स्वर में आप ही आप कह उठते हैं—'बजरंगबली मैंने ऐसा क्या पाप किया है जो यह विघ्न-बाधाएं अभी तक मेरा पीछा नहीं छोड़तीं?'

दिन का तीन चौथाई भाग आत्म-मंथन में ही बीत गया। सुबह नित्य नियमों में भी स्त्रियां उनके कल्पना-लोक में बार-बार घुसकर उनके मन को अपराध भावना से जड़ीभूत कर देती थीं। राम का ध्यान न सधा तो तड़पकर बजरंगबली से प्रार्थना करने लगे—'हे अंजनीकुमार मेरी बाधाएं हरो, मैं कुछ नहीं चाहता, केवल राम चरणों में मेरी प्रीति को स्थिर कर दो। मैं मोहरूपी शक्ति से घायल और मूर्च्छित हो गया हूं मुझे राम-संजीवनी से जिला दो प्रभु। मेरी लाज रखो।"

उस दिन घाट पर प्रवचन करने में भी उनका ध्यान एकाग्र न हो पाया। तुलसीदास अपने भक्तों को जब राम के चरणों में अमल प्रीति रखने का उपदेश दे रहे थे तब उनकी आंखें सभास्थल में बैठी राजकुंवरी की ओर बरबस ही चली गईं। तुलसीदास का मन अपनी ही अपराधी वृत्ति से बौखला उठा। फिर उन्होंने व्याख्यान को बढ़ाने का बहुत प्रयत्न किया परन्तु उनका मन इस समय तक बहुत बिखर चुका था। अपनी अस्वस्थता का बहाना साधकर उन्होंने उस दिन शीघ्र ही अपना प्रवचन समाप्त कर दिया। कुछ भक्तों ने उनके मुख से अस्वस्थता की बात सुनकर उनके उतरे हुए चेहरे पर विशेष ध्यान दिया। तुलसीदास के प्रवचनों पर मुग्ध जनसमुदाय को आज उनकी कथा में रस नहीं मिला था वे श्री ब्रह्मचारी महाराज के स्वास्थ्य के सम्बन्ध में चिन्ता करने लगे। वैद्य को बिठलाने

की बात भी कई लोगो ने तुलसीदास से कही, परन्तु वे यह कहकर अपनी कुटी के भीतर चले गए कि राम स्वयं ही मेरा उपचार करेंगे।

सन्नाटा हो गया। तुलसी बन्द कुटी म आसन पर बैठ ध्यानमग्न होकर माला जप रहे हैं। उनके कानों की रामगूंज म टक-टक की आवाज व्याघात डालती है। ध्यान का सिमटा हुआ बिन्दु टक-टक की ध्वनि के साथ फैलने लगता है। उनके चेहरे पर कसाव आ जाता है। वे अपनी पूरी अंतर्शक्ति के साथ इस व्याघात के विरुद्ध मोर्चा बाधकर जप मे एकाग्र हुए। फिर टक-टक फिर चिढ चिढाहट—टक-टक टक-टक। क्रोध से आखें खुल गइ। मूदकर फिर अपने-आपको घात करके ध्यानमग्न होने का प्रयत्न करते हैं पर टक-टक टक-टक होती ही गई।

तुलसी आसन छोडकर उठे द्वार खोला। सामने ही राजकुवरी की आखों का प्यासा सागर लहरा रहा था। तुलसीदास उसे देखकर बोले—"बठने आई हैं ? बैठिए मैं यहा से जाता हू।" कहकर तुलसीदास कुटी का पूरा द्वार खोल कर बाहर निकलने लग।

राजकुवरी ने गिडगिडाकर पूछा—'आप कहा जाते हैं ?"

'जहा मेरे भक्तिभाव को आपके काम प्रलोभन न सता सकें। आप धनी हैं, धन से सब कुछ खरीद सकती हैं। आपकी इच्छाओ का पालन करने वाले अनेक पुरुष आपको मिल जाएगे। कृपाकर मुझे शातिपूर्वक राम चरणों मे लीन होने दीजिए।" सारी बातें एक सास में कहकर तुलसीदास ने फिर अपनी कुटी मे द्वार बन्द कर लिए।

राजकुवरी तुलसीदास के क्रोध से आतकित हो गई। बन्द कुटी के द्वार को वह कुछ क्षणों तक स्तब्ध खडी देखती रही। उसकी दो दासिया भी पीछे खडी थीं। एक ने मुह बनाकर कहा—"अजी कुवरी जू, छोडिए न इस साधू का मोह, इसे अपनी सुन्दरताई पर घमण्ड है। बडी मक्ती छाटता है। अरे हम इससे अच्छा-सुन्दर साधू आपके लिए खोजकर ले आवेंगी। किसी दिन यह निगोडा अगर जोर से आपको डाट देगा तो किरकिरी हो जायगी।" राजकुवरी की आखें कटोरियो जैसी भरी हुई थी और तुलसीदास अपनी कुटी मे पिंजरबद्ध सिंह की भाति चक्कर लगा रहे थे।

तीसरे पहर राजा भगत आए। कुटी का बास खटखटाया। जब उत्तर न मिला तो पुकारा—'भैया!"

'हा राजा आए। तन्द्रा में लेटे हुए तुलसीदास ने राजा की आवाज सुन कर तुरन्त उत्तर दिया और उठकर कुटी का द्वार खोला।

'आज क्या बात है भइया कि दिन मे सो गए ? तबीयत तो ठीक है ?"

'हा तन ठीक पर मन बहुत अस्वस्थ है। आज तुम कहा चले गए थे दिन मे एक बार भी नहीं दिखलाई दिए ?"

'उस पार चला गया था। पाठक महराज का बुलावा आया तो मैं घाट पर ही खडा था। सुनते ही नाव से चला गया। इसीसे भेंट न हो पाई। अबकी सोमवार से तुम्हारी कथा वहा होगी भइया। बडे महराज ने बडा परबन्ध किया है।"

"अब यहीं नहीं जाऊंगा, राजा।"

"क्यों ?"

'मैं नारी के आकर्षण से दूर रहना चाहता हूं। पाठक जी मुझे गृहस्थी के बन्धन में बांधना चाहते हैं। मैं नहीं बंधूंगा—नहीं बंधूंगा।"

राजा भगत शांतभाव से उनका चेहरा देखते रहे। जब वह चुप हो गए और कुछ देर तक वैसे ही टहलते रहे तो राजा ने कहा—"तन की अपनी कुछ चाहें होती हैं भइया। भूखा मगर परोसी हुई थाली छोड़कर जायगा तो भूख के मारे कहीं-न कहीं मुंह मारेगा ही।"

'इसी बात की तो परीक्षा लेना चाहता हूं। राम-कृपा से मैं उस आकर्षण से मुक्त रहूंगा जिससे सारा संसार बंधता है।" तुलसी के स्वर में अहंकार बोल रहा था। यह उत्तर वह केवल सामने खड़े राजा भगत ही को नहीं वरन् अपनी मनबसी दुर्बलता को भी दे रहे थे।

राजा भगत कुछ देर चुप रहे, फिर कहा—"तुम्हारे ही दम पर तो मैं यह हार बसाने के काम में कूदा। बड़े महराज ने लोगों को समझा-बुझाकर यहां पूंजी लगवाई। उनके बुलावे पर तुम कथा बांचने भी न जाओगे तो भला बताओ, हम कहीं मुंह दिखाने जोग रह जायगे!"

तुलसी पण्डित विचारमग्न हो गए, कहा—'हम कथा सुनाने जाएंगे। वह हमारी जीविका है और फिर वे हमारे पिता-समान हैं। किन्तु मैं तुम्हें चेताए देता हूं राजा, विवाह के बन्धन में नहीं बंधूंगा, चाहे वे बुरा मानें या भला।"

मन्द-मन्द मुस्कराते हुए राजा ने कहा—'अच्छा यह बात हमने मान ली। सुन्दर देह, मनोहर रूप और सपुक्कड़ी राह में राम जी की दया से रसीली भगतिनों की कमी भी नहीं है, ऐसे ही रोज वो तुम्हें सताएंगी और तुम यों ही तपा करोगे। राम जी के लिए तपने का तुम्हारा सभय यह ससुरिया खाया करेंगी। हमारा क्या है!"

तुलसीदास की आंखों की तपन मिटी, उनमें स्निग्धता आई, मुस्कराकर पूछा—'क्या तुम्हें मेरे आज तक के संकटों का पता है ?"

"अरे हम ही नहीं, सब जानते हैं। तुम्हारा गुन गाते हैं और तुम्हारी सिधाई पर हंसते भी हैं।"

तुलसी को लगा कि उनका भीतर-बाहर सब कुछ शीशे की तरह साफ है, वह अपने समाज में सराहे जाते हैं। पिछली रात और सारा दिन सतत् संघर्ष रत रहनेवाले मन को ठंडक पहुंची। 'जनता साक्षी है मैं सच्चा हूं'—इस विचार के उदय होने से मन जड़ीभूत अपराध भावना के तनाव से मुक्त हुआ, पर अपनी इस स्थिति पर जग-हसाई होने की बात उन्हें न सुहाई। बोले—'इसमें हंसने की क्या बात है ?'

'तुम्हारी सिधाई। बुरा न मानना भैया, हम ऐसी-ऐसियों को अपने से कोस भर दूर झटककर फेंक चुके हैं, और तुम ठहरे देवता मनई, जैसे तुम इन्हें समझाते होगे उससे तो यह और उमग में बढ़ती होंगी।"

तुलसी चुप। राजा जो कुछ कह रहे थे, सब सच था। तुलसी के आगे एक

एक बात स्पष्ट थी। तुलसी ने जब इन स्त्रियों का अनदेखा किया तो उन्होंने जान-बूझकर अपने को दिखलाने का प्रयत्न किया। ये कतराने लगे तो वे और घेरने लगी। चम्मो के तरीके फूहड थे उसने दो-तीन बार तुलसी से मीठी कडवी झिडकियां पाइं। राजकुंवरी शालीन है, संयत ढंग से घेराव करती है। उसकी शालीनता ने कही पर तुलसी के मन को प्रभावित भी किया है और इसी छोटे-से धरातल पर कुंवरी का श्याम-सलोना मुखड़ा अब अपनी आकर्षणी मीनार खडी करके तुलसी के भक्ति भाव को हलाकान कर रहा है। तुलसी के इस मौन को लखकर राजा ने हसते हुए कहा—"खैर अब चिन्ता न करो भैया। कथा बाचने के लिए तुम जब सात-आठ रोज उधर रहोगे न, तब हम तुम्हारे इन तपस्या-कटकों को तुम्हारे रस्ते से हटा देंगे।'

सुनकर तुलसी भी हसे, कहा—'हां, इधर की खाइया पाट दोगे क्योंकि उधर तुमने हमार लिए कुआ खोद रखा है।" तुलसीदास अपने भीतरवाला वचारिक बवण्डर रोक नही पा रहे थे। राम और रमणी दोनों ही मन पर ऐसे छाए हुए थे कि वे अपनी वास्तविक इच्छा को समझने म असमर्थ थे। उनकी बात के उत्तर मे राजा ने मुस्कराकर कहा—'कुआ नही समुद्र कहो समुद्र। रतन और कहा मिलेंगे ?'

रविवार के दिन तुलसीदास को अपने साथ लिवा जाने के लिए पाठक जी स्वय आ गए। तुलसीदास भीतर से चिडचिडा गए पर बाहरी तौर से अपने को सयत रखकर उन्होंने केवल इतना ही कहा—'कल दोपहर म मैं स्वय ही आपके यहा पहुच जाता। आपने बेकार ही कष्ट किया।"

'एक तो कल डेढ़ पहर तक मुहूर्त अच्छे नही हैं। दूसरे आज हमारे यहा दो ज्योतिषाचार्य आने वाले हैं। हमने सोचा कि आप कदाचित् उस समाज म अपने आपको सुखी अनुभव करेंगे। यहा आसपास के पण्डित समाज से आपका जितना परिचय होता चले उतना ही अच्छा है। आपके पिता का नाम लोग अभी भूले नही हैं।'

तुलसी ना नही कह सकते थे। यद्यपि उनके मन का ऊहापोह कुछ अधिक बढ गया था। वे अपनी ज्योतिष विद्या से भी यह जानते थे कि उनका विवाह होगा। किन्तु वे यह चाहते नही थे। स्त्री की भूख एक रहस्य बनकर उन्हें लुभा अवश्य रही थी किन्तु राम भक्त कहलाना और मेघा भगत के समान जनसमाज मे श्रद्धा का पात्र बनना ही उन्हें अभीष्ट था। वे अपने भक्ति के उत्साह और काम की भूख के परस्पर विरोधी वातचक्रों म नाच रहे थे और अपने सहज धरातल से उखडे हुए थे। मानसिक अनिश्चय के कारण तुलसीदास पाठक जी के साथ जाना नही चाहते थे किन्तु मना करने का नैतिक साहस भी उनके भीतर न था।

दीनबन्धु पाठक की अवाई का समाचार सुनकर राजा भगत भी आ पहुंचे। बातों के बीच तुलसी उन्हें कनखी से देखते कि मानो सारा षड्यन्त्र उन्हीं का रचा हुआ हो और राजा भगत की यह स्थिति थी कि जब-जब उनकी दृष्टि अपने भैया के मुख पर जाती तब-तब वे मुस्कराए बिना नहीं रह पाते थे। राजा दोनों को घाट तक पहुंचाने आए। नाव पर बैठने से पहले तुलसीदास ने राजा के कान

ने कहा—"तुमने आखिर मुझे बलिदान का बकरा बना ही दिया न ! पर देवता, मैं भी तुम्हारे चक्रव्यूह को भेदकर कैसे बाहर निकलता हूं।'

राजा भगत मुस्कराए, फिर कहा—'तुम्हारी तुम जानो भैया बाकी हमने तुम्हारी यह कुटिया वाली जमीन कल बकरीदी भया से खरीद ली है।" तुलसीदास का चेहरा आनन्द से खिल उठा, बोले—'यह तुमने बहुत ही अच्छा किया, राजा। मैं परम प्रसन्न हुआ।'

नाव सवारियों से भर चुकी थी और जाने के लिए तैयार खड़ी थी। पाठक जी तुलसीदास की प्रतीक्षा कर रहे थे। जब दान की बात समाप्त होकर दोनों जोर-जोर से बतियाने लगे तब पाठक जी के कानों में भी उनकी बातें पड़ने लगी थीं। सुनकर बोले— यह जमीन बकरीदी की रही राजा ?"

'हां, महराज। अब उस हिस्से में हमने कई ब्राह्मन पण्डितों को घर बसाने के लिए राजी कर लिया है। जमीनें बिक रही थीं तो हमने इनके लिए भी ले ली है। आप अच्छा सा महूरत निकाल देव तो हम इनके घर की नींव भी लगे हाथों डलवा ही दें।'

पाठक जी तुलसी के कन्धे पर स्नेह से हाथ रखकर राजा से बोले—"कल मध्याह्न में सूर्यनारायण जब ठीक तुम्हारे सिर पर आ जाय तब तुम्हीं अपने हाथों इनके घर की नींव पूजा करना। इन्होंने इस गांव को जिस पुरुष का नाम दिया है वही इनके घर की नींव रखेगा। मैंने ठीक कहा न भया ?"

भैया इतनी देर से पाठक जी के हाथ का स्नेह स्पर्श अपने कन्धे पर अनुभव करते-करते उसके सम्मोहन में बंध चुके थे। कुछ अपनी मनभावती भूमि के स्वामी हो जाने के कारण उपजे हुए उल्लास में भी उमगचुभ थे। उन्हें पाठक जी की बात का सहसा कोई उत्तर न सूझा, विनत होकर कहा—"मैं क्या कहूं, आप जो उचित समझें करें।'

पाठक जी के घर पहुंचकर तुलसीदास मानो राजा हो गए। इतना अपनत्व, इतनी आवभगत और सम्मान तुलसीदास को कहीं प्राप्त नहीं हुआ था। पाठक जी गांव के धनी-धोरियों में थे। आसपास के गांवों में ही नहीं बल्कि बांदा से चित्रकूट तक इसपार उसपार उनकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। इसलिए जिसकी अगवानी में स्वयं वे उत्साह के मारे थोड़े थोड़े हुए जा रहे हों उसके लिए पलक पांवड़े बिछाने वालों की भला क्या कमी हो सकती थी। तुलसीदास बहुत मगन थे।

पाठक जी विधुर थे। उनकी इकलौती संतान चौदह वर्ष की हो चुकी थी। पण्डित जी ने अपनी पुत्री के प्रबल मोहवश अब तक उसका विवाह टालने का प्रयत्न किया किन्तु अब वे ऐसा कर नहीं सकते थे। उन्होंने रत्नावली को आरम्भ से उसी चाव से पढ़ाया था जिस चाव से कोई पुत्र को पढ़ाता है। वे कई वर्षों से किसी ऐसे सुपात्र की खोज में थे जिसे वे घरजमाई बनाकर अपने पास रख सकें। किन्तु उन्हें अपनी लड़की के लायक कोई लड़का जंचता नहीं था। जब से विक्रमपुर की पैठ में उन्होंने तुलसीदास की कथा सुनी थी और उनके संबंध में राजा से जानकारी पाई थी तभी से वे उन्हें अपना जामाता बनाने के लिए लालायित हो चुके थे। इन बीते महीनों में और भी निकट संपर्क में

माने के कारण उन्होंने तुलसीदास को अपना दामाद बनाने का एक प्रकार से हठ ही ठान लिया था। स्वाभिमानी तुलसी को वे अपने घर मे तो न रख सकेंगे पर यह दूरी भी केवल नदी के दो तटों की ही है। इतनी पास में ऐसा योग्य जमाई मिले तो समझो घर ही म है। उन्होंने तुलसीदास और रत्नावली की जन्म पत्रिकायें भी मिला रखी थीं। सयोगवश रत्नावली के एक सुझाव के अनुसार वे उनके मूल नक्षत्र के सबध म भी गहरा विचार कर चुके थे। रत्नावली उक्त कुण्डली के अभागेपन को नकार चुकी थी। वह नही जानती थी कि यह उसके भावी पति की जन्मकुण्डली है। उसके मतानुसार अभुक्तमूल नक्षत्र के चतुथ चरण मे पदा होने वाला व्यक्ति अलौकिक रूप से भाग्यवान होता है। बड़े-बड़े राजे-महराजे और पण्डितगण इनके चरणों मे शीश झुकाएगे। इसके बाद नियति ने ऐसे बानक बना दिए कि पाठक जी जब भी अपनी बेटी को देखते तभी उसके दक्षिणाग की ओर खडी तुलसीदास की मूर्ति उनकी कल्पना मे उभर आती थी। पाठक जी तुलसी को अपना बेटा बनाने के लिए दीवाने हो गए थे।

वाल्मीकीय रामायण कथा का श्रीगणेश हुआ। तुलसीदास जी का कथा कहने का ढग ही निराला था। वे पण्डित समाज को अपनी विद्या और जन साधारण को अपने भक्ति रस के चमत्कार से एक-सा बाधते थे। बीच-बीच म अपनी रची हुई भाषा की कविताए भी पढ़ने लगते तो सभा म समा-सा बध जाता था। भाषा मे चमत्कार कण्ठ मधुर और सुरीला तथा इन सबके ऊपर सोने मे सुहागे जसा उनका सुदर रूप और बलिष्ठ काया भी देखने वालो पर अपना प्रभाव छोड़े बिना नही रहती थी। या भी तुलसीदास आज कुछ अधिक उमग म थे। अपनी भावुकता मे वे यह मानते थे कि पाठक जी को सुनाकर वे मानो अपने पिता को ही रामायण सुना रहे हो। वे अपनी कथावाचन कला का सारा निखार मानो आज ही दर्शा देना चाहते थे। ऐसे तन्मय होकर उन्होंने कथा बाची कि निर्धारित पाठ पूरा होने पर अपनी वाणी के मौन से वे स्वय ही सन्नाटे मे आ गए।

पाठक जी के प्रचार और प्रभाववश दूर-दूर के लोग कथा सुनाने के लिए आए थे। गाव मे कई तम्बू-खेमे पड़े हुए थे। बहुत-से घरो मे अतिथि ठहरे थे। स्वय पाठक जी के घर मे भी तीन सबधियो के परिवार टिके हुए थे। तुलसीदास ने पहले ही दिन सबके हृदय जीत लिए।

घर आने पर उनके लिए एक अचम्भा अचानक आया। भोजन इत्यादि करके पाठक जी अपने छोटे भाई के पुत्र गगेश्वर और साले के साथ तुलसीदास के सामने ही उनकी प्रशसा करते हुए मगन मन बठे थे। तभी अचानक ही उन्होने कहा— भया है तो मेरी बेटी, पर मैंने उसे बेटे की तरह से ही पढ़ाया लिखाया है। जो पण्डित मुझे योग्य जचा उसीसे मैंने उसे शिक्षा दिलवाई है। देखो मैं बुलाता हू। उसने ही तुम्हारे अभुक्तमूल नक्षत्र की व्याख्या मुझसे की थी। अरी रत्नू, ओ रत्नू, यहा आ बिटिया वैसे उसे यह मालूम नही है कि वह कुण्डली आपकी है।"

तुलसीदास अचानक रत्ना के सामने आने की बात सुनकर धक-से रह गए।

उनका कलेजा धडधड कर उठा — राम प्रभु मेरी परीक्षा न लें। राम करे, वह न आए—न आए—न आए।' तुलसी तो अपने चेहरे पर चढ़ती धुकपुकाहट को सभालकर उसपर गम्भीरता का मुखौटा चढाने में व्यस्त हो गए पर उनका मन भीतर ही भीतर सकपका रहा था।

भीतर के उढके हुए द्वार खुले। शुभ्र वर्ण की एक तन्वंगी सामने थी। तेज-युक्त ललाट, पतले होठ नाक और ठोडी नुकीली तथा आंखों मे दप भरी चमक थी। उसने एक बार तुलसीदास की ओर देखा। चार आँखें अनायास ही मिली। तुलसी के हृदय में मचती हुई हलचल दृष्टि मिलते ही थम गई। एकाएक उनके भीतर-बाहर मानो सन्नाटा छा गया। उन्हें लगा कि वे अब अपनी सम्पत्ति नहीं रहे। आँखें नीची हो गईं।

रत्नावली ने तुरत ही पिता की ओर देखकर पूछा—"क्या है बप्पा ?"

स्वर था कि मानो गला हुआ सोना बह रहा हो। उसमे मिठास तो थी ही किन्तु अधिकार का तेज भी था। तुलसीदास उपस्थित मण्डली के सामने अपने आप को कसे हुए बैठे थे। बिछे हुए गलीचे का एक रेशा तोडकर अपनी चुटकी से मीजते हुए वे ऐसे गम्भीर और दत्तचित्त भाव से बैठे थे जैसे किसी महत्त्व के काम मे व्यस्त हों। पाठक जी ने स्निग्ध दृष्टि से अपनी बेटी को देखकर कहा—'आमा बिटिया आज तुमने हमारे तुलसीदास जी की कथा सुनी थी ?'

तुलसीदास के कान खड़े हो गए। रत्ना ने छोटा-सा उत्तर दिया— हूं।" तुलसीदास को ऐसा लगा कि रत्नावली ने बडी अनिच्छा और दबाव से ही यह उत्तर दिया है।

पाठक जी ने पूछा— तुम्हें कैसी लगी इनकी कथा ?'

कथा तो राम जी की थी।' रत्ना बोली

तुलसी को लगा कि मानो इस वाक्य के पीछे खिलखिलाहट भरी है। उसी समय रत्ना के मामा हंस पडे और पाठक जी से कहा— देखो हमारी बिटिया कैसी बात पकडती है!"

पाठक जी मुस्कराकर बोले—' अरे ये बडी नटखट है। मैं इनके कथा कहने के ढंग और व्याख्या-पद्धति के संबंध मे तेरा मत पूछ रहा था।"

तुलसीदास के कलेजे मे फिर हलचल मची किन्तु रत्ना चुप रही। मामा बोले— क्या पूछ रहे हैं जीजा, बताती क्यों नहीं ?"

रत्नावली के चचेरे बडे भाई गंगेश्वर ने हंसकर कहा— 'अरे यह बडी बुद्धू है मामा, इसे पचगुट्टे खेलने से ही अवकाश नहीं मिलता, ये क्या बताएगी ?"

रत्ना ने एक बार गंगेश्वर की ओर देखकर आँखें तरेरी। वह हंसने लगा। मामा बोले—' हमारी बिटिया बुद्धू नहीं है। छोटी होने पर भी यह तो अच्छे-अच्छे पण्डितों के कान काटती है।

पाठक जी बोले— बडे भारी ज्योतिषी हैं हमारे तुलसीदास जी। इनसे ताजक ज्योतिष के लटके भी सीख लो।"

तुलसीदास ने एक बार नजर उठाकर रत्नावली को यों देखा कि मानो वे उसका उत्तर सुनने के लिए उत्सुक हों। रत्नावली ने अपने पिता से कहा—

"मुझे क्या आज ही सीखना है बप्पा ?"

तुलसीदास अचानक ही हड़बड़ाकर बोल उठे— नहीं-नहीं। फिर किसी दिन, अभी तो यहां पर एक सप्ताह ठहरूंगा।"

'अच्छा रत्नू, इन्हें अभुक्तमूल के संबंध में बतला। तुलसीदास जी कहते हैं कि तेरी व्याख्या गलत है। वह जातक निश्चय ही मूल के पहले-दूसरे चरण की संधि में हुआ होगा।'

'केवल माता पिता की मृत्यु के प्रमाण से ही यह कह देना ठीक नहीं है बप्पा। प्रश्न यह है कि जातक को नव वर्ष की आयु से समुचित प्रतिष्ठा, विद्या और उन्नति के सोपान मिलते जा रहे हैं या नहीं ?"

पाठक जी ने तुलसीदास की ओर देखकर पूछा— कहिए, आपका क्या विचार है ?'

'पहले इनका विचार सुन लूं।"

रत्नावली ने भी उचटती नजरों से अपने भावी पति को देखा, फिर पिता से पूछा— 'बप्पा, वह टेवा आप ही का था न ?"

"यह तूने कैसे कहा ?"

पिता के इस प्रश्न से रत्ना झेंप गई। कुछ उत्तर न दिया। मामा जी बोले— अच्छा मेरा एक प्रश्न विचार। हमारे इन शास्त्री जी का विवाह हो गया है या नहीं।'

तुलसीदास का चेहरा और कस गया। उन्हें पाठक जी के साले का यह प्रश्न करना अच्छा नहीं लगा। वे भीतर ही भीतर भाख उठे। रत्नावली भी यह प्रश्न सुनकर सहसा लज्जा से लाल हो उठी। उसने कहा—' घर में काम है बप्पा, मैं जाऊं ? पिता के कुछ कहने से पहले ही वह तेजी से उठकर भीतर चली गई।

सात दिन तुलसीदास की ख्याति के सात सोपान बन गए। तुलसी के प्रति पाठक जी का ममत्व प्रतिक्षण गाढ़ा होता गया। तीसरे चौथे दिन की बात है दिन में भोजन करके पाठक जी तुलसीदास के साथ भीतर के कमरे में बैठे थे। टांडों पर ग्रंथों के बस्ते बंधे हुए रखे थे। ग्रंथों का यह विशाल भाण्डार देखकर तुलसी ने कहा— काशी में गुरू जी का ग्रंथ भाण्डार इससे कदाचित ही कुछ अधिक हो। आपके यहां बहुत अच्छा संग्रह है।'

पाठक जी सुनकर प्रसन्न हुए, बोले— रत्ना इन्हें अपने प्राणों से भी अधिक सहेज कर रखती है।' फिर दबी जबान से बात को आगे बढ़ाते हुए कहा— घर की संपत्ति का बहुत कुछ अंश तो मुझे अपने भतीजे को ही देना है। पर अपना यह ग्रंथ भाण्डार उसे मैं देना नहीं चाहता। उसे अध्ययन में रुचि नहीं है। वह केवल कामचलाऊ पण्डित ही है। कभी-कभी अपने ग्रन्थागार का भविष्य विचार कर रो पड़ता हूं।'

तुलसी अपने सहज भोलेपन में बोल उठे—' इन्हें किसी सत्पात्र को सौंप दीजिए।

सुपात्र तो मिल गया है बेटा, बस अब यही मनाता हूं कि उसे अपना

सब-कुछ सौंपकर निश्चिन्त होने का क्षण भी पा जाऊं।"

तुलसी सचेत हो गए। वे भाप गए कि पाठक जी के सुपात्र और कोई नहीं वे स्वयं ही हैं। उनका मन फिर हलचल से भर गया। किन्तु यह हलचल पानी जैसी रंगहीन थी, न पक्ष-न विपक्ष। शब्दहीन भावों की तरंगें तेजी से चल रही थीं। तुलसी अपने-आप को समझ नहीं पा रहे थे। वे केवल सकपकाए हुए थे। उन्हें अपने भावी जीवन के सम्बन्ध में चिन्ता भरी घबराहट थी।

अगला दिन कथा का अन्तिम दिन था। तुलसीदास आज सबेरे ही से प्राय गुम-सुम थे। यद्यपि उनकी ऊपरी चेतना में प्राय सन्नाटा ही छाया हुआ था तथापि अपनी भीतरी तहों में चलनेवाली हलचल उनके लिए एकदम अनबूझी न थी।

ब्राह्ममुहूर्त में जब उन्होंने नित्य नियमानुसार ध्यान में लक्ष्मण, भरत शत्रुघ्न और हनुमान-सेवित श्रीसीताराम का बिम्ब साधा तो आकार विशेष स्पष्ट नहीं हुए। अपनी इस असफलता से तुलसीदास को लगा कि मानो वे एक अति उन्नत शिखर पर चढ़ते-चढ़ते अचानक दोनों नीचे खड्ड में गिर गए हों। उन्हें अपने ऊपर बहुत खिसियानपन छूटा। मोहिनी प्रसंग के बाद तुलसीदास ने हठपूर्वक अपने इष्ट बिम्ब को साधा था। ध्यान अब न तो बिखरता था और न धूमिल ही होता था। इच्छित बिम्ब की सजीवता ही तुलसी की सफलता और उत्फुल्लता का कारण बनती थी। आज तुलसी का ध्यान में न तो सफलता ही मिली और न उत्फुल्लता। सच तो यह था कि व कुंठित और हतप्रभ-से हो गए थे।

स्नान ध्यान आदि नित्यकर्मों से निबटकर तुलसीदास जी जब पाठक जी के घर लौटे तो पता चला कि वे अपने साले के साथ किसी काम से पास के गांव में गए हुए हैं। तुलसीदास अपने चौबारे में बैठे ही बैठ गए। उन्हें कुछ समझ नहीं पड़ रहा था। पछतावा खिसियानपन झुंझलाहट, नामस्मरण, प्रार्थना और संयास को साधने का हठ उनके मन को तरह-तरह से रमा रहा था किन्तु वे रम नहीं पा रहे थे।

दासी आई, कोठरी के एक कोने में गोबराये हुए फर्श पर पानी छिड़का, फिर पीढ़ा लाई, पीढ़े पर रेशमी गद्दी बिछाई चौकी सामने रखी। एक दासी चांदी के लोटे गिलास में पानी रख गई। फिर रत्नावली कलेवे के लिए थाली सजाकर लाई। अति संयत और गम्भीर भाव से तुलसी की ओर बिना देखे ही रत्नावली खाने की चौकी की ओर बढ़ गई। थाली रखी और सिर झुकाए हुए कहा—'बप्पा और मामा एक आवश्यक काम से गए हैं। मेरी मामी ज्वरग्रस्त हैं इसलिए मुझे ही सब-कुछ तैयार करना पड़ा है। हो सकता है आपकी रुचि के अनुकूल न बना हो।

रत्नावली को देखते ही तुलसीदास का गुमसुमपना हवा हो गया था। वे किसी हद तक रत्नावली के रौब में आ गए। रत्ना का स्वर तुलसीदास के कानों में बड़ी मिठास घोल रहा था। पीढ़े पर बैठते ही रत्ना लोटा उठाकर उनके हाथ धुलाने के लिए उद्यत हो गई। तुलसीदास बोले—'आपकी मामी तो नित्य परोसते समय हम लोगों को यही बतलाती थीं कि अमुक वस्तु आपने बनाई है और वह वस्तु निश्चय ही स्वादिष्ट सिद्ध होती थी। मुझे विश्वास है

कि आज भी मेरी रसना को निराश न होना पड़ेगा।"

रत्नावली चुप रही। तुलसीदास ने खाना आरम्भ किया। रत्नावली दीवाल से लगी नीची नजर किए खड़ी रही। तुलसीदास को रत्नावली की उपस्थिति मन ही मन सुहा रही थी यद्यपि उन्होंने फिर सिर उठाकर उसे देखने तक का प्रयत्न न किया।

एक दासी कोठरी के द्वार पर खड़ी हुई थी। रत्नावली ने और कुछ लाने के लिए पूछा। तुलसीदास बोले—"साधु यदि पेटू हो जाय तो फिर उसका निभाव भला क्योंकर हो सकता है?'

रत्नावली तुरन्त ही बोल उठी—'कुण्डली के अनुसार तो साधु बनने से पहले आप लक्ष्मीवान बनेंगे।"

यह सुनकर तुलसीदास की आंखें रत्नावली के मुख को देखे बिना रह न सकीं। कंचन-सा वर्ण, चेहरे पर आत्मतेज और वाणी में आत्मविश्वास की ऐसी दीप्ति थी कि तुलसीदास की आंखें शिष्टाचार भूलकर कुछ क्षणों के लिए रत्नावली के मुख को एकटक निहारने लगीं। रत्नावली की आंखें भी एक बार धोखे से ऊपर उठ गईं। आंखों से आंखें मिलीं, दोनों ओर पुतलियों में आनन्द के ज्योतिफूल चमके। दोनों के होठों पर बरबस मुस्कान की रेखाएं भी खिंच गईं और फिर दोनों को तुरन्त ही होश भी आ गया। रत्ना की आंखें फिर झुक गईं। चेहरे पर गम्भीरता लाने का प्रयत्न विफल हुआ। आनन्द जड़ होकर उसके चेहरे पर चिपक गया था। तुलसीदास के मन की सारी हलचलें भी रत्नावली के उस आनन्द में ही थिर हो गई थीं। उन्होंने मृदु स्वर में कहा—'देखता हूं, मेरी जन्मपत्रिका पर आपने गहरा विचार किया है।'

रत्ना चुप रही। तुलसीदास ने फिर कहा—'साधु होने के लिए केवल वेश ही तो आवश्यक नहीं होता।" कहने को तो यह कहा पर उन्हें स्पष्ट रूप से यह भासित हो चला था कि वे रत्नावली के प्रभाव-पाश में आबद्ध हैं।

तुलसीदास के अंतिम दिन के कथावाचन में सहज रस कम और नाटकीयता अधिक थी। आज वे स्त्रियों की मण्डली में बैठी हुई रत्नावली को ही अधिक सुना रहे थे और इस सुनाने का कार्य रत्ना के मन में राम-बोध से अधिक तुलसी बोध कराना ही था।

आरती में अच्छा धन चढ़ा। सोने की कुछ मोहरें, चांदी के बहुत-से रुपये और तांबे के ढेरों टके ही नहीं, गेहूं और चावल भी इतना चढ़ा कि चलते समय उनके साथ अनाज के पांच बोरे हो गए थे। एक दुशाला और रेशम के दो थान भी अर्पित किए गए थे। तुलसीदास पाठक जी से बोले—यह सब वस्तुएं लेजाकर मैं क्या करूंगा, मेरी समझ में नहीं आ रहा है।

पाठक जी के साले यह सुनकर हंस पड़े, बोले—उसकी चिन्ता आप क्यों करते हैं। मेरी भांजी आपके यहां पहुंचकर स्वयं ही उसका प्रबन्ध कर लेगी।"

अपने साले की यह बात सुनकर पाठक जी हंस पड़े। तुलसीदास का मन प्रतिवाद न कर सका, मौन रहा। तुलसीदास जी को नाव पर बठाने के लिए गांव से बहुत-से लोग आए थे। पाठक जी के भतीजे गंगेश्वर तुलसीदास को उनके

गाव तक छोडने के लिए नाव पर सवार हो चुके थे। सबसे मिल भेंट कर तुलसीदास पाठक जी के चरण छूने के लिए झुके। उन्होंने तुरंत ही उन्हें अपनी बाहों में भरकर कलेजे से चिपका लिया और धीरे से कान में कहा—"मंगलवार को गंगेश्वर फलदान लेकर पहुंच रहा है। राजा से कहिएगा कि वे कल मुझसे आकर मिल जाय।"

"जो आज्ञा।" तुलसीदास ने आखें झुकाकर दबे स्वर मे उत्तर दिया। सुनकर पाठक जी गद्गद हो गए। उन्होंने तुलसीदास जी को फिर कलेजे से लगाया।

पहले से सूचना पाने के कारण राजा भगत नौका घाट पर ही मिल गए। उन्होंने तुलसीदास का घर बनवाना आरम्भ कर दिया था। इसलिए वे उन्हें अपने घर लिवा ले गए। मार्ग में रत्नावली के चचेरे भाई ने उन्हें मंगल को फलदान लेकर आने की सूचना दी। राजा तुलसी को देखकर मुस्कराए और कहा— 'तुम अनोखे कथावाचक हो भैया, कथा की चढ़त में इनकी बहन को भी ले आए।"

तुलसी की आखों में पहले झेंप और फिर विनोद लहराया, बोले—' दलालों की माया तो राम जी ही समझ सकते हैं, बाकी हमें क्या, भिक्षुक ब्राह्मण ठहरे, जो दक्षिणा में मिला वही स्वीकार कर लिया।" × × ×

राजा भगत से बाबा की कही यह पुरानी बात सुनकर बेनीमाधव ही नहीं, प्रायः गम्भीर रहनेवाला रामू भी हंस पड़ा। गद्गद स्वर में बोला—"हमारे प्रभु जी की हंसी भी अनोखी होती है। अरे वह जानकीजी से भी विनोद करने में न चूके— कोटि मनोज लजावनि हारे। सुमुखि कहहु को आहिं तुम्हारे। सुनि सनेहमय मंजुल बानी। सकुची सिय मन महु मुसुकानी।" सुनकर सभी आनंदित हुए।

२३

बाबा की गिल्टियां कुछ और बढ़ गई थी। अन्दर से टीसें मारती थी। पीड़ा के कारण नींद उचट-उचट जाती थी। इधर दो दिनों से बाबा को कुछ ऐसी तरंग आई है कि रात के समय वे रामू को भी अपनी कोठरी में नहीं सोने देते। अपनी बढ़ी हुई वेदना को उन्होंने अब तक बाहरी तौर से व्यक्त नहीं होने दिया। केवल उनके चेहरे का कसाव अधिक बढ़ गया है और वे कम बोलते हैं। रामू ने जब कारण पूछा तो वे बोले— तेरा कोई दोष नहीं है रे। दिन में एकांत मिल नहीं पाता इसलिए रात में अपने भीतर वाले हंस को अकेला ही अनुभव कराना चाहता हूं।"

बाबा के चेहरे पर हठ की दृढ़ता देखकर रामू सकुच गया। वह अब कोठरी के बाहर सोता है। कोठरी की देहली ही उसका तकिया है और उसके कान सदा भीतर की ओर ही लगे रहते हैं।

बाबा को नींद कम आती है, आती भी है तो बीच-बीच में किसी गिल्टी

से ऐसी टीस उठती है कि उचट जाती है। तब पीडा को भुलाने के लिए प्राय लेटे ही लेटे जपमग्न हो जाते हैं। आज रात भी ऐसा ही हुआ। बाह कलाई पर नई गिल्टी निकल रही है। हड्डी के ऊपर की गाठ बडी दुखदाई है। पूरी बाह म तनाव है। उस तनाव के कारण बगल म एक और गिल्टी उभर आई। नीद मे करवट ले ली तो वह दब जाने से खर्राटे भरते भरते सहसा 'हे राम !' कहते कराह उठे। बडी देर तक दाहिने हाथ के पजे स अपनी बाइ बाह दाबे हुए सीधे पडे रहे। उनका चेहरा बडे कठिन सयम से अपनी पीडा को पचा रहा था। मन की माला राम राम जप रही थी।

थोडी देर के बाद बाबा ने अपनी आखे खोली। दीवट पर रखे दीप के उजाले म दीवार पर रगे देवचित्र की ओर ध्यान गया। हल्के उजाले मे महावीर जी अपने मध्यम उभार के साथ ऐसे चमक रहे थे जैसे लोभी की लालसा चमकती है। बजरगबली के चित्र पर दृष्टि जाते ही तुलसीदास के मन मे एक ताजगी आ गई। पीडा को पराजित करने के लिए भी आत्मबल जागा। मुस्कराकर चित्र से कहने लगे—'हे पवनतनय तुम भले ही पीडा से मुक्ति न दो परन्तु यह तो बता दो कि किस पाप शाप के कारण यह दुख पा रहा हू ? हे राम, अब तो अवश्य अपनी राम रट म मुझे इतना रमा दो कि तन की पीडा को भूल जाऊ।" कानो म राम गूज है पर गिल्टियों की टीसो के कारण बीच-बीच म राम रट छूट जाती है। मन कराह-कराह उठता है। एक बार वे वेदना न सह पाने के कारण उठकर बैठ जाते है और कराहते हुए हनुमान जी के चित्र की ओर कातर दृष्टि से देखने लगते हैं। वेदना और प्रार्थना भरे मन के ताने-बाने से काव्य-स्फूर्ति जागती है —

जानत जहान हनुमान को निवज्यो जन,
मन अनुमानि बलि बोल न बिसारिये।
सेवा जोग तुलसी कबहु कहा चूक परी,
साहेब सुभाव कपि साहिबी सभारिये।
अपराधी जान कीज सासति सहस भाति
मोदक मरै जो ताहि माहुर न मारिये।
साहसी समीर के दुलारे रघुबीरजू के,
बाह पीर महाबीर बेगि ही निवारिये।

क देर तक अपनी बाइ बाह सहलाते रह फिर आखें मूद ली और सोने का जतन करने लगे। फिर मन म कुछ ऐसा समा बधा कि लगा मानो कोई उनकी पीडित बाह को सहला रहा है। कल्पना की आखें देखने लगी कि जसे रत्नावली उनके बामाग से प्रकट होकर उनकी कलाई सहला रही है। उन्हें लगा कि पीडा नहीं रही। उन्हें अब अच्छा लग रहा है। उन्हें लगा कि रत्ना नेह-पगी दृष्टि से उन्ह देख रही है। आप भी मुस्करा उठे कहा—'मुझे अब भी नही छोडती ? अन्तकाल म तो अपनी ओर यो न खींचो।

मैं कब खीचती हू ? आप स्वय ही मेरी ओर खिचे चले आते हैं।'

तुलसीदास कुछ न बोले। उन्हें लगा कि रत्ना अपनी गोद म उनकी बात रख सहला रही है और उन्हें यह अच्छा भी लग रहा है। सहसा रत्ना न हसकर कहा—"आजकल तो आप राजा लाला जी से चेला को अपनी रामकहानी सुनवा रहे हैं।"

'बेनीमाधव तुलसी रत्नावली के जीवनवृत्त का जानन के लिए दीवाना ह। फिर क्या करता? उसे राजा को सौंप दिया। वही तो तुम्हारे विवाह का प्रस्ताव लेकर आया था मेरे पास।"

"बुरा किया?"

"नहीं! राम की प्रेमरूपी अटारी तक पहुचने के लिए मुझे तुम्हारी प्रीति की सीढियों पर चढना ही था।"

"अच्छा, यदि मेरे बजाय मोहिनी से ही तुम्हारा विवाह हुआ होता तो?"

"सीताराम का चाकर परकीया प्रेम का पुजारी कदापि नही हो सकता था। वह स्त्री अपनी धुरी पर घूमती हुई मेरे जीवन चक्र से आ टकराई थी। मेरे अधे भोलेपन को अनुभव की पक्की दृष्टि मिल गई। बस इतना ही मेरा-उसका नाता हो सकता था।"

और मेरा-तुम्हारा नाता?"

तुलसी हस पड़े, कहा—' मेरे-तुम्हारे नाते को जग जानता है। हम तो चाखा प्रेमरस पतिनी के उपदेस।"

रत्नावली मान भरा हुआ मुह सिकोडकर बोली—"मुझे त्यागने के बाद तुम्हारा यह बखान खोखला है।"

तुलसी चकित मुद्रा म बोले—' सियाराम का पुजारी अपने मानस की नारी शक्ति को भला कभी त्याग सकता है? तुम्हारे कारण मेरी लडखडाती हुई रामभक्ति अगद का पाव बन गई।"

रत्ना ने फिर मान से फूले स्वर में कहा—"मेरे सहज हठ को तोडकर तुमने अपना हठ बनाया।"

'रत्ना, हम दोना चक्की के दो पाटों की तरह हैं। इनके द्वन्द्व के बिना हम दोनों की लौकिक चेतना का गेहू पिसकर भला भक्तिरूपी मैदा बन सकता था? तुम्हारे हठ के आगे मैं टूट जाता था। जब टूटता था तभी पछतावा होता था कि तुम्हार अनुपम सौन्दय और गुणा के आगे इतना विवश क्या हो जाता हू। तुम्हारी सुन्दरता ने मुझे इस जीवन मे जैसा नाच नचाया वैसा अपने बालपने के उस विरह-चक्र मे भी नहीं नाचा था।"

रत्ना आत्मलीन दृष्टि से तुलसीदास को देख रही थी। तुलसीदास भी टक-टकी बाधकर उसे ही देख रहे थे। बोले—' तुम्हारी इस रस-डूबी दृष्टि ने तुम्हें छोडने के बाद भी मुझे वर्षों तक सताया है। जब राम म ध्यान लगाता था तो ये आखें ही मुझे अपनी आकषण झील में डुबा देती थीं। कई बार जी चाहा कि घर लौट चलू और तुम्हारी इन आखों की छाया तले अपना जीवन शेष कर दू।

फिर चले क्या नही आए?"

'मेरा द्वंद्व प्रारम्भ ही से काम वासना से था। मेरी अन्तर-बाह्य चेतना अपने भीतर वाले काम हठ से अपने राम हठ को श्रेष्ठ मानती थी। मैंने उसे ही जीतना चाहा था पर तुमने मुझे ऐसा रिझाया भरमाया कि क्या कहूं।"

"तुम्हारे रूप-गुण और पौरुष-पांडित्य पर मैं भी कुछ कम नहीं रीझी थी। यदि तुम प्रारम्भ में मेरे आगे इतने दीन न बने होते तो मैं ही तुम्हारे प्रति दीन बन जाती। मेरा हठ तो तुम्हारी दीनता ने जगाया।"

'सच है। मेरे जीवन की परिस्थितियों ने मुझे वह दीनता प्रदान की थी और तुम्हारे भीतर अभिजात्य दर्प था। जानती हो रत्ना, तुम्हारे उस सहज दर्पयुक्त सौंदर्य को अपनाने के लिए ही मैं अपने वैराग्य से विरक्त हुआ था। जो मुझमें नहीं था वह तुममें था।"

रत्नावली की आंखें लाज और प्रेम भार से झुक गईं। चेहरे पर सुहाग की ललाई दौड़ गई। हाथ से पैर के अंगूठे को मीजते हुए सकोच भरे स्वर में बोली—'घर में बातें होती थीं काना में पड़ता था कि तुम ब्याह करने को राजी नहीं होते हो। सुन सुनकर मेरा हठ बढ़ता जाता था कि तुम्हें पाकर ही रहूंगी। तुम जानते हो, मैं नित्य हर गौरी पूजन करने गांव के मंदिर में जाने लगी थी।"

बाबा मुस्कराए, बोले— और तुम जानती हो कि मैंने तुम्हें अपनी सखियों के साथ मंदिर की ओर जाते हुए देखा था। तुम्हारी उस छवि पर ऐसा मुग्ध हुआ था कि राम-जानकी का पुष्प वाटिका में प्रथम मिलन वर्णन करते समय मैं वह मंदिर और उसके पास वाले सरोवर तक को न भूल सका। तुम्हारी तो बात ही न्यारी थी " हल्के-हल्के गाने लगे—

सग सखी सब सुभग सयानी। गावहिं गीत मनोहर बानी।
सर समीप गिरिजा गृह सोहा। बरनि न जाइ देखि मन मोहा।
मज्जनु करि सर सखिन्ह समेता। गई मुदित मन गौरि निकेता।

रीझ-भरी आंखों से पति को निहार कर रत्ना बोली—"अपना आपा बिसार कर रीझना मैंने तुम्हीं से सीखा है। यदि निसर्ग से मुझे यह गुण मिला होता तो भला तुम्हें इस जीवन में छोड़ती! तुम्हारा बखाना मेरा दर्प ही मेरा शत्रु बना।' कहते हुए रत्ना उदास हो गई।

तुलसीदास स्नेह से उसकी बांह पर अपनी दाहिनी बांह सहज भाव से रख कर बोले— जिस दर्प ने मुझे रामदास बनने का गौरव और तुम्हें भक्ति का प्रसाद दिया उसे अब बुरा न कहो रत्ना। पीड़ा के बिना शक्ति का जन्म नहीं होता। भूलो भूलो वह कांटों भरी धूल भरी राह। अब तो हम ठिकाने पर पहुंच चुके हैं। आओ आओ मेरी भक्ति मेरी प्राण, हम-तुम मिलकर अपने विवाह की मोद-मंगलमयी छवि निहारें।

अपने, कि सियाराम जी के ब्याह की?'

अब अपना क्या है पगली मैंने अपने सारे लौकिक अनुभव और अन्दर की रसानुभूतियां राम जानकी को सौंपकर ही तुम्हें और अपने को पाया है। फेर दो अपनी यह प्रश्नमाला। मेरा मन लहरा रहा है। देख, यह तेरा दिया

हुआ उल्लास मेरी काया को पीडामुक्त कर रहा है। मेरा यह हाथ आज कितने दिनों के बाद सहज भाव से उठ रहा है। अरे, मैं ब्याह का बना बन गया हूं। और तू बन्नी बनी अपनी सग-सहेलियों से घिरी लाज की परतों में हृप-उल्लास का श्रृंगार चमकाए बैठी है।"

पटी पर बीते दृश्य मासल होकर उभरने लगे। रत्नावली का रूपाकार क्रमश भीना होते हुए ज्योतिबिन्दु बन गया और वह बिंदु नादयुक्त था। बाबा अपनी पूरी काया म चैतन्य-स्फूर्ति अनुभव करने लगे। उठकर बठ गए। तभी बाहर मुर्गे ने बाग दी। बाबा की वृद्ध काया मे इस समय चैतन्य खेल रहा था। धीमे धीमे ताली बजाते हुए वह मगन मन 'रामलला नहछू' गाने लगे। उन्हे लगा कि उनके स्वर म एक नहीं दो स्वर लहरा रहे हैं, अपना और रत्ना का। और वह दो मिलकर एक में लय हो गए हैं। राम विवाह के दृश्य आखो के सामने चले जा रहे हैं। बाबा आत्मलीन हो गए हैं। रामू ने द्वार खोला, दबे पाव भीतर आया। किन्तु बाबा को कुछ पता न था। वे गा रहे थे। जब उनकी भाव समाधि पूरी हुई तो रामू ने झुककर प्रणाम किया। अपने दोनो हाथ उत्साह से उसकी पीठ पर रखकर बाबा उल्लसित स्वर में बोले— "जियो बचवा राम सदा तुम्हारे साथ रहें।" कहकर उन्होंने फिर उसकी पीठ को दोनो हाथो से थपथपाया।

'आज तो लगता है प्रभु जी कि आपके हाथों मे पीडा नहीं है।"

रामू के कधे का सहारा लेकर उठते हुए बोले—' आज मैं बिलकुल स्वस्थ हू रे। तेरी गुरुआइन सपने म आकर मुझे चगा कर गई हैं।"

२४

सबेरे अपने नियमों से निवृत्त होकर बाबा आज कई दिना के बाद अपने अखाड़े के चबूतरे पर बैठे थे। बाबा को स्वस्थ देखकर सभी लोग आनदमग्न थे। मगलू बाबा की बाह और पीठ को हाथ से छूकर बारीकी से देखते हुए बोला—' अरे बाबा कल ता इत्ती गिल्टिया भरी थीं और आज एक्को नहीं! कमाल हुइ गया साला?' चट से जीभ मुह से निकल आई और मगलू के दोना हाथ अपने कानो को पकड उठे। आस-पास सभी लोग हसने लगे। झेंपकर अलग खडे होते हुए मगलू ने कहा— क्या करें बाबा, गाली स्सा "

बाबा चटपट हाथ बढ़ाकर विनोद मुद्रा म बोले—' निकली निकली, रोक।' दुबारा हसी का ठहाका मचा।

मगलू ताव सा गया बोला—' अच्छा, अब मैं भी जोग साधूगा। पर बाबा सच्ची बताओ कोई टोना टोटका किया था तुमने?"

बाबा गम्भीर हो गए, बोले— हा भाई, किया तो था। हमने अपन मन की उस गाठ का खोला जिसके कारण वैद्य जी की औषधि का प्रभाव पूरी तरह

से नहीं होता था। तुम भी ध्यान करो मगलू कि तुम्हारी यह गाली की आदत शुरू कहां से हुई। बात को अच्छी तरह से सोच लो। जब उसके मूल में पहुंच जाओगे तो उसे निर्मूल करने की युक्ति और शक्ति भी तुम्हें मिल जाएगी।"

बात सुनकर राजा भगत ने अपने पास बैठे हुए संत बेनीमाधव से धीरे से कहा—"भया की इसी बात में उनकी जीत का भेद छिपा है।"

एक व्यक्ति ने बड़े उत्साह से रविदत्त प्रसंग उठा दिया। वह कहने लगा—"बाबा, तुमने सुना, कल एक गंवार ने रवीदत्त महाराज को बहुत मारा!"

"राम राम बात क्या थी?"

मगलू तैश में हाथ बढ़ाकर बोला—"अरे बात वही रही जो हमरे मन में रही। इस समय बनारस में ऐसा कौन है जो आपका भक्त न हो। सुना हमने भी रहा कि सा अ अ। इसके दुइ दांत टूट गए। सुना हाथ-पैरा म भी बडी चोट आई है।"

'राम राम!" बाबा उदास हो गए। एक क्षण चुप रहकर फिर रामू से कहा—"चल बेटा, रविदत्त को देख आवें।"

बाबा ज्योंही चबूतरे से उठने का उपक्रम करने लगे त्योंही राजा ने आखें तरेरी और तर्जनी उठाकर बोले—'चुपाय के बैठो भइया अभी तुम इतने तगडे नहीं हुए कि वहां आ जा सको। हम तुम्हें नहीं जान देंगे।"

तुलसी बोले—'उसे इसी समय मेरी सहानुभूति की आवश्यकता है। नहीं तो उसका काशी मे रहना दूभर कर दिया जाएगा।"

राजा ने फिर भी अपनी टेक न छोडी कहा— देखो भैया, जब तक तुम हमें पहुंचाय नहीं देआगे तब तक हम तुम्हें मरने नहीं देंगे।'

बाबा हंसते हुए चबूतरे से नीचे उतर आए कहा—'भाई, जीना-मरना तो राम के हाथ है पर इस समय मैं रविदत्त के यहां जाने से रुक नहीं सकता। बैरभाव ही सही पर बेचारा मुझे हरदम याद तो किया ही करता है।' यह सुनकर राजा फिर चुप हो गए।

आठ-दस चेले-चांटिया और भक्तों की भीड से घिरे हुए महात्मा तुलसीदास जी महाराज एक गली के बाजार में प्रवेश कर रहे हैं। लोगबाग चबूतरों और दूकानों से उतर उतरकर उनके चरण छूते हैं। बाबा सबको आशीर्वाद देते और राम-राम उच्चारते। परिचितों के हाल चाल लेते हुए भीड़ के घेराव के कारण धीमे धीमे ही बढ पा रहे थे। रविदत्त की गली मे प्रवेश करते समय उनके पीछे एक छोटी-सी भीड इकट्ठी होकर चलने लगी थी। रविदत्त के द्वार पर पहुंचकर बाबा ने स्वयं ही आगे बढकर द्वार की कुण्डी खटखटाई। द्वार एक शोकमूर्ति युवती ने खोला। बाबा और भीड को देखते ही उसने चट से घूंघट डाला और दहलीज मे चली गई। चौखट के भीतर बाबा के प्रवेश करते ही वह उनके चरणों मे गिर गई। बाबा ने उसके मस्तक पर हाथ रखकर कहा—'अखण्ड सौभाग्यवती भव!' उसी समय घर के भीतर एक बुढिया का चीत्कार भरा क्रन्दन सुनाई दिया—'हाय रोदू। तू आमा के छाडिये कोथाय गेलो रे आमार खोका आमा शोनार बाछा।'

अखण्ड सौभाग्यवती का आशीर्वाद पाने वाली युवती ने एक बार सीधे होकर बाबा की ओर देखा और फिर पछाड़ खाकर गिर पड़ी।

"रामू इस बेटी को सभाल। भगत, कोई भीतर न आने पाए।" कहकर बाबा ने घर म प्रवेश किया।

सामने वाले दालान म रविदत्त धरती पर लेटा हुआ था। दो बूढे और एक बूढ़ी सिरहाने पर बठे हुए थ। बाबा को देखकर बुढ़िया का क्रन्दन और बढ गया। बाबा रविदत्त के पास बैठकर उसकी मुदी हुई एक आख खोलकर देखने लगे, फिर दूसरी भी खोलकर देखी। फिर एक वद्ध से कहा—"कौन कहता है कि जीव इस काया से निकल चुका है! रोना धोना बन्द करके राम-नाम कीतन करो। सब ठीक होगा, सब ठीक होगा।" कहते हुए वे फिर दहलीज की ओर आए और ऊचे स्वर मे कहा—'राजा, लोगो को भीतर बुला ला, जितना नाद गूजेगा उतनी ही शीघ्र इसकी महामूर्च्छा भग होगी।'

प० रविदत्त के फिर से जी उठने की घटना ने काशी म शोर मचा दिया। गली-गली म बाबा की जय-जयकार होने लगी।

एक दिन रविदत्त सपत्नीक दशन करने आया। दोनो ने साष्टाग प्रणाम किया। रविदत्त बोला— आप हम छोमा कोर दीजिए बाबा। हाम जोगदोम्बा त्रिपुर सुदरी के आदेश का ओवमानना किया, उसका दोण्ड भोगा। हामारा आर्धांगिनी भी हामको माना कोरता रहा, परन्तु हामको जोमजात ओोध बहुत वेशी रहा महाराज। शाव लोग हामको आपका विरुद्ध भोडका दिया। हामशे बेडो-बेडो आपराध हुआ महाराज।'

'क्रोध का कारण अपने म खोजो वत्स! तुम्हारे पिता तुम पर अका रण ही क्रुद्ध हुआ करते थे इसीलिए तुम्हारे भीतर विद्रोहवश तमस् भडका। अब तुम्हारी यह अर्द्धांगिनी जसा कहे वैसा करो। देखो, मैंने अपनी पत्नी का कहा माना तो मुझे राम मिल गए।

रात हुई अकेले म फिर रत्नावली आई। बाबा मुस्कराए, कहा—"बोलो मेरी मानसप्रथि आज तुम फिर क्यो आइ?'

'अभी तुम्हारे भीतर मेरे जीने के क्षण चुके नही हैं इसलिए आ गई। किन्तु चाहती हू कि शीघ्र से शीघ्र वे चुक जाए जिससे कि तुम्हारे अतिम क्षणो म तुम्हारे और राम-जानकी के बीच मे और कोई भी बिम्ब शेष न रहे।'

बाबा गम्भीर हो गए, बोले—'सरी उपकारिणी हो। मुझे लगता है रत्ना, कि भक्ति और माया में कोई अन्तर नही है। भक्ति प्रेम है और माया प्रेम की परीक्षा। मैं तुम्हारी हर परीक्षा के लिए तैयार हू प्रिये।"

'तब हे मेरे सचेत अर्द्धांग, आप अपने बीते क्षणो की छनाई बिनाइ करें आत्मालोचन रूपिणी अलकनदा जब चेतना भागीरथी से मिलेगी तो आप ही आप राम-रूप-गगा बन जाएगी।" रत्नावली उनकी बाईं बाहु से सटकर ऐसे बैठ गई जैसे लता वक्ष का शृगार भरा आधार ले लेती है। बाबा का चेहरा शात, किन्तु अधिक कातियुक्त हो गया था। वे गम्भीर भाव से मुस्कराए कहा

— 'अच्छा तो फिर, जब ते राम ब्याहि घर आए ।"

"हां जिस दिन मुझे विदा कर लाए थे और सुहागकक्ष में जब हम-तुम पहली बार अकेले में मिले थे। याद करो, प्रिय वह रात !" शृंगारमूर्ति बन गई थी। × × ×

सुहागकक्ष मे नवयुवक तुलसी नई ब्याहुली का घूंघट उठाकर देख रहा है। रत्नावली के दिव्य सौन्दर्य ने उसकी दृष्टि स्तंभित कर दी है। आंखें मूंदे लज्जा में डूबी हुई रत्नावली अपने घूंघट को पति की चुटकी से खींचकर ढकने के लिए उतावली हो उठी। तुलसी ने यह हाथ भी हाथ से दबोच लिया।

रत्ना हाथों में फंसी चिड़िया की तरह आंखें मींचे निश्चल निस्पंद मुद्रा धारण किए बैठी थी। सजीवता उसकी लज्जा में थी वरना यों लगता था कि किसी कुशल मूर्तिकार ने लाजवन्ती की मूर्ति गढ़कर बैठा दी हो। मुग्ध आंखों से एकटक उसे देखते हुए तुलसी अपना आपा बिसार बैठे थे। सामने की सौन्दर्य राशि फूलों से लदी बगिया की तरह मोहक थी। गोटा सितारे टंकी गुलाबी चूनर में रत्ना का मुख उन्हें आकाशगंगा और तारों के बीच चन्द्रमा-सा झलक रहा था। उन्हें लग रहा था जैसे उसके निश्चल चेहरे पर लाज सुमधुर स्वरों वाले पक्षियों के कलरव की तरह गूंज रही हो। भावमग्न होकर वह कह उठे— 'लाखों रतियों को लजाने वाली यह रूप रत्न राशि पाकर जब बड़े वैभवशाली भी क्षण भर में अपना आपा लुटाकर भिखारी हो सकते हैं तो मैं तो जनम का भिखारी हूं। मेरे प्राण भी इतने मूल्यवान नहीं कि उन्हें इस छवि पर निछावर करके अपने आपको संतोष दे पाऊं।"

तुलसीदास की बात रत्ना के लज्जा मूर्च्छित भावों को सचेत कर गई। पलकें उठीं पुतलियां चमकीं, मानो म्यान से तलवारें निकल पड़ी हों स्वर भी लाज से बेलाग था वह बोली—"आपके प्राण मेरी सौभाग्य निधि हैं। उन्हें अब आप निर्मूल्य न कहें।' बात पूरी होते-न होते आंखें कटोरियों-सी भर उठीं। इन आंसुओं ने मानो फिर से लाज जगा दी। पलकें झुकीं, आंखों की सीपियों से गालों पर मोती लुढ़क पड़े। वह लाज भरा सौन्दर्य तुलसीदास के लिए पहले से भी अधिक मोहक हो गया। × × ×

रत्नावली बाबा के पास बैठी उलाहना दे रही थी— मुझे अपनी बातों से इतना इतना रिझाया फिर छोड़कर चले गए !'

रत्ना के मान को देखकर बाबा मुस्कराए और उसके सिर पर हाथ फेरते हुए स्निग्ध स्वर में कहा— 'तुम्हें छोड़ा कहां प्रिये ! रत्ना के प्रति मेरी रीझ ही तो राम भक्ति बनी। वह चिरतरुणी और अनन्त सौन्दर्यमयी है मैं अपनी राम रिझवार के लिए आज तक तुम्हारा ऋणी हूं। किसी पत्नी ने पति को ऐसा सौभाग्यवान नहीं बनाया होगा।'

चंचल चपल नयनों से बाबा को निहारकर रत्ना बोली—"राजकुमारी विद्योत्तमा ने मूर्ख कालिदास को कवि-कुल-गुरु बना दिया, किन्तु तुम जो कुछ भी

हो वह स्वेच्छा से बने हो। मैं बेचारी अपनी मूढ़ अहता के आघातों के सिवा और तुम्हें क्या दे सकी ?"

'तुम्हारा वह अहंकार मेरी चेतना-जड़ता को तोड़ने वाला हथौड़ा था। याद करो प्रिये, तुम्हीं ने मुझे मूलरूप से राम काव्य लिखने की प्रेरणा भी दी थी।"

रत्ना मुस्कराई, कहा—'याद है प्रिय, किन्तु मैं तो मात्र काव्यरचना की प्रेरणा ही दे सकती थी। यह रामचरितमानस तुम्हारी अन्त प्रेरणा का फल है।"

"वह भी तो तुम्हीं हो रत्ना। सच कहता हू कि जब गृहस्थ था तब तुम रत्नावली थी और जब विरक्त हुआ तब तुम्हीं मेरी रामरत्नावली बन गई।"

'यह तुम्हारी महानता है जो ऐसा कहते हो। मैं अपने दोष जानती हू। मुझे याद है जब मुसलमानधर्मियों के मेहदी अवतार की बहस छिड़ने वाले दिन मैंने तुम्हें गगेश्वर भैया का पक्ष लेकर पहली बार मानसिक आघात पहुचाया था।' × × ×

तुलसीदास अपनी बैठक में विराजमान हैं। घुघराले बालों और दाढ़ी-मूछों भरा उनका गौर मुख ऐसा फबता है कि मानो कोई राजा बैठा हो। माथे पर वैष्णवी तिलक, गले में सोने की जजीर और तुलसी की माला सुशोभित है। दोनों हाथों की उगलिया नग-जड़ी अगूठियों से चमक रही हैं। वे रेशमी धोती, रेशमी बगलबन्दी और रेशमी चादर ओढ़े अपनी गद्दी पर विराजमान हैं। उनके पास दाहिनी ओर तख्ती और मिट्टी की बत्ती रखी हुई है। एक पतली सी बही में हाथ से लिखा हुआ पचाग भी पास ही मे रखा हुआ है। कमरे मे चारो ओर दीवालों पर बने टांडों पर ग्रथों के रंग बिरंगे बस्ते ही बस्ते दिखलाई देते हैं। कमरे में बिछी चांदनी पर चार लोग पण्डित तुलसीदास के सामने विराजमान हैं। उनमें दो व्यक्ति अपनी पोशाक से मुसलमान नजर आते हैं। उनके अतिरिक्त राजा भगत और रत्नावली के चचेरे भाई गगेश्वर बैठे हुए हैं। एक मुसलमान सज्जन तुलसीदास से कह रहे हैं— हमारे नवाब साहब ने पुछवाया है कि हमारे मजहब में इन दिनों जो मेहदी की आमद आमद का शोर है वह क्या सच साबित होगा ? देखिए ऐसा परचा निकालिएगा पण्डज्जी जिसमें कोई चूक न हो।'

तुलसीदास ने अपनी लिखने की तख्ती और बत्ती उठाते हुए कहा—'किसी एक फूल का नाम लीजिए।'

'गेंदा।'

पट्टी पर कुछ अक लिखते हुए तुलसीदास बोले — आपको भी बसन्त फूल ही याद आया ? खैर " फिर कुछ गणना करके कहा—' मिरजा जी आपके प्रश्न का उत्तर बड़ा अटपटा है—ऐसी कोई शक्ति तो आ सकती है जो धर्म द्रोहियों को दण्ड दे। पर किसी दिव्य अवतारी पुरुष के आने की बात मेरी समझ में नहीं आती।'

मिर्जा जी बोले—"एक बार और बारीकी से विचार कर लीजिए पण्डित जी। तलवार की धार पर चलने जैसा मसला है। हमारे हुजूर नवाब साहब बकाबूल

उल् मुल्क मुल्ला मुल्तानपुरी के हिमायती बनें या मौलाना शेख अब्दुन्नवी के ?"

तुलसीदास ने फिर गणना पर गौर करके कहा—"इन दोनों में से किसी के चक्कर में पड़ना उचित नहीं। यह दोनों ही डूबती नाव हैं।"

मिर्जा जी ने चकित दृष्टि से तुलसीदास को देखकर फिर अपने साथी से भेद भरी दृष्टि मिलाई। मिर्जा जी के साथ वाले व्यक्ति अब्दुस्समद खां ने गम्भीर स्वर में पूछा—'और शेख मुबारक ? तनिक इस नाम पर भी गौर कीजिए।'

तुलसीदास ने शेख मुबारक नाम के अक्षर गिनकर कुछ विचार किया और कहा—'यह व्यक्ति तपस्वी है। बड़ा अभागा और साथ ही बड़ा सौभाग्यशाली भी है।"

खां साहब चकित दृष्टि से तुलसीदास को देखने लगे, फिर कहा—'आपकी गुरू की दो बातें बिलकुल सच हैं। शेख साहब बड़े आलिम और तपस्वी हैं अभागे भी हैं। मगर इनके नसीबे के चमकने वाली बात पर मुझे सन्देह है।"

तुलसीदास ने कुछ गौर करके कहा—'सन्देह की गुंजाइश नहीं। घटाटोप बादलों के बीच छिपा सूर्य भी अन्ततोगत्वा चमक ही उठता है।"

सुनकर मिर्जा जी और अब्दुस्समद खां के चेहरे चमक उठे मिर्जा जी ने झटपट अपना दाहिना हाथ बढ़ाया। उधर खां साहब के कलेजे में भी वही जोश उमगा, खुशी में एक बार और होंठ दबाकर हाथ मिलाते हुए कहा—"मैंने क्या कहा था मिर्जा जी ?"

मिर्जा जी चटपट तुलसीदास के आगे सोने की एक मोहर रखकर बोले—पण्डज्जी, अब आप हमारी तरफ से कोई ऐसा पोजा पाठ कर दीजिए कि जिससे हुजूर नवाब साहब यह बात मान जायं।'

गंगेश्वर ने सामने सोना देखा तो उनकी आंखों में ईर्ष्या की कनिया चमक उठी। उनका अधीर लोभ चेहरे पर ही नहीं उनकी काया में भी चमक उठा। बैठे ही बैठे वे आगे बढ़ गए, मानो कई दिनों के भूखे ने भोजन देखा हो। फिर एक नई सूझ से सधकर कहा—'मिर्जा जी पहले यह तो तय हो जाय कि शास्त्री जी ने आपके प्रश्न का ठीक उत्तर दिया है या नहीं।"

पण्डित तुलसीदास शास्त्री का चेहरा क्रोध से चमक उठा। मिर्जा जी और अब्दुस्समदखां पलटकर गंगेश्वर को देखने लगे। चांदनी पर रखी हुई मोहर लपककर उठाते हुए मिर्जा जी ने गंगेश्वर से पूछा—'आपका क्या ख्याल है ?'

मेरा ख्याल है कि प्रश्नलग्न पृष्ठोदय सिंह की है इसलिए आपका काम विफल होगा।'

तुलसीदास ने गंभीर स्वर में कहा—गंगेश्वर सावधानी से विचार करो। प्रश्नलग्न कर्क है और चन्द्रमा तथा वृहस्पति इस समय मेष में हैं। मेरा वचन झूठा नहीं हो सकता।'

'मैं आपकी बात से सहमत नहीं हो सकता शास्त्री जी।"

सुनते ही राजा भड़क उठे झिड़ककर कहा—पाठक जी पहले अपने विवेक का मीन-मेख मिटाओ फिर भैया की चूक बताना। ये तुमसे ज्यादा पढ़े हैं।'

मिर्जा जी बोले—"हां यही हमने भी सुना है। आजकल चारों तरफ इन्हीं

का नाम फैल रहा है। हम दीनबन्धु महराज के पास जाते थे, पर अब तो वे भक्ति साधते हैं और ये उनके दामाद हैं।"

गंगेश्वर ने उनकी बात काटकर तीखे स्वर में कहा—"पर मैं उनका सगा भतीजा हूं। उनका सारा कामकाज भी अब मैं ही देखता हूं। यह भले ही हमारे वंश की इतनी सारी पोथियां पा गए हों पर तन्त्र मन्त्र हम ही सिद्ध हैं।"

गंगेश्वर का यह कमीनापन राजा भगत को बहुत खला, वे बोले—"मिर्जा जी, हमारे तुलसी भैया काशी जी में पढ़के आए हैं।" राजा भगत अभी कुछ और ही कहने के ताव में थे कि बीच ही में तुलसीदास बोल उठे—"मिर्जा जी, आप गंगेश्वर जी से ही काम कराएं। वे अच्छे तान्त्रिक हैं।"

अब्दुस्समद बोले—"यह तो ठीक है महराज मगर मैं मुश्किल में फंस गया हूं। यह तय होना ही चाहिए कि आप दोनों में किसकी बात ठीक है।"

तुलसीदास बोले—"अब ठीक यही है खां साहब, कि गंगेश्वर से काम करवाइए। प्रश्न को जो अर्थ यह मानते हैं यदि वह सही होगी तो आपको इनसे काम कराने का लाभ भी अवश्य मिलेगा।" कहकर तुलसीदास तुरन्त अपने आसन से उठ पड़े और भीतर चले गए। उनके उठते ही राजा भगत भी बाहर चले गए।

गंगेश्वर अपने ग्राहक को जिस समय तुलसीदास की बैठक में पटा रहे थे उस समय तुलसीदास रसोई में काम करती हुई रत्नावली के पास आए। दालान के खम्भे पर एक हाथ रखते हुए वे बोले—"सुनती हो, गंगेश्वर से कह देना कि अब वह मेरे यहां न आया करें।

रत्ना ने चौंककर कहा—"क्यों ?"

"वह भले ही तुम्हारा भाई हो, पर मैं अपने घर में बैठकर उस मूर्ख के द्वारा किया जाने वाला अपना अपमान भविष्य में नहीं सहूंगा।"

"आपका क्या अपमान किया मेरे भइया ने ?"

"रत्ना, मैं जा रहा हूं।" गंगेश्वर ने आंगन में प्रवेश करते हुए जोर से कहा।

"अरे कहां, भइया ? रसोई तैयार है। जीम के जाओ।"

"नहीं, वह ऐसा है कि मेरे हाथ में थोड़ा काम आ गया है। मुझे तुरन्त जाना है। नवाबी नाव में चला जाऊंगा।"

रत्नावली पल्ले से हाथ पोंछती हुई बाहर आई, उसने कहा—"भइया, तुमने इनका क्या अपमान किया ?"

गंगेश्वर दोनों से नजरें कतराकर ऊपर की ओर देखते हुए लापरवाही से बोला—"मैंने किसीका अपमान नहीं किया। बात पापी पेट की है। जब से काका अपना काम बन्द कर दिए हैं तब से मेरी समस्या यह है कि मैं अपना पेट कैसे भरूं ?"

"यदि यही बात थी तो मुझसे अलग ले जाकर कह सकते थे। एक मूठ टटा उठाकर तुमने मेरे ही घर में मेरा अपमान करने का साहस क्यों किया ?"

तुलसीदास की इस तेहे भरी बात पर नाक सिकोड़कर लापरवाही से अपना

सर झटकते हुए गंगेश्वर ने कहा—'मेरी समझ में जो या सो किया, आगे भी जो आएगा करूंगा।"

'अब तुम कभी भी मेरे घर की देहली नहीं चढ़ सकोगे, गंगेश्वर !"

रत्नावली के चेहरे पर तुरंत ही तमक आ गई। आगे बढ़कर भाई से कहा—'जब तक मैं जीवित हूं तब तक इस घर में तुम बराबर आओगे भइया। इनकी बात का बुरा न मानना।"

लेकिन तुलसीदास को अपनी पत्नी की बात से और भी बुरा लगा। कड़क कर बोले—गंगेश्वर, अब तुम मेरे घर क्या इस गांव में भी आओगे तो बिना पिटे नहीं लौटोगे।"

गंगेश्वर अलगनी पर टंगा अपना धोती अंगोछा जल्दी से उठाकर बैठक वाले कमरे में भाग गया।

गंगेश्वर के जाने के बाद रत्नावली चकित मुद्रा में अपने पति का मुख देखने लगी। तुलसीदास का चेहरा अब भी आवेश में तमतमा रहा था। रत्नावली के मन पर तुलसीदास के इस क्रोध की प्रतिक्रिया क्रोध में ही हुई। उसकी सुन्दर आंखें दहकते अंगारों-सी चमक उठीं। उसने कहा—आपने मेरे पीहर का अपमान किया है, मैं इसे नहीं सह सकती। कहकर वह भीतर चली गई। तुलसीदास अपनी पत्नी को घूरकर देखने लगे।

उन्हें अपनी पत्नी का बड़ा ही रीझ-भरा और सुहावना रूप पहली बार असुन्दर लगा। उन्हें लगा कि जैसे वह चेहरा कालिख से पुत गया हो और उसमें लुभावनी आंखों की सफेदी भयावनी हो गई हो। तुलसीदास का सुन्दरता प्रेमी कविमानस स्वयं अपनी ही कल्पना से सिहर उठा। वे अपने मन में अपनी प्रिया का ऐसा विरूप बिम्ब उभरने के कारण स्वयं अपने में लज्जित भी हुए। उन्होंने अपना सिर उठाकर दुबारा अपनी पत्नी को देखा। चकले पर रोटी बेलते हुए रत्नावली की मेंहदी रची उंगलियों में बेलन मानो जानदार होकर किलोलें कर रहा था। दाहिने गाल पर लटक आई बालों की एक लट हवा में हल्की-हल्की हिल रही थी और इसी हिलने से तुलसीदास के भीतर वाली कालिख पुती रत्नावली उजली पूर्ववत सुन्दर और सदा की तरह मनोहारिणी बन गई। यही नहीं मन के पश्चात्ताप में उन्हें वह अपनी प्रिया का लुभावनापन अति रंजित होकर लुभाने लगा। लेकिन सौन्दर्य-बोध की यह सारी प्रक्रिया जब अपनी तह में बैठकर अपनी पूर्णता पाने का प्रयत्न करने लगी तो रोष से फूलता हुआ स्वाभिमान उसके आड़े आया। सारा सद्भाव होने हुए भी उन्हें अपनी पत्नी का अन्याय पक्ष की ओर जाना अच्छा नहीं लगा था। उनका न्याय-बोध उनकी सौन्दर्य रीझ के बावजूद राजी नहीं हो पाता था। वे अपनी रीझ के कारण कुछ कुछ शान्त तो हुए किन्तु न्याय से रूनेज भी बने रहे। उन्होंने कहा—तुम अशिक्षित स्त्री की तरह बिना समझे-बूझे अन्याय का पक्ष लोगी ?'

मेंहदी रची उंगलियों में फंसा नाचता बेलन एकदम से थम गया। झुका सिर उठा और झटककर बालों की लट सरकाई, फिर सीधे देखकर कहा—पीहर का पक्ष लेना नारी मन का नैसर्गिक न्याय है। मैं यदि लड़का होती तो

मेरे पितृ की पीढियों से पुजती आ रही गद्दी आज यों सूनी न होती।" बेलन दूनी तेजी से मेंहदी रची उंगलियों में नाचने लगा।

तुलसीदास की आंखों के सामने रत्नावली अब यों झलकी कि सलोना-सुहाना मुखड़ा, मेंहदी रचे, मुंदरी सजे नाजुक हाथ और महावर लगे पैर सब सुन्दर थे, केवल वक्षभाग काला था। वैसा ही कालिख पुता विरूप जैसा कि कुछ क्षणों पहले उन्हें रत्ना का मुख झलका था। बार-बार अपनी सुन्दरी प्रिया का विकृत बिम्ब झलकना उन्हें रुचिकर न लगा। लेकिन रत्ना की बात भी तो रुचिकर नहीं लग रही थी। वह बोले, स्वर में हृदय और बुद्धि दोनों ही की खिन्नता बात के साथ ही प्रकट होने लगी, कहा— तुम्हें मेरी उन्नति अच्छी नहीं लगती?" रत्नावली का बेलन तनिक थमा और इसी थमाव के साथ चकले पर रोटी फेरने के लिए उंगलियां सकुचते हुए चलीं। हाथों और उंगलियों की यह गति मानो रत्नावली के मन की गति का प्रतिबिम्ब थी। सकोच भरे सधत स्वर में आंखें झुकाए हुए कहा—"आपकी उन्नति न चाहने का प्रश्न ही नहीं उठता, दुखी तो इस बात से हूं कि जिस द्वार पर बड़े-बड़े राजे-रजवाड़ों के हाथी आकर खड़े होते थे, उस द्वार पर अब केवल कुत्ते ही लोटा करते हैं। गंगेश्वर भैया अपनी वह साख न बना सके।"

गंगेश्वर ने मेरे घर में बैठकर मेरा अपमान किया, इसे मैं कभी क्षमा नहीं करूंगा। वह निश्चय ही अब मेरे घर में कभी प्रवेश नहीं कर पाएगा।"

रोष से रोष की ज्योति जागी। रत्नावली का चेहरा फिर तमक उठा, बोली 'बप्पा यदि उन्हें किसी काम से यहां भेजें, मुझे बुलाने ही भेजें?"

'मैं बप्पा से भी स्पष्ट कह दूंगा। इस व्यक्ति को अब मैं अपने घर में कदापि नहीं घुसने दूंगा।'

पुत्रहीन होने के कारण क्या उन्हें बुढ़ापे में यह अपमान भी सहना पड़ेगा?" कहते हुए रत्ना की आंखें छलछला उठीं, होंठ कांपने लगे।

तुलसीदास का न्याय पक्ष अपनी रीझ के आगे कुछ-कुछ अपराधी-सा अनुभव करने लगा। यह अनुभूति व्यर्थ की है, किन्तु है। क्या करें? रत्ना के आंसू कैसे देखूं?' अपने मोह और न्याय में विचित्र-सा समझौता करते हुए वे बोले, तुम स्वयं भी दो-तीन बार मुझसे गंगेश्वर की बुराइयां बखान चुकी हो। बप्पा भी उससे संतुष्ट नहीं हैं, यह भी तुमने ही कहा है।"

'पीहर का कुत्ता भी प्यारा लगता है, यह तो मेरा भाई है।" कहकर रत्नावली तेजी से रसोई में चली गई। तुलसीदास किंकर्तव्यविमूढ़ से सिर झुकाए खड़े रहे। उन्हें अपने वैवाहिक जीवन के इन थोड़े से दिनों में रत्नावली से यह पहला आघात लगा था। जिसकी विद्या सूझ-बूझ, प्रबन्धपटुता और सर्वोपरि जिसके रूप और सौंदर्य के प्रति तुलसीदास इतने अधिक अनुरक्त हो गए थे कि इसमें अब वह किसी भी बुराई को देखने की कल्पना तक नहीं कर सकते थे, वही रत्नावली तर्क और न्याय से परे हटकर उनका विरोध कर रही है। 'पति से अधिक उसे अपने पीहर का कुत्ता प्यारा लगता है। कैसी ठेस पहुंचाने वाली बात है। नहीं, इस बात पर मैं कदापि समझौता नहीं करूंगा। रत्नावली को

यह समझना ही होगा कि विवाह के बाद स्त्री के लिए पति ही सर्वोपरि है। उसके कुतर्कों और अन्यायों के प्रति भी उसे सादर-सप्रेम सिर झुकाना चाहिए फिर मैं तो न्याय की बात कर रहा हूं। मेरे घर में बैठकर व्यंग्य में मेरा अपमान करके मेरी रोटी छीनने वाला व्यक्ति अब इस घर में कदापि नहीं आ पाएगा। रत्नावली मुझे भले ही प्राणों से अधिक प्यारी लगती हो, पर उसके इस कुरूप को मैं *कदापि प्रश्रय नहीं दूंगा।* तुलसीदास *इस निश्चय के साथ फिर अपने* बैठके में चले गए।

२५

थोड़ी देर तक कमरे में एक सिरे से दूसरे सिरे तक तेजी से चक्कर काटते रहे। उनके मन की उबलन थम नहीं पा रही थी। कुछ हो जाय मैं रत्नावली के इस हठ को प्रश्रय नहीं दूंगा नहीं दूंगा, कदापि नहीं दूंगा। उन्हें अपने पति का मान रखना ही होगा। तुलसीदास ने अपने बैठके के द्वार बन्द किए और भीतर के दालान में जोर जोर से खड़ाऊं खटकाते हुए वे देहलीज की ओर बढ़े। रसोई घर की ओर चोर कनखी से ताका। रत्ना अब भी रोटियां बेल रही थी। उनके मन ने चाहा कि रत्ना एक बार नजर उठाकर उन्हें देखे और बाहर जाने के सम्बन्ध में कुछ पूछे या कहे पर ऐसा कुछ भी न हुआ। तुलसीदास के पैरों में नया आवेश भर गया था। वह खट-खट करते देहलीज तक पल भर में पहुंच गए। फिर ठिठके, कान भीतर की ओर लगाए परन्तु आशा अब भी झूठी साबित हुई। रत्नावली ने उन्हें न पुकारा। वे घर से बाहर निकल आए और धीरे धीरे संकट मोचन महावीर की ओर बढ़ने लगे। बाजार के दिन थे। गांव में भीड़ भड़क्का था। तुलसीदास अब तक इस क्षेत्र के नये गौरव बन चुके थे उन्हें अनेक लोग झुक-झुककर प्रणाम कर रहे थे। सबको आशीर्वाद देते, शिष्टाचार में मुस्कराते हुए ज्यों-ज्यों वे आगे बढ़ते गए त्यों-त्यों उनके मन का उत्ताप धीमा पड़ता गया। किंतु यह ठंडक गर्मी से भी अधिक गर्म थी। मेरी इस प्रतिष्ठा को गंगेश्वर ने आघात पहुंचाया। मैं यदि एक बार उसके आगे झुक गया तो वह मूढ़ दम्भी अपनी बहन का पल्ला पकड़कर मुझे चौपट ही कर डालेगा। यह मिर्जा जी और खां साहब आदि फिर मेरे यहां कभी न आएंगे। और भी अनेक यजमान भ्रम में पड़कर आना छोड़ देंगे। वह संकटमोचन तक पहुंच गए। भीड़ अच्छी थी। एक उपाध्याय जी को तुलसीदास जी से कहकर राजा भगत ने मन्दिर का पुजारी बनवा दिया था। दर्शनार्थी भीड़ से प्रसाद ग्रहण कर रहे थे। चढ़ावे में आए हुए बताशा और गुड़धानी का कुछ भाग मटकों में डालकर जल्दी-जल्दी वे प्रसाद के दोने लौटा रहे थे। उनका छ-सात वर्ष का लड़का भक्तों के कपालों पर सिंदूर के टीके लगा रहा था। चारों ओर 'जय सीताराम, जय बजरंगबली' की जयकारें उठ रही थीं। एक जंजीर में बंधे चौरासी घंटे एक के बजाने से एक साथ

बजकर अविराम गूज उठा रहे थे। तुलसीदास चबूतरे पर चढकर बजरगबली को प्रणाम करके उपाध्याय जी के पास ही बठने लगे। उपाध्याय जी ने झटपट अपने लडके से कहा, "गनपतिया, पहले काका के लिए झटपट आसन बिछा दे।"

'नाही क्या करना है!"

"नही भैया, ऐसे न बैठो," इसी बीच मे सिन्दूर लगाना छोडकर गणपति ने आसन बिछा दिया। तुलसीदास शातभाव से बैठकर हनुमान जी की ओर निहारने लगे। दर्शनार्थी सकटमोचन से अपने सकटों को मोचने के लिए गोहारें लगा रहे थे। रोगी आत्मीय अच्छा हो जाए, परदेश गया हुआ पति जल्दी लौट आए अपना खेत जबरदस्ती उजाडने वालो को बजरगबली दण्ड दें—आदि तरह-तरह की मानव दुर्बलताए और आकाक्षाए प्रार्थना के रूप मे हनुमान जी के बहाने उनके सामने आ रही थीं। उनका जी चाहा कि वे भी गुहारकर कह 'बजरग मेरी रत्नावली को सुमति दो। गगेश्वर की ईर्ष्या के उत्तर म मेरी प्रतिष्ठा को और बढा दो।' पर अपन मन म शब्दहीन होकर लहरानवाली इन बातो को तुलसीदास ने शब्द की काया न दी। वे बडी देर तक बठे दुनिया का तमाशा देखते रहे।

भूख जोर की लग रही थी। चबूतरे पर सकटमोचन के मदिर की भीड अब प्राय छट गई थी। पुजारी जी मदिर की धोवाधाई करके रोटी खाने के लिए घर चलन लगे। तुलसीदास से पूछा— भइया, क्या रोटी-वोटी खाके घर से निकले हो?"

तुलसीदास के मन म इस प्रश्न ने विचारो की लहरें उठा दी। 'झूठ बोलू? बजरगबली के स्थान पर बठकर? नही, राम बोला झूठ नही बोलेगा।' उत्तर दिया— नहीं अब जाऊगा।'

भइया, हमारी एक अरदास है।'

'बोलो।"

"बात यह है भइया, कि हम तो, तुम जानो, न पढे न लिखे। हमारे बप्पा बिचरऊ भी कुछ ऐसे ही रहे। बाबा हमारे बडे भारी पडित थे। सो एक बार तुर्कों ने गाव लूटा तो उनसे लडते हुए वीरगति को प्रापत होइगे। सब पोथी-पत्तरे घर-गोरू नष्ट होइगे। बप्पा हमारे जो रहे सो का कहैं भइया बजरगबली स्वामी के सामने झूठ बोल म हमें बडा सकोच हुइ रहा है और बात कहते भी नीक नही लगती। वह जानत हो का करते रहे?" कहते-कहते पुजारी जी अपनी पुजापे की गठरी रखकर तुलसी पडित के सामने बैठ गए और कहने लगे— 'बप्पा हमारे सच्चे झूठे मत्र पढके किरिया-करम, ब्याह-जनेऊ कराते थे।"

तुलसी मुस्कराने लगे। पुजारी बोले— हमारे पिता तो फिर भी भले रहे, हम आपको एक ऐसे ही पण्डित जी की आखो देखी किहानी सुनाते हैं। वह हमरे गाव में पडोस म ही रहता रहा। हमारे साथ-साथ उसने कई बार काम भी किया था। सो वो नशल पेल तिलक-उलक लगाय के झूठे पोथी-पत्रे बगल म दबाय के नित्त मरघटे मे सारी किरिया-करम करवावै और मन्तर जानत हो कैसे पढता रहा? (ऊची आवाज म) ओम् नमो-नमो गरुडो-गरुडा गरुड़ोबुवा नारायनो

केसवो हरीह (धीमे बुदबुदाते हुए) सार नरक जाय कि सरगै, हमारे ठेंगे से। (फिर तनिक ऊंच स्वर म) ओम् नमामी नम ओम् जमदूताय नम (फिर धीमे स्वर म) ओ जो यहिका बेटवा हमका अच्छी दच्छिना देय तौ सारे का सरग मिल नाही तौ (ऊंच स्वर म) स्वाहा-स्वाहा-स्वाहा।"

पुजारी जी का ऊंचे-नीचे स्वर मे सुनाने का ढग और इन मत्रो के शब्द सुनकर हसी के मारे तुलसीदास के पेट मे बल पडने लगे। पुजारी जी का लडका गणपति भी खिलखिला कर हस पडा। तब पुजारी जी अपने अभिनय की गभीर मुद्रा उतारकर स्वय भी हसते हुए अपने बेटे से कहने लगे—'अरे हसत का है बचवा, ये तो कहौ कि सकटमोचन ने हमारी सुन ली अपनी सरन मे हिया बुलाय लिया, नहो तो बेटा तुझे भी मैं यही सब मतर रटवाता। पापी पेट जो ठग विद्या न सिखाव और जो न कराव सो थोडा है।

पुजारी की बाता की करुणा से प्रभावित हाकर तुलसीदास की आखें भर आइ चेहरा गभीर हो गया। उन्होंने कहा—"बुभुक्षित कि न करोति पापम। अस्तु यह सारा प्रसग उठाने का तुम्हारा आशय मैं समझ चुका हू। गणपति, मेरे साथ चल! मैं आज ही तुझे तेरे गुरु को सौंप दूगा और सुमुहूर्त म तेरा विद्यारम्भ हो जाएगा।'

पुजारी जी की आखें आनन्दाश्रुओ से छलछला उठी। सारा शरीर गद्गद हो गया था। वे तुलसीदास के पैरो म गिर पडे कहा— तुलसी भया हमारे बाबा की आत्मा आपको जरूर असीसेगी।'

अपने दोनो हाथ उनके कधा पर रखकर उठाते हुए तुलसीदास बोले—'उठो-उठो, यह तो मेरा धम है। इसे दो गुरु मिलेंगे मैं और तुम्हारी भौजी।"

सकटमोचन ने मानो गणपति के रूप मे रूठे पति को अपनी रूठी पत्नी के पास लौटने का एक बहाना दे दिया था।

घर लौटे। रसोई के आगे वाले दालान मे रत्नावली उदास बठी श्यामो की बुआ की बातें सुन रही थी। दहलीज मे घुसते ही श्यामो की बुआ की बातें उनके कानो मे पडने लगी। वह कह रही थी—'आज जाने कहा भटक गए हमारे भइया। अपनो भले न रहे पर तुम्हारी भूख प्यास भी बिसर गई! हाय भूख के मारे कसा कुम्हिलाय गया है तुमरा चेहरा।"

इस बात ने तुलसीदास के परा मे बिजली भर दी। मन अपराधी अनुभव करने लगा। दहलीज के सामने वाले दालान का हिस्सा पार करके आगे मुडते ही रसोई घर के आगे दीवार के सहारे हथेली पर गाल टिकाए बठी हुई रत्नावली के मुख पर चिन्ता और उदासी के गहरे बादल छाए हुए दिखे मगर मगर अब कहा रही उदासी? चार आखें मिली और दो चेहरे खिल उठे। गणपति का हाथ पकडकर उसे आगे बढाते हुए कहा— लो तुम्हारे लिए एक शिष्य लाया हू।"

श्यामो की बुवा उलहना देती हुई बोली— कहा चले गए थे भइया? सारा दिन निकल गया भौजी बिचारी भूख के मारे कुम्हिलाय गइ।

तब तक रत्नावली उठकर बाहर से आए हुए पति के पर धुलाने के लिए तारे की कलसिया लेकर आगन के कोने म खड पति क पास पहुच चुकी थी।

तुलसीदास स्वय अपने पैर धोने के लिए झुके किन्तु उसके पहले ही रत्नावली के हाथ कलसिया से पानी डालने और पैरो की धूल धोने मे लग चुके थे। एक वार झुके हुए पति की आखो मे आखें डालकर सुहागिन ने मान और करुणा के अनोख सगम वाली दृष्टि से पति को निहारा। तुलसीदास ने देखा और लजाकर दृष्टि फेर ली। वात का पक्ष बदलते हुए उन्हाने फिर वात उठाई, वहा— पण्डितो के परिवार का लडका है। दुर्भाग्यवश दो पीढियो तक इसके पुरखे विद्यावचित रहे। इसे समय बनाकर तुम यश पाओगी।"

श्यामो की बुआ, केवल अपने पद से ही नही, काया से भी भारी भरकम थी। पन्द्रह-सोलह वर्ष की छोटी-सी आयु मे भी वह अपनी मोटी काया के कारण आयु से पाच छ वर्ष अधिक वडी लगती थी। सालिगराम की बटिया जैसी गोल गोल श्यामो की बुआ रसोई घर के दालान म आते हुए अपने भइया से आखें नचाकर बोली— सात जलम मे भी हमारी भौजी जसी धरवाली किसी को नही मिलती भइया बताये देती हू।"

तुलसीदास मुस्करा कर बाले— अरे सात क्या सत्तरह जन्मा म नही मिलेगी—न इन-सी भौजी न तुम-सी ननदी।"

मुह मटका कर, आखें नचाकर श्यामो की बुआ बोली—"ऊ, हम तो तुमरी बात कह रहे हैं। हमारी भौजी जैसी सुन्दर कोई बडी से बडी रानी-महरानी भी नहीं हायगी।'

दासी तब तक दालान म पीढा और चौकी विछा चुकी थी। तुलसीदास ने उसपर वठते हुए बालक के लिए भी पास ही मे पीढा चौकी लगाने की आज्ञा दी, फिर मुस्कराकर कहा— भाई हमारी जिजमानिना मे अनेक स्त्रिया तुम्हारी भौजी से अधिक सुन्दर हैं। हम तो उन्ह देख-देखकर लटटू हो जाते हैं।"

'ऊ न कहौं। हम भरमाने चले हैं। अरे हमी नही सारी दुनिया जानती है कि सास्त्री महराज हमारी भौजी के नचाए नचाते हैं। तुमरे आगे राजा इन्नर की अपछरा भी आ जाय तो तुम उसे भी भौजी के आगे छी कर दोगे।

रसोई घर के भीतर चूल्हा फिर से दहक उठा था। तवा चढ चुका था। चकला वलन आगे सरका कर फुरती से आटे की लोई बनाती हुई रत्नावली के चेहरे पर, बाहर दालान मे चलनेवाली बातों को सुनकर सुहागिन का अभिमान और अपने पति के प्रति उल्लास भरी आस्था दमक उठी थी। उस समय उसके चेहरे पर ऐसा रुआब आ गया था कि बडी-बडी रानी-बेगमे भी उसके आगे झेंप जातीं। उसके हाथ फुर्तीले सेवक से भी अधिक चुस्तीले चल रहे थे।

बाहर दालान मे बठे तुलसीदास भीतर बैठी अपनी प्रिया को सतोषमग्न होकर निहार रहे हैं। भीतर के अधेरे मे रत्नावली की मुखमुद्रा कुछ अधिक उभरकर नही आ रही फिर भी जो झलक मिल रही है वह मानो प्राणा को भी प्राणान्वित करने की शक्ति रखती है। और उसी शक्ति से उल्लसित होकर तुलसीदास अपनी मुहबोली बहन से विनाद करते हुए बोले—'अच्छा यह बात है तो मैं भी तुम्हारे लिए दस-पाच बडी सुन्दर-सुन्दर भौजिया बकरी भेडो की तरह बटार के ल आऊगा। फिर तुम यह तो नही कहोगी कि एक ही गाजी

तुम्हारे बप्पा कथा के बहाने मुझे ले गए और तुम्हारी इस रसीली मखिया का चुग्गा चुगाकर मुझे अपने जाल में फसा लिया।"

"ये नही कहते कि मेरे बप्पा ने तुम्हारा उपकार किया, नहीं तो जनम भर कुवारे ही पड़े रह जाते।"

वह तो मैं चाहता ही था। सोचता था राम चरणों मे चित्त लगाऊं।"

"तो अब कर लो न अपनी चाहत पूरी। मैं कही कुएं-तालाब में डूबकर मर जाऊंगी, तुम्हें छुट्टी मिल जाएगी।"

अरे तब तो और भी आफत आ जाएगी। तुम्हारे साथ-साथ मुझे भी डूबना पड़ेगा।'

क्यों ?'

कांटे मे फंसे मच्छ की भला दूसरी गति ही क्या है!"

'हाऽऽ मैं ही तो तुम्हारे मार्ग का कंटक हू। ऐसा करो कि मुझे पीहर भेज दो और छुट्टी पाओ।"

तुम्हारे पीहर मे है कौन ? बप्पा तो क्षेत्र-संन्यासी होकर जमुना तट पर रहते हैं।'

'उससे तुम्हें क्या ? मैं स्वयं किसी पुरुष से कम हू ? बाप-दादा की गद्दी संभालूंगी खाने-पीने को बहुत मिल जाएगा।

तुलसी खिलखिलाकर हंसे और कहा—' कोई लुटेरा आएगा और पण्डित जी को ही उठाकर ले जाएगा। कहेगा कि चलो हमारे घर पर ही हमारी और अपनी कुण्डली बिचारो।' कहकर तुलसीदास फिर अट्टहास कर उठे।

पति का यह अट्टहास रत्ना के अहंकार की कुण्ठा बना, मुह फुलाकर झटके से उठ खड़ी हुई और तेजी से चल पड़ी। उसकी आंखों में आग और पानी दोनों ही चमक रहे थे।

तुलसीदास तुरत ही उठकर उसके पीछे लपके— अरे तुम तो सचमुच ही रूठ गइ।'

रत्ना की चाल और तेज हो गई। तुलसीदास ने हल्के से दौड़कर उसे अपनी बाहों मे बाघ लिया। छूटने के प्रयत्न करते हुए वह बोली—' छोड़ो, तुम्हें मेरी "

तुलसी का एक हाथ चटपट रत्ना के मुख पर चिपक गया बोले—"झूठी सौगंध क्या देती हो ? न तुम मुझे छोड़ सकती हो और न मैं तुम्हें।"

रत्ना फूट फूटकर रोने लगी। आश्चर्य और अपराधजनित भावना से तुलसीदास का चेहरा प्रश्नचिह्न बन गया। रत्ना के मुह पर रखा हुआ उनका हाथ उसके गालो के आसू पोंछने लगा और कहा— अरे मैं तो हसी कर रहा था रत्नू। पर ऐसी कोई बात तो कही नही जो तुम्हे यो चुभ जाए।" रत्ना की ठोड़ी उठाकर उसे अपनी ओर देखने के लिए बाध्य किया। पति की आखों से आंखें मिलते ही रत्ना ने अपना मुह उनकी छाती में छिपा लिया और सुबकते हुए कहा— पुरुष होती तो अपने पिता को बुढ़ापे में यों अनाथ छोड़कर तो न आना पड़ता।

सुनकर तुलसीदास के हाथो के बंधन ढीले पड़ने लगे। वे उदास और

गम्भीर हो गए, बोले—'किन्तु यह मेरा दोष तो नहीं, फिर मुझे क्यों लाछित करती हो ?"

छिटककर अलग खड़ी होती हुई रत्नावली ने पल्ले से अपने आसू पोछकर रुधे स्वर मे कहा—'दोषी मेरा भाग्य है। तुम्हे पाकर एक जगह मैं अपने आपको इतनी धन्य अनुभव करती हू कि अपने दुर्भाग्य पर बीच-बीच मे बावली खीझ उठ पडती है। मैं अपने आपसे विवश हू स्वामिन् ।" कहकर वह फिर पति की छाती मे मुह गडाकर फूट फूटकर रोने लगी। नर की छाती पर नारी का रखा हुआ मुख नर का पौरुष बन गया। तुलसीदास शरणागत प्रतिपादक समर्थ स्वामी की तरह बडे भाव से उस सौन्दर्य पर अपनी जान छिडकने लगे। उसे कसकर कलेजे से चिपका लिया और उसके गाल पर हाथ फेरते फेरते स्वय उनकी आखें भी प्रिया की न थमने वाली हिचकियो से उमड पडी। वनक्रीडा का सहज उल्लास दोनो के लिए समाप्त हो चुका था।

सहसा एक गाय विकल रभाती और दौडती हुई उधर आई। रत्ना रोना भूलकर डर के मारे अपने पति की छाती मे और भी सिमट गई।

गाय ने अपनी गहरी काली प्रश्न भरी आखों से उन्हें देखा और फिर वन मे आगे दौड गई। तुलसी बोले—'कितनी विकल दृष्टि थी इसकी।"

"इसका बछडा खो गया है।' कहते हुए रत्ना पति से अलग होकर खडी हो गई। उसके चेहरे पर विकलता थी।

तुलसीदास उगलियो पर गणना करने लगे फिर कुछ विचार कर बोले—अरे, वह यहीं कहीं किलोलें कर रहा है अभी अपनी मा को मिल जाएगा। चिन्ता न करो।'

रत्ना मुस्कराई। चेहरे पर नटखटपन झलका, फिर लाज भरी आखें नीचे झुकाकर धीमे स्वर मे कहा—'बच्चे मा को बडा कष्ट देते हैं।"

तुलसी बोले—किन्तु तुम्हें उससे क्या ?" फिर सहसा एक नये सोच से आखें चमक उठीं। रत्ना का हाथ पकडकर पूछा—"क्या तुम मा बनने वाली हो रत्ना ?"

रत्ना ने अपना लाज भरा मुख फिर पति की छाती मे छिपा लिया और नटखट स्वर मे कहा—आप प्रश्न विचार लीजिए न।"

तुलसीदास ने कसकर अपनी प्रिया को बाध लिया। वह रम्य वन, सारा वातावरण उन्हें अपने मन के भीतर वाले समृद्ध सौन्दर्य के आगे फीका लग रहा था। प्रिया के सिर पर अपना सिर टेकते हुए उन्होंने अपनी आखें मूद लीं। भीतर सोने के सहस्रदल कमल-सा सौन्दर्य अपनी भावगध से उन्हे लुब्ध कर रहा था।

२६

सुबह का समय था। रत्नावली पूजा समाप्त करके ठाकुर जी के सामने दडवत कर रही थी। पास ही दालान में हिंडोले पर दस महीने का नन्हा तारापति सो

रहा था। एक दासी कन्या हिंडोले में लगी डोरी को एक हाथ से बीच-बीच में हिलाती हुई दूसरे हाथ से पचगुटटे खेल रही थी। इससे थोडी ही दूरी पर गणपति बठा हुआ पट्टी पर लिखा छान्दोग्य उपनिषद् का उपदेश जोर-जोर से रट रहा था। उसका स्वर मानो नट के बन्दर सा था जो सोटे के भय से अपने करतब दिखलाने को बाध्य था। उसकी आखें आकाश से लेकर ठाकुरद्वारे में पूजा के आसन पर बठी गुरुआइन और पचगुट्टे खलती हुई दासी पुत्री तक दौड दौड कर तमाशा देखने म व्यस्त थीं। उसके दोनो हाथ मक्खिया उडाने और शरीर भर म जगह जगह उठ आने वाली खुजली को मिटाने में करवट चाकर की तरह व्यस्त थे—

गणपति पढ रहा था— बलवाव विज्ञानाद् भय विज्ञान से आरमबल श्रेष्ठ है। अपि ह् शत विज्ञान वताम् एको बलवान आकम्पयते। क्योंकि एक बलवान सौ विद्वानो को डराता है। स यदा बली भवति अथोत्थाता भवति, उत्तिष्ठन परि चरिता भवति परिचरन उपसत्ता भवति—बलवान होने पर मनुष्य उठ खडा होता है—वह जाता है गुरु के घर '

ठाकुर जी के आगे दण्डवत् प्रणाम करके उठते हुए रत्नावली ने घुडककर गणपति से कहा— फिर वही ! तोड-तोडकर क्यो पढता है ?"

गुरुआइन जी की घुडकी सुनते ही गणपति का ध्यान सजग हो गया। शरीर भर मे मचती हुई खुजली न जाने कहा गायब हो गई। स्वर पहरेदार-सा सजग हो गया। मन की तोतारटत शली जो कुछ देर पहले मरियल बुड्ढे-सी रेंग रेंगकर चल रही थी अब धावक सी दौडने लगी। रत्नावली पूजा वाले दालान से अपने मुन्ने के हिंडोलने के पास आई। अपने सोते हुए लाल तारापति को नयन भरके निहारा। दासी पुत्री मालकिन के आने से तनिक भी न चौंकी। उसके दोनो हाथ वसे ही अपने दोना कार्मों मे दत्तचित्त थे। रत्नावली ने कहा— चमेली जाकर पूजा के बतन माज डालो।" फिर हिंडाले से सोते हुए तारापति को गोद म उठाते हुए वह धीमे स्वर म अपने पति का रचा हुआ गीत गाने लगी— 'जागिये रघुनाथ कुवर, भोर भयो प्यारे।"

बच्चा अगडाई ल रहा था कि तभी घर म रत्ना के चचेरे भाई गगेश्वर ने प्रवेश किया। रत्ना ने हुलसकर कहा—' आओ आओ भइया, आज सवेरे-सबेरे इधर कसे भूल पडे ? (स्वर ऊचा करके) चमेली पैर धुलान के लिए पानी ला।"

आगन के किनारे पर धोने के लिए रखी हुई चौकी की ओर बढते हुए गगेश्वर बोले— भूल क्या पडे हम जानत रहे कि शास्त्री जी महाराज अभी लौटे न हुगे, इसीलिए चल आए। घडी आध घडी म उनके आने पर तो तुमसे बात करने का अवसर भी न मिल पाएगा।'

चमेली तबतक पानी का लोटा लाकर गगेश्वर के पर धुलाने के लिए तैयार खड़ी थी। रत्ना की आखें भाई की बात सुनकर लज्जानत हुई। गोद म आकर भी तारापति अभी चेता न था। उसे जगाना भूलकर रत्नावली ने दुखी स्वर म कहा— उनसे तुम्ह यो डरने की आवश्यकता नही भया, वे ता भोलानाथ हैं।'

पड़ती हुई पानी की धार में अपने पैर रगड़ते हुए गंगेश्वर ने व्यंग भरे स्वर में कहा—'हाँ, साक्षात भोलानाथ हैं। इधर कहा जिजमान तुम्हारा है और फिर उधर भूलकर उसे अपना बना लाए। तेरा पति ठगशास्त्र में भी पूरा पारंगत है।"

रत्ना को भाई की बात अच्छी न लगी, स्वर सतेज हुआ कहा—'आप बड़े हैं भइया, किसीको व्यर्थ ही दोष देना आपको शोभा नहीं देता। मिर्जा जी को आप प्रभावित न कर सके तो फिर वही इन्हें घेरने के लिए आए। इसमें भला इनका क्या दोष है ?"

गंगेश्वर को उत्तर न सूझा तो जोर-जोर से गला गड़गड़ाकर कुल्ला करने लगे। रत्ना कहे जा रही थी—'बप्पा ने आपको विद्या देने में कोई कसर नहीं रक्खी। पहले मुझसे जलते थे, अब इनसे जलते हैं।"

अँगौछे से हाथ मुंह और पैर पोंछते हुए गंगेश्वर ने सहसा स्वर को विनम्र बनाकर कहा—'मैं न तुमसे ईर्ष्या करता हूं और न शास्त्री जी से। पर पापी पेट तो मेरे साथ भी है न। छः बच्चे, फिर दो हम लोग और उसके ऊपर काका का भरण-पोषण भी '

रत्ना फिर भड़की—"बप्पा खाते ही क्या हैं! अपनी दो समय की खिचड़ी के लिए उनके पास राम जी की कृपा से अब भी बहुत-कुछ है। मैं आज ही उन्हें कहला दूंगी कि तुम्हारे यहां से कुछ भी न मंगाया करें। मेरे बप्पा ऐसा मनुष्य आज के समय में ढूंढ़ से भी नहीं दिखाई देता है और तुम "

मैं कुछ भी नहीं कहता। तुम मेरी बातों का गलत अर्थ न निकालो रत्नू। मिर्जा जी और खां साहब दोनों ही मुझ पर अकारण ही बिगड़ पड़े। कहने लगे, 'आपको कुछ आता-जाता नहीं है। हम आपसे काम नहीं कराएंगे। हमारे दाम हमको फेर दीजिए। हम उस पार शास्त्री जी के पास ही जाएंगे'।'

'पर तुमने उन्हें दाम फेर क्यों ? रोने तो लगे थे उनके सामने। पण्डित होकर मूर्खों के समान पैसा के लिए रोना भला शोभा देता है! तुम्हारे स्वभाव में स्थिरता नहीं है भइया, बुरा न मानना। विवेक-बुद्धि से काम लेना तो तुम जानते ही नहीं हो। तुम स्वयं ही अपना दुर्भाग्य हो। उस दिन जब यहां मिर्जा जी उन्हें बादा ले जाने के लिए आए तो मैंने उनकी सारी बातें यहां आड़ से सुनी थीं। यह जा थोड़े ही रहे थे मैंने ही बुलाकर कहा कि चले जाइए इतना आग्रह करके आनी हुई लक्ष्मी को छोड़ना उचित नहीं। तब ये गए हैं बादा।"

गंगेश्वर चौकी पर बैठकर माथा दबाए चुपचाप सुनते रहे। रत्ना ने बात पूरी करके बाहों में लेटे अपने पुत्र को देखा। वह चकित दृष्टि से मां को निहार रहा था। बेटे से आंखें मिलाकर मां का खोसियाया मन हुलसा। गंगेश्वर उदास स्वर में कहने लगे— हां ठीक है। पर मैं क्या करूं ? अभागे का कहीं भी निबाह नहीं। हमारे लिए तो अब यही एक मार्ग रह गया है कि एक दिन आट में माहुर घोलके उसकी रोटियां सब बाल-बच्चों को खिला दें और हम पति-पत्नी भिखारी बनकर निकल जाएं। तब शास्त्री जी महाराज हमारे यजमानों को ही नहीं बल्कि अपनी ससुराल की हवेली को भी हथिया के तुम्हारे साथ बैठकर मूंछों पर ताव दिया करेंगे।

तुलसीदास दबे पाव आकर दालान मे प्रवेश करते हैं। गगेश्वर को देखकर कहते हैं—' मुझे ससुराल की हवेली का मोह नहीं गगेश्वर। ससुर की दी हुई यहा की एक रत्नावली ही मेरे लिए यथेष्ट है। मैंने तुम्हारी सारी बातें दहलीज में खडे होकर सुन ली हैं। इससे अधिक अच्छा होगा कि मैं रत्नावली और तारापति को लेकर इस क्षेत्र से कही और चला जाऊ।"

पति के क्रोध को रत्नावली ने किसी हद तक समर्थन की दृष्टि से देखा।

गगेश्वर पहले तो चूहे की तरह से दुबके पर दूसरे ही क्षण सिंह की तरह दहाडकर बोले—'यह जो सारे ग्रथ आप हमारे यहा से उठा लाए हैं वह हमारे हवाले कर दीजिए। मैं चला जाऊगा।"

'ग्रन्थ बप्पा ने मुझे दिए हैं। मैं नही लाया।'

'पर वे हमारी पैतृक सम्पत्ति हैं। मेरे पिता छोटी आयु म मर गए थ। पुस्तको का बटवारा नहीं हुआ था।'

बात काटकर रत्नावली तेजी से बोली— इनके आगे बोलो तो बोलो पर मेरे आगे भी झूठ बोलोगे गगे भया ? मेरे बप्पा को बेईमान बताते हो ? यह ग्रन्थ तुम्हारी पैतृक सम्पत्ति हैं ?"

'तारीगाव के वासुदेव काका के हैं। पर उससे क्या होता है। (तुलसीदास की ओर देखकर) न्यायरत्न वासुदेव त्रिपाठी नि सन्तान थे इसलिए अपने ग्रन्थ हमारे यहा रखवा गए। इनका बटवारा होना चाहिए कि नहीं ?"

'कैसा बटवारा ?" रत्नावली बच्चे को सीधा करके गोद में लेती हुई तेज पडी। दो डग आगे बढ़कर फिर कहा— किसे दे गए थे त्रिपाठी जी ? '

"हमारे कक्का को जिनका उत्तराधिकारी मैं हू ?"

'झूठे कहीं के। मुझे दे गए थे। बप्पा को जो यों मिथ्या दोष लगाओगे तो बताए देती हू मुझसे बुरा औरकोई न होगा। (पति की ओर देखकर) बप्पा इतने सतर्क रहे हैं कि पैतृक सम्पत्ति का एक लोटा तक मुझे नही दिया। पैतृक सम्पत्ति का अपना भाग भी उन्होंने इन्हें ही दे दिया।"

'और काकी के गहने, जो तुम्हे मिले ?"

सुनकर तुलसी पडित की त्यौरिया भी चढ गईं वे बोले— गगेश्वर, अब तुम मेरे हाथों पिटकर ही मानोगे। अपनी माता के आभूषण यह न पाती तो कौन पाता ?"

अरे यह निलज्ज हैं। अपने झूठ का झडा ऊचा किए रखना इनकी जन्म की आदत है। बचपन मे इतनी इतनी मार खाकर भी न सुधरे तो अब क्या सुधरेंगे। और मुझसे तो इन्हें ऐसा बर है कि पाए तो कच्चा ही चबा जाए। अब तक तुमने ही कहा था अब मैं भी कहती हू कि भविष्य मे गगे भया मेरे घर की देहरी फिर कभी न चढ़ें। पक गई हू इनके कुबोलो से। यह निलज्ज, मूढ़ और कुल कलकी हैं।"

"जाने दो रत्ना तुम्हारे बडे "

'बडे हैं तो अपना बडप्पन दिखाए। मैं अब इन्हें सहन नहीं करूगी।" कह कर रत्नावली अपने बच्चे के साथ तेजी से ऊपर चली गई।

गंगेश्वर ने फिर नया पल्टा लिया, दुखी स्वर और दार्शनिक मुद्रा धारण करके कहने लगे— हाऽ, अभागे को भला कौन सौभाग्यवती या सौभाग्यवान सहन करेगा। पण्डिता रत्नावली जी घर बैठकर यजमानों के लिए जन्म-पत्रिकाएं बनाएंगी, पण्डित तुलसीदास जी दरबारों, साहूकारों में कथा बांचेंगे, जन्म-पत्रिकाएं विचारेंगे—लक्ष्मी चार हाथों से इनका ही घर भरेगी। हम जैसे टुटपुंजियों की गुजर-बसर भला फिर क्योंकर हो सकती है। मेरे जैसे कुलीन स्वाभिमानी अभागे के लिए सपरिवार माहुर खाकर मर जाने के सिवा और कोई उपाय ही नहीं रहा। (निःश्वास, फिर सहसा स्वर ऊंचा करके) अच्छा रत्नू, तो फिर यह निर्लज्ज कुलांगार अब तुमसे विदा लेता है। भविष्य में तुम इसका मुख अब कभी नहीं देख पाओगी। आशीर्वाद। आशीर्वाद।" कहते हुए गंगेश्वर चले गए।

भोजनोपरांत विश्राम कक्ष में पति-पत्नी पान चबाते हुए आमने सामने बैठे थे। तारापति पिता के पास ही सो रहा था। तकिए के सहारे अधलेटे पिता का दाहिना हाथ धीरे धीरे बड़े स्नेह से अपने बेटे के हाथ पर फिर रहा था और आंखें उसकी मां के मुखचन्द्र की चकोरी हो रही थीं।

रत्ना ने मुस्कराकर कहा—'ऐसे घूरकर क्यों देख रहे हो मुझे ? इन पांच दिनों में क्या कोई विशेष परिवर्तन आ गया है मुझमें ?'

'हां तुम मुझे पहले से अधिक सुन्दर और प्रिय लग रही हो।"

'सुन्दरता मेरे रूप में है या तुम्हारे लोभ में ?"

'पहले तुम बताओ, चन्द्रमा और चांदनी में कौन सुन्दर है ?"

सौभाग्यवती रत्नावली ने किंचित् इतराते हुए कहा—'तुम्हीं जानो, मेरे लिए यह प्रश्न अविचारणीय है।

'क्यों ?"

'क्योंकि मेरा चन्द्र और चांदनी अविभाज्य हैं। (बेटे की ओर देखकर) चांदनी को देखती हूं तो चन्द्र को बरबस ही देखने का लोभ होता है। इसी तरह चन्द्र को देखकर चांदनी का।"

'तब रूप और लोभ में अन्तर ही क्या रह गया प्रिये ? सुन्दरता दोनों छोरों तक एक-सी व्याप्त है। तुम्हें मन की बात बतलाऊं, कई वर्ष पहले एक बार मेरे मन में यह प्रश्न जागा कि राम जी अधिक सुन्दर हैं अथवा उनके प्रति मेरी भक्ति।'

'फिर क्या निर्णय किया ?"

वही जो अभी तुमने कहा। यह दोनों ही अभिन्न अविभाज्य हैं। रूप प्रेम है और लोभ उसे पाने का मार्ग। मार्ग न हो तो मनुष्य मंजिल तक कैसे पहुंचे ?"

"मान लो, कल को मेरा यह रूप घाव बनकर "

तुलसी झपटकर आगे झुके और अपनी बाईं हथेली रत्ना के मुख पर रख दी, कहा— फिर कभी ऐसी बात मुंह से न निकालना रतन। मेरा कलेजा धसकने लगता है।'

सुनकर रत्ना की आंखों में प्रेम की चमक और फिर इतराहट आई। पति का हाथ अपने मुंह से हटाकर मुस्कराती हुई वह बोली— मैं अभी मरी नहीं

जा रही हूं कविराज, केवल एक यथार्थ सत्य का निरूपण भर किया था मैंने। मनुष्य का रूप प्रकृति की शोभा सब नश्वर है। फिर ऐसे आधार पर टेका देने से लाभ ही क्या जो विश्वास का ठोसपन न लिए हुए हो ?"

तुलसीदास गंभीर हो गए, सीधे तनकर बैठ गए। क्षण भर मौन रहकर फिर कहा—'सच है टिकने वाला तो सियाराम रूप ही है। सच है वह नर-नारी के व्यक्त अव्यक्त रूप का अनंत प्रतीक है। उसी का लोभ अनंत और अजर है।"

'तो उन्हीं के प्रति अपना लोभ बढ़ाओ। मुझे घूर घूर कर क्यों सताते हो ?'

पत्नी ने अपने मानाभिनय से गम्भीरता को जो रस भरा मोड़ दिया वह तुलसीदास के भोले मन को छलने में सहज सफल हुआ। प्रसन्नता उनके चेहरे की कान्ति बन गई। बोले— तुम बड़ी नटखट हो। सूत्रधार की भांति मुझ कठपुतली को अपनी अंगुलियों पर मनमाने ढंग से नचाती हो।' कहकर उन्होंने रत्ना का हाथ पकड़कर अपनी ओर खींच लिया।

'यह क्या करते हो हटो छोड़ो।' रत्ना के दबे स्वर वाले वाक्य पर अपनी बात आरोपित करते हुए तुलसीदास कहने लगे— पहले अपनी बात का उत्तर सुनो। तुम्हारा आकर्षण ही मेरा राम मार्ग है। तुम्हें और इस आशा के तारे को श्री सीताराम ने ही अपने प्रति मेरी अनुरक्ति बढ़ाने के लिए कृपा करके मुझे दिया है। तुम दोनों मिलकर ऐसा दर्पण बन जाते हो जिसमें मुझे रामरूप की प्रति छवि दिखलाई देती है।" बायें हाथ से पत्नी की बांह दबाते और दाहिना तारापति के सिर पर फेरते हुए तुलसीदास भावमग्न हो गए। एक क्षण रुककर फिर कहने लगे— एक बार बचपन में राजा जी की बगिया से ढेर सारे सुन्दर फूल बटोरकर मैंने उनके सहारे राम जी की सुन्दरता देखना चाहा था। अब वही भाव सौन्दर्य अधिक मुखर होकर मुझे अपनी इस सोने-सी गृहस्थी में देखने को मिल रहा है। तुमसे सच कहता हूं रत्नू अब तो बाहर भीतर कहीं जाता हूं तो तुम्हारे बिना मेरा मन उचट उचट जाता है। तुम दोनों को छोड़कर मैं अब जीवित नहीं रह सकता।'

ऐसा न कहो। तुम्हारा जीवन मुझसे श्रेष्ठ है। तारा हमारी आंखों का तारा है। प्राणों का प्राण है। विवाह से पहले सोचती थी कि पति डाकू होता है जो कन्या को उसके मां-बाप से छीनकर पराये घर की वन्दिनी बना देता है। और अब लगता है कि एक नारी की सर्वश्रेष्ठ आकांक्षा यही होती है। तुम दोनों बने रहो। बस मुझे और कुछ न चाहिए।'

तुलसी ने भी मुस्कराकर यही कहा— तुम दोनों बने रहो बस मुझे कुछ न चाहिए।' चार आंखें आपस में अटककर मुस्करा उठीं। दो चेहरे खिल गए। फिर एकाएक रत्ना के चेहरे पर कठोरता आई, कहने लगी— 'गंगे भैया मेरा यह सुख फूटी आंखों नहीं देख पाते। मुझसे तो वह ऐसा जलते हैं कि पूछो मत।'

'वह महामूर्ख और ईर्ष्यालु है। पर क्या कर बेचारा, पेट पालने की समस्या सभी जीवधारियों के आगे होती है। मेरे यहां आ जाने से एक बेचारे गंगेश्वर ही क्या कई गांवों के ज्योतिषी मन्द पड़ गए हैं। उनकी ईर्ष्या स्वाभाविक है। किन्तु मैं भी क्या करूं ? तुम्हीं बताओ मेरी भी तो गृहस्थी है।"

"ऊह, ऐसों की चिन्ता छोडो। गंगे भइया की कुण्डली में पागल होना लिखा है। एक बार मैंने बप्पा को बतलाया तो वह बोले कि उसके आगे कभी न कहना।"

पागल तो वह हो चला है। महत्ता न पाने के कारण उसमें इतनी हीनता आ गई है कि अब तो इतना अल्ल-बल्ल बकने लगा है।"

'क्या कोई बात तुमने सुनी है ?"

'वह पगला अब तो यह कहता डोलता है कि मैं ज्योतिषाचार्य पण्डित दीनबन्धु पाठक का पुत्र हूं। उन्होंने मेरी माता से अनैतिक संबंध स्थापित किया था।"

रत्ना ने थरथराकर अपने कान बन्द कर लिए। मुख क्रोध और लाज से लाल हो गया। कहने लगी— बस-बस, बप्पा के समान महान् संयमी और तपस्वी व्यक्ति के लिए ऐसी अनर्गल बात मुख से निकालने वाले को मैं कभी क्षमा न कर पाऊंगी। कभी नहीं। आवेश की तेजी में उसकी आंखें छलछला उठीं।

प्रेम से पत्नी की बांह दबाते हुए तुलसी ने शान्त स्वर में कहा—"पागल की बात का विचार करना व्यर्थ है प्रिये! सारी दुनिया बप्पा को भी जानती है और गंगेश्वर को भी।"

'पर बप्पा यदि यह सुन लें तो उनकी आत्मा को कितना कष्ट पहुंचेगा! बेचारों के अपना पुत्र नहीं था इसलिए बडी लगन से उन्होंने इन्हें पढाया-लिखाया। मैं तो तुमसे सच कहती हूं कि, बिलकुल घेलुए में पढ गई। बप्पा इन्हें पढाते थे तो मैं भी बैठ जाती थी। यह न पढे और मैं पढ गई। तुम सच्ची मानना, अच्छी शिष्या होने के नाते ही उन्होंने बाद में मेरी शिक्षा के संबंध में विशेष रुचि लेना आरंभ किया था। गंगे भैया यदि तनिक भी उत्साह दिखलाते तो वे उन्हें ही अधिक रुचि से सिखलाते। मैं जानती हूं, उन्हें अपनी चौदह पीढ़ियों की गद्दी संभालने की कितनी चिन्ता थी।"

तुलसी बोले— मैं समझता हूं। विवाह का प्रस्ताव करते हुए उन्होंने मुझसे भी यही कहा था। वे चाहते थे कि मैं उन्हीं के घर पर ही रहूं।"

'वे गंगे भइया से मन ही मन में ऊब चुके थे। हमारे कक्का ने अपनी दुश्चरित्रता के कारण हमारे घर का बहुत पैसा बर्बाद किया। यह नई कमाई तो सब मेरे बप्पा की ही है। फिर भी वे कहा करते थे कि मैं यहीं गांव में नया घर बनवा लूंगा और शेष पैतृक सम्पत्ति गंगे को सौंपकर उसे अपने से अलग कर दूंगा। कहते थे कि मैं अपने जीते जी अपने होनेवाले जामाता को अपनी गद्दी पर बिठला जाऊंगा।"

स्वाभिमानवश मैं भले ही उस ग्राम में न रहा, तो भी यह मानता हूं कि इस क्षेत्र के बडे-बडे लोगों में मेरी पहुंच का कारण मेरी कथावाचकता के अतिरिक्त बप्पा भी हैं। वे अब भी सबसे यही कहते हैं कि तुलसीदास के पास जाओ।'

रत्नावली सहसा तुलसीदास का अपने कंधे पर धरा हाथ झटककर उठ खडी हुई, रुंधे दुख भरे स्वर में कहा—"मैं अभागी यदि पुत्र होती तो उन्हें कभी अपनी गद्दी की चिन्ता न होती। अब कुछ भी कहा जाय, ज्योतिर्विदाम्मार्तण्ड पाठकों की गद्दी उजड गई।" कहकर रत्नावली तेजी से कमरे के बाहर निकलकर

नीचे की सीढ़ियां उतरने लगी।

तुलसीदास हक्का-बक्का रह गए। पिछले दो वर्षों में अपने वैवाहिक जीवन में उन्होंने रत्नावली को कई बार इस हीन भावना से ग्रस्त होते हुए देखा है। जब यह हीनता उसे सताती है तो कभी-कभी वह मन ही मन में उग्र भी हो उठते हैं। अपनी पत्नी के रूप और गुणों पर प्राणपण से मुग्ध होकर भी तुलसीदास रत्ना के स्वभाव की इस तिक्तता से कहीं पर बहुत खिन्न भी हैं। इस हीनभाव के जागने पर रत्नावली कभी-कभी उनके प्रति ईर्ष्यालु भी हो जाती है। तुलसीदास के अन्त सौंदर्य-बोध को इससे धक्का लगता है। उस धक्के से अपने आपको बचाने के लिए उनकी चेतना भीतर ही भीतर विकल हो उठती है। यथार्थ बाहर और भीतर दो स्तरों पर अपने आपको समझने के लिए मचल उठता है। एक मन कहता है कि भगवान के प्रति रखा जानेवाला अनुराग ही टिकाऊ होता है किन्तु दूसरी ओर वे रत्ना और अब तारापति के प्रति अपना आकर्षण प्रतिपल बढ़ाने से नहीं चूकते। रत्ना का यह दोष भी उन्हें पूर्ण चन्द्र के कलंक-सा ही सुन्दर लगता है।

रात में उन्होंने अपनी पत्नी से कहा— "सुनो, मैंने यह निश्चय किया है कि अब काशी को अपनी कमाई का केन्द्र बनाऊंगा।"

'परन्तु मैं अपने बप्पा को अकेला छोड़कर कहीं नहीं जाऊंगी।"

'मैं जानता हूं। बप्पा को ध्यान में रखते हुए तुम्हारी यह इच्छा मुझे अनुचित भी नहीं लगती। तुम कुछ दिनों अपने मैके में रह लोगी। बप्पा के सन्यासी मन को तारापति ब्रह्मानन्दवत् रिझाएगा। एक यह लाभ भी होगा कि यजमानों के लिए जो जन्मपत्रिकाएं तुम इस समय तैयार कर रही हो उनकी दक्षिणा की राशि गंगेश्वर को मिल जाएगी। वह मूर्ख ईर्ष्यालु भी अपने बढ़ते पागलपन से बच जाएगा।"

'तुम मुझे इतने दिनों छोड़कर रह सकोगे?'

तुलसी का स्वर तुरंत उदास हो गया, बोले—'बड़ी देर से मन को इसी ठांव पीड़ा कर रहा हूं। पांच-सात दिनों के लिए बाहर जाता हूं तो तुम्हारे लिए मेरे प्राण बावले हो उठते हैं। काशी का यह फेरा कम से कम दो-तीन मास तो ले ही लेगा।"

मैं समझती हूं कि तुम्हें अपने मन को पक्का करना ही चाहिए। काशी का कमाई को यहां वाले कूत न पाएंगे। हम लोग दूसरों की ईर्ष्या से बचेंगे। बप्पा के जीवन में भी रस आ जाएगा। मैं उनसे ज्योतिष चर्चा करूंगी, तारा उनके आसपास रहेगा। बेचारे कितने प्रसन्न हो जाएंगे। रत्नावली पिता के पास अपने मैके के घर में रहने के विचारमात्र ही से उल्लसित हो उठी थी किन्तु तुलसीदास का मन अभी कुछ भी निश्चय नहीं कर पा रहा था। एक ओर काशी की याद आती है पुराने साथियों से मिलने को जी चाहता है घुमक्कड़ी की पुरानी आदत भी पैरों में खुजली मचा रही है किंतु दूसरी ओर रत्ना के बिना अब उन्हें काशी क्या बैकुण्ठ में रहना भी सुहा नहीं सकता। रत्ना के बिना घर से बाहर रहने पर उन्हें रातों नींद नहीं आती। उसका मुखचन्द्र उसकी बातें तुलसी का

अहर्निशि अपने आप मे रमाए रहती हैं। रत्ना का बेटा ऐसा सम्मोहक जादू है कि वे चाहें तो भी उससे छूट नहीं सकते।

दूसरे दिन सवेरे कलेऊ करने के उपरात तुलसीदास दालान मे घुटनो दौड़ते अपने बेटे को 'पकड़ो-पकड़ो' करते हुए हसा रहे थे। बच्चा अपने बाप को छकाने के लिए किलकारिया मारकर और भी तेज भागता था।

उसके पैरों म पड़ी चादी की पैजनियों के घुघुरू पायलों के घुघुरू रुनझुन स्वर उठाकर पिता का आनन्द बढ़ा रहे थे। तभी रत्ना ने बैठक के कमरे से भीतर आते हुए कहा— सुनते हो, मैंने प्रश्न कुण्डली बनाकर देख लिया। यह यात्रा तुम्हारे लिए बड़े महत्त्व की सिद्ध होगी। राम का नाम लेकर और अपना जी कड़ा करके तुम काशी चले जाओ।'

सुनकर तुलसीदास का आनद भरा चेहरा कुम्हला गया। विचार मे पड़ते हुए बोले— 'हा ऽऽ, पर "

"पर वर कुछ नहीं। इतनी भक्ति और वैराग्य की बातें करते हो और थोड़े दिनों के लिए मेरे बिना सयम से नहीं रह सकते? तुम्हारे जैसे व्यक्ति को यह शोभा नहीं देता।"

रत्नावली की बात सुनकर तुलसीदास को झटका लगा। लज्जा का बोध भी हुआ। वे बोले— दूसरों को उपदेश देना सरल होता है पर स्वय आचरण करना अति कठिन। फिर भी आत्म-सयम करना आवश्यक है। ठीक है, मैं काशी जाऊगा।' × × ×

आत्मालोचन का एक चक्र पूरा हुआ। बाबा स्थिर और परम शातिमग्न बैठे थे। मानस रत्नावली उनके चरणों पर झुकी। उसकी यौवनोल्लास-भरी चपल चदन-सी काया सहसा अपना वार्द्धक्य पा गई। अब रत्नावली वैसी ही थी जैसी कि बाबा ने अतिम क्षणों मे उसे देखा था। बूढ़ी माई ने बूढ़े बाबा से हसकर कहा—'अब तो कल से मेरे आत्मालोचन के दिन आ गए। तुम उबरे, मुझे अभी डूबकर उबरना शेष है। अच्छा अब कल रात फिर आऊगी।

शात और सुस्थिर गति से अपना बाया हाथ बढ़ाकर बाबा ने मैया को अपने वामाग म समेट लिया। उनकी आखें मुद गइ। बाबा और मैया के स्थान पर राम और जानकी दृश्यमान हुए। तुलसी की काया गद्गद हो उठी।

२७

बाबा की चामत्कारिक नीरोगता और उससे भी अधिक उनकी कृपा से उनके प्रबल शत्रु रविदत्त तान्त्रिक का मृत्यु के मुख म जाकर भी सकुशल बाहर निकल आने की बात दूसरे ही दिन काशी के बच्चे-बच्चे की जबान पर चामत्कारिक अतिशयोक्तियों के नगीनों से जड़कर चमक चुकी थी। बाबा के दर्शनों से

लिए अकना का ताता-सा लग गया। उन्ही दिनो काशी और जौनपुर नगरो पर शाही उमरा आगानूर के रूप म एक बहुत बडी विपत्ति आई हुई थी। आगानूर ने काशी और जौनपुर के बडे-बडे जौहरियो-सर्राफों और कोठी वालो को एक दिन अपने यहा बुलाया। काशी के लोग पहले पकड बुलाए गए। बिना कारण बतलाए हुए ही आगानूर ने उन्ह बन्दीगृह म बन्द कर देने की आज्ञा दी। पहले दिन उन्ह अन्न पानी तक के लिए तरसाया गया। दूसरे दिन भोजन और जल भेजा गया, किन्तु चाडालो के हाथ। धर्म के कारण किसी ने भी उसे छुआ तक नही। शाम को जब पानी बिना दो चार सेठो के बेहोश होने की खबर आगानूर तक पहुची तो एक ब्राह्मण गर्म पानी लेकर सेठो के सूखे गले सीचने के लिए भेजा गया। तीन दिनो तक कदखाने मे बन्द सेठ-साहूकार, सर्राफ-दलाल आदि पीडा सहते रहे। बाहर उनके परिवार के लोग चिन्ता के मारे पीले पड गए। बन्द किए जाने का कारण न मालूम होने से सबके मन चिन्ता मे घनीभूत थे।

तीसरे दिन जौनपुर के सेठ-साहूकार और दलाल भी पकडकर आ गए। वे लोग भी बहुत घबडाए हुए थे। बन्दीगृह म बन्द सेठो ने वहा के कर्मचारियो की मार्फत रिश्वत का प्रलोभन देकर अपने पकडे जाने का कारण जानना चाहा। बाहर उनके सगे-सम्बन्धी भी यही कर रहे थे। सरकारी चाकरो की जेबों म रिश्वत के पैसे पहुचकर भी न तो बन्दियों को और न उनके घरवालो को ही पकडे जाने का कारण ज्ञात हो सका। इन गिरफ्तारियों से नगर मे बडा आतक छाया हुआ था। लोग मुह खोलकर आलोचना करने से भी डरते थे।

प० गगाराम यही चिन्ता लेकर बाबा के पास आए।

कहो गगाराम चिन्तित क्यो दिखलाई पड रहे हो ?

क्या कहू रामबोला, इस देश की ग्रह-दशा अभी बडी खराब है। नगर की घटना तो तुमने सुनी ही होगी।'

बाबा बोले— हा परन्तु क्या किया जाए। अकबर शाह के राज म फिर भी सुनवाई हो जाती थी, परन्तु जबसे यह जहांगीर राज आया है फिर असुरगण मदमत्त हो उठे हैं।"

अरे चुप चुप दीवालों के भी कान होते हैं। तुलसी, यदि यह असुर तुम्हे भी पकड ले गए तो सच मानो नगर मे बडी आफत आ जाएगी।"

राम करे सो होय। लगता है तुम्हारे कुछ यजमान भी बन्दी हैं।"

छ सात। यहा के भी और जौनपुर के भी।"

'तुम्हारी गणना क्या कहती है ?'

इस समय मुझे अपने ऊपर विश्वास नही रहा तुलसी। इसीसे घबराकर मैं तुम्हारे पास आया हू।

फिर भी तुमने कुछ विचार तो किया ही होगा।

मेरे हिसाब से तो आज इस सकट को टल जाना चाहिए।

बाबा विचारमग्न हो गए बोले— राम-कृपा से तुम्हारा वचन निष्फल नही जाएगा गगा। मैं भी समझता हू कि यह सकट आज टल जाएगा। बल्कि समझो टल ही गया। थोडी ही देर मे तुम्हें यह शुभ सवाद अवश्य मिलेगा।'

गंगाराम के चेहरे पर चमक आ गई। बाबा के पास ही बैठे हुए बेनीमाधव और राजा भगत की ओर देखकर वे कहने लगे—'तुलसी ऐसा मित्र भी बड़े भाग्य से मिलता है भाई। एक बार जवानी में 'रामाज्ञा प्रश्न' रचकर इन्होंने मेरी जान बचाई थी और आज भी इनके कथन पर मुझे भरपूर विश्वास है। अब मैं स्वयं समझता हूं कि पंडित के लिए केवल शास्त्र ही नहीं वरन् रामरूप आत्मविश्वास भी आवश्यक होता है।'

कथा का नया सूत्र मिलने की सम्भावना देखी तो बेनीमाधव ललचा उठे दीनतापूर्वक पण्डित जी से कहा—'वह कौन-सी घटना थी महाराज ?"

अरे, एक राजकुमार आखेट खेलने गए थे। वे अपने साथियों से भटक गए। उनके खोने की सूचना जब राजा रानी तक पहुंची तो वे पुत्र शोक से दहल उठे। काशी भर के ज्योतिषियों को उन्होंने अपने यहां बुलवाया। घोषित किया कि जो भी राजकुमार के सकुशल लौट आने की सही सूचना देगा उसे वे एक लाख मुद्राएं भेंट करेंगे। एक ओर एक लाख का आकर्षण और दूसरी ओर पंडितों की भविष्यवाणियों में विरोधाभास के कारण बड़ी घबराहट हो रही थी। हम अपने घर में बड़ी चिन्ता में बैठे थे। तभी घर का कुंडा खड़का।" × × ×

काशी के प्रह्लाद घाट की एक गली में युवा पंडित गंगाराम अपने बैठके के द्वार बन्द किए दीवार का सहारा लगाए गुमसुम, बड़ी चिन्ता में खोए हुए बैठे हैं। उनके सामने कई पोथी पत्रा खुले रखे हैं। बाहर का कुंडा खड़क रहा है। गंगाराम इस समय अपने आप में दुखी हैं। किसीसे मिलने या बात करने की इच्छा नहीं होती है। जब कुछ देर कुंडी बराबर खड़कती रहती है तो खीझ भरे स्वर में पूछते हैं— कौन है ?

बाहर से आवाज आई— हम तुलसीदास। पं० गंगाराम जी घर पर हैं ?"

पं० गंगाराम के चेहरे पर उल्लास की किरणें फूट पड़ीं। सुस्त बेजान-सी चिन्ताग्रस्त काया में बिजली दौड़ गई। दौड़े आकर द्वार खोले। चबूतरे पर तुलसीदास हंसते हुए खड़े थे। गली में इनकी दो गठरियां लादे हुए एक मजूर खड़ा था। गंगाराम ने झपटकर तुलसीदास को बाहों में भरते हुए कहा—"वाह वाह, तुम तो मानो शुभ शकुन बनकर इस समय मुझसे भेंटने आए हो।" फिर घर के भीतर की ओर मुंह करके नौकर को आवाज दी— सुमेरू।"

सुमेरू कदाचित् किसी काम से बाहर ही आ रहा था। इसलिए पुकारते ही सामने आ गया।

'सामान भीतर पहुंचाओ। किसी शिष्य से कहो कि एक लोटा जल लेकर आए और मजूरे को थोड़ा पिसान लाकर दे दो। जल्दी-जल्दी सब आदेश देते हुए भी गंगाराम तुलसीदास को अपनी बांहों में बांधे रहे। फिर तुरन्त ही उनकी ओर देखकर हंसने लगे। उन्हें खींचकर वे चबूतरे पर पड़े तख्त पर बैठ गए। पूछा— कहां से आ रहे हो ?'

'घर—राजापुर से।

गंगाराम ने उल्लसित स्वर में आंखें नचाते हुए कहा— तुम्हारे इस घर

"ाद म घरवाली की ध्वनि भी मुझे कही पर सुनाई पड़ती है।"
दोनो मित्र एक साथ ठहाका मारकर हस पडे। तभी भीतर से एक ब्राह्मण कुमार हाथ म जल का लोटा और अगोछा लिए हुए आया। तुलसीदास ने लोटा लेने के लिए हाथ बढाया किन्तु गगाराम ने तुरन्त ही मना करते हुए कहा—नही यह सेवा इसे ही करने दो। इसे भला ऐसा सौभाग्य कहा मिलेगा।'' हाथपर धोए पाछे फिर दोनो मित्र बठक मे आकर बठ गए।
तुलसीदास बोले— बडे पोथी-पत्रे फलाए बैठे हो। लगता है बहुत व्यस्त हो।'
प० गगाराम ने उदासीन भाव से बात को टालते हुए रूखी हसी हसकर कहा—'जीविका जीव से भी अधिक प्यारी होती है न।"
'ठीक कहा वही समस्या मुझे भी यहा घसीट लाई है। सोचा, अपनी काशी के भी इसी बहाने से दशन कर लूगा।"
भले आए। काशी के पडित तो इस समय लाख के फेर मे पड गए हैं। जीविका प्रतिष्ठा और लक्ष्मी मिलकर हम सभी को तिगनी का नाच नचा रही है।'
तुलसीदास बोले— सुन चुका हू।
कहा?'
अभी अभी इस गली म प्रवेश करने के कुछ पूव ही माग म दो पडित तबोली की दूकान पर बैठे यही चर्चा कर रहे थे। सुनकर लगा कि बुरे शासन की चक्की म पिस पिसकर हमारा ज्ञान कुठित हो चला है। तभी तो यह निस्तेजता छाई हुई है।'
लज्जावश सिर झुकाकर गगाराम बोले—'ठीक कहते हो। सच तो यह है कि हम लोग लाख के लोभ मे फसकर भ्रमित बुद्धि हो गए हैं। वैसे भी ग्रह-सधि का फल विचारना कठिन काय है। हो सके तो हमारी लाज बचाओ भाई।'
लाज बचानेवाले तो श्री सीताराम ही हैं गगा। अच्छा देखो स्नान ध्यानादि से निपटकर हम रामाज्ञा लेने का प्रयत्न अवश्य करेंगे।'
रात मे चौकी के अगल-बगल दो दीपक जलाए हुए तुलसीदास बठे लिख रहे हैं। आकाश मे आधी रात के बाद चन्द्रमा उदय होता है अपनी चादनी से रात को चमकाता है और फिर ढलने लगता है। तुलसीदास बीतते हुए समय की गति से अचेत लिखते ही चले जा रहे हैं। दियो म तेल कम होता है तो पास ही म रखे हुए पात्र से तेल डाल लेते हैं कभी-कभी बत्ती सुधारने की भी आवश्यकता पड जाती है। बाहरी दुनिया से उनका बस इतना ही नाता बना हुआ है।
ब्राह्मवेला आ लगी। आकाश चिडियो की चहचहाहट से गूज उठा और तुलसीदास का मुखमडल भी आनन्द तरगों से लहर उठा। तभी ऊपर की सीढिया चढकर अपने चौबारे की ओर आते हुए गगाराम पर तुलसीदास की दृष्टि गई। वे बडे उत्साह और आनन्द भरे स्वर म कहे— रामाज्ञा मिल चुकी गगा, काशी की विजय होगी।'

गगाराम के पैरो मे फुर्ती आ गई। वे तजी से डग बढाते हुए कमरे मे आए। तुलसीदास भी अपन आसन से खडे होत हुए एक चैन भरी मस्त अगडाई लेकर अपने बदन को खोलने लगे।

गगाराम ने फले हुए कागजो को देखकर पूछा— 'क्या पाया ? जान पडता है सारी रात जग हो ?'

तुलसी बाले— तुम लाख मुद्राओ मे दरबार म नाचत रहे और मै रात भर राम जी के दरबार म उनकी चाकरी बजाता रहा। गगास्नान करके तुम सीधे राजा जी के यहा चले जाओ। कुवर जी को न तो किसी वन्य पशु ने नुकसान पहुचाया है और न वे किसी प्रकार के शत्रु-चक्र ही मे फसे हैं। दरअसल उन पर और काशी के पडितो पर इन ढाई दिनो तक माया का प्रभाव रहा सवा पहर दिन चढ़ने तक राजकुमार सकुशल घर लौट आएगे।'

"सत्य कहते हो तुलसी ?'

अपने लिख हुए पत्रो को क्रम से सजोत हुए तुलसीदास ने एक बार मुख उठाकर पनी दृष्टि से अपने मित्र को दखा और कहा—'हनुमान जी अब तक मेरे लिए कभी झूठे नहीं हुए गगा। सकट पडने पर कपीश्वर को ही गोहराता हू। वे सकट-मोचन ही मेरे लिए रामाज्ञा लेकर आए हैं।"

गगाराम गदगद स्वर म बोले— 'तुम्हारी वाणी म सजीवनी है। यह श्रद्धा यह विश्वास काशी के विद्वानों मे अब कही देखने को भी नहीं मिलता। यदि तुम्हारी यह वाणी सफल हुई मित्र तो सच कहता हू इस नगर मे तुम्हे '

'बस-बस मन के भावो को अभी मन ही म रहने दो। इन सब बातो पर फिर विचार हो जाएगा। एक वचन मैं तुमसे और भी लूगा गगा, किसीसे यह कहने की आवश्यकता नहीं कि प्रश्न मैंने हल किया है।'

दोपहर के समय पालकी पर चढकर बाजे-गाजे और राजा के दडधरों के साथ पडित गगाराम घर लौट रह थे। गली चलते कइ लोग उनकी प्रशसा म उद्गार भी प्रकट कर दते थे— जय हो महराज, आपने काशी के पडितो की लाज रख ली।"

"अरे सवेरे हमसे छट्टन गुरु कहें कि महादेव, गगाराम की मति भ्रमित हो गई है। इस समय तो ढाई पहर की भद्रा चल रही है और वह कहता है कि सवा पहर मे लौट आएगा। मगर वाह रे पडित जी, आप तो वही आसन मारके बैठ गए और कहा कि या तो अपनी भविष्यवाणी के सफल होने पर उजला मुह लेकर यहा स घर जाऊगा नही तो सीधे जाकर गगाजी मे डूब मरूगा।'

'अरे यह महान् जोतसी हैं। इनकी विद्या बडी सच्ची है। तभी तो ज जकार मच रही है भाई।"

पण्डित गगाराम की सवारी घर पहुच चुकी थी, किन्तु गलिया उनकी कीर्ति से अब भी गूज रही थी।

गगाराम जी की बठक म दोनो मित्र झपटकर एक-दूसरे के प्रगाढ आलिगन म बध गए। गगाराम ने कहा—'तुलसी तुम मेरे खरे मित्र और भाई

'छुटकारा कैसा जी ? गठजोड़े से हम श्रीराम-जानकी के चरणों में लीन होंगे। अब अकेले उस दरबार में तुम्हारी रसाई नहीं हो सकती। जहां मुझे छोड़ा था वहां से साथ ले चलो।' बाबा के अन्तर में रत्ना मैया अपना त्रिया हठ साधे बोल रही थी। बाबा कुछ क्षणों तक मौन रहे और फिर उनकी आंखों के आगे पुराने दृश्य लहराने लगे। × × ×

राजापुर के नौका घाट पर नाव आकर लगी। आकाश घटाटोप हो रहा था। बीच-बीच में बिजली चमक उठती थी। सवारियां उतरने लगीं। बहुतों की आंखें बार-बार आकाश की ओर उठ जाती थीं। एक वृद्ध कृषक ने किनारे की ओर बढ़ते हुए नाव वाले के हाथ में टका रखकर कहा—"कैसी बे रुत की घटा है। पानी जरूर बरसेगा।

नाववाला बोला— अरे अब बरसै चाहे न बरस, हम तो अपने घर पहुंच गए।"

तुम तौ पहुंच गए पर हमें अभी डेढ़ कोस नापना पड़ेगा। हे राम जी! हे बजरंगबली! घड़ी भर न बरसौ स्वामीनाथ तौ हम घर पहुंच जायं।

तुलसीदास इसी वृद्ध के पीछे-पीछे बढ़ते हुए मल्लाह के पास आए और उसके हाथों में रुपया रखने लगे। केवट ने सकोच से हाथ सिकोड़ लिया और कहा—'अरे महराज, आप न दें।"

क्यों ?"

अरे आपके बैठे से तो हमारी नाव पवित्र हुइ गई।"

'अरे भैया! आ गए ?" किनारे से राजा भगत तुलसी को देखकर चिल्लाए। उन्हें देखते हुए तुलसीदास के मन की कली खिल गई। उत्साह से चिल्लाकर कहा—'ए राजा किसी डागी वाले को पकड़ लो। (नाव वाले से) लो-लो रखो सकोच न करो। जब हम कमाते हैं तो तुम्हारी कमाई क्या छीनें ?" नाववाले के हाथ में रुपया रखकर अपनी गठरी उठाए हुए वे जल्दी-जल्दी किनारे पर उतरने लगे। राजा ने अपना एक हाथ बढ़ाकर गठरी ली और दूसरे से तुलसीदास का हाथ पकड़ लिया। किनारे पर आकर दोनों मित्रों ने एक दूसरे को स्नेह भरी दृष्टि से देखा। राजा बोले— "चंगे तो लग रहे हो भया।"

"हां, खूब चंगे हैं। हम तो तुम्हारे लिए ही इधर आए हैं, नहीं तो उस पार से ही ससुराल चले जाते।

ऐसी क्या उतावली है, भला। भौजी और मुन्ना दोनों मजे में हैं। कल नाऊ को भेज के खबर पठाय देंगे।'

'हां अच्छा यही ठीक है।' तुलसी पण्डित ने कहने को तो हां कह दी पर उनका मन अभी इस निश्चय पर दरअसल पहुंचा नहीं था। राजा से बोले — हम तो तुम्हें हुण्डी देने के लिए इधर आ गए। सोचा कल चित्रकूट चले जाओगे तो हरजीमल सेठ के यहां से भुना लाओगे। होली पर खर्चा-पानी आ जाएगा।'

अच्छा किया जो इस बहाने इधर ही चले आए। इस सम तो हमारे घर

ही चले चलो। आओ।" कहकर राजा ने बाह थामी और बढ़ चले।

"हम समझते है राजा, कि चले ही जाय। तुलसीदास के आगे बढ़ते हुए डग फिर किनारे की ओर मुडने लगे। राजा ने पलट कर फिर बाह कसी कहा—"देखते नही पानी लदा है। हवा तेज चल रही है। फिर गगेसुर और उनकी घर वाली का सुभाव तो जानते ही हो। नही-नही इस समै जाना उचित नही। आओ।"

"हमारा मन कहता है कि चले ही जाय। वैसे गगेश्वर का व्यवहार इस समय कैसा है?"

"व्योहार तो सब ठीक है। भौजी ने बडी मदद की है न उनकी। बाकी जमाईराज का बे बुलाए पहुचना उचित नही। आगे फिर जैसा तुम समझो वैसा करो।"

कथावाचक कविवर पण्डित तुलसीदास शास्त्री के पैर राजा की बात से बध गए—'लोक प्रचलित मान्यता के अनुसार अचानक ससुराल जाना उचित नही है। पर इतने पास आकर रत्ना को बिना देखे मुझसे रहा कैसे जायगा? तारा को देखने के लिए भी जी ललचता है। पर पानी बरसा तो पहुचते पहुचते एकदम भीग जाएगे। सुवेश नही रहेगा। न सही। गठरी लेता भी चलू। भीगने से तो बचेगी नहीं। अब जो भी हो। तुलसी, तू इतना काम मतवाला हो रहा है? दूसरो को आत्मसयम बरतने का उपदेश देता है। तेरा राम प्रेम बडा है या तेरी काम वासना?' अपने ही प्रश्नो पर आप झुंझलाहट आ गई। मन चिढ़ गया, रामानुराग अपनी जगह है पर मैं गृहस्थ हू। अपनी पत्नी के प्रति ऐसी चाह रखना न अधम है और न अस्वाभाविक ही। चाहे जो हो, मैं जाऊगा। मन के हठ ठानते ही स्वर निश्चयात्मक हो गया। राजा स कहा—'इतने पास आकर बच्चे को देखे बिना मुझसे रहा नही जायगा राजा। तुम यह हुण्डी ले लो। सत्रह हजार की है। इसम से दो हजार रुपये तुम्हारे हैं। देखो नाही न करना, तुम्हें राम जी की सौंह। पहले हमारी पूरी बात सुन लो अपने दो हजार और हमारे लिए एक शत मुद्राए ले आना। बाकी कोठी मे ही अपनी भौजी और हमारे नाम से जमा कर आना।" अपनी ही बात ऊपर रखने के लिए तुलसी पण्डित ने वार्ता क्रम ऐसा धाराप्रवाह रखा जिससे राजा कुछ बोल ही न सकें। उनके हाथ से गठरी लेकर कपडो के बीच म तहाकर रखी गई हुण्डी निकाल कर राजा को दी, फिर गठरी बाधी और एक छोटी नाव वाले भग्गेले केवट को पहचान कर आवाज देने लगे।

नाव नदी में आधी दूर ही पहुची होगी कि बिजली कही कडकडाकर गिरी और हवा-पानी का तूफान आ गया। तेज हवा से लहराती, ऊची ऊची लहरो के थपेडे खाती हुई उनकी नाव कभी-कभी तो अब उल्टी अब उल्टी वाली स्थिति म आ जाती थी। जब केवट थकने लगा तो तुलसीदास ने पतवारें सभाल ली। जीवन की चाह मे वे मृत्यु को जीतने लगे।

ससुराल के द्वारे पर उतरे बडी देर तक कुण्डी खटखटानी पड़ी। आवाजो पर आवाजें दीं तब जाके गगेश्वर के कानो भनक पड़ी।

कौन है ?"

"अरे खोलो भाई। हम है हम।"

'शास्त्री जी ?" भीतर से अडवना हटा कुण्डी खडकी और द्वार खुल गया। आधी और पानी के झोंके की तरह ही शास्त्री जी महाराज ने घर के भीतर प्रवेश किया और अब तक बेहद सताने वाले मेघशत्रु के अपराजेय प्रखर बाणो को निष्फल करने के लिए उन्होंने चट से द्वार बद कर लिए। गगेश्वर बोले—'हटिए हम बन्द किए लेते हैं। आप तो बिलकुल भीग गए।"

तुलसीदास शास्त्री के चिपके हुए गीले वस्त्रो का पानी टपक-टपककर दह लीज का फर्श गीला कर रहा था। वे सर्दी के मारे काप रहे थे। एक हाथ मे जलती कुप्पी थामे, दूसरे से झटपट कुण्डी और अडकना लगाकर गगेश्वर हल्की विद्रूप भरी खी-खी करते हुए बोले— एकदम भीगी बिल्ली जसे लग रहे हैं आप। हे-हे-हे।'

भीतर से गगेश्वर की पत्नी की आवाज आई—'अर कौन आया है ?"

'वे-बुलाये मेहमान। हि हि ।

तुलसी पण्डित को अपने साले की यह ही-ही खी-खी भली न लगी। भीतर दालान मे गगेश्वर की पत्नी अपनी कोठरी के सामन खडी थी। तुलसीदास को देखकर बोली— आप ?'

अरे अगौछा लाइए पहले। आप और बाप को पीछे याद कीजिएगा। बडी सर्दी है। राम राम राम।' तुलसीदास का स्वर और सारा शरीर काप रहा था। तब तक पति का स्वर सुनकर रत्नावली भी ऊपर स झपड झपड सीढिया उतरकर दालान म आई। पति को देखकर चेहरा खिला। प्रिया का धुधला-सा आकार देखत ही प्रिय के बदन मे उल्लास की गर्मी आ गई बोले— पुटलिया खोलो। बीच मे धोती दबी है। स्यात वह गीली नही हुई होगी।

तखत पर रखी गीली पोटली उठाकर बहन की ओर बढाते हुए गगेश्वर ने कहा—'लेओ देत लेओ सूखी न होय तो अपनी भौजी से एक कोरी धोती निकलवा लो। पर फतुही और दुशाला भी तो गीला है। क्या ओढोगे ?

गगेश्वर की पत्नी अगौछा लिए हुए तब तक आ पहुची थी हसकर कहा— जिस गर्माई के लिए आए ह वह तो सामने खडी है, फिर ओढने बिछाने की चिन्ता ही क्या है ?"

रत्ना लाज से गडी गीली पोटली को यो सरकाकर बठ गई कि चेहरा आड म हो गया। गगेश्वर मुस्कराए। सलहज से अगौछा लेकर तुलसीदास सर्दी की सिसियाहट को खीची हुई खिलखिलाहट मे मिश्रित करते हुए बोले—"हा-हा हा आपबीती सुना रही हो भौजी ? हम तो राम रसायन की गर्मी मे रहत हैं कहो तो रात भर ऐसे ही खडे रहें।"

आड मे ही मुह किए हुए रत्ना बोली—' धोती गीली तो नही है पर सीली सी है।"

गगश्वर अपनी पत्नी से बोले— कहा तो, कोरी धोती निकाल लाओ। जमाइया का तो काम ही है हाथ झुलाते आना और ससुराल से कुछ न कुछ

झटक ले जाना।"

रत्नावली को बुरा लगा। खड़ी होकर धोती चुनते हुए ऊपर से भोली और भीतर से पनी होकर बोली—"जमाइयों जमाइयों में भी अंतर होता है। रावणी की आड़ लेकर राम को नकारने वाले कभी पण्डितों की श्रेणी में नहीं गिने जाते भैया।" धोती चुनकर पति की ओर बढ़ाकर कहा—"यह लो। दुशाला ऊपर से लाती हूं।"

पिछले दो महीनों से सारे घर का खर्चा उठाने वाली बहन के बोल सुनते ही भया भौजी के विनोद को मानो सांप सूंघ गया। गंगे की बहू तुरन्त ही दूसरी दालान की ओर पग बढ़ाते हुए बोली—"धोती लाती हूं न।"

"आवश्यकता नहीं।" कहती हुई रत्नावली ऊपर चढ़ गई। तुलसीदास साल-सलहज के प्रति अपनी अर्द्धांगिनी के चढ़े तेवरों से ही तन-मन को प्रफुल्लित करने वाली गर्मी पा गए। उसी समय बड़ी भतीजी गोड़सी में अंगारे दहकाकर ले आई—"राम राम फूफा।"

"आशीर्वाद बिटिया। राम राम।"

"कहां बठेंगे?"

"इसे यहीं धर। ढिबरी उठाके पहले बठके का दिया बाल। वहीं बठेंगे।" गंगेश्वर ने अपनी बेटी को आदेश दिया।

लड़की के हाथों से गोड़सी लेकर उसे जमीन पर रखकर उकड़ूं बैठते हुए तुलसीदास बोले—"अब तो यह बड़ी हो गई है गंगेश्वर।"

लड़की ढिबरी उठाकर दहलीज की ओर बढ़ी। किन्तु जैसे ही वह ऊपर की सीढ़ियों के सामने से गुजरी वैसे ही उसने गोद में तारापति को लेकर अपनी बुआ को उतरते देखा। उन्हें दिया दिखाने के लिए वह वहीं खड़ी हो गई। बच्चे को देखकर पूछा—"मुन्ना सो रहा है बुआ?"

"हूं।" रत्नावली ने छोटा-सा उत्तर दिया। उसकी आंखें आग तापते बैठे पति की ओर थीं। बेटे के साथ आती हुई प्रिया को देखकर तुलसी पण्डित का हिया हरख उठा। बच्चे को गोद में लेने के लिए वे एक बार तो उचके, फिर पराए घर का विचार करके थम गए। रत्ना ने पास आकर अपने दाहिने हाथ में लटका हुआ लाल जरीदार दुशाला बढ़ा दिया। तुलसी उठकर आग से तनिक दूर खड़े हो गए। रत्ना की बांह पर लटका दुशाला उठाते हुए स्पर्श का सुख भी इतने दिनों बाद अनुभव किया। चोला मदमस्त हो गया। ढिबरी का प्रकाश दहलीज की ओर बढ़ते हुए अब दूर हो गया था। फिर भी दुशाले पर दृष्टि डालते हुए पूछा—"यह मेरे दुशाले ही जैसा दूसरा कहां से आ गया?"

"बप्पा का है। वे इसे दे गए हैं।"

दुशाला ओढ़ते हुए तारापति की ओर भावभीनी दृष्टि से देख रहे तुलसीदास ने पत्नी की बात से चौंककर पूछा—"कहीं गए हैं बप्पा?"

बहन के कुछ कहने से पहले ही गंगेश्वर बोल उठे—"बसंत पंचमी के दिन तीर्थयात्रा पर गए हैं। हमसे कह गए हैं कि लौटकर आने की संभावना अधिक नहीं है। अपनी विशेष जमा-पूंजी सब तारापति को ही दे गए हैं।"

रत्नावली को बुरा लगा, पूछा— 'कौन-सी विशेष संपत्ति थी जो '

"अरे बहिनी, गंजड़ी भंगेड़ी की बातों का बुरा क्यों मानती हो। यह तो जिस थाली में खाते हैं उसी में छेद करते हैं।" गंगेश्वर की पत्नी ने कहा।

'चुप कर नहीं तो संन्यास लेके निकल जाऊंगा।"

अच्छी तरह से दुशाला ओढ़कर पत्नी की गोद से अपने बेटे को लेने के लिए हाथ बढ़ाते हुए तुलसी पण्डित बोले— संन्यासी बनकर फिर भौजी के आगे ही भीख मांगने आओगे।'

'वह तो सभी आते हैं। नारी बिना किसी की गति नहीं, न हमारे जैसे फक्कड़ों की, न तुम्हारे जैसे परमपवित्र शास्त्रियों की। यात्रा से आए तो सीधे भागे भागे यहीं चले आए। एक रात भी तो सबर नहीं हुई। हा-हा-हा।' पति की बात सुनकर तुलसीदास की सलहज हंस पड़ी।

पिता की गोद में आते ही तारापति चौंककर जाग पड़ा। उसे देखने की खुशी में तुलसी ने साले के विनोद को झेल लिया। बात बनाते हुए बोले—"मैं तो इसके मोह में आया हूं। चलो, चलके बैठें भाई। अरे वर्षा तो थम गई लगती है। (चलते हुए दालान से आकाश को झांककर) तारे भी निकल आए।"

गंगेश्वर गोड़सी उठाते हुए तुलसी से बोला—"शास्त्री जी थकान लग रही हो तो भांग-वांग घोट दें तुम्हारे लिए ?'

अरे भैया, भांग तो तुम्हारे जैसे परम पुरुषार्थियों के लिए ही शिवजी ने बनाई है। हम तो अपने कर्मानुसार साक्षात भांग बनकर ही पैदा हुए हैं पिसते हैं छनते हैं।'

और उसका नशा हमारी ननदिया को चढ़ता है।' कहकर सलहज खिल खिला पड़ी। तुलसीदास और गंगेश्वर भी हंस पड़े। लाज भरे क्रोध में रत्नावली अपनी भावज को धक्का देती हुई बोली—'जाओ भौजी तुम बड़ी वो हो।"

आधी पौन घड़ी के बाद भोजन इत्यादि करके तुलसीदास और रत्नावली जब अपने कमरे में पहुंचे तो चहक रहे थे, तुलसी ने कहा— विश्वामित्र सच कह गए हैं कि जाया ही घर होती है। आज मैं परम आनन्दमग्न हूं।"

रत्नावली बच्चे को थपथपाकर सुलाने और उसे अच्छी तरह उढ़ाने के बाद पति की खाट पर आकर बैठ गई और बोली—'अब बताओ काशी में कैसी रही ?'

तुलसीदास तकिये का सहारा लेकर मस्ती से बैठते हुए बोले—'शंकरपुरी मेरे लिए सदैव भाग्यशालिनी रही है। जानती हो इस बीच में मैंने कितना कमाया ?"

मैं क्या जानूं। मेरे हाथ में लाकर रखते तो मैं भी जानती।'

तुम्हारे लिए ही तो कमाकर लाया हूं। तुम और यह मेरा तारापति। मेरी कमाई की प्रेरणा ही तुम दोनों हो। अन्यथा भिखारी को क्या चाहिए।"

'बड़े भिखारी बिचारे ! पण्डितों को मैंने बहुत देखा है। जब लक्ष्मी नहीं मिलती तो दार्शनिक बन जाते हैं और जब मिलती है तो राजा महाराजा भी उनके आगे भला क्या ठाट करेंगे ऐसे रहते हैं।"

पत्नी की बात सुनकर तुलसीदास हस पड़े, फिर कहा—"लक्ष्मी जी ने इस बार मेरी अद्‌भुद परीक्षा ली, लेकिन राम-कृपा से सफल हुआ। लोभ से बचा और प्रयसिद्धि भी अच्छी हो गई।" कहकर तुलसीदास ने रामाज्ञा प्रश्न रचे जाने की कथा और सवा लाख का इनाम मिलने की बात सुनाई, फिर पूछा—'मैंने ठीक किया न ?"

रत्नावली के मन मे एक लाख रुपया निकल जाने की कचोट थी। उसने कोई उत्तर न दिया। तुलसी ने फिर पूछा—"क्या तुम इसे अनुचित मानती हो रत्ना ?" पताने की ओर गुड़मुड़ी मारकर लेटे हुए, रत्ना बोली—"धन तो वास्तव मे राम जी ने हम ही दिया था।"

तुलसीदास गम्भीर हो गए, बोले—"स्वार्थ से तनिक ऊपर उठकर सोचो रत्ना। मैं अपने बालबन्धु का अधिकार हनन करता ? मैंने तो उन्हें यह भी नही कहने दिया कि प्रश्न मैंने बिचारा था।'

"इसीलिए तो और भी कहती हू कि धन हमारा था। तुमने अपने मित्र की साख बढ़ा दी। एक नई विद्या दे आए जिससे वे लाखों कमाएंगे। हमारे भाग्य मे तो यह पहला सवा लाख आया था।'

रूठी पत्नी की ओर बढ़कर खुशामदी मुद्रा मे उसकी बाह पर बाहु रखकर तुलसी बोले—'जिसके पास अनमोल रत्नावली हो उसे सवा लाख की भला चिन्ता ही क्या हो सकती है। प्रिये! घबराओ मत, बहुत कमाऊगा। मैं तुम्हें रत्नजडित हिंडोले पर बिठलाकर तुम्हारे लाड लड़ाऊगा। और इतना कमाकर रख जाऊगा कि वह धन पीढ़िया न चुकेगा।"

पति का हाथ झटककर फुर्ती से बैठते हुए रत्नावली ने पूछा—'अच्छा, जाने दो उसे, लाख दे आए मगर बाकी रुपया कहां है ?"

'बारह हजार रुपया तो मैं काशी म हनुमान जी का मन्दिर बनवाने के लिए एक कोठी म जमा कर आया हू। जिनकी कृपा से मुझे रामाज्ञा मिली और जीवन की सारी समस्याए हल होती हैं उनके प्रति अपनी निष्ठा को बनाए रखना मेरा कर्तव्य था। तीन हजार रुपया और धर्म-कार्यों मे खर्च हुआ। दो पुराने सहपाठियों की कन्याओं का विवाह करवाया। एक दरिद्र ब्राह्मण को घर खरीदवा दिया। ऐसे ही धर्म-कर्म म दान किया। बाकी बचे दस हजार सो वह और फिर ऐसे ही दो-तीन तान्त्रिक अनुष्ठानों म, कुछ ज्योतिष विद्या की कृपा से सात हजार रुपया और मिला। वह सत्रह हजार की हुण्डी भुनाने के लिए राजा को देकर ही मैं यहां आया हू। घर चलो तो वह राशि तुम्हें सौंप दूगा। हां राजा के निमित्त भी मैंने दो हजार रुपये उसमे से अलग कर दिए हैं। बुरा तो नहीं किया ?"

'मैं क्या जानू।' मान भरे स्वर मे रत्ना अपनी नकबेसर घुमाते हुए मुह फुलाकर बोली फिर कुछ रुककर कहने लगी—'लक्ष्मी कहती है कि जब मैं आऊ तो पहले मुझे घर मे निकालने की उतावली मत करो। हमारे बप्पा कहा करते थे कि दान-पुण्य करना अच्छी बात है पर गृहस्थ को सोच-समझकर ही सब कुछ करना चाहिए।'

तुलसीदास ने रूठी प्रिया को बांहों मे भरते हुए कहा—'देखो प्रिये, तुम

भी जानती हो और मैं भी जानता हू, मेरी जन्म कुण्डली मे सधि के ग्रह है। या तो करोडपति बनूगा या फिर विरक्त।"

"तो बन जाइए न विरक्त, कौन रोकता है आपको ?"

तुम रोकती हो।"

'मैं क्यो रोकने लगी। तुम्ही लालची भौंरे से मेरे आसपास मडराते हो।"

रत्नावली ने पति की बाहो से छिटकना चाहा। किन्तु और कस गई। तुलसीदास बोले—'मैं स्वीकार करता हू कि तुम्हारे द्वार का भिखारी हू और सदा बना रहूगा।"

कामी पुरुष अपनी लालच मे स्त्रियो के आगे ऐसी ही बातें बनाया करते है। कल को मैं मर जाऊ "

तुलसीदास ने चट से रत्नावली के मुख पर अपना हाथ रख दिया और गद्गद कण्ठ स बोले— अब कभी ऐसी बात मुह से न निकालना। मैं इसे सह नही सकता।"

एक क्षण गम्भीर मौन का बीता। पत्नी जान गई कि पति रिसाने हैं। अपने मुह पर रखा उनका हाथ अपने हाथ मे लेकर प्यार से उसे दबाते हुए पति के कधे पर अपना सिर डालकर बोली—'तुम तो हसी को भी बुरा मान जाते हो।'

'मैं हसी मे भी यह बात नही सह सकता। रत्नावली के बिना अब तुलसीदास अपनी कल्पना ही नही कर सकता।

पति का हाथ छोडकर उनके गले म हाथ डालते हुए रत्नावली बोली— अच्छा अब कभी नही कहूगी पर एक बात गम्भीरतापूवक पूछती हू, बुरा तो नही मानोगे ?"

मैं समझ गया क्या कहना चाहती हो, किन्तु रत्नू तुम भी यह समझ लो कि तुम और केवल तुम ही मेरा मायापाश हो। एक जगह मुझे पुत्र से भी इतना अधिक मोह नही है। तुम न रहा तो उसे किसीको भी सौंपके मैं विरक्त हो जाऊगा।'

सुनकर रत्नावली तन गई। तीखे स्वर म कहा—'स्त्री और पुरुष मे यही ता अन्तर होता है। नारी भले ही कामवश माता क्यो न बने किन्तु माता बनकर वह एक जगह निष्काम भी हो जाती है। और पुरुष पिता बनकर भी दायित्व-बोध भली प्रकार से अनुभव नही करता। सच पूछो तो वह किसी के प्रति अपना दायित्व अनुभव नही करता। वह निर चाम का लोभी है जीव म रमे राम का नही।"

तुलसीदास के कलेजे पर मानो गाज गिरी। बधे पानी मे जैसे पत्थर गिरने से लहरें उठती हैं वसे ही उनके शब्दहीन भाव तरगित हो उठे। थोडी देर तक तो उन्हें अपने मस्तिष्क की सनसनाहट और हृदय की धडकनो के आगे और कुछ सुनाई ही न पडा। फिर मन घबराने लगा पत्नी की लुभावनी काया का स्पश उन्हे भीतर ही भीतर घुटाने लगा। मैं कामी हू मैं कामी हू पामर हू। राम को छोडकर चाम चाहा। तो उसके लिए मुझे यह बातें सुननी पड रही हैं। और कहा तक सुनोगे तुलसी ? कहा तक सुनागे ? क्यो सुनोगे ? क्या कापुरुष हा ?'

रत्नावली ने देखा कि पति मौन हो गए हैं। तो फिर बोली— बुरा मान गए ?" तुलसीदास ने कोई उत्तर न दिया, रत्ना ने फिर कहा—'मैं क्षमा

चाहती हू।"

तुलसीदास गम्भीर स्वर मे बोले—"तुम्हें क्षमा मागने की आवश्यकता नहीं। तुमने सच ही कहा, मैं कामी हू। काम के वश होकर ही कदाचित् मैंने दीवाने की तरह तुम्हें चाहा है। मैंने रत्नावली को नही चाहा, या चाहा है तो अपनी चाहत को ठीक से मैं पहचान नही पाया।"

रत्नावली ने देखा कि पति सचमुच दुखी हैं तो फिर उनसे लिपटते हुए बोली—'काम तो स्त्री-पुरुषो के बीच मे प्रेम बढ़ाने का बहाना मात्र होता है। क्या मैं इच्छा नही करती। मैंने तो हसी मे ताना दिया था। तुम तो सचमुच रूठ गए।"

रत्नावली की आखें भर आइ। इस मनावन से तुलसी कुछ नरम पडे, कहा—"रूठा नही रत्ना, तुम्हारी वाणी से स्वय सरस्वती ने जो ज्ञान-बोध दिया उससे मौन अवश्य हो गया था।"

"अरे भूलो यह बात, सारा जीवन पडा है, फिर यह बातें कर लेना। तुम लेटो, मैं पर दबाऊ।"

"नहीं मैं गुरु से पैर नही दबवा सकता।"

रत्ना रूठ गई—"यह कैसा विनोद ? मैं तुम्हारी गुरु कब स हो गई ?"

रूखी हसी हसकर तुलसी ने कहा—'अभी कुछ ही क्षणों पहले तुमने मुझे गुरु मत्र दिया है। तुमने मुझे सच्चे प्रेम का माग दिखलाया है। खरी गुरु हो।"

रत्ना रोने लगी। कहा—' इतना लज्जित करोगे, तो सच कहती हू, कुए में जाकर डूब मरूगी।"

तारापति उसी समय चौंककर सहसा जोर से रो उठा। रत्नावली उसके रोने पर भी ध्यान न दे सकी। आप ही बैठी रोती रही। जब बच्चे का रोना बढ़ा तब खाट से उठकर उस चौकी पर चली गई जहा बच्चा लेटा था।

तुलसीदास के मन म इस समय न तो रत्ना ही थी और न तारापति ही। उनके अन्तर मे केवल एक ही गूज बार-बार उठ रही थी, 'तुलसी तू झूठा है झूठा है। कभी कहता था राम से प्रेम करता हू। राम को चाहते चाहते मोहिनी का मतवाला बन बैठा मोहिनी स मुक्त हुआ तो रत्नावली का दास बन गया। मुझे कामवश हो नारी प्यारी लगी। मैंने न उसे चाहा और न राम को ही। दोनो ही से दगादारी की। पण्डित-उपदेशक भण्डा तुझे धिक्कार है। तू स्वार्थी है प्रेमी नही।'

यों आत्मदमन फूटा तो मन ने चाहा कि ढाढस बाध लें पर निचली तहो म धिक् धिक् गूज रहा था। तुलसीदास का मन और भारी हो गया। जल्दी-जल्दी दो-तीन सिसासें छोडी। मन की तह-तह म आत्मग्लानि की गूज भरी थी। 'तू स्वार्थी है। प्रेमी नही प्रेमी नहीं।'

बच्चे को दूध पिलाकर-सुलाकर रत्नावली फिर पति की खाट पर आ गई। रत्नावली के स्पर्शमात्र से ही तुलसीदास का मन ग्लानि से भर उठा— मैंने इसे धोखा दिया। मैंने अपनी रामरूप सत्यनिष्ठा को भी धोखा दिया। मैं कुटिल, खल, कामी हू धिक तुलसीदास धिक।

तुलसीदास के मुख पर झुककर रत्नावली ने प्यार भरे धीमे स्वर में पूछा—'सो गए ?'

तुलसीदास ढाग साधे आखें मूदे पडे रहे। प्रिया के हाठ, उसकी गर्म सासो का स्पर्श, अपने ऊपर उसके शरीर का हल्का-सा लदाव उन्हें फिर मतवाला बनाने लगा, किन्तु हठ उन्हें भीतर से कस रहा था। मन कहने लगा—'अब नही तुलसी अब नही। अब लौ नसानी अब न नसहों। चुबन उत्तेजक हैं मादक है किन्तु प्रलोभन छोडकर तुलसी। चाम का लोभ तज, राम को भज! राम को भज! अब लौ नसानी अब न नसैहौं।' काव्यतरग भ्रव बन गई। रत्नावली धीरे धीरे पति के पैर दबाने लगी। नारीरूपी बहेलिया अपने जाल से निकले हुए पछी को फिर से फसाने के लिए दाने डालने लगा। अपनी काया पर नारी का मचलता हुआ मादक हाथ पुरुष की काम चेतना को रोष दिलाने लगा। काम की शक्ति के आगे राम हारन लगे। 'नही, मेरे राम अब नही हारेंगे। अब मैं प्रेम का निष्काम रूप देखकर ही रहूगा।'

अब लौं नसानी अब न नसहौ।
राम-कृपा भव निसा सिरानी जागे पुनि न डसहौं॥

रत्नावली हारकर सो गई। अपने कलेजे पर रखे हुए उसके हाथ के बोझ को तुलसीदास असह्य भार मानकर सहते रहे। राम राम जपता हुआ उनका मन बीच-बीच मे बहुत उछलता मचलता रहा। कई बार जी चाहा कि रत्नावली को अपने अकपाश मे भरकर चूम लें। किन्तु मचल-मचलकर वे फिर फिर थम गए। तुलसी ने ठानी सो ठानी। नारी की आकर्षण शक्ति और सौदय ने दो बार हमे राम स विलग कर दिया, नही तो इतने वर्षो मे यह अभागा तुलसी सौभाग्य वान बन गया होता। शकराचाय सच ही कह गए है मोक्षार्थी के लिए नारी नरक का द्वार है। आयु प्रतिक्षण छीज रही ह। यौवन दिनोदिन बासी पडता चला जाएगा। जो दिन जाता है वह फिर लौटकर नही आता। यह काल जगत भक्षक है। रत्ना ने उस समय ठीक ही कहा था यह भी किसी दिन मर जाएगी। सभी जीवधारी मरते हैं फिर ऐसे से क्यो न प्रेम करें जो अजर अमर हो, जो हसी मे भी कभी ताने न दे। ना-ना अब तो—

करे एक रघुनाथ सग बाघ जटा सिर केस।
हम तो चाखा प्रम रस पतिनी के उपदेस॥

आधी रात बीत चुकी थी। रत्नावली सो रही थी। मन म एकाएक आदेशो के ढोल-स बजने लगे— मत जा प्रेम-माग कठिन है। मत जा। किन्तु दूसरा मन अपनी ही आन साधे रहा। काव्यतरग भरव बनकर लहरा रही थी। 'नही। राम-कृपा भव निसा सिरानी जाग पुनि न डसहौं।'

दबे पाव उठे। बच्चे के पास जाकर एक बार उसे देखा पत्नी को अपना ओढा हुआ दुशाला उढाया। पत्नी क सिरहाने रखी ऊनी चदरिया उठाई, आढी, मौनभाव से हाथ जोडे, दबे पाव नीचे उतरे। चोर की तरह चुपके से द्वार खोला, फिर उस धीरे से खीचकर बन्द किया। और अब एक मुक्त ससार तुलसीदास के सामने था। सनसनाती हवा की तरह ही वे अपन नये भावो म बहे चले जा

रहे थे। काव्यतरंग झरना बनकर लहराती ही रही, 'अब लौं नसानी अब न नसैहौं। अब लौं नसानी अब न नसैहौं।'

२९

सारी रात बीत गई, तुलसी के न पैर थके और न मन। ऐसा लगता था कि घर और घरवालों की पकडाई से दूर होने के लिए वे पृथ्वी के दूसरे छोर तक चलते ही चले जाएंगे। हृदय और मस्तिष्क म राम को पाने के लिए मानो पूरा समझौता हो चुका था। अब वे राम के सिवा और कुछ नही चाहते हैं। धन-वैभव, पत्नी-पुत्र, मित्र, नाते-गोतिये उन्ह किसी से भी सरोकार नही रहा।

> एक भरोसो एक बल, एक आस विस्वास।
> रामरूप स्वाती जलद चातक तुलसीदास॥

यमुना के किनारे किनारे वे रात भर म कितने कोस चल यह कहना स्वय उनके लिए भी असभव था। हा, ब्राह्म वेला म मुर्गों की बागें उन्हे इतना होश अवश्य द गईं कि प्रात कालीन कर्मों से निवृत्त हो जाने का समय आ लगा है। एक जगह वे स्नानादि कर्मों के लिए रुक गए। धरती पर बठने लगे तो लगा कि उनसे बठा न जाएगा। कमर एकदम से अकड गई थी। किसी तरह बैठे तो लगा कि टागें पिरा रही हैं। तुलसीदास को अपन ऊपर दया आई। उन्ह लगा कि बचपन से लेकर अब तक केवल कष्ट ही कष्ट सहा है। जेठ की चिलचिलाती धूप-सा उनका दुर्भाग्य उन्ह तपाता ही रहा है। कही भी तो छाव नही मिली, और जो मिली वह भी इतने कम समय तक ही सुलभ रही कि उन्ह ऐहिक सुख की तृप्ति का अनुभव न हो पाया। अपने हाथो से अपने पैर दबाते हुए तुलसीदास की आखो म आसू आ गए। आसुओ ने निकलते ही उनके वैराग्य को सचेत कर दिया, तू क्या राजगद्दी पर बठकर सुख से राम-दशन करने निकला है रे? कबीरदास कितनी सच्ची बात कहते थे कि सीस काटि भुइ मा धरै, तापर राख पाव। अहकार और उससे उत्पन्न होने वाले सुखो-दुखो की ओर ध्यान देने स अब काम नही चलेगा तुलसीदास। चाकर की अपनी कोई इच्छा नही होती। साहब की मर्जी ही उसकी मर्जी है। चल उठ र मूढ आत्मसेवा का यह स्वाग छोड और अपने नित्य कर्मों म लग। उठ-उठ, तू तनिक भी नही थका है और यदि थका भी है तो क्या इस कारण से तू अपने नियम-कर्मादि भी छोड देगा? उठ-उठ!' उत्तजित किए गए उत्साह ने शरीर की अकडन खोल दी। कत्तव्य की निष्ठा ने पीडा की चेतना दबा दी। सबसे अधिक अखरन तो उन्ह व्यायाम करने मे हुई। परन्तु व्यायाम भी चूकि उनका नित्य नियम था इसलिए आज उसका पालन करना उनके हठ के वास्ते मानो एक धार्मिक आवश्यकता-सी बन गया था। रे मन तू छाव चाहता है न, अब मैं तुझे वही न लेने दूगा।

मिलेगी तो तुझे श्री जानकी-जीवन के वरदहस्त की छत्रछाया ही मिलेगी नहीं तो दुखो से पिस पिसकर तू यो ही मिट जाएगा।'

स्नान ध्यान व्यायाम सध्या वदन आदि सभी कर्मों से छुट्टी पाकर तुलसीदास ने हठपूवक चलना आरभ कर दिया। पैर अब उतने तेज नहीं चल पा रहे थे।

मन म चलने का हठ तो था किन्तु काया विश्राम पाने के लिए अधीर थी। कहा जाए यह प्रश्न अभी उनके मन मे ठीक तरह से उभर तो नही रहा था किन्तु यह कामना अवश्य कुनमुनाने लगी थी कि कही ऐसी जगह चलकर बठें जहा उनके और राम के बीच म तीसरा न आ सके। चूकि हठ के मोटे पर्दे के नीचे थकन के अतिरिक्त उनकी भूख भी दबी-दबी भडक रही थी इसलिए उनका हठ-प्रेरित चेतन मन यह भी सोच रहा था कि वह ऐसी जगह जाए जहा उन्हें कुछ भोजन मिल सके। मन म चित्रकूट के शान्त वनप्रान्तर की सुखद स्मृतिया भी उभर रही थी किन्तु वहा वे जाने से हिचक रहे थे।

पैर चलते हुए लडखडा रहे थे किन्तु हठ अदमनीय था। आखो की पुतलिया हठ के शिकजे मे कसी हुई अचल अडिग थी किन्तु उनके भीतर भयकर दीवानापन भी चल रहा था। उन आखो म रामहठ तो था किन्तु राम नही था। पुराने बीते हुए जीवन क क्षणो का लौटकर न देखने की कसम तो चमक रही थी किन्तु रत्नावली बरबस बीच-बीच म झाक जाती थी। इमीसे उनका दीवानापन उग्र होता चला जा रहा था। रात भर की जागी आखें या भी लाल थी किन्तु उस लाली म मन का दीवानापन मानो अगार सुलगा रहा था।

बीच मे दो छोटी छोटी बस्तिया भी पडी किन्तु वहा व न रुके। उनकी लडखडाती चाल उनकी अगारे जसी आखें और कसा हुआ मुख देखकर पहली बस्ती के पास चलते हुए बच्चो ने उन्हे पागल समझकर छेडना आरम्भ कर दिया। तुलसीदास की चलती हुई मानसिक स्थिति मे उनके स्वाभिमान को स्वाभाविक रूप से ठेस लगी और वे वहा न ठहरे। दूसरी बस्ती दूर से ही झलकी पर वे उधर से कतराकर फिर नदी किनारे क जगल की ओर मुड गए।

दोपहर हो गई। सूरज ठीक सिर पर आ गया। पैर इतने लडखडाने लगे कि चलते चलते एक जगह ठोकर खाकर गिरे। शरीर की चोट ने मन को धमक दी। क्यो नहीं मानता रे मन ज्ञानी होकर भी अज्ञानी बनता है। विश्राम कर, फिर चल।'

पर कहा विश्राम करें? उठकर बठ गए। आखा के अगारे अब राख की गुदडी ओढकर चमक रहे थे, उनम थकन और हताशा की पर्तें-सी जम गई थी। कण्ठ भी सूख रहा था। अपने गले को सहलाते हुए उन्होने नदी की ओर देखा। पडो के झुरमुट से पानी झाक रहा था। बस उठकर वहा तक चल भर जाए तो प्यास बुझ जाए। लेकिन चलें कसे काया उठ ही नही पा रही थी। पानी है प्यास है पर प्यासे के पास पानी तक पहुचने की शक्ति नही है। मृगमरीचिका की मन स्थिति मे रत्नावली पानी की लुटिया लिए बार-बार साग्रह सामने आ जाती है। कानो मे उसका स्वर गूजता है पी लो-पी लो, अपने को मत

सताओ। आ जाओ। लौट आओ।' 'नहीं। अब लौं नसानी अब न नसैहौं। अब न नसैहौं। अब तो राम को ही लूगा। राम ही मेरी तृष्णा हरेंगे।'

"राम राम राम" सूने म उनका स्वर मुक्त होकर राम राम की बावली पुकार कर रहा था। आखो मे अगारे अपनी राख झाड़कर फिर चमकने लगे। पेड़ों के झुरमुट से झांकता हुआ पानी भी ललचाने लगा। गला सूख रहा था। दीवानगी ने पूरी शक्ति लगाकर एक बार उन्ह फिर खड़ा कर दिया। वे नदी की ओर चले। प्यासे की आस लहरा रही थी। बस है कितनी दूर। वो झलक रहे हैं राम नदी किनारे बैठे हुए अपनी हथेली का चुल्लू बनाकर जानकी जी को पानी पिला रहे हैं। आखों ने ऐसा साफ दृश्य देखा कि मन मे आनन्द के शतशत झरने फूट पड़े। उनकी काया मे सहसा ऐसी स्फूर्ति आ गई कि वह दौड़ने का प्रयत्न करने लगे। आखें जमुना तट पर टिकी थीं, पर लडखड़ाते हुए भी जोश भर थे। मन की दीवानगी न केवल अपना चोला बदला था किन्तु वह अपनी सशक्त स्थिति मे ज्यों की त्यों अब भी कायम थी। दौड म देखा नहीं, सामने वाले पेड़ की झुकी टहनी से उनका सिर सीधा टकराया। आखों के आगे अधेरा छा गया। मत्थे पर लगी करारी खरोंच से खून उभर आया था। परो ने जवाब दे दिया। शरीर निर्जीव-सा होकर गिर पड़ा।

जब आखें खुली तो देखा कि एक काली, गोल मुखवाली, नाक-नक्शे स सुहानी स्त्री अपनी गोद मे उनका सिर रखे हुए दोने म भरे पानी से उनके सिर का घाव धो रही है।

तुलसी के मन म न नारी आई और न नर। वह स्त्री एक सहारा थी, भरोसा थी, निबल का बल थी। मन को बड़ा अच्छा लगा। देनेवाले से मागने की चाह जागी—'पानी-पानी।'' तुलसीदास फिर मूर्च्छित हो गए थे।

आदिम जाति की उस युवती ने उनका उपचार किया, पानी लाई, पिलाया, फिर उन्हें सहारा देकर बठाया। नारी के गदराए शरीर का स्पश विराग की चेतना के साथ भी बुरा न लगा। टूटे को इस समय सहारा चाहिए मन रे, कोई तक न कर चुप बठ सुख ले। यह न नारी है न नर है, केवल निराधार का आधार है। तुलसीदास के मन को इस समय सहारे की इतनी अधिक आवश्यकता थी कि वे उसे स्वीकार करने के लिए हर तक को उसी हठ से नकार सकते थे, जिसके बूते पर वह रात भर और अब तक चलते चले आए थे दुख सहते चले आए थे। पानी पिलाकर पेड के सहारे उसने उन्ह बिठला दिया फिर कहा—"मेरा घर दूर नहीं। तुम्हारी देह जर से तप रही है। वहा चले चलो तो मैं तुम्हारे घाव पर लेप करूंगी। तुम्हे दूध गरम करके पिला दूगी।

घर शब्द कान मे टकराया आखो मैं फिर हठ की ज्योति बढ़ी, कहा—नहीं।

'कोई तुम्हे मारेगा नहीं। मेरे घर मे कोई मरद-मानुस है ही नहीं। मैं अपनी मालकिन आप हू। कोई कुछ न कहेगा। आओ आओ, उठो।' युवती उन्हे उठाने के लिए झुकी काया से बाया लगी। तुलसीदास सिहर उठे। उसे हाथ से झटककर कहा— जाओ माई, मुझे अकेला छोड़ दो।"

युवती झटका खाकर उठ खड़ी हुई आंखें तरेरकर कहा—' नहीं चलते तो न सही पर मुझे माई क्यों कहते हो ? मैं क्या तुम्हारी माई जैसी हू ?"

तुलसीदास को इस समय तर्कों से चिढ़ थी पर अपनी उपकारिणी के प्रति वे कठोर नही होना चाहते थे विनम्र स्वर में कहा—' वैरागी के लिए सभी स्त्रियां मा और बहन होती हैं। तुमने मेरा उपकार किया है मैं तुम्हें बहन कह कर पुकारूगा।"

"न माई, न बहिनी, हम हैं रामकली! तुम्हारे मन मे औरत को लेकर अब भी पाप जागता होगा, सो माई-बहिनी कहके उसे बाड़े मे घेरते हो। मेरे मरद को मर पाच बरस हो गए पर मेरा मरद मेरे मन मे अब भी बैठा है। बाकी सारे मरद मेर लिए वसे ही हैं जसे कक्ड-पत्थर, गाय-बैल, सग-सगाती। तुम अपने को बडा मरद समझते हो तो न चलो। मैं कोई तुम्हारे साथ घर-बैठउवा करने तो जा नही रही हू। आए बडे बरागी कही के।" रामकली गुस्से के मारे पैर पटकती हुई चली गई। बाबा पुकारते ही रह— 'रामकली! रामकली!" फिर ऊपर का स्वर तो मौन हो गया पर मन पुकारता रहा 'रामकली रामकली।' उनका ज्वर बढ गया था। वे सारी ध्वनियों और गूजो की गठरी समेटकर मूर्च्छित हो चुके थे।

दोपहरी ढली, किसीके झिझोडने और बरागी-बरागी कहने से आखें खुली। रामकली सामने थी। उनम कह रही थी— 'लो दूध पी लो।"

तुलसीदास की आसो मे श्रद्धा जाग उठी। कुछ न कहा। उसन उन्ह अपन शरीर का सहारा देकर बिठलाया और अपने हाथों मिट्टी के तौले से दूध पिलाने लगी। तुलसीदास आखें मूदे सुख से दूध पीते रहे। दूध पीने के बाद आखें खोलकर तप्ति एव कृतज्ञता की दृष्टि से रामकली को देखा। वह बोली— देखो तुम्हारा जर बढ गया है। तुम तप रह हो। अब धूप ढल रही है। थोडी देर मे ठडक बढेगी तो जडाने लगोगे। मेरे घर चले आओ, दो दिनों म चग हो जाओगे, फिर चले जाना।'

तुलसीदास के मन म सकोच जागा, रामकली के शरीर का स्पर्श-बोध भी जागा और वे तुरन्त ज्वर के आवेश मे तनकर बैठ गए।

रामकली हसी, कहा—' पाप जागा ? कैसे बरागी हो ? मेरे मन मे तो मेरा मरद बठा है पर तुम्हारा मन साइत सूना है। सूने घर म तो भूत रहते ह भूत।' कहकर रामकली खिलखिला उठी।

ज्वर के आवेश मे मैली-कुचली कृष्णसुन्दरी रामकली की खिलखिलाहट ने मानो आस्था की चादनी बिछा दी। झोक मे बोले—"राम जाने क्या लीला है पर तू खरी रामकली है। चल मुझे सहारा दे। अब मेरे मन मे राम है, वहा कोई भूत नही है।' रामकली ने तुरन्त उन्हे उठाया, सहारा दिया और वे सुख से उसकी झोपडी की ओर चल दिए। वन के वक्षा के पत्ते हवा म हिलकर तुलसी के मन म रामगूज उठा रहे थे। एसे लगता था कि हिलती डालें एक झोका रा का लेती है और दूसरा म' का। रामकली का एक डग रा' बनकर बढ़ता है और दूसरा म बनकर। स्वय अपनी चाल भी उन्ह

ऐसी ही लगी। जो कुछ भी गतिमान है सबकी एक ही लय है—राम राम राम। × × ×

३०

सन्त बेनीमाधव उस दिन बडे ही दुखी और उदास थे। बाबा अखाडे में कुछ लडकों को कुश्ती के दाव-पेंच सिखा रहे थे। शत्रु यदि शक्ति म प्रबल हो तो उसे किन किन दाव-पेंचो से पराजित करना चाहिए, इसी का प्रदर्शन कर रहे थे। अखाडे म जोश और उल्लास का वातावरण था। एक तगडे जवान पट्ठे को, जो उनसे स्वाभाविक रूप मे कही अधिक शक्तिशाली लगता था बाबा ने ऐसी तरकीब से पछाडा कि लडके 'वाह बाबा, वाह बाबा' करने लगे। राजा भगत भी वहीं खडे हुए मजा ले रह थे, बाबा बोले—'आओ बुढऊ एक पकड हमारी-तुम्हारी भी हो जाए।"

सब लोग हस पडे। राजा ने हसते हुए कहा—'अरे अब तुमसे क्या लडें। जिन दाव-पेंचों से तुम हमे मारोगे भया, उन्ही से हम भी तुम्ह पछाडेंगे। दोनों पहलवान चित्त होकर गिरेंगे और यह लडके हसेंगे।" बाबा हसते हुए अखाडे से बाहर चले आए और राजा के कन्धे पर हाथ थपथपाकर कहा—'ठीक ही है हम दोना जन्म भर एक ही शत्रु से लडते रहे हैं अब आपस मे क्या लडें। वैसे राजा, एक दिन इस अखाडे म बुढवा दगल हो जाए। नगर भर के बुड्ढो को बुलाया जाए कि आओ कुश्ती लडो। देखें तो सही कि बुड्ढा मे अब तक कितने जवान हैं।"

मगलू बडे जोर से हसा, कहने लगा—"वाह बाबा, बडा मजा आएगा। हमसे कहो तो कल ही दगल करवाय दें साला। मजा आ जाएगा।"

बाबा बोले—'अरे भाई, दगल और मजा तुम्हारे साने हैं फिर हम क्या बोलें।"

लडके खिलखिलाकर हस पडे। मगलू लज्जा से जीभ निकालकर अपने दोनों कान पकडते हुए ऐसी मुद्रा म खडा हो गया कि अखाडे की हसी दोबाला हो गई। बाबा अखाडे के अहाते से बाहर निकलने के लिए राजा के साथ बढते हुए एकाएक रुक गए और मुडकर गम्भीर स्वर म मगलू से बोले—'मगलू हम तुम्हें इस गालीरूपी शत्रु को पछाडने की एक तरकीब बतावें ?"

हा बताय देव बाबा।" मगलू दौडकर बाबा के चरण पकडकर बठ गया गिडगिडाकर बोला— अरे बाबा जो तुम हमरी यह आदत छुडाय देव तौ कया कहें तुम्हारे यह चरन धोय धोय के पिएगे साले।'

इस बार तो अट्टहास के बादल ही गडगडा उठे। अखाडे के द्वार पर खडे सन्त बेनीमाधव से लेकर अखाडे से अहाते म नहाते धाते मालिश करते, मुग्दर हिलाते और अपने वातावरण से बधी हुई नित्य की सारी क्रियाओ म व्यस्त

भ्रमबोध ही जायगा। राम कहो और राम सुनो। कहो और सुनो। × × ×

कहो और सुनो, राम कहो राम सुनो। कहकर बाबा ने बडे स्नेह से संत जी को देखा और उनके कन्धे को थपथपाकर आंखों से ऐसा स्नेह वर्षण किया कि संत जी हरे हो गए।

३१

बेनीमाधव जी का मन पिछले कुछ दिनों से बडा तरंगी हो रहा था। गुरु जी के जीवन प्रसंग सुनते-सुनते उनका अपनापन स्वयं अपने ही प्रश्नों का कंटीला जंगल बनकर दुखदाई हो गया था। पचपन पार हो गए, साठे की लपेट में आ चले पर बेनीमाधव तुमने अब तक पाया क्या? पाने की बात केवल सोचते हो रह गए।

मन कुछ पाने के लिए तडप रहा है। उस 'कुछ' का हलका सा आभास मन को होता है पर उसे स्पष्ट न देख पाने की उलझन देखने की लालसा अपनी सामर्थ्य की सीमा पहचान लेने से उपजा हुआ लज्जा-बोध विवशता और चिढ़ की भट्ठियों में तपते हुए अन्ततोगत्वा अपनी शक्ति की सीमा के भीतर ही उस कुछ की उपलब्धियों को उपलब्ध करने के लिए मचलने लगता है। राम मिलन यदि इस जन्म में संभव नहीं तो फिर (लाज अपने ही से लज्जित हो उठती है) कामसुख ही सही, ब्रह्मानंद सहोदर है।

लेकिन बेनीमाधव यह सुख भी अपने आपको नहीं दे पाते। उनका मन बडा ढील और सकोच भरा है। कुछ ब्रह्मचारी होने का डंका बजने के कारण, कुछ धर्म-बोध वश और कुछ अपनी भीतरी तहों से उठने वाली राम मिलन की चाह के मोह में। ऐसे मौके आने पर अवसर वे कामतृप्ति के लिए आए हुए अवसर की तरह दे जाते हैं और फिर पछताते हैं। पछतावे में राम राम की उत्ताल तरगें भी उठती हैं और काम-सुख-साधन खोजने की दबी-रुकी लालसा भी। साधुबाज भक्तिनों की यों तो वहीं कमी नहीं, पर उनके साथ मिलने से सतमंडली में बात बडी तेजी से फैल जाती है। ऐसी कोई समवयस्का विधवा भक्तिन मिले जिसके बारे में किसी की बुरी राय न बनी हो, जसे स्वयं उनकी साख बंधी है, फिर वह भी अपनी ओर से इसी भूख की मारी हो तो बात बन जाए। पर ऐसे *अवसर जीवन में जल्दी जल्दी नहीं आते। कभी-कभार ऐसी हरियाली मिलती अवश्य रही है पर यों सारी उमर रेगिस्तान-सी ही बीती। अब मन में पलटने* की चाह होती है। संत जी का मन अपने भीतर के द्वंद्व में थक गया है कुछ कुछ पक भी गया है। उनका जी करता है कि अब दो में से एक घाट पर ही उनकी इच्छा का नाव लग जाए।

इधर कई महीनों से गुरु जी के साथ रहते हुए उनकी रामचाहना का रतन

बल अवश्य मिला है पर केवल इस रूप में कि अब वे नारी के संबंध में नहीं सोचते। काम-वासना की ओर बढ़ते हुए मन पर नियंत्रण की अगला लगाने में वे सफल हुए हैं पर एक दिशा के बंद हो जाने पर चूंकि उनकी दूसरी दिशा नहीं खुली इसलिए मन में उचाट है।

बाबा से 'कहो और सुनो' मंत्र पाकर वैसा ही हठ साधकर व जैसे जैसे राम को पाने का हठ करने लगे वैसे-वैसे ही दिन बीतने पर फिर से उनकी काम-तृष्णा सहसा उस हठ की जड़ काटने में सक्रिय होने लगी। जिस शत्रु को मरा हुआ मान लिया था वह फिर से सजीव हो उठा। इससे वे अधिक अनमने हो गए। संयोग से एक दिन उन्हें बाबा के साथ बिताने के लिए एकांत क्षण मिल गए। बात बाबा ने ही आरंभ की। बाहर से प्रसन्न पर भीतर से उदास बेनीमाधव जी की मुख भंगिमाएं निहारकर बाबा एकाएक अपने पालथी बंधे पैर का दाहिना तलवा सहलाते हुए बोले— हाफा मत बेनीमाधव और हफाई चढ़े भी तो अपनी दया विचार के रुका मत। मन में राम राम की रौंट लगाते ही चले जाओ। जब माया थक-थक कर हारेगी तो तुम्हारे मनलोक का सूर्य अपने आप ही उदित हो जाएगा।

बेनीमाधव जी का सिर मन की लज्जा और गंभीर विचार से झुक गया आंखें भी छलछला आईं। उन्होंने पीछे हुए बात— क्या कहूं गुरु जी, इतने वर्षों से पारस के साथ रहकर भी यह लोहा-लोहा ही रहा। मुझपर राम जी की कृपा ही नहीं होती। बड़ा अभागा हूं।'

प्यार से झिड़कते हुए बाबा बोले—' दौड़ तो लगाते नहीं और फिर राम जी को कोसते हो! ध्यान, उत्साह के बिना थोड़े ही जम पाता है। जब तक यह नहीं समझोगे तब तक तुम्हारा ध्यान एकाग्र कैसे होगा?

क्या करूं गुरु जी प्रयत्न तो बहुत करता हूं पर कहते-कहते बेनीमाधव चुप हो गए।

बाबा ने हंसकर कहा— पर पर क्या मैं बपुरी ढूंढन गई रही किनारे बैठ—क्या? यही हाल है न तुम्हारा? बेटा पहले अपना उत्साह को चेताओ। देखो मैं तुम्हें अपने ही जीवन के दृष्टांत देता हूं। × × ×

चित्रकूट में ब्रह्मानंद घरबारे के घर अपनी कोठरी में तुलसीदास पद्मासन साधे माला जप रहे हैं। सामने दीवार पर सफेदी से एक सूर्य अंकित है और उस पर गेरू से राम लिखा है। तुलसीदास की आंखें शब्द को देख रही हैं। होठ निश्चल हैं मन में राम गूंज रहे हैं।

गूंजते गूंजते सहसा आंखों से भानु-कुल मणि राम का नाम लोप होता है। आंखों के आगे सफेदी छा जाती है और उस सफेदी से एक आकार उभरता है। स्पष्ट होती है नारमूर्ति रत्नावली। मन से भी राम शब्द लोप हो गया है और मार्मिक कल्पना की टीसें उठने लगी हैं। तुलसीदास के चेहरे पर शांति और एकाग्रता की सजी ज्योति पवन झकोरे से भभकती दिये की लौ के समान कांप उठी। फिर मन में भावना की हुंकार चेहरे और माला से बचाव के लिए प्रयत्न आरंभ होता है और फिर दीवार पर लिखे तथा मन में गूंजते राम शब्द की झलकें

देती है और उसका गला घोटने लगी। छला माई माई की गुहार लगाने लगा। स्त्री भाग गई पर बाद भी राम लिप्सा के प्रति उसका उत्साह तनिक भी मंद नहीं पड़ता। वह फिर किसी स्त्री को उसी तरह घेरता है और अपनी टेंट में गुड़ पैसे खिलाता। लड़के हँसते आवाज़ें कसते 'पटाए जाओ गुर पटाए जाओ।' मैं सोचता इसकी काम लिप्सा अत्यंत घिनौनी भले हो पर उसके प्रति इसकी बावली निष्ठा प्रणम्य है। श्रीराम के लिए मेरे मन में ऐसा ही उत्साह जग जाए। बजरंगबली, अतुल उत्साह के धनी मेरी भी राम-लगन ऐसी ही प्रबल बना दो। मैंने काम क्रोध मोह लोभ सब में अपने राम को रमाने का खेल खेलना आरंभ किया। पापी के पाप में भी नतिनकामी को अपने आराध्य के प्रति दिव्य प्रेरणा मिल सकती है। मन चित्रकूट में अथक भाव से इस प्रेरणा को साधा। रामनाम मेरी सांस सांस में गूंजने लगा। और तब फिर परीक्षा की घड़ी आई। × × ×

ब्रह्मदत्त घटवाले के घर में अपनी कोठरी में तुलसीदास बैठे जप कर रहे हैं। राजा भगत कोठरी में प्रवेश करते हैं। तुलसीदास का ध्यान विचलित नहीं होता। राजा कुछ देर खड़े रहने के बाद उनकी चौकी के पास बैठ जाते हैं किन्तु तुलसी का ध्यान भंग नहीं होता है। उनके कानों में मृदंग और झांझों का सम्मिलित स्वर राम राम बनकर गूंज रहा है। राजा को खांसी आ जाती है और वह खांसी तुलसी के मन की एकरसता में व्याघात पहुंचाती है। आंखें खुलती तो हैं पर उनमें उजाला क्रमशः ही आता है। राजा को देखकर वे प्रसन्न होते हैं, कहते हैं— कहो राजन फिर वही आग्रह लेकर आए हो?

उदास स्वर में राजा ने नख से धरती को खुरचते हुए कहा— हम तुमसे कुछ भी कहने नहीं आए भइया, तुम अब राम जी के हो हमारे थोड़े ही रहे।

तुलसी ने शांतभाव से कहा— राम जी सबके हैं, फिर उनका चाकर भला सबका चेरा क्यों न होगा?

तो भौजी में राम को क्यों नहीं देखते हो? और कितना दण्ड देओगे बिचारी को? राजा के स्वर में आक्रोश था।

तुलसीदास ने अपना सिर झुका लिया, फिर गम्भीर स्वर में उत्तर दिया— तुम्हारी भौजी के प्रति मेरे मन में कोई दुर्भावना नहीं है राजा। उन्होंने मेरे प्रति अनंत उपकार किया है।

और तुम राम रूपी छुरी लेकर कसाई की तरह उस बेचारी को मारने पर ही तुल गए हो। ये तुम्हारी भगती है या स्वारथ? तुम्हारा पुन्न है या पाप? ऐसी औरत लाखों-करोड़ों में ढूंढ़े नहीं मिल सकती। तुम्हारे लिए मेरे मन में जैसा अच्छा भाव था वैसा ही अब बराबर हरदम बना रहता है। सारी बस्ती आर-पार के गांव भौजी बिचारी का कष्ट देखकर हाय हाय कर रहे हैं और एक तुम हो जो हमारे बार-बार आने पर भी हमसे कतराते रहे। जो ऐसे ही हमसे मुंह फेरना था तो नेह क्यों लगाया था?

तुलसीदास ने अपनी शांति तब भी न खोई। वे सरककर चौकी के कोने पर आ गए और राजा के कंधे पर अपना हाथ रखकर कहा— तुम्हारे आक्रोश

के लिए मेरे मन में सहानुभूति है रत्नावली के लिए तो मेरा मन ग्रात शुभ कामनाग्रों से भरा हुग्रा है।

राजा ने उनकी बात पर अपनी बात चढ़ाते हुए उत्तेजित स्वर में कहा—तो फिर भौजी से ही यह सब कहो। एक बार उनसे मिल लोगे '

बात काटकर तुलसी ने दृढ़ स्वर में कहा— यह असम्भव है।'

क्या ?

मैं अब विरक्त हो चुका। मेरा मार्ग बदल नहीं सकता। मिलकर क्या करूंगा ?"

राजा ने गम्भीर उदास स्वर में कहा— तुम्हें मालूम है भया, मुन्ना नही रहा।"

तुलसीदास के मन में महीनों के श्रम से जमाई हुई शांति पल के हजारवें अंश में ही बालू की दीवार की तरह ढहने लगी। अचानक मुंह से निकला—मेरा तारापति ! कहां गया ?'

राम जी के घर।"

राम जी के घर। स्वगत बड़बड़ाते हुए तुलसीदास की आंखों के आगे अंधेरा छा गया। मन में ऐसा आभास हुआ कि जैसे उनके भीतर रमी हुई लय बिगर रही हो और कलेजे में छुरा भुकता चला जा रहा हो। खोए लड़खड़ाए स्वर में आप ही आप पूछ बैठे— क्या हुआ था उसे ?'

बड़ी माता निकली थी उसी में चला गया।

तुलसीदास की आंखें छलछला उठीं। मन करुण होकर अपने राम को पुकारने लगा— यह तुमने क्या किया राम ? यह कैसी परीक्षा ली ?' और अबकी तह में दबा अपना ही एक और आदेश भरा स्वर गूंजा। हानि लाभ जीवन, मरण यश, अपयश यह सब विधि के हाथ में है। अपना जप न छोड़। राम की माया में तू बोलने वाला कौन है ?

राजा धीम, करुण स्वर में कह रहे थे— भौजी तुमसे कुछ नहीं चाहती, बस एक बार तुमसे मिल लेना चाहती है। तुम्हारे दरसन करके उन्हें एक कुछ मिल जाएगा।'

तुलसी के आंसू थम गए। कराहता कलेजा सहसा कठोर हो गया बोले—अब मैं चित्रकूट से कहीं नहीं जाऊंगा।

'भौजी यहीं आई हैं।

राजा की इस बात से तुलसीदास फिर चौंके चौकी से उठकर कोठरी में चक्कर लगाने लगे। एकाएक दीवार पर लिखे हुए राम शब्द से उनकी दृष्टि जुड़ी। ठिठककर खड़े हो गए और शब्द की ओर देखते हुए ही राजा से कहा—मैं विरक्त हूं। मेरे न कोई स्त्री है न कोई बेटा।

बाहर दालान में बैठी हुई रत्नावली सिर झुकाए सब चुपचाप सुन रही थी। एकाएक उठी और भीतर आ गई। तुलसीदास ने द्वार पर पत्नी को खड़े देखा। आंखों से आंखें मिलीं। कुछ क्षण बंधी रहीं। फिर एकाएक तुलसी ने सिर झुकाकर रूखे स्वर में कहा— यह तुमने उचित नहीं किया रत्ना।'

दु ख मे उचित अनुचित का ध्यान नही रह जाता। सहारा मागने आई हू।'

'सहारा राम से मागो।'

मैं तुम्हारे हृदय म रमते हुए राम ही से सहारा लेने आई हू।"

तुलसीदास चुप, जिस दीवार पर राम लिखा था उसीसे सटकर खडे हो गए। रत्नावली उनकी चौकी के पास आकर खडी हो गई थी। राजा उसके भीतर आते ही उठकर बाहर चले गए थे। रत्ना न रोते हुए कहा—' मेरा मुन्ना नहीं रहा उसम तुम्हें देख लेती थी अब किसके सहारे जिऊ ?"

सहारा केवल राम का है रत्ना।

मैं तुम्हारे जप-तप ध्यान म तनिक भी बाधा न बनूगी।

यह माना परन्तु नारी पुरुष के लिए प्रलोभन होती है।"

मैं राम जी की सौंह खाती हू तुम्ह किसी भी प्रकार से लुभाने का प्रयत्न नही करूगी। कहोग तो मैं तुम्हार सामने तक नहीं आऊगी। मुझे सेवा अपने पास रहने दो। तुम निकट स अपने राम को निहारा करना और मैं दूर से तुम्हें देखा करूगी।'

बात कहने-सुनन म बडी अच्छी लगती है किन्तु हवा रहेगी तो आग अपने आप ही भडकेगी।

मुझे तो अपने उपर विश्वास है। क्या तुम्ह अपन ऊपर विश्वास नही है ?'

"अब यह प्रश्न ही नही उठता देवी जो त्याग चुका सो त्याग चुका।

तुम्हारी झाली मे यह खरी-कपूर सब कुछ तो झलक रहा है। इनको अपनाओगे और पत्नी को त्यागोगे क्या यह उचित है ? अग्नि को साक्षी देकर विधिवत् तुमन जिसकी बाह गही थी "

"उसी ने तो मेरी वह बाह रामजी को पकडा दी। तुम्हारा आजीवन उपकार मानूगा रत्नावली। जो दिया है उसे अब मुझसे वापस न मागो। आज से यह चदन-कपूर आदि झोली का स्वाग भी छोडता हू। जितना नि सग रह सकू उतना ही भला है।

रत्नावली सहसा उठकर उनके पास आ गई उनकी टागो को अपनी बाहो से बाधकर, उनके चरणो पर अपना सिर रखकर वह बिलख बिलखकर रोने लगी— मुझे न त्यागो स्वामिन्। मुझे न त्यागो।'

तुलसी अपने कलेजे म तूफान छिपाए पत्थर से खडे रहे। मन कह रहा था—'माया म न बधना तुलसी। आज नही तो कल नारी का सग तुम्ह फिर से कामानुरक्त बना ही देगा। ह जानकी मया, मेरी रक्षा करो। हे बजरग, मेरी बांह गहो, मुझे अब राम-पथ से विलग न करो।'

रत्नावली का करुण क्रदन और प्रलाप चलता रहा। तुलसी बोले— मैं खडे-खडे थक गया हू रत्नावली, मुझे बठन दो।"

रत्नावली न धीरे-धीरे अपने हाथ सरका लिए। मुक्त होकर तुलसीदास ने डग आगे बढाते हुए कहा—' तुम्हारे और अपने भोजन की व्यवस्था कर आऊ। आता हू।"

रत्नावली सहसा घबराकर बोली— तुम जा रहे हो ?'

'आता हूं।" कहकर तुलसीदास तेजी से द्वार के बाहर निकल गए। राजा भगत दालान में खड़े थे, तुलसी को देखकर पूछा—"कहां जा रहे हो भइया ?"

"फिर बताऊंगा।' कहकर तुलसीदास बिना रुके ही मुख्य द्वार की ओर तेजी से बढ़ गए और गली में निकलकर उन्होंने दौड़ना आरम्भ कर दिया। × × ×

'मैंने राम की ऐसी लगन साधी कि फिर जो कुछ भी राह में आया उसे हटाकर भाग चला।

बेनीमाधव जी ने उत्सुक होकर पूछा—'तो आपने चित्रकूट भी त्याग दिया ?"

मेरे लिए वह अनिवार्य था।"

फिर कहां गए आप ?'

'सीता माई के मायके जगदम्बा के बिना मेरे माहाकुल मन को और कौन शांत कर सकता था ?"

बाबा अपनी कोठरी की दीवार पर चित्रित श्रीराम जानकी की छवि को निहारने लगे। क्रमशः वे छवियां सजीव-सी हो उठीं। बाबा उन्हें देखते हुए गद्‌गद आनंदलीन हो गए।'

बेनीमाधव अपने गुरु की यह अपूर्व सनेहमयी छवि निहार रहे थे। उनका मन कह रहा था—'राम यों मिलते हैं बेनीमाधव—यों मिलते हैं।

३२

गुरु जी के संस्मरण संत बेनीमाधव की विचार प्रतिक्रिया को तीव्र गति प्रदान कर गए। मन में जो विकार थे, अपनी प्रभुसत्ता स्थापित करने के लिए मानो पूरी सेना सजाकर मोर्चे पर आ डटे। विकार डंके की चोट पर न्याय की दुहाई देकर उनके मन में गरजने लगे, हमारी भूख मरे बिना तुम एक डग भी आगे नहीं बढ़ सकोगे संत जी, हमारी मांग समझो। हमारा तप परखो। हम बार बार हठ नहीं करते, तुम्हारे प्रार्थना मार्ग में हम रोज रोज रोड़े नहीं अटकाते किन्तु काया का धर्म कभी न कभी तो आखिर पुकार ही उठेगा। और उसमें भी हम तुम्हारे लिए कितनी उदारता बरतकर कितना त्याग कर चुके हैं। हम तुमसे दूसरे साधु-संतों की तरह आठों पहर चेलियां फसाने की चिन्ता भी नहीं कराते। हम तो आप प्रतिष्ठा के लिए अनुराग भक्तिनों और साधुनियों के सम्पर्क से अपने को सतर्कतापूर्वक सदा दूर रखते हैं। हम मात्र इतना ही तो चाहते हैं कि बरस-छः महीनों में कभी हमको भी ऐसा अवसर दे दिया करो जिससे लोक-समाज में तुम्हारे राम पथगामी की मान प्रतिष्ठा को भी आंच न आए और हमारा काया धर्म भी निभ जाए। हे राम कितने संयम से सधी हम एकमात्र कायिक कामना की लाज भी तुम नहीं निभा सकते ? देखो तुम्हारी दुनिया में इस समय कैसी-कैसी दुष्प्रवृत्तियां का सफल

प्रचार हो रहा है। दुष्टजन परदारा परधन-लोलुप हर तरह से फल फूल रहे हैं, राज कर रहे हैं। हमारे साधु महन्त संत वैरागी गुसाइयों आदि में जो जितना अधिक बुरे काम करते हैं वे उतने अधिक पुजते भी हैं। सज्जनों का कोई नहीं पूछता। ऐसे कठिन कलिकाल में कम से कम पाप कामना करने वाले अपने इस दास की क्या एक छोटी सी मांग भी पूरी नहीं कर सकते ?

अहं के इस तर्जन गर्जन के बीच में कई बार मन की भीतरी तह से एक और स्वर उठने का प्रयत्न करता था पर जब भी विचारशील अहम् का यह आभास होता तभी वह और भी अधिक बिफरकर बोलने लगता। अन्त में उसकी बात समाप्त हो गई और भीतर वाला स्वर गरज ही उठा — तुलसी ऊंचे ऊंचे वृक्षों की ओर न देखो बेनीमाधव, धरती पर जमकर फैली हुई दूब को देखो। ये ऊंचे ऊंचे वृक्ष किसी भी आंधी में उखड़कर गिर सकते हैं। पर दूब को चाहे जितना भी रौंदो या काटो वह धरती पर उतनी ही गहरी जड़ें जमाकर फैलती चली जाती है। तुम्हारे गुरु दूब हैं बेनीमाधव। उन्होंने अपनी दीनता में ही यह वैभव सिद्ध किया है। इतने वर्षों तक इतने निकट रहकर भी क्या तुमने अपने गुरु में किसी भी प्रकार का विकार उभरता देखा है ?

हां देखा है पूज्यपाद गुरू जी महाराज अब भी—मासों कौन कुटिल खल कामी गाया करते हैं।

उनकी खलता कुटिलता और काम प्रवत्ति किस सतह पर छनकर किस रूप में बोल रही है क्या इसको कभी तुमने पहचानने का प्रयत्न किया है बेनीमाधव ? जल की लहर दिखलाई देती है परन्तु हवा की अदृश्यमान लहरें केवल स्पर्श से ही अनुभव की जाती है। अपने आपको खोजो बेनीमाधव, नादान न बनो। जितना कामानन्द तुमने प्राप्त किया है वह अपने अनुभव में क्या एक सा नहीं है ? फिर उससे उच्चतर अनुभव की ओर क्यों नहीं बढ़ते ? एक सुख देखा अब दूसरा देखो जो इससे भी अधिक सुन्दर और दिव्य सन्तोषकारी है।

अहं का स्वर विनम्र हुआ। गिड़गिड़ाकर बोला— वही तो चाहता हूं नाथ। असल में मैं वही चाहता हूं। पर क्या करूं दुर्बल हूं। तुम्हारे सहारे के लिए गिड़गिड़ाता हूं। एक बार मुझे फिर वही प्रकाश दिखला दो जो मेरी उन्नीस वर्ष की आयु में तुमने मुझे दिखलाया था। नारी के द्वारा ही भर उर अन्तर में वह प्रकाश आलोकित किया और उसीके हाथों वह ज्योति बुझवा भी दी। यह तुम्हारा कैसा अन्याय है राम जी मुझे एक साथ दो सिरों पर नचा नचाकर वासना करते चलते हो। मुझे चैन नहीं देते। जैसा भी हूं तुम्हारा शरणागत हूं। मेरी बांह गहो प्रभु।

सन्त जी अपनी कोठरी में बैठे शान्तभाव से आंसू बहाने लगे। तभी रामू ने धीरे से द्वार खोलकर दबे पांव कोठरी में प्रवेश करने का भरसक जतन किया पर सन्त जी का चुटीला चोर-सा मन तनिक-सी आहट पाकर ही सजग हो गया। जुड़े हुए हाथों को अलग अलग करके दोनों बांहों के आंसू पोंछने के काम में लगा दिया और अपने भरे स्वर को संभालते हुए वे चटपट बोल उठे— कहो रामू कैसे आए ?

'प्रभु जी ने आपका स्मरण किया है। आप किसी कारणवश उदास हैं

संत जी ?"

उठकर संत बेनीमाधव ने अंगौछे में फिर एक बार अपना मुंह पोंछा और आगे बढ़ते हुए कहा— मनुष्य का मन है भैया, जब कभी भटक जाता है तो रो पड़ता है।

'मैंने प्रभु जी को उनके करुण क्षणों में अनेक बार देखा है। उनकी आंखें कभी-कभी गीली तो जाती है पर आंसू बहाते मैंने उन्हें कभी नहीं देखा।'

संत जी सुनकर गम्भीर हो गए। सीढ़ियां उतरकर नीचे आते हुए रामू के कंधे पर हाथ रखकर बड़े स्नेह से उन्होंने पूछा — क्यों रामू भैया, तुम्हारे मन को क्या कभी विकार नहीं घेरते ?"

सहजभाव से हंसकर रामू ने कहा— 'विकार और संस्कार तो मन की तरंगें हैं संत जी, अपने अपने ढंग से सभी के मन को घेरती हैं पर मुझे उनके संबंध में सोचने का अभी तक अवकाश नहीं मिल पाया।'

"क्या ? आत्मालोचन करना ब्रह्मचारी का काम है।"

मुझे अभी तक एक बार उसकी आवश्यकता नहीं पड़ी। प्रभु जी के ध्यान से अवकाश ही नहीं मिल पाता। यह पढ़ने-पढ़ाने का काम भी उन्हीं की आज्ञा से करता हूं।'

कभी थकते नहीं रामू ?"

रामू एक क्षण मौन रहा फिर कहा— अभी तक यह सब बातें मैंने कभी सोची नहीं हैं संत जी। प्रभु जी ने एक बार कहा था, मुझे गृहस्थ बनना है। समय आने पर वे बतलाएंगे। बस यही चिन्ता कभी-कभी सता जाती है कि जाने कब प्रभु जी आदेश करें, अन्यथा अभी तक उन्हें छोड़कर और किसी का ध्यान मेरे मन में प्रायः नहीं रहा।'

संत जी ने रामू को अपनी बांहों में भर लिया और कहा— तुम आयु में छोटे हो पर यों में मुझसे बड़े हो रामू। मुझे तुमसे ईर्ष्या हो रही है।'

रामू हंस पड़ा, बोला— दीनों के प्रति सज्जनों की ईर्ष्या भी वरदान होती है संत जी। आप हर रूप में मेरा मंगल ही करेंगे।'

बाबा अपनी कोठरी के आगे राजा भगत के साथ बैठे बातें कर रहे थे। बेनीमाधव जी को देखकर बोले— आओ बेनीमाधव, आज हम एक कन्या को देखने और बात पक्की करने जा रहे हैं।"

'किसका विवाह कराएंगे गुरु जी ?" संत जी ने हंसकर पूछा। स्वयं उन्हें ही अपनी हंसी खोखली लगी।

राजा भगत बोले— अपना ब्याह रचावेंगे बाबा। अब सौ बरस के होने आए, उनके जवानी फिर से फूटने वाली है न।'

बाबा खिलखिलाकर हंस पड़े, कहा— अरे हमारे ब्याह की चिन्ता तो पहले भी तुम्हीं ने की थी और अब भी चिता से तुम्हीं कराओगे। हम तो अपने रामू के लिए जानकी मैया की एक चेरी लाने जा रहे हैं।

सुनकर रामू लज्जित हो गया। वह बाबा की कोठरी में चला गया। राजा भगत के कंधे पर हाथ रखकर जाने के लिए बढ़ते हुए बाबा ने ऊंचे स्वर में रामू को

ग्रादेश दिया—"ग्ररे रामू बेटा टोडर का भतीजा ग्रावे तो कहना, कल चौथे पहर हम उससे मिलेंगे। कल दिन म भी हम चेतराम साहु के यहा निमन्त्रण पर जाना है।"

माग मे चलते हुए बेनीमाधव जी ने बाबा से एकाएक पूछा—"ग्राप ग्रपने मन के मोह विकारो को शात करने क लिए ही मिथिला गए थे ग्रथवा यो ही मन की साधारण तरग मे ?'

सच तो यह है कि चित्रकूट से इतनी दूर भाग जाना चाहता था जहा राजा ग्रथवा रत्नावली फिर न पहुच सकें। चलते चलते एक जगह पता चला कि जगन्म्बा का नहर पारा मे है। प्राचीन जनकपुरी, धनुषभग का पवित्र स्थल देखने की ललक मे हम उधर ही चल पडे।"

वहा ग्रापका क्या ग्रनुभव मिला ?'

मेरा काव्य पुरुष वहा जाकर सचेत हुग्रा।"

जानकी मगल की रचना कदाचित ग्रापने वहीं की थी ?

ग्रागे वाली गली के नुक्कड पर कुछ भीड थी। हसी क ठहाके भी गूज रह थ। किसी ने रामबोला बाबा का ग्राते हुए देख लिया। फुसफुसाहट शुरू हुई बाबा ग्रा रहे है बाबा।' बहुत-से चेहरे पलटकर बाबा को देखन लग ग्रौर हुजूम छट गया। सामने मगलू डण्ड लगा रहा था। बाबा उसे देखकर खिल उठे। बेनीमाधव से कहा— मेरे काव्य पुरुष न ऐसा ही डण्ड-बैठकें जनकपुरी म लगाई थी।"

ज सियाराम बाबा। कई लोगो ने तेज डग बढाते हुए ग्राकर बाबा के चरण छूना शुरू किया।

ज सियाराम ज सियाराम! ग्ररे मगलू काहे की भीड लगाए हो भया ?"

मगलू स्वय भी बाबा के पास ग्रा पहुचा था। उनके चरणस्पश करते हुए उसने स्वय ही उत्तर दिया— कुछ नही बाबा ये साली स्स ।" मुह से गाली का पहला शब्द निकलते ही मगलू ने बात करना बन्द करके तुरत ग्रपने दोनो कान पकडे ग्रौर जल्दी जल्दी पाच बठकें राम राम करते हुए लगा डाली।

लोग बाग फिर हस पडे बाबा ने मुस्कराते हुए मगलू को हौसला दिया—"डट रहो पहलवान राम जी तुम्हे ग्रवश्य विजय देंगे।

ग्रात्मसघष भरे उत्तेजित चेहरे को ऊचा उठाकर तेजस्वी दृष्टि स बाबा को देखते हुए मगलू बोला—'ग्ररे राम जी तो जब दया करेंगे तब करेंगे पहले तो हम ही ग्रपनी इस ग्रादत साली ' मुह से गाली निकलने ही मगलू की बठक ग्रौर लोगो की हसी फिर शुरू हो गई। बाबा मुस्कराते हुए ग्रागे बढ चले। बेनीमाधव से कहा— इसकी हठ शक्ति ठीक मेरी ही जसी है किन्तु मैंने ग्रपना मन साधने के लिए दूसरा उपाय किया था।

राजा बोले— तुमने क्या उपाय किया था भया ?

हमने कुछ नही किया जानकी मया ने रास्ता बतलाया।" × × ×

मिथिला क्षेत्र म पण्डे यात्रियो को प्राचीन स्थलो का विवरण दे रहे हैं—यहा राजा जनक ने हल चलाते हुए सीता जी को पाया था। यहा राम जी ने धनुषभग किया था। जानकी मया ने उनके गले म जयमाल डाली थी सीता

स्वयंवर हुआ था। यहां राजा जनक की फुलवारी थी। यात्रियों के पीछे-पीछे तुलसीदास यह सारा विवरण सुनते चले जा रहे हैं। सारा हरा भरा क्षेत्र और मंदिरों की इमारतें अपना वर्तमान रूप खोकर तुलसीदास की कल्पना में पुराने दृश्य उमगाने लगी। राजा का महल, राम जी की बरात के तम्बुओं का नगर, स्वयंवर, जनकदुलारी के द्वारा श्रीराम जी के गले में जयमाला डाले जाने का दृश्य, विवाह मण्डप की हलचल, ज्योनार और उत्साह से गाई जानेवाली स्त्रियों की गालियां, सारे दृश्य भावुक तुलसीदास के आंखों के आगे आने लगे। × × ×

मैंने उल्लसित होकर गीत गाए। जानकी मैया के दरबार में सारी नारियों की कल्पना की। लुहारिन-अहीरिन-तमोलिन-दर्जिन-मोचिन-बारिन-नाइन आदि हर स्त्री के रूप में विवाह के अवसर का उल्लास निहारा। राजा दशरथ के राजसी ठाट के अनुरूप ही उनका विलास वर्णन किया। राम-जानकी की भक्ति के प्रभाव से मेरे मन का शृंगार उमगकर भी विकाररहित हुआ। मन के घोड़े पर संयम की लगाम कसी। हर स्त्री जानकी मैया की दासी थी फिर भला मैं उनके प्रति कोई कलुषित भाव अपने मन में कैसे आने देता? मानव मन बड़ा अद्भुत होता है बेनीमाधव। जब तक वह संस्कार धारता नहीं तभी तक विकार ग्रस्त रहता है और एक बार वह निश्चय कर ले तो जादू की तरह उसकी दृष्टि बदलकर कुछ और की और ही हो जाती है।"

दक्षेश्वर के पास एक गली में एक कच्चे पक्के छोटे से घर में बाबा तखत पर विराजमान हैं। पण्डित गंगाराम भी उन्हीं के पास बैठे हैं। मुहल्लेवालों की छोटी सी भीड़ उन्हें घेरे खड़ी है। एक प्रौढ़ा उनकी चौकी के पास बैठी हुई हाथ जोड़कर कह रही है— मेरे पास दान-दहेज देने को कुछ नहीं है महराज। खाली कन्या सौंपूंगी।

अरी राम भक्तिन तेरे पास कन्या है। कन्यादान तथा विद्यादान से बड़ा और कौन सा दान होता है?'

बेनीमाधव जी बाबा की चौकी के पीछे खड़े थे। उनकी दृष्टि बाबा के सामने काला लूगा पहने हुई उस प्रौढ़ा स्त्री की ओर ही लगी थी। अपनी कच्ची पक्की दाढ़ी पर धीरे धीरे हाथ फेरते हुए उनका मन तरंगित हो रहा था सुन्दर है। यदि मेरी पत्नी होती तो लगभग इसी आयु की होती। धत् वत् हट रे मन यहां से। बेनीमाधव जी ने उधर से अपना मुंह हटा लिया।

उसी समय कुछ स्त्रियां एक नवयुवती को लेकर आती हैं। बाबा उस लड़की को देखकर प्रसन्न होते हैं। लाज-सकोच से भरी वह नवयुवती आकर बाबा के चरणों में अपना मत्था टेकती है। उसकी पीठ थपथपाकर बाबा कहते हैं— ठीक है, ठीक है।

बाबा रामू के लिए बहू पसंद कर रहे थे और बेनीमाधव अपने मन के तिल बाड़ी की प्रस्तावित संगिनी को फिर रसीली दृष्टि से निरख रहे थे।

बाबा ने बहू को कंगन पहनाया उसके सिर पर अक्षत डाले और प्रेम से

अपना हाथ फेरा। फिर आस पास खड़ी भीड़ की ओर देखकर बोले— कित्ती बड़ी बरात आवें ?

एक बूढ़ा हाथ जोड़कर बोला — आपसे क्या छिपाव है महराज। य चमेली तो अभी बतला ही चुकी कि इनके पास कुछ क्या है। बिचारी न घर के बतन बेच-बेच के खा डाते हैं।

बिचारी चमेली के लिए सहानुभूति के शब्द सुनकर बेनीमाधव ने एक बार फिर उस प्रौढ़ा को देखा —देखना तो सहानुभूति से चाहा पर भूखी दृष्टि रसीली हो गई। मन फिर लहराने लगा दुखी है बेचारी। इसके चेहरे पर मदन की वह मार भी है जो भरी और लोकभीरु विधवा स्त्री के चेहरे पर दिखलाई पड़ा करती है। स्वयं मेरे मुख पर भी तो मन की सूनी उदासी—धत धत रे मन, फिर बहका !' बेनीमाधव ने फिर अपना मुख फेर लिया। बाबा उस समय कह रहे थे — घबराओ मत समधिन जराम सब तुम्हारी तरफ का सब खर्चा उठायेंगे। और हमारा खर्चा टोडर का बेटा आनन्दराम और पोता कन्हई मिल कर उठायेंगे।

पण्डित गंगाराम बोले— खर्चे की चिन्ता तुम्हें नहीं करना होगी तुलसीदास। मैंने कन्या पक्ष की यह व्यवस्था अपने जिम्मे ले ली है। हमारा एक यजमान इस घर की मरम्मत कराने का भार ग्रहण करना स्वीकार कर चुका है। बात यह है कि यह तुम्हारी रामप्यारी समधिन चाहती है कि उनकी बेटी और दामाद उनके साथ ही रहें। तुम्हारे यहां तो नई गृहस्थी बसाने की जगह है नहीं इसलिए हम भी यह प्रस्ताव कुछ बुरा नहीं लगता।'

बाबा बोले— चलो यह भी ठीक है। बस ब्रह्मनाल में रामू का पैतृक घर भी है। उसकी पुरानी गृहस्थी का कुछ सामान और गहने इत्यादि हैं जो मैंने टोडर के यहां रखवा दिए हैं किन्तु तुम्हारा प्रस्ताव रुचिकर है।' घर से लगे हुए एक खण्डहर की ओर दृष्टि डालकर बाबा ने पूछा—'गंगाराम यह पास वाली ज़मीन क्या बिकाऊ है ?

समधिन बोली— हां महराज यह घर दीनदयाल दुबे का था। उनका पोता अब जौनपुर में रहता है। एक बार आया था तो हमसे कह गया था कि सौ रुपये में वह बेचने को राजी है। कोई गाहक हो तो वह तयार हो जायगा।'

बाबा बोले — हम तयार हैं। हम उस घर के सौ रुपये मिल रहे हैं। बाकी जो कमी-बेशी होगी सो भी पूरी कर दी जाएगी। गंगाराम तुम इस जमीन को भी इस घर में मिला लो।

प्रौढ़ा बोली— हम तो महराज जैसी आपकी आज्ञा होयगी वैसा करेंगे। इस गरीबनी की कन्या आपने अपना गन ... ले ली यही मेरा सबसे बड़ा भाग है। हम गंगा मैया से कभी उरिन नहीं हो सकेंगी।

रसीली दृष्टि से देखते हुए बेनीमाधव का मन कह रहा था— तू मेरे विरक्त मन का सहारा बन जा। तू मेरे कलेजे में फांस सी चुभ गई है। तेरे बिना अब मुझसे रहा नहीं जायगा।

बेनीमाधव कामना भरा लहराता मन लेकर लौटे। रास्ते भर उनके मन में

भय और कामना की लुकाछिपी चलती रही। भय लगता था कि बाबा उनके मन को भापकर फटकारेंगे। कामना होती थी कि लोक लाज के निभाव के साथ उनका यह काम जरूर इस स्त्री की कृपा से उतर जाय। रास्ते चलते हुए उनकी खोई आंखें अपनी मनभावती कल्पना के चित्र देखती चली जा रही थीं। कल्पना में बेनीमाधव और वह स्त्री आमने सामने होते एक-दूसरे को रसमग्न होकर निहारते, बेनीमाधव उसके कंधे पर हाथ रखकर दूसरे हाथ से उसकी ठोडी ऊंची उठाते

"धतुतरी की राम भगतिनिया !" अपनी नाव पर बार-बार बैठती हुई एक मक्खी को हंकाते हुए गुरु जी ने ज्यों ही यह कहा वैसे ही बेनीमाधव भय से चौंक कर उनकी ओर देखने लगे।

बाबा की दृष्टि भी उन्हीं की ओर मुडी बोले—'मक्खी भी बडी हठीली होती है बेनीमाधव, जहां से उडाओ वहीं आकर बैठती है।'

बेनीमाधव का सहमा हुआ कलेजा धड़का मन ने कहा—गुरु जी ने तेरे चोर को पकड़ लिया है।

बाबा कह रहे थे—राम का विवाह करके मुझे ऐसा ही लगता रहा, कि जैसे तारापति को गृहस्थ बना रहा हू।

राजा के मुह से एक ठंडी सांस निकल गई बोले—अब उन पुरानी बातों का ध्यान हम ने दिलाया भया। कलेजा मुह को आने लगता है।'

बाबा बोले—क्यो ? अरे मैं तो अपने रहे सहे मोह विकारों को इसी प्रकार से धोता हू। बहू देखने गया तो स्वाभाविक रूप से अपने बेटे की याद आई। मेरा वह बेटा ही तो अब राम बनकर मेरे पास है। तारापति के ध्यान से उपजी उदासी क्षण के एक छोटे अंश में ही राम के ध्यान से मेरा आनन्द बन गई। (बेनीमाधव की ओर देखकर) विचारवान पुरुषों के लिए मन से सदा लडना भी अच्छी बात नहीं होती बेनीमाधव। मगरू जैसे अविकसित बुद्धि के लोगों का मन ही उस उपाय से सुधर सकता है हमारा-तुम्हारा नहीं। समझे ?"

बेनीमाधव समझ गए लज्जित भी हुए। मुह से केवल एक धीमा सा शब्द फूटा—हां गुरु जी।'

तुलसीदास कह रहे थे—'मैंने तुम्हें अभी बतलाया था न कि मैं अपने विकारों को भी राम रंग में रंग लेता था। राम प्रसंग से जुड़ते ही विकार भी संस्कार बनने लगते हैं। किसी भी स्त्री को देखो और तुरत ही यह ध्यान करो कि यह जगदम्बा की दासी है।

बेनीमाधव का मन लज्जा और दुख से अभिभूत हो रहा था। उनकी आंखें छलक आई। रुंधे हुए कंठ से कहा—मन बड़ा प्रबल शत्रु होता है गुरु जी मेरे अपराधों का अंत नहीं।

तुम अपने मन को सानी क्या छोडते हो ? इस अपने सारास्य का विभिन्न लालाओं के चित्र में भरा रखो न। मैंने मिथिला में अपनी विवाह की जानकी मगन मनाकर धारा था। यह जीवरूपा सीता नृ दिन बाल्या पर राम पर रीझ उठी है। उस रिझवार के ध्यान से मन भयमुक्त होकर विकसित हुआ। मन

यह भय बना रहता था कि यहा यदि हम किसी पर कुदृष्टि डालेंगे तो जगज्जननी हमसे कुपित हो जायगी। इस भय ने ही हमारे मन को साध दिया। यो ही सचेत रहोगे तो तुम्हें मनचाही सिद्धि अवश्य प्राप्त होगी।"

कई महीनो के बाद गुरुमुख से अपने प्रति सराहना का यह वाक्य सुनकर बेनीमाधव के हृदय को अपार हर्ष हुआ। उनके चरणो म मस्तक नवाकर वे बोले— 'मैं अब, राम श्याम-शकर-बजरग गुरु पिता-माता सब कुछ आपको ही मानता हू। आपके जीवन चरित्र को ही निरन्तर अपने ध्यान मे रखता हू। आपका ध्यान ही मुझे सदगति प्रदान करता है और करेगा।"

'हा अब तो मुझे भी ऐसा ही लगने लगा है। वत्स, आत्मकथा सुनाकर मैं तुम्हारी सेवा करूगा। कल से नियमित रूप से दिन मे तुम्ह अपने जीवन प्रसग सुनाऊगा। मेरा आत्मालोचन होगा और तुम्हें आत्मालोचन के लिए स्फूर्ति प्राप्त होगी।'

दूसरे दिन लगभग पचास वष पूव के अपने अनुभव सुनाते हुए बाबा बोले— मिथिला से हम सचमुच खूब भरे पुरे होकर लौटे थे। काशी और प्रयाग के बीच मे एक स्थान सीतामढी के नाम से प्रसिद्ध है। वहा वाल्मीकि जी का आश्रम बखाना जाता है। राम जी की आज्ञा से लखनलाल जगदम्बा को वहीं छोड गए थे। लव कुश कुमारों ने वहीं जन्म पाया। वहा एक सीतावट है बेनीमाधव। तपस्विनी जानकी प्राय उसी वट वृक्ष के नीचे बठकर राम जी का ध्यान किया करती थी।" × × ×

गगा के समीप वक्षराज सीतावट के नीचे जगदम्बा के चरण कमलो का ध्यान करके तुलसीदास आनदविभार हो गए। प्रणाम करने के बाद कुछ देर तक टकटकी बाधकर तुलसीदास उस वृक्ष के तने की ओर देखते रहे। कल्पना सजीव हो उठी। वट के नीचे तापसवेशधारिणी जगज्जननी रामवल्लभा हथेली पर ठोडी टेके हुए बालक लव-कुश का धनुष चलाना देख रही हैं। महर्षि वाल्मीकि उन्ह लक्ष्य बतला रहे हैं।

कल्पना का दृश्य ओझल हो जाता है। वृक्ष की परिक्रमा और प्रणाम करके तुलसीदास गगा तट की ओर चलते हुए एकाएक पलटकर फिर वटवृक्ष को देखने लगे। लटकती हुई बरगद की जटाओ ने उनकी कल्पना को फिर स्फूर्त किया। वटवक्ष उन्हें जटाजूटधारी शिव जी के रूप मे दिखाई दिया। तुलसीदास मुग्ध होकर काव्यतरग म चढ गए।

> मरकत बरन परन फल मानिक से
> लसै जटाजूट जनु रूखवेष हरु है।
> सुषमा को ढेर कधौं सुकृत-सुमेरु कधौं
> सपदा सकल मुद मगल को घरु है।
> देत अभिमत जो समेत प्रीति सेइये
> प्रतीति मानि तुलसी विचारि काको थरु है।।
> सुरसरि निकट सुहावनी अवनि सोहै
> रामरमनी को बटु कलि कामतरु है।।

रात मे तुलसीदास गगातट पर एक तखत पर सो रहे थ । उन्हे स्वप्न मे वटवृक्ष के नीचे जानकी मया विराजमान दिखाई दी । स्वप्न मे तुलसी उनके चरणा म झुके हुए कह रहे हैं—"मेरा माग मुझे दिखाओ अब । अब मैं भी तुम्हारे ही समान राम-दर्शन की चाह लिए बैठा हू ।"

स्वप्न म सीता जी तुलसीदास स कहती हैं—'अयोध्या जाओ तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी ।" कहकर व अदृश्य हो गइ । फिर उन्ह गगातट के पास खडे हुमान जी दिखलाई दिए । आकाश से लकर धरती तक उनका विराट रूप स्वप्न मे देखकर सोत हुए तुलसी सहसा चौक गए । चरणा म प्रणाम किया और फिर हाथ जोडकर आनद मुद्रा म अपने परम सहायक और आराध्य बजरगबली को निहारने लग । मूर्ति क्रमश छोटी होती जाती है । हनुमान जी मनुष्य के आकार म आ जाते हैं वाल्मीकि बन जात ह । तुलसीदास कपीश्वर के स्थान पर कवीश्वर को देखकर गदगद हो उठत हैं । हाथ जोडकर कहत हैं— ह कविता शाखा पर विराजमान मधुर मधुर अक्षरा म राम राम की कुहुक भरने वाले कोकिल, तुम्हे प्रणाम है ।"

वाल्मीकि कहते हैं—'इस कलिकाल के निगाना अधकार म मेरा काम क्या तू कर सकेगा तुलसी ?'

आज्ञा करें आदिकवि ।"

भापा म रामायण की रचना कर ! इससे तेरा और लोक का कल्याण होगा ।' कवीश्वर फिर कपीश्वर के रूप मे दिखलाई देते हैं । गगन स्वर गूजता है—'अयोध्या जा, रामायण की रचना कर ।"

स्वप्न आलोप हो जाता है । तुलसीदास की आख खुल जाती है । ब्राह्मवेला आ चुकी थी । विचारमग्न होकर दूर धुधल म झलकते हुए सीतावट और वाल्मीकि आश्रम को प्रणाम करके तुलसीदास बोले—"अब क्या यह सचमुच ही तुम्हारी आज्ञा थी या मेरे भावुक मन का छलावा भर है ? मैं क्या सचमुच वह काम कर सकता हू जो महर्षि वाल्मीकि कर गए ?"

प्रश्न उठकर रह गया किन्तु उत्तर न मिला । तुलसीदास गम्भीर सोच और असमजस मे पड गए ।

अपने ब्राह्मकर्मों से मुक्त होने पर तुलसीदास एक बार फिर सीतावट के पास गए । वहा उन्हें एक हटटे-कटटे पहलवान जसे बलशाली और तेजस्वी साधु मिले । जगदम्बा के चरण चिह्नों के सामने घुटने टेककर बैठ तुलसीदास की आत्मा-नन्दलीन छवि देखकर वे बडे मुग्ध हो गए और एकटक एक होकर उन्हें देखने लगे । आत्मनिवेदन करके थोडी देर बाद तुलसीदास जब उठे तो उन्होने आगे बढ़कर पूछा—' महात्मन, आप किस सम्प्रदाय के हैं ?"

तुलसीदास ने झुककर साधु को प्रणाम किया और कहा—' मैं किसी सप्रदाय म दीक्षित नहीं हुआ स्वामी जी । राम जी का चेरा हू, उन्ही का नाम जानता हू । नाम भी रामबोला ही है ।"

साधु जी उनका कधा थपथपाते हुए बोले—"यो तो विरक्तो का कोई सगा सबधी नही होता पर तुम तो मेरे किसी जन्म के भाई समान लगते हो । मैं

अयोध्या जा रहा हूं। क्या तुम मेरे साथ चलोगे ?"

तुलसीदास स्तब्ध और आश्चर्यचकित होकर उस साधु को देखने लगे। मन में प्रश्न उठा 'क्या यह संयोगमात्र है अथवा जगदम्बा का आदेश ?'

तुलसी को मौन देखकर साधु ने मीठे स्वर में कहा—'यदि इच्छा न हो तो मेरा कोई विशेष आग्रह नहीं है। तुम्हारी भावुक भक्ति से प्रभावित होकर मैंने सहजभाव से यह प्रस्ताव कर दिया, और कोई बात न थी।"

"आपकी यह सहज बात मेरे लिए साक्षात हनुमान जी का आदेश बन गई है। यह प्रस्ताव करने के लिए मैं आपका बड़ा कृतज्ञ हूं।' × × ×

"प्रयाग तक तो हमारा उनका साथ रहा। और फिर एक दिन हम जो सबेरे उठे तो साधु जी का कहीं पता ही नहीं था। अस्तु हम तो निश्चय कर ही चुके थे। अयोध्या की ओर पयान किया, जिस मार्ग से तापसवेषधारी श्रीराम, जानकी और लखनलाल सुमन्त के साथ अयोध्या से प्रयाग आए थे उसी पर चले। सारा मार्ग मेरी कल्पना के लिए हरा भरा रहा। और जब मैंने अयोध्या में प्रवेश किया तब तक तो मैं राम विह्वल हो चुका था।' कहते-कहते बाबा का चेहरा एक अलौकिक तेज से दमकने लगा था। बेनीमाधव चकित होकर उन्हें देखने लगे। दो पल मौन रहकर बाबा फिर कहने लगे— मैंने कभी किसी प्रकार का नशा नहीं किया है। पर दूसरों से नशे का विवरण सुनकर मैं यह अनुभव कर सकता हूं कि मेरा अन्तर्मन उस समय राम-मतवाला हो गया था। ऊपर की काया तुलसीदास की पर उसके भीतर राम थे। मैंने अयोध्या में प्रवेश क्या किया मानो राम ने मेरे उर अन्तर में प्रवेश किया।' × × ×

खण्डहरों-टीलों भरी अयोध्या। बीच-बीच में खण्डित मूर्तियां भी देखने को मिल जाती थीं। तुलसीदास को दिखलाई दिया कि दक्षिणाग्र में हनुमान और लक्ष्मण के साथ श्रीराम-जानकी अयोध्या के आकाश में खड़े हुए हैं। तुलसी मुग्ध होकर आकाश की ओर देख रहे हैं और बढ़ते चले जाते हैं। थोड़ी दूर पर बन्दरों की आपसी लड़ाई का शोर उन्हें होश में ले आता है। अपने आप ही कह उठते हैं—'सब कुछ कैसा अद्भुत उल्लासप्रद है आनन्द है भय भी है। बजरंगबली सहाय होंगे। वही मेरा भाग्य निर्देश करेंगे।'

चलते हुए तुलसीदास उसी मठ पर आए जहां पंच संस्कार कराने के लिए नरहरि बाबा उन्हें लेकर आए थे।

मठ में अनेक साधु थे। कोई भांग घोट रहा था कोई खीर-मालपुये की चर्चा छेड़ रहा था। एक साधु दूसरे पर अपनी लंगोटी चुराने का आरोप लगाकर लड़ रहा था। तुलसी को वहां किसी के भी हृदय में राम न दिखलाई दिए। भांग घोटते हुए साधु से कहा— जै सियाराम महाराज।"

जै शियाराम कहां से आवना भया ?'

इस समय तो सीतावट के दर्शन करके आया हूं। लगभग छत्तीस-सैंतीस वर्षों के बाद मैं यहां आया हूं। पहले पूज्यपाद नरहरि बाबा के साथ आया था।'

"भला, भला। बड़ी पुरानी बात है। हमने नरहरि बाबा का नाम भर ही सुना है।" कहकर वह फिर भाग घोटने में दत्त चित्त हो गया।

तुलसीदास ने सविनय कहा—"इस मठ में क्या मुझे रहने का स्थान मिल सकेगा?"

सिल पर बट्टा रगड़ते हुए साधु बोला—'मिल क्यों नहीं सकता। साधुओं की सेवा करो तो मैं महंत जी से कह दूंगा।"

आपकी बड़ी कृपा है।'

'किरपा-उरपा कुछ नहीं, तुम्हें हमारा चेला बनना पड़ेगा। भोरहरे की कागा बोली और दोपहर की सत्यानाशी तथा सायंकाल की मोग बिलासी भाग तुम्हें ही पीसनी होगी। राजी हो तो महंत जी से जगह दिला देंगे।'

तुलसीदास बोले—'मैं यथासाध्य आपकी यह सेवा कर दूंगा।"

और देखा, जितनी देर हमारी भांग घोटोगे उतनी देर राम राम जरूर जपोगे।

तुलसीदास ने गद्गद होकर कुछ कहना चाहा, पर भगघोटने साधु जी अपने स्वर को और ऊंचा चढ़ाकर बोलने लगे—'हम एक घूट में परख जाते हैं कि ये राम राम जप के पीसी गई है या नहीं। नहीं नहीं, पहले हमारी बात सुनो, जित्ती बादाम, कालीमिच इत्यादि इत्यादि हम तुम्हें देंगे उत्ती सब हमारी भाग में बोल। और जो एक भी कम हुई तो बच्चू कमर पै दुइ लात मारकर हम तुम्हें यहां से निकाल बाहर करेंगे, याद रखना।"

तुलसीदास ने हाथ जोड़कर कहा—"मैं बड़े प्रेम से राम राम जपूंगा और जो सामग्री आप मुझे देंगे उसमें से एक भी पत्ती भाग या एक भी दाना कालीमिर्च आपको कम नहीं मिलेगी।"

'और सुनो," स्वर धीमा करके और फिर से संकेत देकर तुलसीदास को अपने पास बुलाकर साधु जी बोले—"महंत जी जो हैं न वो जब हमसे अपनी भांग घुटवाएं तो लपक के उनके सामने कहना कि गुरू जी, हम महंत जी की भांग घोटेंगे।"

'अच्छा महाराज।'

"महराज-बहराज कुछ नहीं। हम गुरू जी कहके पुकारा करो। और सुनो, यहां जो चेरिया आवें तो उनके सामने तुम्हें हमारे गोड़ भी दबाने होंगे।'

तुलसीदास संकोच में पड़ गए, कहा—'आपने मुझे अपनी भाग घोटते समय राम जपने का मंत्र दिया इसलिए आपको गुरू जी कहूंगा। आपके चरण भी राम राम जपकर ही चापूंगा। परन्तु स्त्रियों की उपस्थिति में मैं आपके पास नहीं आऊंगा।'

भगघोटने साधु ने आंखें तरेरी फिर पूछा—"क्या तुम सचमुच के ब्रह्मचारी हो?"

हां गुरू जी।"

'राम जी की सौगंध खाके कहो कि ब्रह्मचारी हूं।'

"रामजी साक्षी हैं मैं ब्रह्मचर्य व्रतधारी हूं।"

तो भागो यहां से। एकदम दूर चले जावो। हिया जो "गुरु असली ब्रह्मचारी रहगा यह आज नही तो कल, कल नहीं तो परसों सारी की सारी चेलिया अपनी ओर खींचकर ले जायगा। साला। राडें ससुरिया तो असली ब्रह्मचारी को ही अपना खसम बनावे के फेर म रहती हैं। तुम देखने मे भी सुन्दर हो। भागो भागो। असली ब्रह्मचारी का कलयुग के मठो म काम नही है।" कहकर साधु जी बडे जोर से अपनी भाग घोटने लगे।

तुलसीदास साधु की बातें सुनकर विचित्र मनस्थिति म पड गए। एक तरफ तो यह साधु राम राम जपने का मन्त्र देता है और दूसरी ओर असली ब्रह्मचारी का निन्दक भी है। सब मिलाकर इसकी बातें बहकी-बहकी-सी हैं। वे उठ खड़े हुए हाथ जोडकर कहा—'अच्छा तो चलता हू। राम राम।' तुलसीदास चलने लगे तो साधु ने आखें तरेरकर कहा—'हिया तौ सब साधू महातमा तर माल चाभते हैं और भगतिनन से रसजोग साधते हैं। और ये धरऊ हिया ब्रह्मचय फलइह। कलयुग का सतयुग बनावें चले है। धोधाबसत नही तो।'

साधु का बडबडाना चलता रहा। तुलसीदास बाहर आए। एक अन्य प्रौढ साधु फाटक पर मिले। इन्हें देखकर कहा—'जै सियाराम।'

'जै सियाराम महाराज।'

अयोध्या मे नये आए हैं कदाचित् ?"

हा महाराज गोलोकवासी नरहरि बाबा के साथ बचपन म एकबार यहा आया था। यहीं मैंने पच संस्कार पाए थे। इसीलिए यहा शरण लेने आया था।'

'भगड गुरु से आप की क्या बातें हुइ ?'

तुलसीदास खिसियानी हसी हसकर बोले— क्या कहू महाराज, विचित्र महात्मा है।"

हा बातें अवश्य विचित्र करते हैं पर इस मठरूपी जल मे कमलवत रहने वाले एक वही व्यक्ति हैं पर भला ही होगा जो आप यहा न ठहरें। बाहर आइए।"

प्रौढ साधु ने अपनी बातों से तुलसीदास के मन मे हल्की सी उत्कठा जगा दी। गली म मठ के फाटक से दस कदम आगे बढकर साधु बोले— यह भगड अखण्ड ब्रह्मचारी है। सिद्ध पुरुष है। इस मठ का वातावरण अब पहले जसा नहीं रहा। नरहरि बाबा का आगमन मुझे याद है। आपके संस्कारादि होने का प्रसग भी अब मुझे याद आ रहा है। मैं तब यहीं रहता था। उस समय मेरी आयु पंद्रह-सोलह वष की रही होगी। बडे महन्त जी के गोलोकवासी होने के बाद अब यहा कोई सच्चा साधक नहीं रह पाता। यह राम जी की अयोध्या अब विचित्र हो गई है।"

तुलसीदास उदास हो गए बोले—'यहा चिन्तन-मनन के क्षण बिताने के लिए बडे भाव से आया था किन्तु पापी पेट को सहारा तो चाहिए ही।'

साधु बोले— आप लिखना-पढना जानते हैं ?"

'हा, महाराज। राम-कृपा से काशी मे शिक्षा पाई है।"

तो आइए मैं आपको रामानुजी सम्प्रदाय के मठ मे ले चलता हू। उनका

हिसाब किताब रखनेवाला कोठारी बीमार है, मरणासन्न है। यहा के महन्त जी अभी दो दिनो पहले ही हमारे आगे हिसाब किताब के सम्बन्ध म दुखी हो रहे थे।"

तुलसीदास फिर सकोच म पड गए, कहा— महाराज यह रुपिया-टका और साज-सामाना की चिन्ता म पडूगा तो "

अरे यह मठ का हिसाब किताब है, कोई महाजन की कोठी का तो है नहा। व्यथ म भावुक न बनो। दुनिया साधे बिना दीन नही सधता। राम सरकार भी जब दुनिया मे आते है तो उसके समान ही व्यवहार करते हैं।"

'आपकी इस बात ने मुझे प्रभावित किया, ठीक है, मैं कोठारी का काम सभाल लूगा।' × × ×

३४

बाबा सन्त जी को सुना रहे थे—"रामानुजी सम्प्रदाय के मठ मे मैं कोठारी बन गया। महन्त जी या तो भले थे। कुशल, लोक-व्यवहारी थे। हाकिम हुक्कामो, धनी मानियों से प्राय मिलते-जुलते रहते थे परन्तु चापलूसी बहुत पसद करते थे। जो व्यक्ति हर समय उनके दरबार मे बठा रहे उनकी हा मे हा मिलाता रहे, उनकी रक्षिता प्रिया को सराहे और मान दे, वही उनका स्नेहभाजन बन सकता था। वे मेरे काम से तो सतुष्ट थे परन्तु दरबारदारी न कर पाने के कारण वे असतुष्ट भी रहत थे। मैं जब हिसाब किताब लिखता तो मन म एसा अनुभव करता था कि राम जी की कचहरी म ही काम कर रहा हू। और बाकी समय अयोध्या के विभिन्न स्थलो पर डोला करता था। पडे तीथयात्रियो को बतलाते यहा सीताराम का महल था यहा सीता जी रसोई बनाती थीं, यहा राम जी का दरबार लगता था, इस कुण्ड पर दतुवन-कुल्ला करने आते थे। यहा गुरु से पढते थ। यहा भरत जी ने राम बनवास के दिनो म निवास किया था।' × × ×

अयोध्या के विभिन्न स्थलो के दृश्य पर दृश्य आते चले जाते। उजड टीलो म अथवा खण्डहर मन्दिरो के आस-पास राम जी की अयोध्या की कल्पना करते हुए तुलसीदास गद्गद हो जाते थे। अयोध्या की भूमि मे चलता फिरता हर चेहरा उनकी दृष्टि म अपना वतमान रूप खोकर रामकालीन बन जाता था। वे अपने काम के समय का छोडकर प्राय हर समय अपनी कल्पना की अयोध्या म ही रहा करते थे। राजा दशरथ, उनकी तीनों रानिया, भरत लक्ष्मण शत्रुघ्न वशिष्ठ विश्वामित्र सभी प्राचीन पुरुष उन्ह किसी न किसी चेहरे म झलक उठते पर राम जी का बिम्ब एक बार भी उनके सामने न आया। वे एकान्त म बठकर बार-बार रूप का ध्यान करते थ किन्तु राम न प्रकट हुए। उनकी जगह हनुमान जी का आकार उनके मनालोक म मुस्कराता हुआ झलक उठता था। हनुमान जी की कल्पना उन्ह इतनी सिद्ध हो गई थी कि कभी-कभी तो उन्ह लगता कि

वे उनके सामने मांसल रूप में दृश्यमान हैं।

राम को ध्यान में लाने का आग्रह दिनोंदिन बढ़ता ही गया। 'राम बाम दिसि जानकी लखन दाहिनी ओर' यह छवि वह अपने ध्यान में आवते। मन का आग्रह बढ़ने पर उन्हें गोरे लखनलाल और गोरी सीता जी तो बहुत हद तक झलक जाती थीं परन्तु उनके बीच में राम का श्यामल बिम्ब उभरते उभरते ही अदृश्य हो जाता था। राम के रूप के बजाय कभी कोई दीन-हीन दाढ़ी वाले कंगले की छवि, कभी कोई क्रूर राक्षसाकार चेहरा, कभी सूप, कभी नृत्य-मुद्रा में नारी। इसी तरह अनचाहे बिम्ब झलकते, पर मनचाहे राम का ध्यान नहीं सधता था। तुलसीदास अपने मन में बहुत ही खिन्न रहने लगे— हे प्रभु, आप ध्यान में भी अपने इस दास पर कृपा नहीं करते। तब क्या उसकी प्रत्यक्ष दर्शन की कामना अधूरी ही रह जाएगी? यह दास कुछ नहीं चाहता, केवल आपके निकट रहने की भीख मांगता है।

अपनी असफलता पर तुलसीदास एकान्त में आंसू बहाते थे। जल से बिलग मछली के समान छटपटाते थे। बजरंगबली से लड़ते थे, 'केसरीकिशोर, बड़े बड़े दरबारों के ऊंचे ओहदेदार मुंहलगे सेवक अपने स्वामियों से हम जैसे दीन-दुखियों का भला कराने की कला दिखलाने में सफल हो जाते हैं। आप कहें और रघुकुल मुकुट-मणि रामभद्र न मानें यह बात हर प्रकार से अविश्वसनीय है। आप मेरे लिए राम जी से क्यों नहीं कहते? आप मेरे ध्यान में आते हैं, मुस्कराते हैं, अभयमुद्रा में आश्वस्त भी करते हैं पर राम जी से मेरे लिए कहते क्यों नहीं? हनुमान हठीले, इस अकिंचन ने अपने धुर बचपन से आप ही की बांह गही है फिर भी आप उसकी नहीं सुनते हैं।'

अपनी असफलता से तुलसीदास में एक जगह खिसियान और हीन भावना भी आने लगी, 'मैं इतने संयम नियम से रहता हूं किन्तु तब भी भगवान मुझसे प्रसन्न नहीं होते। और काले हृदय वाले भक्त, विरक्त होने का ढोंग करनेवाले मानवीय दृष्टि से हीनतम लोग इस समाज में श्रेष्ठ भक्त माने जाकर पूजा पाते हैं। उनमें से अनेकों के विषय में यहां तक बखाना जाता है कि आप उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन देते हैं। यह क्या इस दीन सेवक के प्रति आपका अन्याय नहीं है प्रभु? नहीं है। राम सो भलो कौन, मो सो कौन खोटो। मैं दुर्मति अपने ही परम करुणामय स्वामी के लिए ऐसे कुटिल विचार रखता हूं। जिन्होंने अहल्या के साथ न्याय किया, शबरी के अज्ञान को न देखकर उसके प्रेम को सराहा, लोक कल्याण के लिए रावण और राक्षस कुल का वध किया, उस परम न्यायी और अनन्त करुणामय साहब को मैं अपने मोहवश अन्यायी कह रहा हूं, यह क्या मेरा छोटा अपराध है? मुझे धिक्कार है, धिक्कार है। रामभद्र, मुझे क्षमा करो। जगदम्बा राम वल्लभा, बच्चे की खोट को मां क्षमा कर दिया करती है। मालिक के मन से तुम्हीं मेरे प्रति रोष को हटा सकती हो। मैया, जो सीधे साहब से कहने में आपको संकोच हो तो लखन जी से कह दीजिए। वह तो मुंहफट हैं, राम उन्हें चाहते भी अधिक हैं, वह कह देंगे तो मेरा भला हो जाएगा। कह दो मां, कह दो।'

भोली भावुकता में बहते बहते तुलसीदास ऐसे आत्मविभोर हो जाते थे कि उनके लौकिक कर्तव्यों पर कभी-कभी आंच आ जाया करती थी। उन्हें महन्त जी

की डाट सुनने को मिलती। ईर्ष्यालु साधुओं की खोटी निंदा और झिड़कियां भी मिलतीं। वे इससे दुखी होकर और भी अधिक जोश में राम रट लगाते। परन्तु इसका प्रभाव भी अच्छा न हुआ। जिस दिन बहुत आग्रह बढ़ता उस दिन उनके ध्यान में रत्नावली बार-बार झनक उठती थी। गली-सड़क में स्त्रियों को देखना उनके लिए भारी पड़ जाता था। तुलसी एकान्त में भूमि पर मत्था रगड़ रगड़कर गुहारते हैं— हे राम मेरी यह परीक्षा न लो प्रभु मुझे इस धुंधले प्रकाश से तीव्र आलोक के लोक में ले चलो। अब कामान्धकार के पाताल में न ढकेलो नाथ दया करो।' × × ×

'काम और राम के बीच में चुनाव के क्षण आने पर निश्चय ही मेरी चेतना उठकर मुझे काम प्रलोभनों से बचा लेती थी। दर्शन-साहित्य और कला के संस्कारों से जिस सौंदर्य की चाह राम-रूप लेकर मेरे मन में जागी थी उससे लुभावन से लुभावना नारी-सौंदर्य भी मेरे मन की कसौटी पर चढ़कर फीका पड़ जाता था। कुछ भक्तिनों ने मुझे अपने प्रलोभन में फांसना चाहा किन्तु राम ने बचा लिया। मेरी भक्ति निष्ठा दूसरे साधुओं के मन में ईर्ष्या जगाने लगी।' × × ×

एक दिन छबीली मालिन फूलों की डलिया लिए मठ में प्रवेश करती है। आंगन में बाबा मुक्तानन्द कहीं से आई हुई सब्जियों का ढेर में छांट-छांट कर उन्हें अलग अलग रख रहे थे। छबीली को देखते ही उनकी बाछें खिल गई, बोले— 'जै सियाराम छबीलो।"

छबीली ने कोई उत्तर न दिया, मुंह घुमाकर देखा तक नहीं, भारी चाल से आंगन पार करने लगी। मुक्तानन्द उसके पीछे-पीछे दौड़े। पास पहुंचकर कहा— छबीलो महारानी महन्त जी से आज हम दस टके दिलवाय देव। तुम्हारा बड़ा उपकार होगा। उसमें से दो तुम ले लेना।

बड़ी अदा से अपनी मुट्ठी बंधा बायां हाथ कमर पर टेककर खड़ी होते हुए छबीली ने कहा— बाकी आठ का क्या करोगे ?"

मुक्तानन्द ने धीमे उदास स्वर में कहा— 'हमारी चेली का मरद बीमार पड़ा है बहुत बीमार है। जगतू बैद साला ऐसा लालची है कि मुफ्त में औषध देने को तयार नहीं।

'तो तुम्हें चेला के मरद से क्या मतलब ? वह मरेगा तो चेली आठो पहर तुम्हारी सेवा में रहेगी।'

'छबीलो, तुम तो समझदार होकर भी नासमझों की बात करती हो।"

'क्यों ?"

'अरे मरद रहेगा, तभी तो वह उसे धोखा देकर हमारे साथ प्रेम निबाहेगी, और जो वह मर गया तो फिर जग में मेरा पाप उजागर होने से बच न पाएगा। इसीलिए उसके मरद को जिलाए रखना चाहता हूं।'

"तुम्हारे पापों को अजुध्या जी में कौन नहीं जानता ?

वैसे तो छबीलो रानी तुम्हारे पाप को भी सब अजानते हैं। जिसको हमारे

महंत जी से काम कराना होता है वह तुम्हारे ही पर पकड़ता है।"

छबीली के होंठों पर गुमान भरी मुस्कराहट खेल गई, फिर ठुनककर कहा—मेरा तो मरद तक जानता है। हजारो बार निगोड़े ने मुझे मारा-पीटा भी पर महंत जी की सेवा से मोहे अलग नहीं कर पाया। मेरा पिरेम भाव सच्चा है।"

'अरे प्रेम नहीं तुम तो साक्छात भक्ती करती हो भक्ती। एक महात्मा ने प्रेम भक्ती का जो अरथ हमको समझाया रहा सो प्रतच्छ प्रमाण में उसे हमने तुम्हीं में देखा। ऐसा प्रेम तो किसी गोपी ने भी कृष्ण भगवान से नहीं किया होगा जैसा तुम महंत जी से करती हो। दस टके दिलाय देव, तुम्हारे लिए कौन बड़ी बात है।"

छबीली इठलाती हुई खड़ी रही। वह इस मुद्रा में मुक्तानंददास को देख रही थी कि हम तुम्हारी खुशामद से खुश हैं, पर थोड़ी-सी चिरौरी और करो तो हम संतुष्ट होकर तुम्हारा काम करा दें। मुस्कराकर बोली—'गनेसी महराज कहते रहे कि तुम सुहागा के घर दबाए हो।'

मुक्तानंददास सुनकर उत्तेजित हो गए, बोले— गनेशी साला बड़ा दुष्ट है। अरे, मेरी चेलिन तो फिर भी तेलिन है, पर गनेसी तो नीच से नीच जाति की स्त्रियों के पैर दबाता है। सूप बोले तो बोले, चलनी क्या बोले जिसमें बहत्तर छेद। (खुशामद से मुस्कराकर) और बस तो जो हनुमानशरणदास हमसे कहता रहा कि महंत जी भी तुम्हारे पर..."

"धन्न! आओ हम कुठारी जी से तुम्हें पैसे दिलवा दें। तुम्हें तांबे के टके ही तो चाहिए न?"

'मुझे सोने चांदी जवाहरात का मोह नहीं है छबीली भक्तिन।'

भीतर के छोटे आंगन में प्रवेश करते हुए छबीली ने धीमे स्वर में मुक्तानंद से पूछा—'बाबा ये कुठारी जी का भेद अभी तक नहीं खुला। इसके पास कौन है?

मुक्तानंद बोले— अरे छबीली, वो खरा भगत है।"

हटो भी, कलयुग में कोई खरा भगत नहीं होत। ये दिन में कही जाता आता तो जरूर है। बाबा-बरागिया में कोठारी जी जैसा सुंदर कोई नहीं है। जरूर किसी बड़े घर की औरत से इसका नाता होगा।'

'रामजाने छबीली, बाकी हमने तो जिस तिस से यही सुना है कि जनमभूमि वाली महजिद के पास इकंत में बैठा बैठा माला जपा करता है। इसका जोग किसी तरह से भिरष्ट हो तो हमारे मन को चैन पड़े। हम सब पुराने पुराने पहुंचे हुए सिद्ध-बरागी लोग और महंत जी जैसे महत्तमा बिना दरसन के रह जाएं। और यह ससुरा माला जप-जप के दरसन पा जाए ई तो बड़ा अन्याय होगा छबीली। देखो साला बही-खाता छोड़के आंखें मूंदे माला जप रहा है।'

सामने कोठरी में तुलसीदास ध्यानमग्न होकर गोमुखी में हाथ डाले माला जप रहे थे। उनके सामने बही कलम-दावात और कुछ छुटटे लिखे हुए कागज रखे थे। कोठरी में आर-पार दो द्वार थे। महंत जी के कक्ष में जाने का रास्ता भी उधर ही से था। छबीली ने इठलाते हुए कोठरी से प्रवेश किया और कहा—जै सियाराम कुठारी जी।

जपते-जपते तुलसीदास ने अपनी आंखें खोलीं। आंखों ही आंखों में उसके

सियाराम का प्रति उत्तर दिया।

"कोठारी जी, इन्हे सावे मे दस टके दे देव। इन्हें जरूरी काम है।"

अपनी ओर देखती छबीली की प्यासी आखा और कामुक मुद्राओं से दृष्टि हटाकर मुक्तानन्ददास की ओर देखते हुए तुलसीदास ने कहा—'महत जी की आज्ञा के बिना मैं आपको धन नही दे सकूगा।"

तुलसी के द्वारा अपने को नजरदाज किए जाने से छबीली चिढ गई, बोली—"हम कह रहे हैं। इन्हे दस टके देव।"

छबीली की ओर बिना देखे ही तुलसीदास ने कहा—'बिना महत जी की आज्ञा से मैं ऐसा नहीं करूगा। क्षमा चाहता हू।"

छबीली का मिजाज घमण्ड की अटारी पर चढ गया, बोली—'मेरी बात काटते हो? अपने को बडा सुदर, बडा भगत मानते हो? मैं बडे-बडे राजे-महराजो की अकड भी नही सह सकती, तुम कौन चीज हो!"

तुलसी ने शात स्वर में आखें नीची करके कहा—'महत जी की आज्ञा के बिना मैं मठ का एक तिनका भी किसीको नहीं द सकता। मुझे क्षमा करो।"

छबीली गुस्से मे भरी धमधम पैर पटकती हुई भीतर चली गई। मुक्तानन्द वहीं खडे रहे, कहा—"कोठारी जी, ये बडी दुष्टा है अभी जाके महत जी के उल्टे-सीधे कान भरेगी।"

तुलसी बोले—"मुझे सच की परवाह है झूठ की नही। आपको पसों की आवश्यकता क्यों पडी?"

मुक्तानद जी झेंप गए, कहा—'आप सन्त हैं, आपसे झूठ बोलने को जी नहीं चाहता, पर कहने मे भी सकोच लगता है।"

'तो महत जी से कह देते। धन के लिए एक कुलटा स्त्री का सहारा लेना आप जसो को शोभा नही देता।"

तभी भीतर से एक गजन भरी पुकार आई—"तुलसीदास!'

'आया महाराज!' तुलसीदास गोमुखी वहीं रखकर झटपट भीतर गए। छोटा-सा दालान पार करके उन्होने महत जी के कमरे म प्रवेश किया। सजा बजा गुलाबी कक्ष था। चादर-तकिया, यहा तक कि कमरे की दीवारें भी बसती रग से पुती हुई थी। महत जी गोल तकिये के सहारे छबीली के द्वारा लिया हुआ गजरा पहने बैठे दाहिने हाथ से फूलों का गुच्छा उठाए उसे अपनी नाक के सामन घुमा रहे थे। मालिन चौकी से हटकर नीचे बठी हुई पानदान खोल रही थी। कमरे के भीतर प्रवेश करते हुए तुलसीदास का मन घृणा से कस गया। उन्होंने द्वार के पास ही खडे होकर महत जी से पूछा—"आज्ञा महाराज!"

'तुमने हमारी छबीलो भक्तिन का अपमान क्यो किया जो है सो?'

मैं जाने अनजाने किसीका अपमान नहा करता महाराज।"

तुमने उसकी बात क्यों नही मानी?"

किस अधिकार से मानता?'

'जब इस भक्तिन की बात मैं मानता हू तो तू कानी कौडी का मनई भला कसे नहीं मानेगा?" महत जी भपटकर बोले।

'देवार्पित सम्पत्ति की एक कानी-कौडी भी व्यय सच करने का अधिकार न्यायत स्वय आपको भी नहीं है पर आपकी फिर भी सुन लेता हू। इसकी आज्ञा नही मानूगा।"

"मेरे सामने कहते हो कि नही मानोगे? कृष्ण भगवान रुक्मिणी आदि सोलह हजार एक सौ आठ पत्नियों का अपमान सह सकते थे जो है सो परन्तु अपनी प्रिया राधा का अपमान उन्ह एक क्षण के लिए भी सहन नही हो सकता था जो है सो। प्रेम का आदर्श बहुत ऊचा है। तुम्हारे जैसे मालाफिराऊ व्यक्ति प्रेम की महिमा का पार नही पा सकते समझे?"

तुलसीदास सिर झुकाए चुप खडे रहे।

छबीलो बडे सुहाग सतोष और ठसक के साथ बैठी पान लगा रही थी। महत जी ने कहा—'यह न समझना कि अपनी भक्ती स तुम लोक-दृष्टि मे भी हम लोगो से ऊचे उठ गए हो।'

'मैं इस प्रकार की बातें स्वप्न मे भी नही सोचता महाराज, और न पर कीया प्रेम के महात्म्य पर ही विचार करता हू। मेरे मर्यादा पुरुषोत्तम सरकार तो एकपत्नीव्रती हैं। यदि आपकी पत्नी होती तो कदाचित् उनकी आज्ञा शिरोधार्य कर लेता।'

लगाया हुआ पान का बीडा उठकर महत जी को देते समय छबीलो ने आखें तरेरकर तुलसीदास को देखा और तीखे स्वर मे कहा—'मुझे नीचा दिखाय के कोई इस मठ म रह नही सकेगा। बडे महराज, इससे कह देव।"

पान लेते समय अपनी परकीया प्रिया का हाथ स्पर्श करते हुए महत जी भी साथ ही साथ गरजे—'हा मैं यह सहन नही करूगा जो है सो।'

तुलसीदास ने हाथ जोडकर कहा—'तब महाराज तालिया का गुच्छा लाकर मैं सौंपे देता हू। आप एकबार भण्डार घर सभालने की कृपा करें। मुझस आपकी सेवा न हो सकेगी।"

सुनकर महत जी की आखें लाल हो गइ बोले—"मैं तुम्हारा अजुध्या जी मे टिकना असभव कर दूगा जो है सो।'

वह आपके हाथ म नही है महाराज, जब तक अयोध्यापति की दृष्टि मुझ अकिंचन पर सीधी रहेगी तब तक कोई लम्पट, कुचाली, व्यभिचारी चाहे वह कितना ही बडा सत्तावान हो, तुलसीदास को यहा से नही निकाल सकता। जै सियाराम।' शात भाव से बात उठाकर भी तुलसीदास अपना सात्विक आक्रोश रोक न पाए। पुण्यात्मा का स्वाभिमान पापिया के दम्भ के आग झुक न पाया। वह तेजी से द्वार के बाहर निकल गए फिर पलटकर कहा— ताली कूची सभाल ले, मैं अब यहा एक क्षण भी नही ठहरूगा।' × × ×

'हमारे मन म उस समय बडा क्रोध उपजा। एक बात और कहू, व्यभिचारिणी स्त्रियो के लिए मेरे मन मे ऐसी घृणा बढ गई कि पूछो मत। कभी-कभी तो ऐसा लगता था कि मैं प्रतिक्रियावश स्त्री जाति से ही घृणा करने लगा हू पर वस्तुत ऐसा नही था। रत्नावली अब भी मेरे मन पर अनेक प्रकार के सुन्दर

सस्कारा का प्रतिबिम्ब बनकर छाई हुई थी। उसके गुणो के प्रति अनुराग रख-कर भी मन से अलिप्त रहूँ इसलिए जगज्जननी का ध्यान करता था।"

'मठ को छोडकर फिर आप कहा गए गुरू जी ?"

"अयोध्या मे ही रहा और कहा जाता। भाग के खाना और रात मे मस्जिद के बाहर फकीरो के बीच म सोना, यही मेरा क्रम बन गया।' कहते हुए बाबा की आखें भीनी होकर किसी अलक्ष्य बिन्दु पर टिक गई। कुछ रुककर फिर कहने लगे—' उन दिनो अयोध्या से लेकर काशी तक भीषण अकाल फैला हुआ था। प्राय हर समय बस्ती म भूखे ग्रामीणो के झुण्ड के झुण्ड आते हुए दिखलाई दिया करते थे। × × ×

३५

फटे हाल काल की कठोर मार से पिटे हुए चेहरो वालों की सैकडो करुण आखें इधर-उधर हर गली-कूचे म हर द्वार पर आशा की एक बुझी-सी चमक लिए हुए हर समय दिखलाई पडा करती हैं। 'येऽम्मा राज ! येऽम्माई-बाप ! दाया हुइ जाय—बहुत भूखे हन।"

बडी बडी हवेलियो के दरवान भीड को डण्डा से धमकाकर पीछे हटाते हुए नजर आ रहे हैं। भूख जन रोटी के बजाय मार और गालिया खा रह हैं। कहीं-कहीं सदाव्रत भी बट रहा है। दो मुट्ठी लैया चना या मोटा नाज पाने के लिए भूखी भीड इस उतावला स आगे बढती है कि आपस म धक्का मुक्की हो जाती है। जगह-जगह गाली-गलौज, मार पीट। बच्चे कुचल जाते हैं। कमजोर बूढ़े-बूढ़िया उतावले जवाना के धक्को से चुटीले हो जाते हैं। कभी-कभी पीछे रह जानेवाले जवान स्त्री-पुरुष गिरे हुए बूढ़ा के ऊपर से फलागते हुए एसे अन्धा धुन्ध भागते हैं कि उनकी ठोकरा से गिरे हुए दुबला की चीत्कारें वातावरण को भी करुण बना देती हैं।

तुलसीदास दद से छलकती आखो से यत्र-तत्र यह सारे दृश्य देख रहे हैं।

एक जनेऊधारी फटेहाल ब्राह्मण ने अपनी रोटी खा लेने के बाद अपने सामने की पगत मे बैठे हुए एक डोम की अधखाई रोटी को लालच भरी दृष्टि स ताका और सयाने कौवे की तरह घात लगाकर वह उसकी रोटी उसके हाथ से छीनकर ले भागा। एक देहाती खाते-खाते गरजा— ए दूबे अरे ई का करत ? अरे नीच कौम की जूठी ले भागा ?

उतावली से जूठी रोटी का टुकडा अपने मुह की ओर बढाते हुए वह बोला— पेट की जात एक है।' और रोटी का टुकडा जल्दी से अपने मुह म ठूस लिया। वह व्यक्ति जिसकी रोटी छीनी गई थी खूनी आखें लिए बावला बनकर झपटता हुआ आया। उसने खाते हुए ब्राह्मण को धक्का मारकर गिरा दिया और उसकी

उसे उठाने के लिए ब्राह्मण का गला छोड़कर हाथ बढ़ाया ही था कि तीसरा भूखा उस उगले कौर को उठा ले भागा। तुलसीदास 'हे राम !' कहकर रो पड़े।

दो तगड़े लठैत मुच्छाड़िये जवान दस-पन्द्रह फटहाल जर्जर किन्तु सलाने नाक-नक्शोंवाली जवान लड़कियों को लिए हुए पीपल के तले बैठे हैं। एक सफेदपोश अधेड़ उन लड़कियों का निरीक्षण कर रहा है। किसी की ठोढ़ी ऊपर उठाकर चेहरा देखता है, किसी के गाल पर चुटकी काटता है। उसकी सुरमीली आंखें किसी-किसीको देख-देखकर भूखे भेड़िये की जीभ जैसी बाहर निकल पड़ती हैं। वह एक लठैत से कहता है— झब्बूलाल, माल बहुत उम्दा नहीं लाए। ये सबकी-सब ससुरिया बस चौका-बासन और झाड़ू-बुहारू करने लायक ही हैं। इन्हें कोई नहीं खरीदेगा।'

लठैत मुस्कराकर बोला— इनमें से कितनी को देखकर तुम ललचाए हो। तुम्हारी आंखें हमसे छिपी थोड़े हैं। सौदा कायदे से करो कल्लू खां। हम तुम्हारी बातों में नहीं आवेंगे। महजिद में कई सिपाही हमसे घर बसाने के लिए औरतें माग चुके हैं। हम इनका अलग अलग सौदा करेंगे तो जादा लाभ पाएगे।"

"ज्यादा बक-बक मत करो। अजुध्या में कल्लू खां के रहते तुम्हारे बाप दादों की भी यह मजाल नहीं है कि किसी दूसरे से इनका सौदा कर सको। मैं इन सबके आठ रुपये दूंगा। सबको मेरे हाते में छोड़ आओ।'

आठ तो बहुत ही कम हैं कल्लू खां। रुपये में दो औरतें खरीदोगे ? हमारी मेहनत देखो। आज की महगाई देखो।'

सब देखा भाला है। पन्द्रह लड़कियां हैं। मैं तुम्हें आठ आने ज्यादा दे रहा हूं। इनको खिला पिलाकर किसीको दिखाने लायक बनाने में मेरी कितनी लागत लगेगी, यह भी तो सोचो। तुम्हारा क्या, देस मे इतने कहत अकाल पड रहे हैं, ससुरी चीटियों की तरह गली गली में औरतें रेंगती दिखलाई पड रही हैं। इन्हें बटोरने में भला कोई मेहनत पड़ती है ?'

अलग खड़ा लठैत झड़पकर बोला— आठ रुपये में हम सौदा नहीं करेंगे भब्बू। कहकर उसने अपने पास बैठी हुई लड़की को हल्की-सी ठोकर लगाकर कहा— उठो, हम सीधे महजिद के बाजार में जा रहे थे। इन्होंने बीच में ही अटका लिया।"

तेरी साले की ऐसी तसी, (आवाज ऊंची उठाकर) अरे उसमान खां ! बकरीदी ! आ तो जाओ सब जने। साले तेरी इन सारी भेड़-बकरियों को अभी लगड़ी-लूली बनवाए देता हूं और तुम दोनों की तो हड्डी-पसलियों का चूरन बनवा दूंगा। कल्लू खां के महल्ले से माल लेकर निकल जाना आसान काम नहीं है बेट्टा।'

झब्बूलाल गिडगिडा कर हाथ जोड़ते हुए बोला— खां साहब, हम तो तुम्हारी परजा हैं परजा। दिल्ली के बादसाय औरों के होंगे हमारे तो तुम्हीं बादसाय सलामत हो। ये सुकुरुवा बड़ा बेअकल है चुप नहीं रहता साला। (सुकुरू से) देखता क्या है छिमा माग, खां साहेब से।"

खा साहब बोले — मैं अपनी खुशी से आठ दे रहा था, अब सात ही दूगा। और फिर हुज्जत की तो "

'नही नही खा साहेब, हम आपसे हुज्जत-तकरार थोडे ही करेंगे। हम तो आपकी परजा हैं।"

तुलसीदास देख रहे हैं। उनका मुख गभीर, विचारमग्न है।

रामघाट पर कगलो की भीड रात म सो रही है। कुत्ते भूक रहे है। तुलसीदास को नीद नही आ रही टहलते हुए वहा चले आए हैं। एक घटवाले के सूने तख्त पर बठ जात ह। वे दु खाभिभूत हैं। तखत से कुछ दूर पर ही गुडमुडा मारकर लेट हुए एक कगले ने सिर उठाकर तुलसीदास की ओर देखा, पूछा—को आय ?"

सान्त्वना भर स्वर मे आगे बढकर उससे कहा—'घबराओ मत रामभगत, तुम लोगो को कोई हानि पहुचाने के लिए नही आया हू। राम जी की लीला देख रहा हू।"

वह व्यक्ति उठकर बैठ गया और कापती हुई आवाज म बोला—"हा भया, हम लोग अब बस देखने भर को ही रह गए हैं। सुनते थे कि कभी यहा रामराज रहा। अब तो राम जी की अयुध्या म भी रावण का राज है। हम पचा की कौन सुनेगा। (सास भरकर) भेड-बकरिया भी ऐसे नही हकाइ जाती जसे हम अपने गाव से हाके गए। क्या कह।"

किसी ने तुम लोगो को गाव से निकाल दिया ?"

अरे भइया जब राजा ही लुटेरा हुइ जाय तब परजा का भला कही ठिकाना लग सकता है। हमारा दस बीघे का खेत रहा, राजा जी न जबरजस्ती जुतवाय लिया।"

वह राजा है या भूमिचार ? हे राम ! राम राम। इस कलिकाल म सारा समाज क्या छोट क्या बडे सब एक ही लाठी से हाके जा रहे ह। गोड-गवार-नपाल महामहिपाल सबके साथ अब साम दाम भेदादि की नीति नही रही। दड—केवल कराल दण्ड ! हे राम ! कसे जिये ये दुनिया ?' × × ×

पुरानी पीडाओ का तीव्र ध्यानाकषण इस समय भी बाबा के मुखतेज को अपने भीतर खीच रहा था। उनके चेहरे पर और स्वर पर गभीर उदासी छाई हुई थी। बेनीमाधव जी के चेहरे पर भी करुणा बरस रही थी। बाबा कह रहे थे — मैंने इतने भयानक दृश्य देखे कि जी पक गया। इन अकालों का कारण इन्द्र का कोप नही था बल्कि राज-समाज की ऐश्वर्य लिप्सा थी। क्या हिंदू राजे-महाराजे क्या मुगल-पठान, सभी बडे पाप परायण हैं। उनकी चेतना से धम शब्द का ही लोप हो गया था। जो जितना बडा हाकिम उसे उतनी ही औरतो का रनिवास चाहिए। किसी की दस, किसी की पचास सौ दो सौ पाच सौ और दिल्ली के रनिवास म तो सुना कि पांच हजार रमणिया थी। इनके खर्चे के लिए नित्य ही प्रजा के प्राण खीचे जाते थे। राजा विलासी तो उनके चाकर उनसे भी दस हाथ आगे। खडी फसल काट ले जाय गाय-बल आदि पशु हाक

दें। मैंने तो आपके सात्विक तपोभाव का सम्मान करने के कारण ही यह प्रस्ताव किया था।"

पण्डित जी तुलसी भगत की मीठी बातों से रीझते हुए बोले—"कभी कथा बांची है ?"

'हां महाराज, गृहस्थाश्रम में इसी क्रम से मेरी जीविका चलती थी।"

'अच्छा तो आओ, हमारे आसन पर बैठो और अपना हुनर हम दिखलाओ।" कहकर पण्डित जी कांपते हुए अपने आसन से उठने लगे। तुलसी भगत ने चट से आगे बढ़कर उन्हें सहारा दिया और कंधे से अपना अंगौछा उतार उनके बैठने के लिए बिछा दिया, फिर कहा— "आपको हृदय में राम रूप श्रोता मानकर मैं अपना हुनर दिखलाऊंगा। आज्ञा है ?"

'हां हां। बैठो-बैठो। जै सिद्धिदाता गणेश। जै कौशलपति रामचंद्र।' कह कर पण्डित जी अपने होठों ही होठों में कुछ बुदबुदाने लगे। तुलसी भगत ने उनके पैर छुए और पण्डित जी के टूटे कुशासन के टुकड़े पर पालथी मारकर बैठ गए। दस-पांच पल अपने इष्टदेव का ध्यान किया और फिर अपने मधुर सुरीले कण्ठ से कवित्त पढ़ना आरम्भ किया—

'खेती न किसान को भिखारी को न भीख, बलि, बनिक को बनिज, न चाकर को चाकरी। जीविका विहीन लोग सीद्यमान सोचबस कहैं एक एकन सों कहा जाई का करी। बेदहूं पुरान कही लोकहूं बिलोकियत, सांकरे सबै पै, राम रावरें कृपा करी। दारिद दसानन दबाई दुनी दीनबंधु दुरित दहन देखि तुलसी हहाकरी।'

स्वर के जादू ने भीड़ को बांध लिया। इस कवित्त में काल का ऐसा यथार्थ और करुण चित्रण था कि लोग-बाग वाह-वाह कर उठे। तुलसी ने और भी तन्मय होकर पूरे दरबारी ढंग से अनादि अनन्त परब्रह्म राजाराम की वन्दना करते हुए उनकी उग्ररराज होने का आशीर्वाद लिया। प्रवचन आरम्भ हुआ—इतना दुःख दैन्य अत्याचार पृथ्वी पर है यह माना किन्तु राम करुणा के सागर हैं। राम सर्व समर्थ हैं। दशरथनन्दन राम अपने जन की विपदा हरने के लिए इस धरती पर फिर आएंगे। वे दीनों का दुःख हरण करेंगे। पापियों को दण्ड देंगे और पुण्यात्माओं का सब प्रकार से मंगल करेंगे। यह अयोध्या बड़ी पावन नगरी है। यहां स्वयं भगवान ने नरदेह धारण करके संसार भर के पापियों का संहार किया था। इसी अयोध्या में महाराज दशरथ के महलों में अवध के जन-जन का प्राण मोहने वाले चार राजकुमार आंगन में खेल रहे हैं। तुलसी भगत वर्तमान के दुखों से भरी अयोध्या से भूतकाल की वैभवशालिनी अयोध्या में अपने श्रोताओं का मन खींच ले गए। थोड़ी ही देर में उनके आगे खासी भीड़ जुड़कर श्रोता रूप में बैठ गई।

दूसरे कथावाचकों विशेष रूप से उस बेसुरे किन्तु भरत बैरागी को जलन हुई कि यह नया कथावाचक कौन आ गया। तुलसीदास पुराणों की कथाएं और राम जी के बखान सुनाते हुए अपने दोहे-कविता सुनाते, बीच-बीच में वाल्मीकीय रामायण के श्लोक भी गाते चलते थे। उनका प्रवचन ऐसा जमा कि जो नहाकर

लौटता वहीं उनकी श्रोतामण्डली में जुड जाता था। जब प्रवचन समाप्त हुआ तो बूढ़े पण्डित जी के छोटे-से अंगौछे पर इतना अनाज और पैसे पड चुके थे कि वे उनके फटे अंगौछे की छोटी-सी सीमा लांघकर बालू तक पर फैल गए थे। भक्तमण्डली बहुत प्रसन्न थी। कइयों ने कहा कि महाराज कल फिर कथा सुनाइएगा।

दोपहर के समय पैसे और अनाज बटोरते हुए बूढ़े पण्डित जी के हाथों में जवानी आ गई थी। गदगद भाव से बोले—'बेटा तुम तो बडे मजे हुए, बडे ही सिद्ध कथावाचक हो! वाह वाह आनंद आ गया। कैसी मधुर वाणी है कि वाह! सुन्दर शुद्ध उच्चारण और भाव तो ऐसे हैं कि बस क्या कहें। ये भाषा के कवित्त क्या तुम्हारे रचे हुए हैं या किसी और के?'

बालू में बिखरे अन्न के दानों को बटोरते हुए तुलसीदास ने विनीत किन्तु उल्लसित स्वर में कहा— हमारे हैं। और किसके हो सकते हैं!"

'धन्य हो, धन्य हो तुम भैया नित्य हमारे आसन पर बैठके कथा सुनाओ।"

"नहीं महाराज, फिर तो वही दैनिक जीविका का प्रपंच गले मढ जाएगा जो छोडके आया हू।"

पैसे बटोरते-बटोरते पण्डित जी के हाथ रुक गए। कुछ तीखेपन से झिडकते हुए कहा— अरे पेट तो चाहे साधु बरागी हो या घर-गृहस्थी वाला, सभी को भरना पडता है। पेट की माया से भला कौन मुक्त भया है! आखिर मांग के ही खाते ही न!'

गंभीर होकर तुलसी बोले— हा महाराज सरयू ग्वाला हमें नित्य सायंकाल को आधा सेर दूध पिला देता है। राम उसका भला करें।"

'तुम्हारा नाम क्या है?'

'तुलसी। लोग मुझे रामबोला कहकर भी पुकारते हैं।"

तुमने हमें पिता कहकर सम्बोधित किया रहा। अब हमारी आज्ञा है कि यहीं बैठो और हमारी कोठरी में ही रहा भी करो। वह मूर्ख हमारी पैतृक कोठरी खरीदना चाहता है। अरे जो इतने पैसे नित्य आवेंगे तो छ महीने के भीतर मैं अपनी इस सारी जमीन पर हाता घेरवाय लूगा। मरते समय मुझे यह सतोष तो होगा कि मेरे स्थान पर एक सदब्राह्मण राम-कथा सुनाता है।"

तुलसी चुप रहे। अपने अंगौछे को झाडकर शेष अनाज उसमें बांधते रहे। पण्डित जी फिर बोले— जो इतना अन्न हमारी चढ़त में नित्य चढ़ेगा तो हम तुम भी खाएंगे तथा दो चार और भूखों का पेट भी भर जाया करेगा। हमारी बात मान लो रामबोला।"

तुलसीदास बोले— आपका यह आदेश मेरे लिए सब प्रकार से मंगलकारी है। आज के प्रवचन का जनता के ऊपर भी सुप्रभाव पडा है। अच्छा तो आज से जब तक अयोध्या जी में रहूगा मैं आपके साथ ही रहूंगा।'

३६

दूसरे-तीसरे चौथे दिन और इसी प्रकार हर दिन रामघाट पर तुलसीदास की राम-कथा आरभ हो गई। वे अपने रचे हुए राम सबधी काव्य सुनाकर अयोध्यावासियों का मन मोहने लगे। अयोध्या म एक नया स्वर आया था जो पण्डिता औ अपढ गवारो के लिए समान रूप से आकर्षक था। उसके शब्दों से अमृत बरसता था। तुलसी भगत की कथावाचन शैली ने घाट पर बठने वाले भिक्षुक, कथावाचका की ही नही बल्कि अयोध्या के जाने माने रामायणिया की साख भी गिरा दी। लोग-बाग कहते कि ऐसी कथा और कोई नही बाचता। होली तक तुलसीदास की ऐसी धूम मच चुकी थी कि अयोध्या का बच्चा-बच्चा उन्हें पहचान गया था।

पडितो मे चर्चा छिडी। एक ने कहा—"कौन है ये तुलसी भगत? कहा से आ गया यह दुष्ट?

अरे रामानुजियो के अखाडे मे कोठारी था वहा कुछ माल चाल मारा सो निकाला गया।"

इसपर एक तीसरे पण्डित जी बीच मे बोल उठे कहा— बदेहीवल्लभ यह बात सवा सोलह गडे मिथ्या है। मैंने उस मठ के लोगों से सुना था कि छबीलो मालिन के आदेशो की अवहेलना करने पर ही महत जी इससे बिगड गए सो छोडकर चला आया। आदमी चरित्रवान है।"

बदेहीवल्लभचरणकमलरजधूलिदास जी त्योरिया चढाकर बोले— 'तो यहा ही कौन दुश्चरित्र बैठा है! हाकिम की विधवा भौजाई हम पर रीझ गई कहा कि घडी घडी मे मेरा ग्रह नक्षत्र विचारो और यही पडे रहो। मैं अपने धन से तुम्हारा घर भर दूंगी। कहा कि यदि मुसलमान हो जाओ तो तुम्ह सरकारी ओहदेदार बनवा दूगी। मैंने कहा कि न मुसलमान बनूगा और न नित्यप्रति तुम्हारे यहा आऊगा। मैं निर्लोभी ब्राह्मण हू।

पहले पण्डित जी मुस्कराकर बोले—' पर बदेहीवल्लभचरण तुम जाते तो वहा रोज हो। और हमने सुना है कि वह तुम्ह अपने हाथ से मिष्टान्न खिलाती है, और तुम उसके पर भी दबाते हो।

रामदत्त देखो यदि तुम इस प्रकार मेरे सबध मे झूठी-सच्ची उडाओगे तो मैं भी क्या नाम के तुम्हारी पोल खोल दूगा। तुम भी तो गगू तेली की सातवी सुहागिन के पर दबाते हो। हे हे-ह

रामदत्त ने हेकडी भरे स्वर म उत्तर दिया— मैं नही वही मेरे पैर दबाती है। पर इससे क्या हम दुश्चरित्र थोडे ही हैं। अरे यह तो कलिकाल म जीविका के लिए सभी को करना पडता है। पसा तो इस समय ब्राह्मण को रमणी ही देती है भाई। उन्ही में प्रेम और भक्ति भाव है। बाकी तो घोर कलिकाल आ गया है समझो।

तीसरे पण्डित सुदशन बोले—' कुछ भी कहो, हमारी नगरी के सभी सम्पन्न

ब्राह्मण दुराचारी हैं। मैं ही मन्द भाग्य हू, कोई ऐसी चेली फसी नही, सो कहो तो अपने आपको सदाचारी कह लू।"

श्री वैदेहीवल्लभचरणकमलरजधूलिदास जी समझाते हुए बोले— 'अरे भैया, बात हमारी-तुम्हारी नहीं, तुलसी की चली थी। यदि उसकी ख्याति ऐसे ही बढती चली ता एक दिन निश्चय ही वह सभी विलासिनी पसेवालियो को अपनी चली बनाकर मूड लेगा। हम सब टापते ही रह जाएगे।"

सुदशन बोले—' सबको अपने ही समान न समझो। मैंने तुलसी को अपनी आखो मे देखा है। उसके मुख पर तेज बरसता है तेज, उसे जानने वाले सभी लोग कहते हैं कि वह खरा राम भक्त है।"

रामदत्त यह सुनकर चिढ गए कहा—"जब तुम भी ऐसे बढ-बढकर उसकी प्रशसा करोगे तो फिर छुट्टी हो गई हमारी। अरे कोई ऐसा षडयत्र रचो कि जिससे उसका मुख काला हो, यहा से जाय। नही तो किसी दिन यह अवश्य ही हमारी निन्दा का कारण बनेगा।"

वदेहीवल्लभचरणकमलरजधूलिदास जी षडयन्त्रकारी के दबे स्वर मे बोले— राम जी की किरपा से हमारे उर, अन्त करण मे अभी अभी एक विचार प्रगटाय मान भया है महाराज।

'क्या ?'

महत रामलोचनशरणदास जी बिचारे उस बदनाम गेंदिया दाई के पजे मे फस गए हैं। वह उनसे गभवती हो गई है और अब कहती है कि जाहिर जहान म हम अपनी रखल बनाकर रखो। बेचारे आजकल बडे दुखी है।'

"तो इससे हम तुलसी का क्या बिगाड सकते हैं ?' सुदशन ने पूछा।

हम महत जी से कहेगे कि गेंदा को कुछ पैसे देकर यह पट्टी पढावें कि तुलसी जब कथा कहता हो तभी वह जाकर कहे कि हमे गभवती बनाकर अब आप राम भक्ति का ढाग रचा रह हो।'

रामदत्त की आखें चमक उठी, बोले— तुम्हारी योजना बडी अच्छी है। सुना है कि आजकल वह जानकी मगल नामक अपना भाषा मे लिखा काव्य सुनावता है। इसी बीच मे गेंदा यदि यह नाटक रचाव और उसे कलकित कर दे तो हमारा सबका ही मगल हो।'

सुदशन बोले— ठीक है रामलोचनशरण जी उसे जा द्रव्य देंगे वह तो उसका होगा ही मैं भी उसके हाथ थोडे-बहुत पूज दूगा। यह वदेहीवल्लभ भी पोढ असामी हैं कुछ न कुछ यह भी उसकी नजर भेंट कर देंगे।'

तो सुदशन तुम आज ही गेंदिया को पटा लो।"

सुदशन पण्डित बोले— जिस दिन आप लोगो के समान मुझे स्त्रिया के पटाने का ज्ञान सिद्ध हो जाएगा, उस दिन मैं भी आप लोगो के समान ही सम्पन्न बन जाऊगा।

वदेहीवल्लभचरणकमलरजधूलिदास जी का मुह फूल गया। झुझलाकर बोले— तुम बार बार हमारे चरित्रो पर उगली क्यों उठावते हो जी ? अरे यह तो हमारी जीविका कमावने की नीति है। इसका वास्तो मे दुश्चरित्रता से तनिक

भी सबध नही है।'

सुन्शन न कहा— स्त्रिया से बात करत मुझे बडी लज्जा आती है। मैं तो अपनी घरवाली से भी खुलकर बात नही कर पाता।'

रामदत्त वाले— अच्छा तो यह काम हमी करवा देंगे। हो सका तो कल नही तो परसो गंदिया उसकी कथा म अपनी कथा जोडने को पहुच जाएगी।'

पण्डितो की यह बातें होन के तीसरे ही दिन गेंदा तुलसीदास की प्रवचन सभा म पहुच गई। राम-जानकी के विवाह का वणन सुनते हुए सभा तन्मय हो रही थी। एकाएक गेंदिया आगे की पक्ति म घसकर हाथ बढाकर बोली— अरे वाह रे मुरदुए हमे (अपने बढे हुए पेट की ओर सकेत करके) इस झमेले मे डालकर यहा बैठे भगतबाजी कर रहे हो ? वाह रे ढोगी, वाह !'

कथा मे विघ्न पडने से कुछ व्यक्ति नाराज हो गए, बोले—'निकालो इस दुष्टा को। ये कौन आ गई यहा ?'

पीछे से कोई बोला—'अरे यह तो गेंदिया है गेंदिया। अजुध्याजी के रसिया के हाथो मे सचमुच गेंद की तरह उछलती है। इस दुष्टा को जरूर ही किसी ने हमारे भगत जी को कलकित करने के लिए भेजा है।"

गेंदा आखें मटकाकर और हाथ बढाकर बोली—'मुझ काई क्यो भेजने लगा। अरे आप ही मेरे पास घुस घुसकर यह आता था, झूठ-मूठ कहे कि रोटी देंगे कपडा देंग और अब यहा दूसरी चेलियो का फसान के लिए ढोग की दुकान लगाए बठा है नीच कही का।'

कथा म विघ्न पड गया। तुलसीदास शात स्वर से सबको चुप कराते हुए बोले— सज्जनो मैं आठो पहर आपकी दृष्टि मे रहता हू। यहा के बाद मेरा अधिक समय जन्मभूमि के पास बठे ही बीतता है। जिसको शका हो वह वहीं भी किसी भी समय परीक्षा ल सकता है।'

बडी चेंचामेची मची। गेंदिया ने बडा नाटक साधा, पर उसका जादू चल न सका। एक जवान व्यक्ति न उठकर जब उसके झोटे पकडकर खीचा और धरती पर धक्का दने लगा ता तुलसीदास घबराकर अपने आसन से खडे हो गए और कहा— ना भया ना, नारी पर हाथ उठाने से सीता महरानी दुखी होंगी। वे आप इसे दण्ड देंगी। छोडो इसे छोडो।' कहते हुए वे उस व्यक्ति के पास आ गए और गेंदा को मारने के लिए उसका उठा हुआ हाथ पकड लिया।

गर्भावस्था मे इस धक्का-मुक्की से गेंदा जोर से कराहकर मूछित हो गई। तुलसीदास आखें मूदकर हाथ जोडते हुए प्रार्थनारत हो गए हे जगदम्ब यदि स्वप्न मे भी अयोध्या की किसी नारी के लिए मेरे मन मे विकार आया हो तो मुझे अवश्य दण्ड देना।'

इस घटना के बाद से अयोध्या में तुलसी भगत की महिमा अनायास ही बहुत बढ गई। लोगो मे यह बात भी फल गई कि रामलोचनशरण और वैदेही वल्लभचरणकमलरजयूलिदास आदि न षड्यन्त्र करके तुलसीदास को अपमानित कराना चाहा था। यही नही यह खबर भी फली कि गेंदिया के पति ने उसे

अपने घर से निकाल दिया है।

पूजे जानेवाले व्यक्तियों के चरित्र पर अयोध्या मे दबी-ढकी बातें तो गली गली म हुआ ही करती थी किन्तु इस घटना के बाद अयोध्या के जवान मुखर हो उठ थ। तुलसीदास का व्यक्तित्व, सदाचार के प्रति आस्था का प्रतीक बन गया। उनके प्रवचन म अधिक भीड होने लगी। होली के तीन दिन पहले जब 'जानकी मगल' पूरा हुआ तब अन्तिम दिन आरती मे इतना अन धन चढ़ा, जितना पहल कभी किसी कथावाचक की आरती म नही चढा था।

एक प्रौढ श्रोता ने कहा— 'भगत जी अब तो रामनौमी तक कथा वार्ताए सब बन्द रहगी, पर रामनौमी के बाद आप फिर बराबर कथा सुनाइए। जसा भाव आपकी कथा सुनकर हमारे मन मे आता है वसा और किसी की कथा में नहीं आता।''

कई लागो ने प्राय एक साथ ही इस प्रस्ताव का साग्रह समथन किया। तुलसीदास सुनकर आनदाभिभूत हो गए बोले—'अच्छा रामनवमी के दिन अवश्य सुनाएंगे।'

''उस दिन तो महाराज यहा कथा कहने की मनाही है।'

तुलसीदास के मन म यह बात चुभ गई। बूढ़े पण्डित जी से बोले— पिताजी, राम जी के विवाह के उपलक्ष्य म अयोध्यावासियो को ज्योनार होनी चाहिए। जगदम्बा अन्नपूर्णा ने भण्डार भर दिया है।'

बूढे पण्डित जी ने उल्लसित होकर कहा— हा बेटा, हो जाय। अयोध्या मे मगल ता मनाना ही चाहिए।''

एक विरक्त प्रौढवय के ब्राह्मण वहा बैठे हुए थे बोले—'भगत जी एक अरदास म भी करूगा। आज्ञा है ?'

'कहिए कहिए, महाराज।'' तुलसी ने मीठी वाणी म उनका उत्साह बढाते हुए कहा।

कहना यह है भगत जी कि हमारे चारो राजकुमारो का ब्याह तो भया पर अब बहुओ को अयोध्या भी तो लाइए तभी ज्योनार होय।' एक वृद्ध वणिक सुनकर गदगद हो गए बोले— वाह बाबा जी, धन्य हो हमारे मन में भी उठ तो रहा थी यह बात पर हम कह नही पा रह थ। भगत जी की कबिताई सुनकर चोला मगन हो जाता ह। हमीं नही, सब लोग यही कहते है।'

बूढे पण्डित जी उल्लसित स्वर म बोले— बडी शुभ बात है। सुनकर बडा हर्ष हो रहा है तुलसी बटा।

हा, पिताजी।

देखा पुत्र हम अयोध्यावासियो की यह इच्छा है। समझ ला कि साक्षात् राम जी की ही इच्छा है। राम जी के घर की बोली मे रामायण की रचना होनी ही चाहिए। हमने सुना है कि बगभाषा मे और द्राविडी भाषा म भी रामायणें लिखी गई हैं।

'हा पिताजी यह सत्य है। काशी म पढ़ते समय मुझे महात्मा कंबन और कृत्तिवास जी की रामायणो के कुछ अश सुनने को मिले थ।

बस तो महराज आप हमारी भी इच्छा पूरी कीजिए। अरे जब आन गाव के लोग अपानी अपानी बोली म गाते ह तो हम भी ऐसा औसर जरूर मिलना चाहिए महराज। लाला जी न गदगद भाव से कहा।

विरक्त जी भी बोल उठे— हमारे भगत जी को राम जी ने भगती भी दी है और काव्यकला भी। सोने मे सुहागा है। आपको रामायण रचना करनी ही चाहिए महराज। उससे बडा लोक-मगल होयगा।'

स्वय मेरा भी मगल होगा महाराज। पिताजी ने सच ही कहा कि यह राम जी की आज्ञा है। सीतामढी मे स्वय जगज्जननी ने मुझे यह आदेश दिया, बजरग बीर और वाल्मीकि जी भी मुझ यही आदश दे चुके है।' कहते हुए तुलसीदास की आखें मुद गइ चेहरे पर मधुर भाव-कम्प आ गया। हाथ जोडकर बैठे ही बैठे सबके सामने भूमि पर मस्तक नवाया, फिर शात आनन्दमय मुद्रा मे कहा— रामायण रचकर मेरी मुक्ति होगी। आठो पहर राम के ध्यान म रमे रहने का बहाना मिल जायगा। मेरी भक्ति का रूप भी सवरेगा।'

स्वय तुलसी के मन म कई दिना से बडा ऊहा पोह मचता रहा था लकिन सबेरे जब उनके प्रवचन सुनने वाला भक्त समाज जुटता तो वे सब कुछ भूल जाते और तन्मय रामभक्ति रसमग्न होकर काव्य और प्रवचन सुनाते हुए स्वय भी आत्म विभोर हो जाते थे। अपन मुख्य श्रोता के रूप मे उन्होने बूढे पण्डित जी का बठाया था। आरम्भ म वे केवल उन्हींको सुनाते थे। पण्डित जी म उन्होने अपनी भावना विशुद्ध ज्ञान-स्वरूप कपीश्वर के रूप म परिलक्षित की थी। पडित जी सचमुच सच्चे श्रोता थ। उनकी तन्मयता तुलसी को प्रेरित करती थी। फिर जनता भी उनके ध्यान म सुखद प्रेरणा बनकर समाने लगी। कथा सुनाने से अर्जित आत्मलीनता का दिव्य सुख पाया। खाली समय म अपने बौद्धिक मन से लडते झगडते हारते-जीतते हुए वे मन के उस धरातल पर पहुच गए जहा कहनवाला और सुननेवाला एक ही हो गया था। तुलसी कहत और तुलसी ही सुनते थे। यह स्थिति उन्हें दिनादिन अधिकाधिक तन्मय बनाने लगी थी।

एक दिन राम जन्म भूमि-स्थल पर बनी हुई बाबरी मस्जिद की ओर चले गए। एक सूफी सत सिपाहियो और जनसाधारण की भीड को मलिक मुहम्मद जायसी का पदमावत काव्य सुना रहे थे। दोहे चौपाइयो में रची हुई वह दिव्य प्रेम कथा सूफी महात्मा के सुमधुर कण्ठ से सुनाई जाकर ऐसी मनोहर बन गई थी कि स्वय तुलसी भी उस रस म बह गए और बडी देर तक सुनत रह। वहा से लौटते हुए उनके मन म पहला विचार यही आया कि यदि रामायण रचूगा तो दोहे चौपाइयों मे ही। जन-मन को बाधने की शक्ति उनम बहुत है।

छन्द से मन बध जाने पर रामकथा आठो पहर तुलसी के मन म घुमडने लगी। मिथिला और सीतामढी म उमगे हुए भावदृश्य और भी अधिक उमग के साथ उभरकर तुलसी के मन को बाधने लगे। चूकि जानकी मगल' रच चुके थे इसलिए स्वयवर मडप से ही रामकथा के दृश्य उनके मन म उभर रहे थे। राम लक्ष्मण जब स्वयवर सभा म आते हैं तो उनका वणन किस प्रकार हो? श्रीमद्भागवत में कृष्ण जी जब कस के अखाडे म उतरते हैं तब का वणन बड ही आल

कारिक ढंग से किया गया है। बड़ा सुन्दर लगता है। मुझे भी ऐसा वर्णन करना चाहिए। मुझे कथातत्त्व मूलरूप से वाल्मीकि रचित रामायण से ही ग्रहण करना चाहिए और अध्यात्म रामायण का प्रतीक तत्त्व भी उसमें जोड़ना चाहिए।

आठों पहर तुलसी की आंखों के आगे रामचरित्र के विभिन्न दृश्य ही दिखलाई पड़ते थे। इस प्रक्रिया में उन्हें यह अनुभव होने लगा कि राम का बिम्ब भी अब कभी-कभी उनके मन में स्पष्ट होकर झलकता है। कितने सुन्दर हैं राम! सौंदर्य उनकी काया में, बल में, गुणों में है। हाय, जो कहीं यह रूप साकार होकर पृथ्वी पर उतर आए तो पृथ्वी पर कैसा आनन्द छा जाय। हे राम जी पधारो, एक बार दीन दुखियों को दर्शन देकर कृतार्थ करो। आओ राम, आओ। बस अब आ ही जाओ।

रामनवमी की तिथि निकट थी। अयोध्या में उसे लेकर हलचल भी आरम्भ हो गई थी। जब से जन्मभूमि के मन्दिर को तोड़कर मस्जिद बनाई गई है, तब से भावुक भक्त अपने आराध्य की जन्मभूमि में प्रवेश करने से रोक दिए गए हैं। प्रतिवर्ष यों तो सारे भारत में रामनवमी का पावन दिन आनन्द से आता है पर अयोध्या में वह तिथि मानो तलवार की धार पर चलकर ही आती है। भावुक भक्तों की विह्वलता और धूर वीरों का रणबांकुरापन प्रतिवर्ष होली बीतते ही बढ़ने लगता है। गांव दर गांव के लड़वैये न्योते जाते हैं, उनकी बड़ी-बड़ी गुप्त योजनाएं बनती हैं, आक्रमण होते हैं। राम जन्मभूमि का क्षेत्र शहीदों के लहू से हर साल सींचा जाता है। ऐसी मान्यता है कि विजेताओं के हाथों से अपने परब्रह्म की पावन अवतार भूमि को मुक्त कराने में जो अपने प्राण निछावर करते हैं उनके लिए स्वर्ग के द्वार खुल जाते हैं। इसलिए शासकों के द्वारा नवरात्रि आरंभ होते ही किसी भी सार्वजनिक स्थान पर राम-कथा सुनाने पर पाबंदी लगा दी जाती है। राम जी का जन्मदिन भक्तों के घरों में गुपचुप मनाया जाता है। पहले तो वर्ष में किसी भी समय नगर में खुलेआम कोई धार्मिक कृत्य करना एकदम मना था पर शेरशाह के पुत्र के समय जब हेमचन्द्र बक्काल उनके प्रमुख सहायक थे तब से अयोध्यावासियों को थोड़ी-सी छूट मिल गई थी। तुलसी के मन में यह बातें चुभी खौलन बन गई। राम की जन्मभूमि में रामकथा न कही जाए यह अन्याय उन्हें सहन नहीं होता था।

तुलसीदास के कानों में आगामी रामनवमी के दिन होनेवाले संघर्ष की बातें पड़ने लगीं। उस दिन अयोध्या में बड़ा बखेड़ा होगा। ऐसा लगता था कि अबकी या तो राम जी की अयोध्या में उनकी भक्त जनता ही रहेगी या फिर बाबर की मस्जिद ही। लोगबाग अक्सर निडर और मुखर होकर यह कहते हुए सुनाई पड़ते थे कि उन्हें इस बार कोई भी शक्ति राम-जन्मभूमि में जाकर पूजा करने से रोक नहीं सकेगी।

बस्ती में फैली हुई यह दबी दबी अफवाह तुलसीदास को एक विचित्र स्फूर्ति देती थी। वे प्रतिदिन ठीक मध्याह्न के समय बाबरी मस्जिद की ओर अवश्य जाया करते थे। मस्जिद के पीछे कुछ दूर पर उजड़ा हुआ एक प्राचीन टीला और था। तुलसी भगत उसपर एक ऐसी जगह बैठा करते थे जहां से जन्मभूमि

वाली मस्जिद उन्हें स्पष्ट दिखलाई दिया करती थी। वे बड़ी देर तक वहां बैठे रहा करते थे। यों मस्जिद के सामने बैठनेवाले मुसलमान फकीरों से भी उनका मेलजोल था। टीले से लौटते समय वे एक बार उनसे मिलने के लिए आते थे।

इन दिनों मस्जिद के आसपास उनके बैठने के स्थान उस टीले तक मुगल फौज की छावनियां लगी हुई थीं। तुलसीदास एक सिपाही के द्वारा घुड़के जाकर अपने नित्य के ध्यान-स्थान से हटा दिए गए। मस्जिद के सामने जाने का तो प्रश्न ही नहीं उठता था। भावुक तुलसीदास को यह बहुत अखरा। इस प्रतिबंध के विरुद्ध उनका मन खोलने लगा, रामभद्र, आप साक्षी हैं, मैंने इस मस्जिद से अपने मन में कभी कोई दुर्भाव नहीं रखा। पूजा भूमि इस रूप में भी पूज्य है। अब भी वहां निर्गुण निराकार परब्रह्म के प्रति ही माथा झुकाया जाता है। रामानुजीय मठ से हटने पर मैं यहीं सोने आता था। यहां के लोगों से घुल मिल कर रहता था तब मैं फकीर था अब हिंदू हो गया! हे राम जी, इस अन्याय को मिटाने के लिए एक बार आप फिर अवतार लीजिए।' प्रार्थना करते-करते ही लोभ लगा, 'मेरे जीवनकाल में ही पधारिये नाथ! एक बार मैं अपनी आंखों से आपको देख लूं। आपके द्वारा छोड़े गए ताजे पदचिह्नों से अपने मस्तक का स्पर्श करने का अवसर पा जाऊं।

मन ऐसा तड़प उठा कि फिर चैन ही नहीं आता था। राम जी आ जायं एक बार आ जायं। प्रत्यक्ष न आएं तो काव्य रूप में ही मेरे मन में प्रकट हो जायं। भाषा में रामकाव्य का लोकमंगलमय रूप प्रकट हो।' इस प्रार्थना ही से यह विचार उमगा कि मैं रामनवमी के दिन ही अपनी काव्यरचना आरम्भ करूंगा।

अयोध्या में बुधवार के दिन रामनवमी मनाई जानेवाली थी। तुलसीदास एक पण्डित जी के यहां पंचांग देखने गए। उन्होंने देखा कि नवमी मंगल के दिन मध्याह्न वेला में ही आ जाती है। उन्होंने ज्योतिषी से कहा— राम जी का जन्म मध्याह्न में हुआ था। तिथि जब उस समय आ जाती है तो फिर आप लोग मंगल को ही रामनवमी क्यों नहीं मनाते ?"

ज्योतिषी पंडित जी बड़ी ठसक के साथ बोले—'जिस दिन सूर्योदय से ही नवमी रहे उसी दिन हम उसे मनाना चाहिए। तुलसी ने अपने मन में कहा—'तुम किसी दिन मनाओ, मैं तो मंगल को ही अपने राम का काव्यावतार होते हुए देखूंगा। बजरंगबली का वार है उन्हीं की आज्ञा से यह काव्यरचना करूंगा। अतः मेरी रामनवमी मंगल का ही मनेगी। उस दिन अयोध्या में मंगल ही मंगल होगा।' तुलसीदास ने मंगल के दिन ही रामायण रचना का शुभ संकल्प किया।

३७

दुर्गा अष्टमी के दिन तुलसीदास लिखने के लिए कागद कलम, दवात आदि सामान खरीदने शृंगारहाट गए। नगर में सनसनी थी। दुकानें खुली थीं पर

गाहक बहुत कम थे। हर दुकानदार अपनी दुकान के एक ग्राध पट ही खोले हुए बैठा था। हरेक के चेहरे पर भय की आशंका और गुमसुमपन की छाप थी। लोगबाग आखों आखों में ही अधिक बात करते थे।

यह दृश्य तुलसीदास के मन में चलते हुए चित्र से एकदम विपरीत था। जानकी मंगल काव्य का रचयिता रामकथा का अगला प्रकरण जोड़ते हुए अपने मन में देख रहा था कि राम, भरत लक्ष्मण और शत्रुघ्न दशरथ के चारों कुमार अपनी वधुओं के साथ राजधानी में प्रवेश कर रहे हैं। लौटती बरात का स्वागत करने के लिए पूरे नगर में सजावट हो रही है। तोरण सजे हैं। जगह-जगह बन्दनवार सजे हैं। घर घर के आगे मंगल कलश लिए नारियां खड़ी हैं। जनता में अपार हर्षोल्लास है। और उसके विपरीत यह मुर्दनी यह सन्नाटा! हे राम! पीड़ा भीतर दर भीतर घुटी और उतनी ही गहराई से आशा का एक नया स्वर भी फूटा—'सब मंगल होगा अवश्य मंगल होगा।" तुलसीदास के मन पर अपनी आस्था का एक अजीब नशा-सा छा गया। उन्हें उस समय किसी भय अथवा अमंगल की छाया तक नहीं छू सकती थी। एक कागज़ वाले की दुकान पर गए।

"जै सियाराम, साहु जी।'

'आइए महराज पधारिए पधारिए। मेरे बड़े भाग जो आप आए। कहिए क्या आज्ञा है?"

टेंट में बंधी चांदी की एक मुहर निकालकर उसे दुकानदार की ओर बढ़ाते हुए उन्होंने कहा— हम कागद कलम, स्याही और मिट्टी की एक दवात दे दीजिए। इस राशि में जितने का कागद मिल सके उतना दे दीजिए कागद घुटा हुआ चिकना दीजिएगा।"

दुकानदार उठकर पेटी से कागज निकालते हुए एकाएक सिर घुमाकर पूछने लगा— भगत जी, कविताई में क्या लिखेंगे न!'

तुलसी मुस्कराए कहा— हां साहु जी यही विचार है।'

जरूर लिखिए महराज। जब आप सियाराम जी के ब्याह की कथा बाच रहे थे तो हम पहले के दो दिनों तक सुनने गए थे। फिर भाइ को जर आ गया सो दुकान से मेरा उठना न हो सका। आप तो ऐसी कथा बाचते हैं महराज कि रस बरस-बरस पड़ता है।'

तुलसीदास बोले— रामकथा का सच्चा भाव तो आप सबके मन में है साव जी। मुझे उसीको देख-देखकर तो सुनाने की स्फूर्ति मिलती है।

दुकानदार ने कागज के पन्ने और उसकी नाप की दो लकड़ी की पट्टियां, लाल खारुवे का एक बस्ता पीतल की दवात स्याही की पुड़िया और सेंठ की दो कलम के साथ उनकी चांदी की मुहर भी लौटा दी।

अरे यह क्या साव जी।'

दुकानदार हाथ जोड़कर बोला—"महराज गाहक तो बीसियों आते हैं पर मेरा खरा लाभ तो आप ही कराएंगे। इन पर आप राम की कथा लिखेंगे। उसे मैं भी सुनूंगा और सैकड़ों दूसरे लोग भी रस पाएंगे। आप मेरी यह छोटी सी भेंट सकारें भगत जी।

कागज आदि लेकर जब वे अपनी कोठरी म लौट तो उन्हे लगा कि जैसे सामने सरयूजी से नहाकर राम जी घाट की तरफ बढ रहे हैं। उनका बलिष्ठ सुदर शरीर, उनका दिव्य तेजवान मुख, जल से भीगी हुई केशराशि, सब कुछ इतना स्पष्ट था कि तुलसीदास को लगता था जसे राम सचमुच ही सामने खड हो। लाख प्रयत्न करने पर भी आज से पहले तुलसीदास राम का बिम्ब अपने मन म इतने स्पष्ट रूप से कभी नहीं देख सके थे। वे आत्ममोहित होकर खडे हो गए उन्ह अपना भान तक नही रह गया था।

उसी समय किसी कारण से बूढे पण्डित जी अपनी कोठरी से बाहर निकले। सामने तुलसीदास को खडे देखा, धीरे धीरे चलकर वे पास आए कहा, 'अरे, तुलसी, यो क्यो खडा है, बेटा ?"

पोपले मुह स निकली अस्पष्ट आवाज तुलसी के ध्यान म धक्क सी लगी आखो की स्थिर पुतलिया एकाएक डगमगा गइ। आखो के आगे एक बार अधेरा सा छा गया और जब उनमे फिर से देखने की शक्ति लौटी तो घाट के राम अलोप हो चुके थे सामन बूढे पण्डित जी खडे थे। उस दिन वे प्राय गुमसुम ही रहे अपने म तमय। रह रहकर उनके चेहरे पर आनन्द की लहरें-सी दौड जाती थी। वे एक धुन म रम गए थे। मगलवार के दिन सवेरे से तुलसीदास एसे सचेत भाव से यह मध्याह्न वेला के आने की प्रतीक्षा कर रहे थे जसे बहुत दिना बाद अपनी हवेली मे लौटने वाले मालिक की अगवानी के लिए चतुर चाकर फुर्तीला और चाक चौबन्द होता है।

कोठरी के पास ही एक छोटा सा चबूतरा था। तुलसीदास ने सवर ही से उसे अपने हाथ स लेपा-पोता था। वहा उन्होने कागज-कलम दवात और कुशासन भी लाकर रख दिया था। काव्यतरग सबेरे ही से हल्की-हल्की लहराने लगी थी, लेकिन कवि सयमी-साधक भी था। मध्याह्न से पहल वह अपने शब्दों को उभरने न दगा। राम जी स्वय शब्द के रूप मे अवतरित होगे।

मध्याह्न वेला के लगभग आधी पौन घडी पहले ही अयोध्या म जगह जगह डौंडी पिटी—'खल्क खुदा का, मुल्क हिन्दोस्तान का अमल शाहशाह जलालुद्दीन अकबर शाह का ।' दिल्ली से सरकारी आदेश आया था कि बाबरी मस्जिद के भीतर मदान म चबूतरा बनाकर लोग उसपर नवमी के दिन राम जी की पूजा कर सकते हैं। अयोध्या की गली गली मे आनन्द छा गया था। भगवान रामचन्द्र की जयकारों के साथ-साथ अकबर शाह की जय-जयकार भी सुनाई पड जा रही थी। तुलसी आनन्द से भर उठे।

सूय ठीक सिर पर आ गया था। मौसम गरम हो चुका था। धूप अब कुछ कुछ तपाने लगी थी किन्तु तुलसीदास के लिए तो वह दिव्य आनन्द से भरी हुई थी। वे चबूतरे पर बठ गए। गुरु वन्दना का दोहा लिखा और फिर कलम दौड चली

जबते राम ब्याहि घर आए। नित नव मगल मोद बधाए ॥

काव्य तेजी से गतिमान था। अयोध्या मे ऋद्धि सिद्धि भरे सुखद दिन बीतने लगे। राजा दशरथ के दरबार की रौनक चौगुनी हो गई। भरत जी और शत्रुघ्न जी अपने मामा के साथ अपनी ननिहाल कैकय देश की सैर को चले गए। तभी एक दिन राजा दशरथ ने अपने कान के पास पके हुए केश को देखा। तुरन्त ही उन्होंने राम को युवराज पद देने का निश्चय कर लिया। प्रजा मे यह समाचार सुनकर आनन्द छा गया। रनिवास मे रामचन्द्र की तीनो माताए हर्ष और उछाह में भर कचन थाल भर भर मोती मानिक लुटाने लगीं। गुरु वशिष्ठ ने तिलक की लगन शोधी। काव्यगगा मन्थर गति से बह रही थी।

तुलसीदास इन दिनो सबेरे से ही लिखने बैठ जाते और मध्याह्न तक उसी तरग मे डूबते-उतराते रमते रहते थे।

बूढे पण्डित जी कोठरी के बाहर अपने चबूतरे पर बैठते और तुलसीदास के नये भक्तो को कोठरी के पास जाकर उनके दर्शन करने से रोकते थे। बस्ती मे यह बात बडी तेजी से फली थी कि 'जानकी मगल' कथा के अंतिम दिन जब भगत जी को यह बात मालूम हुई कि अयोध्या मे रामनवमी पर प्रतिबन्ध लगा है तो वे तडप उठे और उन्होंने ध्यान लगाकर कहा कि घबराओ मत, सब मगल ही मगल होगा। सच्चे भगत के वरदानस्वरूप ही दिल्ली से रामनवमी मनाने का शाही हुकुम आ गया। तुलसी सच्चे भगत हैं। अब वे रामायण लिख रहे हैं जिसके पूरे होते ही राम जी फिर से अवतार लेंगे। तुलसी भगत की सच्ची झूठी महिमा भी उनके काव्य के साथ ही साथ क्रमश आगे बढ रही थी।

रामनवमी के तीन चार दिनो के बाद ही दुष्टो की सभा फिर जुडी। इस बार सब लोग महत वैदेहीवल्लभचरणकमलरजधूलिदास जी महाराज के ऊपर वाले चौबारे मे एकत्र हुए। महात्मा वैदेहीवल्लभ बोले—"महन्त जी यह तुलसी भगत हम सबकी मान-मर्यादाओ को फलागता भया और, क्या नाम करके, अयोध्यावासियो के सिर पर चढायमान होता भया चला जा रहा है। ये वास्तो मे बडी चिन्ता का विष है।

कथावाचस्पति पण्डित शिवदीन बोले—"और तो सब ठीक ही है पर वह जो अब रामायण लिख रहा है सो समझ लो कि हमारे विरुद्ध एक भीषणतम षड्यत्र रच रहा है। उस दम्भी का दुस्साहस तो देखिए। आदिकवि महर्षि वाल्मीकि जी के परमपुनीत काव्य के रहते भये भाखा मे काव्य रचना क्या उचित बात है? मतलब यह कि वह तो कथा बाचने की सारी परिपाटी ही बदल डालेगा।"

महत वदेहीवल्लभचरणकमलरजधूलिदास जी ने कहा—"अभी से इतना अधिक भयभीत होने की आवश्यकता नही है शिवदीन जी। क्या नाम करके देखना चाहिए कि वह काव्य सम्पन्न भी होता है या नही।"

पण्डित रामदत्त बोले—"कवि वह नि सदेह उच्च श्रेणी का है। इसमे दो

मत कदापि नही हो सकत । अरे, अपनी कविता शक्ति ही से तो उसने अयोध्या-वासियो को आकर्षित किया है ।"

वदेहीवल्लभ जी ने मुह विचकाकर कहा—'हाऽऽ सत्य मे वह गाता मधुर ढग से है । सारा जादू उसके गले म है ।"

निवदीन बोले—'अरे तो फिर किसी तिकडम से उसको सिदूर खिलाय देव गला आप ही बठ जाएगा ।"

सुदशन पण्डित बोले—"यह असमव है हमने सुना है कि यह आजकल केवल फलाहार करता है । दूध पीता है ।"

रामदत्त बोले – 'देखिए आप लोग तो घर बैठे बातें कर रहे हैं । मैंने उसे स्वय सुना है । एक दिन बातें कर चुका हू । वह कवि श्रेष्ठ तो है ही किन्तु प्रकाण्ड पडित भी है । अरे आचाय शेष सनातन जी का शिष्य है, भाई ।"

निवनीन बोले— तुम तो उसके बडे प्रसशक बन गए हो जी । एक जरा-से भुनगे को हाथी बनाकर हमारे सामन खडा कर रहे हो । यदि वह सास्त्राथ से ही उखाडा जा सके तो मैं उसका सामना करने को सहस तैयार हू । मेरी तक सक्ति के आगे वह मच्छर भला कहा तक भनभना पाएगा ।"

"आपके तर्कों का आधार क्या होगा ?" महत जी ने पूछा ।

' राम के सगुण और निगुण रूप । मैं कबीर वाली चाल पकडूगा—'दसरथ सुत तिहु लोक बखाना । राम नाम का मरम है आना ।' अर्थात जो दसरथ नदन रघुनाथ को सुमिरे सो अज्ञानी है ।"

रामदत्त हाथ बढाकर बोले— कथावाचस्पति जी महराज अयोध्या मे बठके यह तर्क दोगे ? तुम्हारी खोपडी म जितने बाल बचे हैं वे सभी एक ही दिन म झड जाएगे ।'

तुमने हमे क्या पागल समझ रक्खा है जी ? अरे मैं इस अयोध्या को एकदम आध्यात्मिक रूप दे दूगा । राजा दसरथ दस इद्रियो के प्रतीक बन जाएग और उनकी तीनो रानिया सतोगुण रजोगुण, तमोगुण के रूप मे बखानी जाएगी । तुम समझते क्या हो ?"

प्राय उसी समय तुलसी भगत कुब्जा मथरा की कुटिलाई का वणन कर रहे थे—

> देखि मथरा नगर बनावा । मजुल मगल बाज बधावा ।
> पूछेसि लोगह काह उछाहू । राम तिलक सुनि भा उर दाहू ।।
> करै बिचारु कुबुद्धि कुजाती । होइ अकाज कवनि बिधि राती ।
> देखि लागि मधु कुटिल किराती । जिमि गव तकहि लउ केहि भाती ।।

राम-जन्मभूमि वाली मस्जिद म जब से राम जी का चबूतरा बन गया था और लोगो को वहा जाने दिया जाता था तब से अयोध्यावासियो को थोडा बहुत सतोष तो अवश्य ही हो गया था । मस्जिद के सिपाहियो का व्यवहार भी अब पहले से अधिक सुधर गया था । हिंदू मुसलमानो मे कटुता कम हो गई थी । यद्यपि कुछ कट्टरपथी मुसलमान अकबर की इस नीति के घोर विरोधी थे, पर

उनकी चल नहीं पाती थी। तुलसीदास अब नियम से, लिखने के पहले मस्जिद के भीतर चबूतरे पर विराजमान रघुनाथ जी के दर्शन करने जाया करते थे। एक दिन एक नागरिक ने उनसे कहा—"भगत जी, बहुत दिनों से आपने कथा नहीं बाची। हमने रामघाट पर आपकी कथा जब से सुनी है तब से ही आपका गुणगान किया करता हूं।"

तुलसी मुस्कराकर बोले—"मैं तो राम के ही गुणगान करता हूं, भाई। आपको जो अच्छा लगता है वह राम का नाम ही है।"

'अरे राम राम तो सभी करते हैं, भगत जी पर जसा भाव आप म है वैसा और किसी मे नहीं है।"

पास म खडे हुए कुछ अय व्यक्ति भी जोश के साथ इस बात का समथन करने लगे। बातो ही बातों में लोगों का यह आग्रह बढा कि एक दिन फिर कथा सुनाइए। आप जो नया काव्य लिख रहे हैं हम उसी को सुनना चाहते हैं।

अच्छा गगा दशहरे के दिन रामघाट पर सुनाऊगा।" × × ×

'गगा दशहरे के दिन वाली कथा ने एक ओर जहा मुझे अपार प्रोत्साहन दिया वहीं दूसरी ओर वह मेरे लिए नये सकटों का कारण भी बन गई।"

'वह कैसे गुरु जी ?' सन्त बेनीमाधव ने पूछा।

बाबा बोले—'उसकी कुछ चौपाइया और दोहे अयोध्या मे जगह-जगह गाए-गुनगुनाए जाने लगे। मेरे विरोधियों को इससे कष्ट होना स्वाभाविक ही था। इसमे किसी का दोष न मानो बेनीमाधव यह मनुष्य की प्रकृति ही है। आगे बढनेवाली शक्ति को ईर्ष्यालु लोग पीछे ढकेलने का प्रयत्न करते ही हैं। राम घाट पर जहां मैं रहता था वहा कुछ बन्दर भी रहते थे। उनसे मेरा बडा नेह नाता था। जब मैं चबूतरे पर बैठता था तो बन्दरो के बच्चे मेरे आस-पास ही ऊधम मचाया करते थे। एक दिन रात को मैं और मेरे धर्मपिता कोठरी के बाहर सो रहे थे। × × ×

आधी रात का समय है, तुलसी और बूढे पण्डित धरती पर चटाई बिछाए सो रहे हैं। कोठरी के पीछे वाले भाग में एकाएक मनुष्यों की चीत्कारों और बन्दरों के चिचियाने-खौंखियाने के स्वर एक साथ उठे। तुलसी और बूढे पण्डित जी की नींद खुल गई। वे उसी ओर भागे, देखा कि कोठरी की दीवार के पीछे एक व्यक्ति बेहोश पडा है। बन्दरों का सरदार दीवाल से सटकर बैठा हुआ गुर्रा रहा है और कुछ बन्दर चीं चीं करते हुए दूर भागे जा रहे हैं। उनके साथ ही भागते हुए मनुष्यों के पैरों की आहट भी आ रही है।

मनुष्यों और बन्दरों की चीख-पुकार ने घाट पर सोने वाले कुछ और लोगो को भी जगा दिया। क्या हुआ ? क्या हुआ ?' कहते वे लोग भी पास आ गए। तुलसी भगत तब तक मूर्च्छित व्यक्ति के पास पहुच चुके थे। उसका सिर और धड का कुछ भाग कोठरी के अन्दर था। वह निश्चेष्ट पडा था और बन्दर

उसके पास ही बठा गुर्रा रहा था।

तुलसीदास ने उसके सिर पर दो बार हाथ फेरा—"शात हो जाम्रो भूरे शान्त हो !" कहकर तुलसीदास ने अपना बाया हाथ, जो पडे हुए व्यक्ति की बाह पर रखा तो वह खून से चिपचिपा उठा। तब तक दो-तीन लोग वहा आ गए थे। भूरा वहा से हटकर अलग बठ गया।

एक बोला— चोर है ससुरा सेंध काटिसि है।"

तुलसी बोले—' तभी तो भूरे ने इस पर आक्रमण किया। इसकी कलाई मे बडी जोर मे काटा है उससे बडा लहू बह रहा है। मूर्च्छित भी हो गया है। दिया लाम्रो गुरुबचन।"

दिया आया, सेंध के अन्दर घुसी हुई चोर की गर्दन बाहर निकाली गई। कोई सेंध की काट देखने लगा किसी ने पास ही पडी कुदाल भी खोज निकाली। कोई इसी मसले पर विचार करता रहा कि इस कोठरी मे सेंध लगाने का भला अर्थ ही क्या है। चन्त मे चढी हुई धनराशि तो उसी समय कगलो को बाट दी गई जबकि गगा दशहरे के दिन दो सम्पन्न भक्तो ने बूढे पण्डित जी की इच्छा नुसार वहा एक छोटा सा कथामण्डप और हाता बनवा देने का भार अपने ऊपर ले लिया था।

तुलसी उस समय चोर का उपचार कर रहे थे। उसके मुह पर पानी के छीटे मार रहे थे। चोर होश मे आया पीडा से कराहा। तुलसी शात स्वर में उससे बोले डरो मत अब तुमसे कोई मार-पीट नही करेगा। भूरे ने तुम्हें काफी दण्ड दे दिया है। लेकिन यहा क्या चुराने आए थे भाई ? फकीरो के घर म भला क्या धरा है ?"

चोर रोने लगा— हमसे बडा पाप भया महाराज बदेहीबल्लभ महाराज ने हम आपकी पोथी चुराने भेजा था सो ये बन्दर जाने कहा से कूद पडे। मेरा एक साथी लगता है भाग गया और मेरी ये दुगत भई। मुझे छिमा कीजिए महाराज मैंने बडा पाप किया।"

गुरबचन घटवाला यह सुनकर चिढ भरे स्वर मे बोला—' ये बदेहीबल्लभवा सार महा लपर और कुचाली है। गेंदिया से भी उसीने नाटक कराया था।'

अजुध्या जी म कुछ लोग तो सारे बडे ही दुष्ट हैं। चार बुरा के कारण और सब साधुओ को कलक लगता है।'

भला बताओ पोथी चुराने का क्या तुक है ?"

बूढे पण्डित जी बोले— ये पोथी रह जाएगी तो इन ऐसो को कानी कौडी को भी कोई न पूछेगा। अरे कलयुग की माया बडी विचित्र है भइया।

तुलसी गम्भीर विचारमग्न मुद्रा म बठे थे। उनका मन एक नये निश्चय पर पहुच रहा था। वे बोले— जब मधूकरी मागकर खाता और पडा रहता था तब कोई बात न थी पर जबस यह प्रतिष्ठा पापिनी बढ चली है तभी से रार भी बढ चली है मैं अब यहा रहूगा नही। काशी चला जाऊगा।'

' क्यों भया क्यो ? अरे हम सबके रहते ये दुष्ट तुम्हारा एक बाल तक बाका नही कर सकत।' गुरुबचन बोला।

'चिन्ता अपनी नहीं गुरुबचन, इस रचे जानेवाले महाकाव्य की है। सरस्वती ने मेरे जीवन म ऐसा अमृतवपण पहले कभी नहीं किया अब तो इसी मोह मे फसा रहना चाहता हू भाई। रामायण रचते समय मैं पूण शान्ति चाहता हू। यह झगडा झझट चोरी चकारी का भय मुझसे सहन नहीं होगा। आज हनुमान जी ने भूरे के रूप मे इसकी रक्षा कर ली किन्तु कभी धोखा भी हो सकता है। मेरी विपत्ति पिताजी को भी घेर सकती है।"

बूढे पण्डित जी बोले—'तुम तनिक भी चिन्ता मत करो बेटा, मैं किसी से मिल जुल कर सुरक्षा का चौकस प्रबन्ध कर लूगा।"

नही पिताजी, मेरा मन कहता है कि कुछ दिनो के लिए मुझे यहा से टल जाना चाहिए। राम जी के घर मे ईर्ष्या द्वेषादि की आंधियां उठाना उचित नही। शकर जी विषपायी हैं। वहा कवियो और पण्डितो का समाज बडा होने के कारण कदाचित मुझे ऐसी निम्नकोटि के ईर्ष्या-द्वेष का सामना न करना पडे। मैं कल भारहरे ही काशी चला जाऊगा।'

२९

जिस समय तुलसी भगत प्रह्लाद घाट पर अपने मित्र पण्डित गगाराम के यहा पहुचे उस समय डेढ पहर दिन चढ चुका था। गगाराम जी का घर रगा पुता, पहले से कुछ बदला हुआ, अधिक भव्य लग रहा था। द्वार पर एक दर बान भी खडा था। कधे पर अपनी रचनाओ का झोला लटकाए थके-मादे तुलसी दास को देखकर दरवान ने हाथ जोडकर कहा—'दानसाला बाइ ओर है बाबा, चले जाइए।'

'मुझे पण्डित गगाराम जी से मिलना है, दान लेने नही आया हू।"

वो तो महराज जी इस सम काम कर रहे हैं। कोई वडे जमीदार आए हैं, उनका।"

तुलसी की अहता फूली। दरवान की बात काटकर यथासाध्य शान्त स्वर म कहा—'ठीक है परन्तु तुम उनसे जाकर इतना अवश्य कह दो कि तुलसीदास आए हैं।'

दरबान विनय दिखाकर तुरन्त चला गया और उसकी विनय ने तुलसीदास को धक्का दिया। मन बोला, रे मूढ तुलसी अभी तेरा अहकार नहीं गया! बेचारे दरबान पर रोब दिखाता है।' अपने अपराध के प्रायश्चित स्वरूप तुलसी-दास वही चबूतरे पर बैठकर राम राम जपने लगे। राम नाम उनकी मति को सही राह पर हांकने वाला डण्डा था। कभी आनन्द गगा बनकर वह उन्हें अपने भीतर किलोलें भी कराता था, वही उनका मोह भी बन चला था। जपानुशा-सित होते ही तुलसी का मन शान्त हुआ। तभी भीतर से गगाराम तेजी से डग भरते आते दिखाई दिए। तुलसीदास का चेहरा खिल उठा। वे अपने मित्र के

सम्मानार्थ उठकर खड़े हो गए और दो डग आगे बढ़ आए।

'अरे तुलसी!" दोनों मित्र एक-दूसरे से आलिंगनबद्ध हो गए, फिर बाहों से उनकी पीठ बांधे हुए ही चेहरे से चेहरा मिलाकर अपना विस्मय झलकाते हुए गंगाराम ने पूछा—'यह क्या वेश बना रखा है?"

तुलसी की दोनों बाहें गंगाराम की पीठ पर थीं, दाहिनी छूट गई। बांह के दबाव से उन्हें आगे बढ़ने का संकेत देकर स्वयं एक डग बढ़ाते हुए वे मुस्करा कर बोले—'भीतर चलो। सब बतलाऊंगा।"

दालान में नौकर खड़ा था। गंगाराम ने उस उंगली और आंखों से तुलसीदास के पैर धुलाने का आदेश दिया और भीतर बैठके की ओर मुंह करके बोले—"अभी आया टोडर जी।'

भीतर से आवाज आई—'हां, हां महाराज, हमें जल्दी नहीं है।"

तुलसी बोले—"तुम भीतर चलो, मैं आया।" आंगन में दालान के खम्भे से लगी संगमरमर की चौकी पर बैठकर तुलसीदास स्वयं अपने पांव धोने के लिए उद्यत हुए किन्तु नौकर ने उन्हें ऐसा न करने दिया। हाथ मुंह धोकर ताजे हुए फिर अपनी झोली उठाने लगे। नौकर स्वयं उसे उठाने लपका किन्तु तुलसी ने बरज दिया—'मैं स्वयं ले जाऊंगा।' भीतर प्रवेश किया तो गंगाराम अपनी गद्दी पर बैठे-बैठे ही हिले और टोडर जी उनके सम्मान में हाथ जोड़कर खड़े हो गए। तुलसीदास की आंखें टोडर से मिलीं। दोनों ओर नेह की कनी पुतलियों में चमकी। टोडर देखने में सुदर्शन थे। बड़ी बड़ी भव्य मूंछें, गले में सोने का कण्ठा और मोती माला पड़ी थी। उंगलियां अंगूठियों से जड़ी थीं—दुपट्टा अंग रखा भी कीमती था।

पण्डित गंगाराम ने हाथ बढ़ाकर तुलसी को अपने पास ही बुला लिया। एक ही गावतकिये का टेका लेकर दोनों मित्र बैठ गए। गंगाराम ने कहा—'ये हमारे टोडर जी यहां के एक बड़े सम्पन्न और धर्मनिष्ठ व्यक्ति हैं। इनसे मेरा परिचय अब पुराना हो चुका है।"

फिर टोडर से तुलसी का परिचय कराते हुए कहा—'टोडर जी, ये हमारे बचपन के साथी और सहपाठी सुकवि पण्डित तुलसीदासजीशास्त्रीकथावाचसपति हैं। और ज्योतिष विद्या में तो मैं इन्हें अपने से श्रेष्ठ विद्वान मानता हूं।'

'राम राम! टोडर जी, हमारे मित्र की अतिशयोक्तिया पर ध्यान न दें। मैं यदि गंगा हूं तो यह गंगासागर हैं।"

गंगाराम हंस पड़े और बोले—'तब तो मैं भी तुम्हारी तरह से कहूंगा कि मैं यदि तुलसीदास हूं तो तुम साक्षात तुलसी का बिरवा हो।

हंसी विनोद के क्षण बीतने के बाद टोडर ने पूछा—'महाराज, कहां से पधारे हैं?

'अयोध्या से आ रहा हूं। अब यहीं रहने का विचार है।' फिर गंगाराम की ओर देखकर कहा—'आजकल सरस्वती देवी की मुझ पर असीम कृपा है। मुझे राममहिमामय बनाने के लिए वे मेरे सुमिरन करते ही दौड़ी चली आती हैं।

'कोई बड़ा काव्य लिख रहे हो तुलसी?'

हा जब से तुम्हारे यहा बैठकर रामाना प्रश्न रचा था तभी से सरस्वती मैया मुझ पर दयालु बनी हुई है। कई फुटकर छन्द लिखे जानकी मगल नाम से एक प्रबन्ध काव्य की रचना भी कर डाली। और इन दिनो सम्पूर्ण राम-कथा लिखने की प्रेरणा मुझे बाधे हुए है।"

टोडर प्रसन्न होकर बोले—'अरे वाह महाराज, यह तो हमारे लिए बड़े ही आनन्द की बात है। कहा तक लिख डाली?"

अभी एक सोपान चढा हू। विवाह के बाद राम जानकी अयोध्या आए तब से लेकर उनके बनवास लेने और राजा दशरथ की मृत्यु के बाद चित्रकूट मे भरत भेंट होने तक का प्रसग पूरा कर लिया।"

'तो फिर यह प्रथम सोपान कैसे हुआ?" गगाराम ने पूछा और फिर कहा—'अरे भाई राम-जन्म से लेकर राम विवाह तक की कथा कायदे से प्रथम सोपान कही जानी चाहिए।"

'हा तुम्हारी बात ठीक है। असल मे जानकी मगल की कथा सुनाते-सुनाते राम भक्तो के आग्रह से मैं आगे की कथा लिखने बैठ गया। अब स्वय भी सोचने लगा हू कि इस महाकाव्य को जानकी मगल' से अलग कर दू और इसका एक बालकाण्ड भी रच डालू। अयोध्या मे उस समय मुझे अनुकूल वातावरण न मिला। दुर्दैववश इस समय वहा कोई श्रेष्ठ विद्वान अथवा कवि न होने से मुझे हीन प्रकार की ईर्ष्या-द्वेष-दम्भादि वृत्तिया से लडना पडता था। काव्यरचना के आनन्द मे विघ्न पडता था। इसलिए यहा चला आया।

पण्डित गगाराम बोले— बस तो अब तुम मौज से अपने उसी चौबारे में बैठकर काव्यरस सिद्ध करो जिसमे तुम्हे रामाज्ञा मिली थी।"

टोडर तुरन्त आग्रह दिखलाते हुए बोल उठे— पण्डित जी आपके तो मित्र हैं, जब जी चाहे इन्हें अपने पास रख सकते हैं पर इस समय तो मेरी इच्छा है कि मुझे इनकी सेवा करने का मौका मिले। आपको मैं परम शांत और रम्य स्थान दूगा महाराज।"

तुलसी बोले— आपके प्रस्ताव के लिए कृतज्ञ हू टोडर जी। यों गगाराम का घर मेरा अपना ही घर हैं पर इस समय मैं गृहस्थी के वातावरण में नही रहना चाहता। मुझे एक ऐसी स्वतन्त्र कोठरी दिला दीजिए जिसमे मैं अपना काव्य साधन भी करू और वैराग-साधन भी।'

गगाराम गम्भीर हो गए बोले— तुलसी, तुम्हारा यह नया रूप मेरे लिए अभी रहस्यमय है। तुम अभी से वैराग्य क्यों धारण कर रहे हो?'

तुलसी ने मुस्कराकर कहा—'जब तक राम-कृपा नही होती वैराग्य नही आता। मैं अभी पूर्ण विरक्त नही बन सका। काव्य के सहारे अपने को वैसा बना अवश्य रहा हू। मुझे आप कोई स्वतन्त्र एकात कोठरी दिला दें टोडर जी।

ऐसा स्थान मेरी नजर मे है महाराज। हनुमान फाटक पर मे चौकस प्रबन्ध कर दूगा। चाहें तो आज ही कर दू। वह स्थान मेरे एक नातेदार का है मेरा ही समझिए।'

गगाराम बोले—"अरे भाई, तुम इन्हे अभी से चग पर न चढाओ टोडर जी, अभी कुछ दिनो तो मैं इन्हे अपने ही पास रखूगा।"

दो क्षण मौन रहा, फिर बात को नये सिरे से उठाते हुए गगाराम टोडर से बोले—"तो भाई, हमारा प्रश्न विचार तो यही ठहरता है कि तुम्हारा और मगल भगत का समझौता हो जाएगा। टोडर, मार-पीट, खून-खराबे की नौबत नहीं आएगी।"

'यही बात मेरी समझ मे नही आती है महाराज यो तो मगल भी भला है और मैं भी भला हू पर हठ मे न वह कम है और न मैं। वही किस्सा है कि नाले के आर-पार जाते हुए दो बकरे बीच म रखे छोटे-से पटरे पर खडे हैं और जब तक एक बकरा दूसरे को टक्कर देकर नाले म गिरा न दे तब तक वह आगे नही बढ सकता।'

तुलसी बोले—"बात पूरी न जानने के कारण मैं ठीक तरह से तो नही कह सकता, पर मुझे भाई गगाराम की बात उचित ही जान पडती है। बकरे तो पशु थे किन्तु आप मानव हैं राम चेतना-युक्त हैं। आप दोनों को बकरो जैसी टकराने की स्थिति से बचना ही चाहिए।"

गगाराम बोले— 'उचित बात कही। और बात भी कुछ नही, मगलू अहिर भगू आश्रम के पास रहता है। वहा उसकी दो चार एकड भूमि है। इनके यहा बधक पडी है। वह इनका रुपया चुका नहीं पाया। मियाद निकल चुकी है। अब मन मे मोह है कि अपना यश बखाने के लिए यह उस स्थान पर एक धमशाला बनवा दें और फलो का बगीचा भी लगवा दें। इधर मगलू इनसे और मियाद चाहता है। वह स्वय भी उस भूमि पर अपने यश के लिए कोई काम करना चाहता है।

टोडर बोले—'मैं जानता हू महाराज कि उसे चाहे जितनी मियाद दे दी जाए वह अब मेरा ऋण चुकाने लायक नहीं रहा। पिछले साल पशुओ की बीमारी में उसकी आधी से अधिक गायें मर चुकी हैं। परन्तु वह अपनी हेकडी नही छोडता।'

तुलसी ने टोडर से कहा—"टोडर जी मेरा विचार यह कहता है कि आपको किसी महात्मा की कृपा से अक्षय यश मिलेगा। मेरे कहने से आप यह तकरार छोड दें।

टोडर थोडा असमजस म पडे फिर बोले—'आपकी जैसी आज्ञा हो महाराज, पर '

अब पर वर न निकालो टोडर। तुलसी की इस बात का समथन तुम्हारी जन्मकुण्डली से भी होता है। मेरा ध्यान अब इस बात पर गया। मगलू से लडना ठीक नहीं होगा। वह हठी जरूर है पर बडा ही भला और परोपकारी व्यक्ति है।"

'जब दो पण्डित एक ही मत के हो तो मुझे मानना ही चाहिए।

पण्डित गगाराम जी उत्साह भरे स्वर मे बोले—'अरे ये कोरे पण्डित ज्योतिषी या कवि ही नही बल्के राम-भक्त भी हैं। हो सकता है कि हमारे य तुलसी ही आगे चलकर महात्मा सिद्ध हो और तुम्हे इनकी कृपा से यश मिले।'

तुलसी खिलखिलाकर हस पड़े। पण्डित गगाराम के हाथ पर हाथ मारकर कहा—"तुम्हारी विनोद वृत्ति अभी वैसी ही बनी हुई है। मुझे याद है टोडर जी कि गगाराम हम लोगो के साथ पढनेवाले एक भोजनभट्ट छात्र धोंडू फाटक को भी मेरे सबध मे ऐसे ही बहकाया करते थे।"

गगाराम भी हसे परन्तु फिर गम्भीर होकर बोले—'तुलसी जब मनुष्य चाहता है तब कुछ नही होता है। जब ईश्वर चाहता है तब सब कुछ सिद्ध हो जाता है। और जब मनुष्य और ईश्वर दोनो मिलकर चाहते हैं तब कुछ भी असम्भव नहीं होता। तुम्हारे सबध मे मेरी भविष्यवाणी गलत नहीं होगी। अरे इसी प्रसग मे याद आया टोडर हम अपने मित्र के सम्मान म यहा के प्रसिद्ध पण्डितो और कवियो की एक गोष्ठी करना चाहते हैं।'

मैं सारा प्रबध कर दूगा महाराज और जहा तक हो सके मगल को यहा बुलवाकर आप ही समझौता करवा दीजिए।'

तब तो भाई तुम्हें आठ-दस दिन ठहरना पडेगा। मैं कल सवेरे चुनार जा रहा हू।"

तुलसीदास एकाएक बोल उठे— जब वह भी भला है और आप भी भले हैं तब बीच मे बात चलाने के लिए आवश्यकता केवल एक तीसरे भले आदमी की ही है चाहे उसकी जान पहचान हो या न हो। मैं आपके साथ चलने को तयार हू टोडर जी। अनेक वर्षों मे भृगु आश्रम की ओर गया भी नही हू। फिर यह निश्चित है कि रामकृपा से मेरी बात खाली नही जाएगी क्योकि आप अपना दावा छोड रहे हैं।"

टोडर कुछ सोचकर बोले—"अच्छा तो फिर मैं कल पहर भर दिन चढे तक यहा आकर आपको साथ ले चलूगा। पण्डित जी तो उस समय यहा होंगे नही।'

'हा इसी कारण से आप मेरे लिए हनुमान फाटक वाले उस स्थान का प्रबध भी आज ही कर लीजिएगा।"

आश्वासन मिलने पर तुलसीदास को लगा कि अब वे एक अत्यत अनुकूल वातावरण म पहुच गए हैं। उनका काव्य निश्चय ही अब सुख से आगे बढ सकेगा। उन्हें सस्कृत भाषा के कवि समाज मे अपनी सस्कृत-काव्य रचनाए सुनाने का मवसर मिलेगा। यह सब कल्पनाए उनके अहम् को बडी तुष्टि दे रही थी। × × ×

बेनीमाधव को अपनी पूव कथा सुनाते-सुनाते तुलसीदास मौन हो गए। फिर कहा— देखो नियति कैसा खेल खेलती है। हम चाहते थे कि काशी मे अपनी कथा आरभ करने से पहले वहा के पण्डित समाज म एक बार अपना सिक्का जमा लें तो उसका परिणाम शुभ होगा। अयोध्या म पहले पण्डित समाज म हेल-मेल नहीं बढाया इसीलिए उस समाज के कुटिल पुरुषो को हमारे विरुद्ध पर जमाने का अवसर मिल गया। काशी मे यह न करेंगे। परतु प्रभु की वसी इच्छा न थी। हम टोडर के साथ जो भृगु आश्रम गए तो वहा मगलू अहिर से बडा प्रेम हो गया। वह सचमुच भक्त आदमी था। फसला तो खर तुरत ही

हो गया, कोई बात न थी ? फिर उसने हम दोनो को रोक लिया। उसने हमसे कहा कि आपकी बातें बडी सुन्दर हैं। हम गाव जवार के लोगो को बुलाए लेते हैं। कल सवेरे प्रवचन कीजिए तब जाइएगा। और मेरा वह राम-कथा प्रवचन ही काशी और उसके ग्राम-पास के क्षेत्रों म मेरे यश का कारण बन गया। बहुतो न पूछा कि आप कहा क्या बाचेंगे। हम आया करेंगे। टोडर चट से बोल दिए कि हनुमान फाटक पर महात्मा जी रहेंगे और वही इनकी कथा होगी। लौटते समय हमने टोडर से कहा— × × ×

'टोडर जी, आपने कथा का न्योता देकर मुझे बडे असमजस मे डाल दिया है।'

"क्यो महात्मा जी ?"

'कृपा करके आप मुझे महात्मा न कह। मैं साधारण मनुष्य हू। थोडा बहुत राम जी का नाम जप लेता हू। बस इससे अधिक और मरी कुछ पहुच नहीं है।

टोडर हाथ जोडकर बोले— यदि मैंने आज आपका प्रवचन न सुना होता तो मैं मुख से यह शब्द आपके लिए एकाएक कभी न निकालता। महाराज मैं ठहरा दुनियादार लोक-व्यवहार मे दिन रात लगा रहता हू। भले-बुरे सभी मिलते हैं। मैं सभलकर मुह से शब्द निकाला करता हू पर कथा के लिए स्थान बतलाकर मैंने क्या कुछ गलती की महात्मा जी ?"

नही बस तो कथा बाचना ही मेरी जीविका है और उसे छोडना भी नहीं चाहता। विरक्त के हेतु भी आज के समय म स्वाभिमान से जीने के लिए यह आवश्यक है कि वह अपनी जीविका अवश्य कमाए। कबीर साहेब अपने चरखे-करघे के धन्धे से बधे थे इसलिए उनकी वाणी मुक्त थी। मैंने भी अयोध्या मे यही सबक सीखा। पर अभी कुछ दिना यह करना नहीं चाहता था। उसी उद्देश्य से अयोध्या से कुछ धन भी ले आया हू।'

अब अपनी नो रोटियो की चिंता का भार दया करके अपने इस दास पर ही छोड दें। आप आनन्द से अपनी रामायण लिखें। और आपसे मेरी अरदास तो यही है कि कथा अवश्य सुनाए। हम जसे प्राणिया का भी उद्धार होना चाहिए महात्मा जी।" × × ×

मैं भला टोडर से यह कसे कहता बेनीमाधव कि मेरा अहकार सिद्ध कथावाचक और भाषा के कवि के रूप मे विख्यात होने से पहले काशी के पण्डित समाज मे प्रतिष्ठित होने के लिए तडप रहा है। दखो यह विडबना कि एक ओर राम भक्ति पाने के लिए मन तडपता है और दूसरी ओर पण्डिता से सस्कृत के कवि के रूप म वाहवाही पाने की छटपटाहट भी है। एक ओर दुनिया से विराग भी है और दूसरी ओर यह वाहवाही का लोभ भी। इसी द्वद्व से मेरी सच्ची चाहना को निकालने के हेतु नियति ने मानो मेरे लिए काशी म भी सघष का एक वातावरण प्रस्तुत कर दिया।'

"कैसा संघर्ष हुआ गुरु जी ?"

टोडर ने अपने भुइहार समाज म मेरी बडी प्रशंसा की। उधर मगलू भगत और उनकी तरफ के लोग दूसरे दिन ही मेरे हनुमान फाटक वाले नये स्थान पर पहुंच गए। स्वाभाविक रूप से प्रवचन का आयोजन हुआ। बस, फिर तो तुलसी भगत तुलसी भगत की धूम मचने लगी।" × × ×

हनुमान फाटक पर तुलसी के निवासस्थान पर बडी भीड जमा है। तुलसीदास अभी कहीं आस ही पास मे गए हुए हैं। जनता उनकी प्रतीक्षा म है। लोगों म बातें चल रही हैं।

'भाई, बहुत देखे, पर इनके ऐसा कोई नहीं देखा।"

'कैसा सरूप है और कैसा मधुर कण्ठ पाया है। अरे प्रेम देखो उनका, सुनाते सुनाते कैसा अपने म रम जाते हैं। इनको राम जी जरूर दर्शन देते होंगे भइया। हां भाई जिसकी जैसी करनी उसको वैसा ही फल मिलता है। हम तो इसी मुहल्ले मे रहते ह। आठों पहर देखते हैं। या तो बैठे-बठे लिखा करते हैं या फिर धर्म-उपदेश दिया करते हैं। कोई ऐब नही। औरतों की ओर तो आखें उठाकर भी नहीं देखते। काशी मे ऐसे महात्मा हैं तो जरूर पर बहुत कम दिखाई देते है।"

थोडी ही देर मे तुलसीदास टोडर को साथ लिए आ गए। मजमा उनके सम्मान में उठ खडा हुआ। जै-जै सियाराम और हर-हर महादेव के जयकारे गूजी और वैसे ही जाने कहा से ढेले आने लगे। तडातड-तडातड ढेलों की बौछार होने लगी। भीड म कई लोग घायल हुए। कइयो ने उत्तेजनावश चीखना-पुकारना आरंभ कर दिया। थोडी ही देर में भीड ढेलों की बौछार से त्रस्त होकर भागी। ढेले आस पास की छतों स आ रहे थे। तुलसीदास शांत खडे देखते रहे। उनके बायें कंधे पर एक लखौरी ईट चोट करती हुई निकल गई थी। खून बह रहा था। टोडर अपने रूमाल से उसे पोंछते हुए बोले— यहां कुछ लोगो ने अपना धर्म परिवर्तन कर लिया है। यह दुष्टता उन्होंने ही दिखलाई है। तुलसीदास मौन रहे।

दूसरे दिन सवेरे ही सवेरे तुलसीदास जब गंगास्नान से लौटकर आए तो उन्हें अपनी कोठरी की चौखट के आगे एक मरा हुआ कुत्ता, कुछ हड्डी के टुकडे आदि पडे दिखाई दिए। तुलसीदास के पैर झिझककर थम गए। मुंह से राम राम शब्द निकला। तीसरे दिन जब भी कोई तुलसीदास के द्वार पर आता तभी उसके ऊपर ढेले बरसने लगते। चौथे दिन तुलसीदास टोडर से बोले— भाई मैं यहां नहीं रहूंगा। हनुमान जी मुझे यहां रहने की आज्ञा नहीं देते।"

टोडर भभककर बोले—'अरे महात्मा जी, चार दिन इन्होंने उत्पात मचा लिया, अब देखिए मैं भी अपना तमाशा दिखाऊंगा। अकबर बादशाह का राज है, सबको अपने धरम-करम की छूट है। ये लोग कोई सचमुच मुसलमान थोडे ही हुए थे। बिरादरी में फूट पड गई बस इन लोगों ने धर्म बदल दिया। बदला लेने के लिए हमें सताते हैं। मैं कल ही यहां के हाकिमों स मिलकर सारा प्रबंध कर लूंगा। आप यहीं डटे रहें।"

तुलसी रात म अपनी कोठरी बद करके दिये के सामने बैठे लिख रहे हैं। अत्रि ऋषि के आश्रम मे सीता सहित राम-लखन, दोनों भाई विराजमान हैं। तुलसीदास दोहा लिख रहे हैं—

प्रभु आसन आसीन, भरि लोचन शोभा निरखि।
मुनिवर बचन प्रबीन, जोरि पानि अस्तुति करत।

तुलसीदास तन्मय होकर लिख रहे हैं। अचानक देखते हैं कि बद किवाडा के भीतर धुवा और आग घुसी चली आ रही है। तुलसीदास घबराकर उठ खडे होते हैं। हे राम, यह कैसी परीक्षा। मेरी सारी काव्य रचनाए नष्ट हो जाएगी।' तुलसीदास क्षण भर तो मूढवत खडे रहे फिर झटपट अपनी झोली उतारी, अपने आगे फने हुए कागज-पत्र जल्दी-जल्दी समेटकर उसम रखे, उस पर अपना धोती अगोछा रखा और लोटे म दवात-कलम डालकर झोली तैयार करके रखी। चौखट के एक कोने से लपटें भी निकलने लगीं और बद कोठरी म धुवा तो दम घोंटने वाला हो गया था। कोने मे पानी का घडा रखा था। उससे लपटा वाले स्थान पर पानी डालने लगे। लपट शात हुई कुण्डी खोली। पूरी चौखट धीरे-धीरे आग पकड रही थी। तुलसीदास ने घडे का पानी डालकर उसे बुझाया। अपनी झोली उठाई बाहर निकलकर चौकन्नी दृष्टि से इधर-उधर देखने लगे फिर प्राथना की हनुमान जी मैं आपकी ही आज्ञा से यह काव्यरचना कर रहा हू। मुझे सुचित होकर लिखने दें।' कहकर वे अधेरी गलिया म चल पडे।

रात अभी पहर-भर ही चढी थी। नगर की सब गलियो म अभी पूरी तरह से सन्नाटा नही हुआ था। जिस समय वे गोपाल मदिर की गली से गुजर रहे थे उस समय मन्दिर मे आरती के घण्टे घडियाल बज रहे थे। तुलसीदास मदिर मे चले गए।

आरती समाप्त हुई। पट बद हुए। भक्तजन अपने अपने घरो को चले। तुलसीदास ने तब वहा के एक कमचारी से कहा— म अयोध्या जी से आया हू। यहा हनुमान फाटक पर ठहरा था। कुछ दुष्ट प्रकृति के लोगा ने धम के नाम पर वहा मुझे तग करना आरम्भ किया और आज तो कोठरी के किवाडो मे आग तक लगा दी। क्या मुझ निराश्रित को यहा रात भर टिकने के लिए स्थान मिल सकेगा?"

एक क्षण तक तो पुजारी उन्हें देखता रहा, फिर कहा—"आवो हम तुम्ह सोने की जगह बतला दें।" × × ×

गोपाल मदिर मे अधिक दिनो तक टिक न सका।"

'क्या उन लोगो ने आपका विरोध किया गुरू जी।"

'हा परन्तु मैं किसी को दोष नही देता। बात यह कि मेरी कथा के प्रशसक शीघ्र ही मुझे खोजते हुए वहा पहुच गए। उनमें टोडर सबसे पहले पहुचे।'

"हा गुरू जी मैं उन्हीं के बारे म सोच रहा था। वे बेचारे तो बहुत ही दुखी हुए होगे।"

"पूछो मत, बहुत दुखी थे। अस्तु यह भीड भाड और एक अपरिचित शरणार्थी का यह महत्व स्वाभाविक रूप से मेरे प्रति ईर्ष्या का कारण बना। मैं उस समय अरण्यकाण्ड के लेखन मे इतना तन्मय था कि तुमसे क्या कहू। मेरे सामने राम कथा के बिंबो को छोडकर एक और भी चित्र आता था। और वह था, कथा सुनने वाले भक्त नर-नारियो का। काल से पिटे, शासन से दुरदुराए अपने भीतर से टूटे हुए निरीह नर-नारियो का समाज जब मेरी आखो के सामने आता था तो ऐसा अनुभव करता था कि जब अपने साथ ही साथ इन मनुष्यो मे रामभद्र के अवतार की कामना करूगा, तभी मुझे श्री युगल कमल चरणो म खरी भक्ति मिलेगी।"

'आप ऐसा क्यो अनुभव करते थे गुरू जी ?"

बाबा हसे, बोले— जिसके पैरो मे बिवाइया फटती हैं न, वही दूसरो के दर्द को समझ सकता है। जीवन तत्त्व और है ही क्या। उदारता और स्वाधीनता मि कर ही जीवन तत्त्व है। इन दोनों के मेल से प्रेम तत्त्व आप ही आप उमगता और निखरता है।"

क्या फिर गोपाल मदिर वाली कोठरी भी आपको छोडनी पडी ?"

'हा टोडर बडे ही प्रेमी जीव थे। यो तो केवल चार गावो के ही ठाकुर थे पर उनका कलेजा किसी बडे से बडे साम्राज्य के विस्तार से कम न था। उन्होंने अस्सी घाट पर तुरत ही यह जमीन खरीद ली। मेरे लिए पहले तो एक मडैया छवा दी। फिर धीरे धीरे मदिर इमारत इत्यादि भी उन दिनो मे बनवाई जब हम अगली रामनवमी पर कुछ महीनो के लिए अयोध्या चले गए थे। परतु वह आगे की बात है। कथा प्रेमी भीड वहा भी पहुच गई। नगर म किसी तरह से ये किंवदती फल गई कि मेरे शत्रुओं द्वारा सताए जाने पर हनुमान जी अपना विराट रूप धारण करके प्रकट हो गए थे जिससे दुष्टो की भीड भाग गई। मेरे सबध मे इतनी चामत्कारिक कथाए नगर म फल गईं कि वहां पहुचने के चौथे पांचवें दिन एक विशाल समुदाय मेरे सामने था। मैं भूल गया पडितों के ईर्ष्या द्वेष की बात भूल गया आने वाले सकटों की बात अरण्यकाण्ड रच ही रहा था, उसे ही तन्मय होकर सुनाने लगा।" × × ×

तुलसीदास अरण्यकाण्ड सुना रहे हैं। जनता मत्रमुग्ध होकर सुन रही है। उनके स्वर में ऐसा आकर्पण और वर्णन में ऐसी चित्रमयता है कि लोगों को लगता है कि मानो सारे दृश्य उनकी आखों के आगे घट रहे हैं। महर्षि अत्रि के आश्रम मे सीता राम-लक्ष्मण का स्वागत होता है। अनुसूया सीता को उपदेश देती है। वन में रहने वाले ऋषि-मुनि और तापस उनका अलौकिक रूप और बल देखकर उनमे परब्रह्म के दर्शन पाते हैं। तुलसीदास ने राम का ऐसा मार्मिक रूप बांधा कि सुनने वाला के मन म उस सुन्दरता को देखने की ललक उनके प्राणों की सारी शक्ति समेटकर उन्हें भाव रूप राम का दर्शन कराने लगी। टोडर तो ध्यानलीन हो गए थे।

कथा में फल-फूल-अनाज पैसे चढ़ने लगे। तुलसीदास भीड के जाने के बाद

टोडर से बोले—'आज और कल सवेरे के लिए इतने दाल चावल रख लेता हूँ। बाकी सब गरीबो मे बटवाने की व्यवस्था आप कर दें और इन रुपये-टका का उपयोग कुछ नि सहाय विधवाओ और दीन-दुखिया मे बाट कर करें।'

टोडर बोले— महात्मा जी, आप तो बस लिखिए और सुनाइए। बाकी सारी चिन्ताए मेरे ऊपर छोड दीजिए। हमने एक और प्रबध भी कर दिया है कुछ पहलवान यहा रहेंगे। उनके लिए अखाडा भी बनवा दूगा। फिर कोई टिर पिर करेगा तो "

तुम मेरी सुरक्षा की चिन्ता छोडो। मेरे बल राम हैं और सहायक बजरग बली। बाकी अखाडा बन जाने से हम सचमुच बडी प्रेरणा मिलगी। हम तो सोचते हैं कि नगर म जगह जगह अखाडे बन जाए, अखाडा म हनुमान जी की मूर्तिया स्थापित हो जाए और चारो वर्णों के तरुण सबल बनें। एक बार राम जी की बानरसेना तैयार हो जाए तो फिर उन्ह प्रगट होते देर नही लगेगी। (बच्चो की तरह मचलकर) टोडर, अखाडा तुम जल्दी से जल्दी बनवा दो मित्र। पहले एक अखाडा मेरे यहा बन जाए, हमारे जवान तगडे बनन लगें तो फिर मैं इस शकर जी के नगर म चारो ओर हनुमान अखाडो की गुहार लगाऊ। राम जी की सच्ची पूजा न्याय पक्ष की पूजा है। जब हमारे जवान हनुमान बली का आदर्श लेकर बली बनेंगे तभी न्याय की प्रतिष्ठा और रक्षा भी हो सकेगी।" तुलसी दास के मन म बडा उल्लास था। कुछ दर वे अपने ही मे मगन रहे फिर एका एक पूछा, अरे भाई हमारे गगाराम की कुछ खर-खबर मिली ? आठ-दस दिन को कह गये थे। अब लगभग डेढ महीना पूरा होने को आया

पण्डित जी चुनार म बीमार पड गए थे महात्मा जी। मैंने कल ही उनके घर आदमी भेजकर पुछवाया था। अब स्वस्थ हैं और बस दस पाच दिनो के भीतर आने ही वाले हैं।

'हा, हमारा विचार है कि एक बार यहा के विद्वन् समाज से भी हमारा नेह-नाता बध जाय। हमे न जाने क्या भीतर ही भीतर यह आभास होता है कि वह वग हमारे लिए व्यर्थ ही म सकटकारी भी हो सकता है।

अरे नही महात्मा जी आप चिता न कीजिए। एक दिन जहा सबको दिव्य ठडई-बूटी छनवाई, स्वादिष्ट भोजन छकाए जरा इतर फुलेल हार गजरे से मस्त किया नही कि सब हा जी हा जी कहते डालने लगेंगे।

तुलसी मुस्कराए कहा— बात इतनी सरल नही है टोडर। खर होगा राम कर सा होय। टोडर के जान के बाद एकात मे चूल्हे पर अपनी खिचडी पकाते हुए ध्यानमग्न बैठ गये। मन कह रहा था—'यश की चाह धन की चाह और कामिनी की चाह, यह तीनो एक ही है तुलसी। इनम अतर मत समझ। केवल स्त्री को ध्यान से हटा देने मात्र ही से तू निष्काम नहीं हुआ। यश की लालसा भी काम ही है। तू कुछ दिनो तक अपना कथा-व्यापार बद कर नही तो तेरा दभ फूल उठगा।'

कथा व्यापार क्यो छोडू ? क्या इससे मेरी कीर्ति ही बढ़ती है ? नही, टूटे हुए त्रस्त नर-नारियो को आस्था भी मिलती है। उनके जीवन म रस आता

है। मैं जो काम केवल अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाने की कामना से ही करूंगा वह कदापि सफलीभूत न होगा। मेरी भी ऐसे ही नाक कटेगी जैसे कथा प्रसंग में सूप नखा की नाक कटनेवाली है।'

तुलसीदास के चेहरे पर हंसी आ गई। हंडिया का ढक्कन उठाकर खिचड़ी की स्थिति देखी और उसे कलछुल से हिलाते-हिलाते सहसा मन फिर बोला—'अच्छा, सूपनखा प्रसंग मे राम जी जो जरा-सी चकल्लस करें तो क्या बेजा होगा ? मर्यादा पुरुषोत्तम जगदंबा के सामने स्वयं तो हंसी मे भी किसी अन्य स्त्री को प्रोत्साहन न देंगे।' तुलसी गुनगुनाने लगे—

'सीतहिं चितइ कही प्रभु बाता।
अहइ कुमार मोर लघु भ्राता॥
गइ लछिमन रिपु भगिनी जानी।
प्रभु बिलोकि बोले मृदु बानी॥'

आंखो के सामने दृश्य आने लगा। कुटी के बाहर एक ओर सियाराम जी बैठे हैं उनसे थोड़ी दूर पर लक्ष्मण जी वीरासन पर बैठे हैं। कामिनी शूपणखा रीझी और ललचाई हुई दृष्टि से लक्ष्मण को देख रही है। लक्ष्मण कहते हैं—

'सुंदरि सुनु मैं उन्ह कर दासा।
पराधीन नहिं तोर सुपासा॥"

गुनगुनाहट मे पंक्तियो पर पंक्तिया बनती गई—

सीतहिं सभय देखि रघुराई।

राम लक्ष्मण को संकेत करते हैं। लक्ष्मण आगे बढ़कर सूपनखा को पकड़कर गिरा देते और उसके नाक-कान काट लेते हैं।

एकाएक तुलसी का ध्यान टूटता है। झोपड़ी की फूस से बनी दीवारों का कोना उसके आगे बना हुआ चूल्हा, उसके ऊपर चढ़ी हुई मिट्टी मढ़ी हंडिया आंखों के सामने आ जाती है। तुलसी की नाक में अप्रिय गंध आ रही है। खिचड़ी से जलांध उठने लगी थी। झट से हंडिया उतारी, उसका ढकना खोलकर देखा। खिचड़ी की स्थिति देखकर हंसे और आप ही आप बोल उठे—'अच्छी सूपनखा की नाक की चिंता की मेरी खिचड़ी ही जल गई। खैर अब इसकी चिंता छोड़कर इन चौपाइयों को लिख डालूं फिर याद से उतर जाएगी तो कठिनाई होगी।' × × ×

बेनीमाधव के बोलने से बाबा का ध्यान भूतकाल से वर्तमान में आ गया। संत जी ने पूछा—'पण्डितों की वह सभा जो आप चाहते थे ?'

बाबा हंसे और बोले—'वह न हो पाई। पण्डितों ने पण्डित गंगाराम और टोडर दोनों ही को हमारा पक्ष लेने के कारण निंदित किया। **वही अयोध्या** जैसी दशा हुई। हमारी लोकप्रियता कवि-पण्डित समाज की **ईर्ष्या का कारण**

बन गई।"

इस प्रतिकूल वातावरण का प्रभाव आपके काम मे निश्चय ही बाधक सिद्ध हुआ होगा गुरू जी।"

बाधक नही साधक सिद्ध हुआ, क्योकि हम खरे अर्थ मे विरक्त होना सीख गए।"

बेनीमाधव बोले—'गुरू जी इतना त्याग कर चुकने के बाद भी आपने अपने को क्या उस समय तक विरक्त नहीं माना था ?'

कैसे मानता बेनीमाधव मैं अपने राम के प्रति अनुरक्त होते हुए भी अपनी काव्य प्रतिभा से ही अधिक लगाव रखता था। मुझे साधारण जन समाज से मिलनेवाला स्नेह उतना नहीं रिझाता था जितना कि अभिजात वर्ग से प्रतिष्ठा पाने की लालसा। फिर भला बतलाओ कि मैं अपने आपको खरा रामानुरागी वीतरागी क्योंकर मानता ? यह तो अरण्यकाण्ड रचते हुए जब सीता जी के विरह म राम जी के विलाप का वर्णन करने लगा तो सहसा मुझे लगा कि— × × ×

रामायण रचते रचते तुलसीदास ने एकाएक अपनी कलम रख दी और गहरी चिंता की मुद्रा मे सूनी उदास दृष्टि से अपनी कोठरी के बाहर चमकते प्रकाश को देखने लगे। मन कहता है रे तुलसी, प्रतिष्ठा का दशानन तेरी भक्ति को हर ले गया है। तू काव्य मे जिस असीम भक्ति की बातें कर रहा है वह क्या सचमुच तेरे पास है ?'

नही हा है। मैं सूने मन से भक्ति की बात नही कर रहा हू। मैं जन जन म राम के दर्शन करने के लिए सतत् प्रयत्नशील रहता हू।'

फिर दम्भी रावण-समाज म प्रतिष्ठा पाने की लालसा तुझे क्यो सताती है ?

तुलसीदास की प्रश्न भरी आखो में लज्जा का बोध झलका, आखें नीची हो गइ। एक गर्म उसास मुह से निकल गई। वे अनमने होकर एकाएक उठ खड़े हुए और अपनी कोठरी म बावले चक्कर काटने लगे। मन झिड़क रहा था 'कहा है तेरी राम-दर्शन की चाह ? तू झूठा है लबार है।'

मैं काव्य रचते हुए राम जी का ही तो ध्यान धरता हू।'

झूठा है। तू केवल कथा प्रसगों को जोड़ने की चिन्ता करता है। तेरे मन म राम का वास्तविक स्वरूप अब भी नही आया।'

'कैसा है वह रूप ? कहा देखू कहा खोजू कहा पाऊ ?

बाहर से कलास जी का स्वर सुनाई पड़ने लगा। वह किसी से कह रहे थे— 'मैं आपसे सच कहता हू कि अब मघा भगत वह पहले के मेघा भगत नहीं रहे।"

जैराम साव और कलास कवि बातें करते हुए भीतर आ चुके थे। जराम हाथ जोड़कर जै सियाराम कहते हुए आगे बढ़े और तुलसी के चरण छूने को झुके।

कलासनाथ बड़ी आत्मीयता भरी दृष्टि से अपने बाल्य-बन्धु को देखते हुए बोले—'जै श्री सियाराम।

'जै सियाराम जै शंकर।" दोनों मित्र मुस्कराने लगे। बैठने पर तुलसीदास ने पूछा—'भाई जी के लिए तुम अभी क्या कह रहे थे कैलास ?"

मैं झूठ नहीं कहता तुलसी मैं इधर कई महीनों से भगत जी के स्वभाव में अन्तर पा रहा हूं।"

'अभी कुछ ही दिन पहले मैं उनसे मिल आया हूं। वे मुझे स्वस्थ दिखे। मन से भी चंगे लगे। उनकी बातों में रस था, प्राण थे।'

'हां, यह सब है, पर मैं अनुभव से कहता हूं। मैं कवि हूं। मैं जब चाहूं किसी भी छन्द में रस और भावों को समान शक्ति से बखान दूंगा। परन्तु वह शक्ति मेरी पहले की कमाई हुई सिद्धि है, आज की नहीं। यदि मैं अपने काव्य के भीतर कोई नई बात नहीं कहता अपनी थकी हुई शब्द-योजना को ताजापन नहीं दे पाता तो सब कुछ बेकार है। मेघा भगत भी अब वैसे ही भगत हो गए हैं।"

तुलसी का चेहरा झुक गया। मन कह रहा था तेरा भी यही हाल होने वाला है। तुलसीदास, पहले उछाह के झरने में भक्तिरूपिणी विद्युत संचार करने वाली जिस जलधार से तू नहाया था वह अब तुझसे दूर हो चुकी है।'

नहीं नहीं, नहीं !' तुलसी के चेहरे पर कम्प आ गया। जराम साहु कलास जी से कह रहे थे— भाई मुझे तो उनकी भक्ति अब ऊंची बढ़ गई मालूम होती है। भक्ति न होती तो भला वे रामलीला की सोच सकते थे ?"

'कैसी रामलीला, साव जी ?' तुलसी ने उत्सुक होकर पूछा।

कैलास बोले— अरे उसी का तो निमन्त्रण देने आए हैं हम। वाल्मीकीय रामायण के आधार पर उन्होंने नटों से रामलीला का प्रसंग प्रस्तुत कराया है। कहते हैं प्राचीन काल में लीलाएं होती थीं। उनका अब फिर से प्रचलन होना चाहिए। कल राम-जन्म होगा।'

सुनकर तुलसी की सच्ची ललक सहसा जागी। उत्सुकता भरे आत्मलीन स्वर में पूछा— राम जन्म होगा ?"

अरे आगरे वाले राजा टोडरमल हैं न उनके बेटे राजा गोवर्धनधारी आज-कल नगर में आए हुए हैं सो उनको दिखलाने के लिए यह स्वांग हो रहा है।

कैलास जी की इस बात से जराम साहु के मुख पर खिन्नता चढ़ी, बोले— कवि जी आप तो जिसके विरुद्ध हो जाते हैं उसमें फिर किसी अच्छाई को देख ही नहीं पाते। (तुलसी की ओर देखकर) महाराज जी, गुण-दोष पर हमारी नजर जब तक कांटा-तोल न सधे तब तक क्या हम सच को परख सकते हैं ?'

वाह वाह यह खरी वैश्य बुद्धि की बात है। कांटे-तोल बात आप ही कर सकते थे। मैं स्वयं अपने भीतर इस समदृष्टि को पाने के लिए तड़प रहा हूं। कल किस समय होगा राम जन्म ?'

स्नेह से अपने मित्र की ओर देखकर हंसकर कैलासनाथ ने कहा— तुम्हारे अन्तर में तो प्रतिक्षण हो ही रहा है। उस दिव्य छवि की झांकी मैं तुम्हारे नेत्रों में पा रहा हूं किन्तु मेघा भगत

मेरे अंध भक्त छोड़कर बात कर भाई। तुलसी ने प्यार से झिड़कते हुए

कहा— जैराम जी ठीक कहते हैं। तुम अब भक्की हो गए हो कलास।"

कलासनाथ ने मौन होकर सिर झुका लिया पल दो पल के बाद ठण्डे स्वर मे कहा— भक्की क्या अब मैं अपनी पराई सारी लोक-लीला से ऊपर उठा हू बधु। जो तुमको अपने बीच म न पाता तो सच कहता हू कि मैं अब तक गगा म कूदकर अपने प्राण द चुका होता। एक बडे मनसबदार आ रहे हैं तो मघा भाई लीला दिखला रहे हैं। वाहरी भक्ति ढोंग की रजाई ओढ "

तुलसी हल्के हल्के चिढ गए कहा—' बस बहुत वक लिए भाई, अब तुम्हारी यह भक मुझे चिढाती है।

कलास कवि अपने स्वर को यथासाध्य शात बनाकर बोले—"देखो तुलसी, तुम हमारे बहुत पुराने साथी हो। यही मेघा भगत जी हमारे तुम्हारे साथ का कारण बने। उनके प्रति मेरी श्रद्धा तुमसे छिपी नही है। पिछले बीस बाईस वर्षों मे मैंने तुम्हें भी देखा है और उन्हे भी। कहो, हा।"

तुलसीदास ने हा तो न कहा किन्तु गम्भीर भाव से हा सूचक सिर हिलाया। कैलास जी बोले— भगत जी की भक्ति भावना तुमसे पहले चमकी। तुम्हारी चमक के बढते चरण मैंने आरभ के दिना म भी देखे और अब यह विकसित रूप भी देख रहा हू कहो हा।''

तुलसीदास गम्भीर रह किन्तु मुस्कराहट की एक रेखा उनके होठो पर खिच ही गई। आखो में विनाद की चमक भी आई कहा—' हा।"

इत्ते वर्षों मे हमारे परमपूज्य मेघा भगत जी कोल्हू के बल की तरह राजे, रजवाडे सेठ साहूकार इन्ही के घेरे मे नाच रहे हैं और तुम गली-गली बावले की तरह डोल डोलकर सबके अन्दर नतिकता की आधी उठा रहे हो। उठा रहे हो कि नही ?

'हा।

क्यो ?"

' मैं व्यक्ति की भीतर वाली सगुण निगुण खण्डित आस्था को दशरथनन्दन राम की भक्ति से जोडकर फिर खडा कर देना चाहता हू। मैं अकेले नहीं, पूरे समाज के साथ राममय होना चाहता हू। मेघा भाई का भी उद्देश्य यही है पर माग दूसरा है।'

जैराम साहु और कलास दोनो ही तन्मय होकर तुलसीदास की बातें सुन रहे थे उनके स्वर के उतार चढाव उनकी शान्त गम्भीर उत्तेजना के बहाव को देख रहे थे। बात समाप्त होने पर कलास तुलसी के पर छूने के लिए आगे बढे।

हैं है ये क्या करते हो जी ?' थे उत्तर म तुलसी के हाथो से अपना हाथ छुडाकर पर छूने का हठ ठानते हुए श्रद्धा विगलित स्वर म कहा— तुम हमारे मित्र भले हो पर तुम सचमुच महान आत्मा हो। तुम्हारी कथनी और करनी म भेद नहीं है। यह सबसे बडी बात है। भगत जी बैठे-बैठे तो जीवमात्र को अपने कलेजे का बूद-बूद भाव अर्पित कर देंगे पर कहो कि उठकर जाए तो नही। तुम्हारी तरह गली-गली डोलना उन्हें एक अप्रतिष्ठित काय लगता है। अपनी बात कहते-कहते उत्तेजनावश कलास जी तुलसी के पर छूने का स्वय अपना ही

आग्रह बिसार कर सीधे खडे हो गए। उनकी बाहें छोडकर तुलसी ने मुस्कराकर कहा—'देखो कैलास मनुष्य अपनी सामर्थ्य के अनुसार ही आगे बढता है। फिर हरएक की प्रकृति म थोडा-बहुत अन्तर भी होता ही है। तुम कवि हो बेलाग बात कहना तुम्हारी प्रकृति मे है। किन्तु तुम्हें यह भी देखना चाहिए कि आलोच्य व्यक्ति अपनी सामर्थ्य भर सत्य को अपने जीवन में निभा रहा है या नहीं। यदि निभा रहा है तो उसके सत्य को देखो उसकी सामर्थ्य को नही। और यदि सामर्थ्य की आलोचना करना ही चाहत हो तो रचनात्मक दृष्टि से देखो।"

'खरी आलोचना करने में कबीरदास जी मेरे आदश हैं। जहा भूठ को देखा वहीं खींच के ऐसा भापड मारते थे कि थोथे अहकार की चमडी उतर जाती थी।"

"मैं महात्मा कबीरदास जी को उच्चतम आत्माओं मे से एक मानता हू। उन्होंने पराई बुराइयों की तीव्र आलोचना करके अपने को सवारा। परन्तु मैं अपनी और समाज की खरी आलोचना करके दोनो को एक निष्ठा से बाधकर उठाना चाहता हू। टूटी भोपडियो के बीच मे अकेले महल की कोई शोभा नहीं होती है। वह अपनी सारी भव्यता और कलात्मकता मे क्रूर और गवार लगता है। फिर भी सच्चे सन्तो की बातो को हमे औसत स्तर पर लाकर नही सोचना चाहिए।"

'क्या? न्याय की तुला पर सभी बराबर होते हैं।'

तुम्हें देशकाल का भी ध्यान रखना होगा कलामनाथ। कबीरदास जी ने जिस समय निर्गुण निराकार की वदना की थी उस समय नगर-नगर गाव-गाव मे हमारे मन्दिर तोडे जा रहे थे लोक समाज की आस्था तोडी जा रही थी। कबीर ने रामरूपी आस्था का निर्गुण बखानकर लोक मानस को पोढा बनाए रखा। यह क्या छोटी बात है। मैं कबीरदास जी का बडा आदर करता हू।"

लेकिन उनके चेलो के पीछे तो लट्ठ लेकर डोलते हो।" कैलास ने मुस्करा कर कहा।

'हा आज के वातावरण मे उनके गालबजाऊ समरसता के पाखण्ड पर मैं अवश्य प्रहार करूगा। यह लोग टूटे हुए समाज की पीडा को नही पहचानते। पेड से गिरे दम तोडते हुए प्राणी को यह क्रूर दो लातें और मारते हैं।"

'तब मेघा भगत पर यदि मैं वही आक्षेप करता हू तो तुम चिढते क्यो हो?"

बुरा इसलिए लगता है कि तुम मेघा भाई का गलत मूल्याकन करते हो। उनकी सामर्थ्य की सीमा कुछ छोटी भले ही हो पर वे पूर्ण भावनिष्ठ हैं। खैर छोडो यह प्रसग कीर्तन लीला किस समय होगी?'

उत्तर जराम साहू ने दिया— ब्यालू जीमने के बाद होगी महराज जी। मेरे ही बगीचे मे आयोजन है। राजा गोवर्धनधारी और उनके गुरु पूज्यपाद नारायण भट्ट जी भी आपके इस दास के घर पर जूठन गिराने की कृपा करेंगे। हम लोग आपको लेने के लिए जल्दी चले आएगे। भैया कैलास जी आपको लिवाने इसी समय चले आएगे। कहीं चले न जाइएगा। आपको अपना बगीची म देखने के बाद फिर चाहे हाकिमो साहूकारों की दुनियादारी में रहू तो भी मन म सब हरा भरा रहेगा।'

जैराम साहु की बात ने तुलसीदास के मन को कही गहरे मे स्पर्श किया, बोले—'जराम जी, अपने प्रति आपके इस प्रेम भाव से मैं बडा ही आनंदित हुआ हू । राम आपका भला करें ।"

जराम साहु हाथ जोडकर बोले—"महराज जी सच्चा भाव आप ही म देखन को मिलता है । मैं पण्डित कलासनाथ जी की इस बात स सहमत हू । आपके बिना अब मुझे चैन नही आता ।'

सुनकर तुलसीदास सचेत हो गए मन कहने लगा, 'सुन रे तुलसी जब तक तेरे हृदय की बगिया म राम जी ऐसे ही नही रमगे तब तक तुझे अपनी काव्य और कथा आदि बाहरी क्रिया-कलापो मे खरी निश्चिन्तता नही प्राप्त होगी ।' उन्होंने उठकर खडे होते हुए जराम साहु के कधे पर हाथ रखा और बोले— जराम जी आप और कलास इस समय मेरे लिए गुरुवत सिद्ध हुए हैं मैं आप दोना के हृदया म विराजमान ज्योतिस्वरूप सियाराम को प्रणाम करता हू ।"

४०

उसी दिन झुटपुटे बखत मे तुलसीदास अपनी कुटिया के आगे चबूतरे पर आठ-दस आदमिया के बीच मे घिरे बैठे बातें कर रहे थे । इतने म तनिक दूर पर एक आवाज सुनाई दी—'है कोई राम का प्यारा जो इस बरमत्तिया के पातकी को भोजन कराय दे ? मैं तीन दिन से भूखा हू । है कोई राम का प्यारा ?'

किसीकी बात सुनते-सुनते लपककर तुलसीदास उठे और तेजी से उस आवाज की ओर चल पडे ।

'है कोई राम का प्यारा जो इस बरमहत्तिया के पातकी को "

आओ भइया मैं तुम्हें भोजन कराऊगा ।"

थके लडखडाते पैर सूखा पिटा हुआ चेहरा और बुझी हुई आखें फिर से अपने भीतर उमडती हुई विश्वास गगा का बोझ सहसा न उठा पाइ । चाहा हुआ जीवन जब मिल रहा है तब काया मे उसका भार उठाने की मानो शक्ति ही नही बची थी । तुलसीदास की बात सुनकर, उन्हें देखकर वह इतना आह्लादित हुआ कि गिरने गिरने को हुआ । तुलसीदास ने उसे दोनों हाथा से सभाल लिया और कहा—'आओ आओ ।" झोपडी के द्वार तक तुलसी के सहारे चलते हुए वह व्यक्ति रुदन भरे धीमे स्वर म यही दो वाक्य दोहराता चला गया—राम तुम बडे दयालु हो मैं बडा नीच हू । राम तुम बडे दयालु हो । '

चबूतरे पर बठे लोगबाग अचरज स यह तमाशा देख रहे थे । तुलसीदास ने उसे अपनी झोपडी के द्वार पर बठाया और कहा—'यहा बठो मैं पानी ले आऊ, हाथ-मुह धो लो तो रोटी दू ।"

तुलसी भगत भीतर से लोटा भरकर जल लाए उसके हाथ-पर धुलाए । अपने कापते हाथो स, चूकि वह लोटा पकड नही सकता था इसलिए तुलसी ने

स्वय उसके हाथ धोए-पैर धोए कुल्ला कराया, जैसे मा छोटे बच्चे की सेवा करती है फिर लाकर बिठलाया। भीतर गए। रोटी और दूध लाकर उसे दिया। आप ही उस भोजन को उसके सामने रखी। वह खाता रहा और यह सामने बैठकर उसे देखते रहे। चबूतरे पर बैठे प्राय सभी लोग अब इधर ही आकर खडे हो गए थे। तुलसी भगत के इस काम पर कानो-कान कुछ आपसी बातें भी होने लगी थी। एक व्यक्ति के मन की उबलन बाहर निकलने को आतुर हो गई। वह तुलसी भगत के पास आकर बोला— ये कौन जात है महराज ?'

तुलसीदास मुस्कराए कहा— अभी तो यह केवल रामजन है जब खा लेगा तब जात और पाप का कारण पूछूगा।'

पेट म कुछ पड चुका था। मन मे सताप छाने लगा था। अपराधी के हाथ भी अब काप नही रहे थे, वे सध गए थे। खाते-खाते रुककर उस ब्रह्महत्यारे ने कहा— मैं रदास जो की बिरादरी का हू साहबो।

'और ब्रह्महत्या करके फिर ब्राह्मण से ही सेवा लेता है ?"

तुलसी ने दोनो हाथ उठाकर कहने वाले को शात किया कहा— 'भूख और निराशा की ऐसी स्थिति म तुम जरा अपनी कल्पना करके देखो सुखदीन। जाति पाति, वर्ण वर्ग आदि सब कुछ अपनी जगह पर ठीक है पर एक जगह मनुष्य केवल मनुष्य होता है। घट घट म एक ही राम रमते है। अभी सब जने चुप रहो। चबूतरे पर चलकर बैठो। यह पहले सतोष से खा पी ले तो इसके पाप का कारण पूछेंगे।' सो चुप तो हो गए किन्तु हर एक को यह बात थोडी या बहुत अखरी अवश्य थी। तुलसी भगत ने एक ब्रह्महत्यारे चमार को अपने कटोरे म भोजन परोसा, उसके पैर धुलाए यह धर्म और समाज के विरुद्ध काम किया। इसके बाद लोग सम्भवत चले भी जाते किन्तु अपने मन की घृणा के बावजूद हरएक व्यक्ति अपराधी के अपराध की कथा सुनने को भी उत्सुक था इसलिए सब लोग चबूतरे पर बैठ गए। आपस मे धीरे धीरे बतियाने लगे— यह अच्छी बात नही हुई। भूखा भले ही हो पर है तो आखिर ब्रह्महत्यारा ही।'

'और फिर ब्राह्मण ही पग धोवे।'

और ब्राह्मणो म भी इनके जैसा भगत महात्मा। साला हौसला पा जाएगा तो दो चार ब्राह्मणो की हत्या और कर आवेगा।

"ठीक कहते हो अरे हमारे ऋषि मुनि जो धरम नियम बनाय गए वह कोई गलत थोडे ही हैं। बरमहत्या का पातक जब तक ऐसे डाल खोलकर न मरे तब तलक उसका परासचित पूरा नही हुइ सकत है।

आगे आगे तुलसी भगत और पीछे-पीछे वह ब्रह्महत्यारा चबूतरे की तरफ आते दिखलाई दिए। सब लोग चुप हो गए। चबूतरे पर चढकर तुलसीदास न उसे नीचे ही खडे रहने का आदेश दिया और कहा—' अब तुम हम सबको अपने अपराध का कारण बताओ।' कहकर तुलसी बैठ गए।

हत्यारा हाथ जोडकर कुछ कहने से पहले रो पडा बोला— क्या कहै पचो आप समझो कि दवत है तो चिउटी भी काट लेत है। हमारे गाव म नारायन महराज रहे। ब्याज-बट्टा भी करते रहे। तौ महराज हम बिपता म उनके रिनिया

भए। ई हमारी जवानी की बात है। तो उन्ह जसे हमारी घर वाली पर हवस मिल गया। हम चुपाए रह पचौ, सबल से निबल कैसे बोले ? फिर हमरी बिटवा बडी भई। उहौ पर हवस जमाव का जतन किहिन, तब का करै पचौ। हमको करोध आय गया। करोध मे हमरी उगलिया तनिक सक्त पड गइ। उनका गला दब गया। हम बडे दुखी हैं महराज।" कहकर वह फिर रोने लगा।

तुलसीदास बोले—'वह जन्म से ब्राह्मण होते हुए भी कर्म से अधम था। तुम्हारी जगह और भी कोई व्यक्ति होता तो वह आवेश म ऐसा काम कर सकता था। खैर अब तुम जाओ कहीं दूर देश निकल जाओ। समझ लो कि तुम नया जन्म पा रहे हो। राम राम जपो, मेहनत मजूरी करो और जीवन म जो खोया है उसे फिर स पा लो।"

उसके जाने के बाद एक व्यक्ति ने कहा— उस बरामण का पाप तो बहुत बडा था भगत जी पर बरमहत्या तो उससे भी बडा पाप है।"

'मर्यादा पुरुषोत्तम रामभद्र ने भी ब्राह्मण रावण को मारा था। असुरधर्मी अपना वर्ण खो देता है। पापी सदा दण्ड के योग्य है।'

सवेरे घाट पर यह चर्चा फलते फैलते दिन चढ़ तक प्राय नगर भर म फल गई। क्या छोटे क्या बडे सभी इसीकी चर्चा कर रह थे। काशी की जनता म तुलसीदास के इस काम के आलोचक अधिक निकले प्रशसक कम। उडते-उडते दोपहर तक तुलसीदास को भी यह समाचार मिल गया कि काशी के महान तान्त्रिक बटेश्वर मिश्र तुलसीदास को दण्ड देने के लिए कोई योजना बना रहे हैं।

टोडर ने भी यह सूचना पाई और सब काम छोडकर तुलसीदास के पास आए। उन्होंने कहा—'महात्मा जी मैं और मेरी सारी बिरादरी आपकी सेवा म हाजिर है। हमारे रहते काशी म कोई आपका बाल भी बाका नहीं कर सकता।

तुलसीदास मुस्कराए कहा—'अरे भाई तान्त्रिक तो मूठ मारेगा। तुम लोग मुझे उससे कैसे बचाओगे ?"

अरे मैं उसी का सफाया कर डालूगा। ऐसे नीच को मारने से मुझे ब्रह्म हत्या का पाप भी नहीं लगेगा।"

तुलसीदास खिलखिलाकर हस पडे, कहा— कौन ब्राह्मण तुम्हारे पक्ष म व्यवस्था देगा ?'

कोई न दे। राम जी की दृष्टि म मैं निष्पाप रहूगा, यह जानता हू। मैं आज ही बटेसुर महराज के यहा कहला दूगा कि '

नहीं बटेश्वर मेरे गुरु भाई हैं। खैर, छोडो इस प्रसग को। गगाराम कब आ रहे हैं ?

जोतसी जी आज ही कल मे आने वाले थे यहा से लौटते समय मैं उनके घर जाकर पता लगा लूगा।

कवि कैलास ने उसी समय आंधी के झोंके की तरह प्रवेश किया और बडे आवेश म कहने लगे— वह वैशाखनन्दन बटेश्वर तुम्हारे विरुद्ध जनमत को सगठित कर रहा है। वह तुम्हे यहा से निकलवाने के सपने देख रहा है। मैं अभी अभी उसके घर जाकर चलती गली मे सबके सामने उसे चुनौती दे आया हू।

मूर्ख कहीं का दम्भी !' उत्तेजनावश कैलास जी कांपने लगे।

तुलसीदास ने उनका हाथ पकड़कर बैठाया। उन्हें शांत होने को कहा, बोले— तुम तो जानते ही हो कैलास कि बटेश्वर मेरे अग्रज गुरु भाई हैं। मेरे प्रति उनका रोष पुराना है। यह भी तुम जानते ही हो।"

'मैं सब जानता हूं और वह भी जानेगा कि किसी कड़े से पाला पड़ा है। आज सबेरे जब भगत जी के यहां बटेश्वर की यह खबर आई तभी से मैं क्रोध में उबल रहा हूं।"

टोडर बोले — पण्डित जी मेरी भी सचमुच यही दशा है। यदि उन्होंने पण्डितों की पचायत करके नगर की कुछ बिरादरियों के जोर पर महात्मा जी को यहां से निकलवाया तो नगर में हत्याकांड मच जाएगा। बहुत-सी छोटी बड़ी जातियों के चौधरी मेरे भी साथ होंगे।'

कैलास फिर उत्तेजित हो गए, बोले—"मैं उसके मुह पर कह आया हूं, टोडर जी कि तू अपने बाप-दादा के सात पीढ़ियों के पोथी पत्रे निकालकर हमें और हमारे तुलसीदास को मारने का उपाय सोच ले। हे वैशम्पायनदन, कवि की भविष्य-वाणी भी याद रखना कि तू जो करेगा वह तेरे ही ऊपर उलटकर पड़ेगा।'

दो उत्तेजित व्यक्तियों के बीच में तुलसीदास अपने आपको संयत रखने के लिए अपने मन में गूंजता राम शब्द सुनते रहे। जब कैलास अपने जी का उबाल निकालकर थमे तब उन्होंने दोनों का सम्बोधित करते हुए कहा— "आप दोनों ही मेरे मित्र और शुभचिन्तक हैं। आप दोनों ही कृपा करके ध्यान से सुनें। बेचारे बटेश्वर स्वयं ही अपने अंत के निकट आ गए हैं। आप उनके विरुद्ध कार्य करके व्यर्थ में अपने आपको कलंकित न करें। आप दोनों ही मित्र मेरे हाथ पर हाथ रखकर यह वचन दें कि इस संबंध में शांत रहेंगे। कुछ न करेंगे।" तुलसी ने अपने दाहिने हाथ का पंजा आगे बढ़ाया। टोडर को अपना मन अनुशासित करते देर न लगी किन्तु कैलासनाथ के चेहरे पर अभी ताप चढ़ ही रहा था। तुलसी की स्नेह दृष्टि से आंखें मिलते ही उन्होंने आंखें झुका लीं और भुन-भुनाते हुए कहा—'तुम्हारी यह भद्रता मुझे अच्छी नहीं लग रही है। पापी और दम्भी को दण्ड मिलना ही चाहिए।'

तुलसी बोले— 'कल तुम जिस मानव-मर्म को सहज भाव से मेरे भीतर पहचान कर सराह सके थे उसी को आज बुरा बतला रहे हो? कवि बड़ा लहरी होता है। अपनी ही समर्थित तरंग को काटते हुए भी उसे देर नहीं लगती।" कहकर तुलसीदास खिलखिलाकर हंस पड़े। उनकी बच्चा जैसी मुक्त हंसी ने गंभीर और क्रुद्ध वातावरण पर वैसा ही प्रभाव डाला जैसे जेठ की धूप से तपी हुई धरती पर आषाढ़ के दौंगड़े का पड़ता है।

टोडर सहज ही हंस पड़े। कैलास के क्रोध ने आंखों में एक बार फिर पलटा लेना चाहा पर तुलसी की स्नेह और विनोद भरी मुद्रा ने उन्हें हल्का कर दिया, स्वयं भी व्यंग्य विनोद साधकर बोले— तुम भी तो कवि हो। तुम क्या कुछ कम लहरी हो।"

"हां, किन्तु मेरी लहरें अब राम समीरण से अधिक संचालित

अब भी वे पूरी तरह से मेरे वश में नहीं आईं। अच्छा छोडो यह प्रसग। यह बताओ कि मेरे इस पाप से मेरा रामलीला देखने का पुण्य तो क्षीण नहीं हो गया ?"

कैलास थोडा अकडकर बोले—'मेरा मेघा भगत और चाहे जो हो पर इस सबध मे वडा शेर निकला। मैं कल तक जितना खिन्न था उतना ही आज उनसे सतुष्ट हू।"

सुनी मन से तुलसी बोले—'मै तुम्हारी आज की इस मन मुद्रा से बडा सतुष्ट हू। किन्तु यह बतलाओ कि नारायण भट्ट और राजा गोवधनधारी जैसे बडे-बडे लोग आ रहे हैं या "

वह भी बतला रहा हू। आज जैसे ही उनके पास यह सूचना आई वैसे ही उन्होंने मुझसे कहा कैलास नारायण भट्ट जी से तुम स्वय जाकर पूछो। तुम स्वानुभव से उन्हें यह बतला सकोगे कि तुलसी कैसा व्यक्ति है। फिर आग उनकी जो हा-ना हो सो मुझे बतलाना।'

टोडर ने उत्सुकतापूवक पूछा—'भट्ट जी महराज क्या बोले ?'

उन्होंने कहा कि सता विरक्तो पर कोई सामाजिक प्रतिबन्ध नहीं लगाया जा सकता। सन्यासी शिखा और सूत्र का त्याग करके भी शूद्र नहीं कहलाता। तुलसीदास आनद से हमारे साथ ही साथ रामलीला देखें। हम कोई आपत्ति नही है।

सुनकर तुलसीदास के मुख पर आनद और सतोष की आभा आ गई। कैलास नाथ अपने उत्साह के शिखर पर चढने लगे बोले— तभी तो मैं सीधा उस वशाम्ब नन्दन के घर सुनाने जा पहुचा।

तुलसी ने तुरन्त ही अपने मित्र के उत्साह की यह दिशा काटी कहा— अब कन्देव के पीछे पड गए हो! घूम फिरकर तुम्हारी मन वहीं की वहीं पहुच रही है।"

कैलास हसकर बोले— 'मैंने आज उसे खूब-खूब तपाया। मैंने कहा तू अपने आपको बड़ा सरदार समझता है। अरे तू तो इमली के चिये बराबर भी नही है। वह उठकर मुझे गालियां देने लगा। (हसी) पर वाह रे मेरे मेघा भगत, जब हमने उनसे प्रश्न किया कि मान लीजिए नारायण भट्ट ने आना अस्वीकार किया तो क्या आप रामलीला नहीं दिखाएंगे ? वे बोले—मैं और मेरा रामबोला देखेगा। तुम लोग तो साथ रहोगे ही! रामलीला के प्रेमियो की कमी नहीं रहेगी।'

तुलसी बोले— कैलास नारायण भट्ट जी का सन्देश तुमने अभी तक मेघा भाई को पहुचाया है अथवा कोरमकोर नरगदनाथ को इमली का चिया बना करके ही चले आए हो ?

'अब जाऊगा वहा तुम्हारे यहा आए बिना मुझे चैन थोडे ही पड सकता था। चलो साथ ही साथ चलें। नराम साव के रथ की बाट देखना बेकार है। बाहर हमारे टोडर जी का रथ तो खडा ही हुआ है।'

टोडर बोले—"हा हा, हम महात्मा जी तथा आपको भदनी छोड आएगे।

सब लोग उठ पड़े। कुटिया से बाहर निकलकर कैलास ने उत्साह से टोडर की बाह पकडकर प्रेम से दबाई और कहा— देखो राम जी की लीला, जो देख

के सम्राट हैं उनका दीवान भी टोडर है और जो हृदय के सम्राट हैं उनके दीवान का नाम भी ..."

"टोडर ही है।" टोडर ने स्वयं ही कहा, और खिलखिलाकर हंस पड़े। बूटी का टट्टर बन्द करते हुए तुलसीदास भी हंसी के इस वातावरण में घुले बिना रह न पाए।

४१

दोपहर ढलते ही भदैनी स्थित जराम साहु की बगीची के सामने रथों और पालकियों का आगमन आरंभ हो गया। नगर के चुने हुए चालीस पचास सेठ महाजन हाकिम अमले और सुकवि-पण्डित समाज के लोग वहां पर आमंत्रित थे। नौकरों चाकरों की सेना आमंत्रित अतिथियों की संख्या से लगभग ढाई गुनी अधिक थी। द्वार पर केले के खम्भों से बनाए गए कलात्मक तोरण और भीतर की सजावट आदि देखते ही बनती थी। चुनार के पत्थर की बनी हुई कलात्मक बारहदरी में मखमली तोशक-तकिये गलीचे बिछे थे। सजावट और धूपगंध से महकते हुए इस स्थान में मेघा भगत का आसन सबसे अलग लगा था। तुलसी को उन्होंने अपने पास ही बिठला रखा था। नगर के सम्भ्रांत नागरिक आते, मेघा भगत को प्रणाम करते और फिर अपनी जगह पर बैठ जाते। बड़ों ने मेघा भगत के साथ तुलसी दास को भी प्रणाम किया, कई उन्हें बिना पहचाने ही निकल गए। अपनी अपनी जगहों पर बैठकर उनमें तुलसी के संबंध की ताजा चर्चा ही स्वाभाविक रूप से चल पड़ी। कुछ लोग आपस में कुछ बात पकाकर मेघा भगत के पास आए और बड़ी विनय से कहा— भगत जी, हमारा यही भाग्य है कि आप दो-दो महात्माओं के दर्शन एक साथ पा रहे हैं। हम तुलसीदास जी से कुछ बातें करना चाहते हैं।'

मेघा भगत बोले— आज के बाद भी काशी में तुलसीदास तथा आप लोग रहेंगे। जब चाहे तब मिल सकते हैं। आज भरत को राम के पास ही रहने दीजिए।"

एक तगड़े से पण्डित युवक ने, जिसकी सम्पन्नता का परिचय उसके गले में पड़ी सोने की अठलड़ी जंजीर, बाहों का जोशन और हाथ की नगीने जड़ी अंगूठियां करा रही थीं बोला— तो इसका तात्पर्य यह भया कि आप अपने को राम का अवतार मानते हैं ?'

मेघा भगत शांत रहे मुस्कराकर कहा— मैंने उपमा दी थी। वैसे राम तो मुझे आप में भी दिखलाई देते हैं।

वह युवक फिर बोला— हमें आपके भरत जी से उस ब्रह्महत्यारे की चकल्लस नहीं करनी है। हम तो यों ही थोड़ा-बहुत परिचय बढ़ाना है। सुना है प्रातःस्मरणीय आचार्यपाद शेष सनातन जी महाराज के शिष्य हैं और अब

महात्मा के रूप मे निवास करने के लिए यहा आए हैं तो आलाप-सलाप करके अपना परिचय बढ़ाना चाहते हैं।'

मेघा भगत की ओर देखकर तुलसी ने कुछ कहना चाहा किन्तु भगत जी पहले ही बोल पड़े—"आज के दिन वाद विवाद नही होगा। अभी थोडी देर मे भट्ट जी राजा टोडरमल के साथ आएगे।'

'वह टोडरमल नही टाडरमल जी के पुत्र हैं महात्मा जी।"

"पुत्र ही सही उनके आने पर यहा सरस काव्य सुनिए-सुनाइएगा, फिर रामलीला देखिएगा।'

युवा पडित-मडली निराश हुई। वे लोग अपनी जगह पर लौट गए। पर मन नहीं मान रहा था। मेघा के पास बैठे तुलसी को वे उसी तरह ललचाई दृष्टि से देख रहे थे जैसे बिल्ली कबूतर को ताकती है। तुलसी को देखकर उनके मन में पिछले बहुत दिनों से काफी रोष और उपेक्षा का भाव भरा था। कुछ ही दिनो में यह अनजाना व्यक्ति आकर काशी की जनता के हिये का हार बन गया है अच्छे अच्छे संस्कृतज्ञो मे भी कई लोग उसे श्रेष्ठ कवि मानते हैं। सम्पन्न घरो के युवा कवि पडित इस नये नामवर कवि से दो-दो चोचें लडाने के लिए मचल रहे थे। एक ने कहा—'अरे अब तो रहा नही जाता। उसको मेघा भगत के पास से हटाकर यहा लाना ही चाहिए। कुछ मजा लेना चाहिए। फिर तो बडे लोग जहा आए तहा मजा गया सरवा।'

एक दुबला-पतला चालाक सा युवक बोला— अच्छा ठहरो। मैं लेके आता हू।

वह युवक फुर्ती से उठकर फिर मेघा भगत के पास गया और हाथ जोड़कर बोला— महात्मा जी हमारी महात्मा तुलसीदास से वार्तालाप करने की तीव्र इच्छा है यदि आप हमारी इस सदेच्छा को फलीभूत न होने देंगे तो हम लोग फिर भोजन नही करेंगे महाप्रभु।

मेघा ने तुलसी को देखा तुलसी मुस्कराकर बोले—'आज्ञा प्रदान करें। ब्राह्मणों को भूखा रखना उचित नहीं।'

जभी तुम्हारी इच्छा। शांति रखना।" मेघा भगत से स्वीकृति पाते ही तुलसीदास उठकर वहा आ गए जहा युवक मण्डली बैठी थी। इन्हें इधर आया देखकर बैठे हुए प्रौढ़ वृद्ध भद्रजन भी आस-पास खिसक आए।

एक ने कहा— 'महाराज इन दिनो आपका बड़ा यश फैला हुआ है। नाम तो नित्य ही सुनते थे आज दर्शन का सौभाग्य भी मिल गया।'

तुलसी सविनय बोले—'भाई यश राम जी का है मैं तो उनका एक अकिंचन सेवकमात्र हू।'

युवकों में से एक ने चहकाने वाला अन्दाज साधकर दबे विनोद और ऊपरी गम्भीरता के स्वर में कहा— सेवक तो आप अवश्य हैं। हमने सुना है कि आपने किसी अलखनिरंजनवादी साधु को उसकी राम के प्रति अवज्ञा के कारण लट्ठ मारा था।"

तुलसी हंसे कहा— मेरे पास राम नाम की लाठी है उसीसे मारा होगा।"

'हां-हां, जब जड चेतन सभी मे राम हैं तब लट्ठ म भी हैं।'

"आपके इस व्यंग्य म भी राम ही बोल रहे हैं।"

"कसे ?"

"मूढ म जैसे चेतना बोलती है और मूढ उसे सुनकर भी नही सुन पाता।" तुलसीदास का मीठे व्यंग्य भरा प्रत्युत्तर सुनकर वह युवक चुप हो गया। किन्तु एक और व्यक्ति तुरन्त ही बोल पडा—"हां महराज, आप की बात खरी है। युग का प्रभाव दखिए लोग मुर्दों की सडी-गली हड्डिया को पूजने लग हैं पर आपकी दृष्टि से देखा जाए तो वह भी राम ही का एक रूप है।'

'राम तो रावण म भी कही उसकी अतश्चेतना बनकर विराजमान थे। मूढ ने उसे न सुना और अपनी हाड-मांस की काया का रव ही सुनता रहा। इसीलिए वैसा अत पाया।

एक छोटे-मोटे हाकिम एक प्रौढ व्यक्ति आगे बढकर त्यौरियो पर बल डालत हुए बोले— तब तो महराज इन रूपो के झगडे से तो अपने कबीरदास जी का सिद्धात ही क्या बुरा है ? साकार के इतने भेद हैं कि हम लोगो के लिए भूल भुलया सी बन गई है। किस रूप म राम है किस रूप म नहीं है किस रूप म कहा राम छिप हैं—भला बतलाइए इन सब बातो को सोचते रह तो अपनी रोजी रोटी किस समय कमाए ?"

एक उद्धत ब्राह्मण युवक ठठाकर हस पडा बोला— हुलासराय जी ये इनसे न पूछिए बेपढी लिखी गवार भीड ही इनके जैसो को और कबीरदास जसे सधुक्कडो को अपनी ठगहरी विद्या का चमत्कार दिखलाने के लिए मिलती है। ये कबीरदास को मान लेंगे तो इनका धधा कसे चलेगा। ह-ह-ह।" उसके साथ ही साथ सारी युवक मण्डली हस पडी।

तुलसीदास अन्दर से तपे तो अवश्य किन्तु क्षणमात्र मे अपने को अनुशासित कर लिया। लोक व्यवहार म इधर उधर खा जानेवाला राम शब्द उनकी छाती म बीचोबीच ऐसे आकर जड गया जसे अगूठी म नगीना। वे भी युवको के साथ ही खुलकर हस पड, कहा— ये आपने धधे वाली बात अच्छी कही। आजकल धम के पास राज तो है नही, इसलिए बचारा छोट मोटे धधे करके ही जी पा रहा है। आप लोग सभी धम के धधेदार हैं मुझसे बढकर रहस्य जानते हैं। हम और कबीरदास जी महाराज तो राम जी की दुकान क चाकर हैं। पहल जमाने मे आस्था से नगी अपनी प्रजा को कपडे पहनाने के लिए श्रीराम ने कबीरदास जी को भेजा। अब कपडा के साथ जेवर-गहने पहनन के दिन भी आ गए है, तो राम जी की दुकान म हमारे मघा भगत जसी विभूतिया भी चाकरी बजा रही है।'

हाकिम हुलासराय जी बोले— ये आपकी वस्त्र और गहने वाली बात हमार समझ म नही आई। महराज, तनिक फिर से समझाने की कृपा करें।'

तुलसीदास बोले— देश काल के अनुरूप ही धम-बोध ढलता है। कबीर साहब ने जिस समय निगुण राम का प्रचार किया उस समय कैसा घोर अत्याचार हो रहा था। सारी मूर्तिया और मन्दिर ध्वस्त कर दिए गए थे। अब

बायर बनार विजेताओं के तलवे चाटने लगा था। और निधन दीन-दुखी जन समाज बरबस हाहाकार कर उठा था। आस्था के ऐसे गहन शून्य भरे भारत रूपी महल के खण्डहर में कबीरदास यदि निर्गुनिया राम का दिया न बारते तो आज उसमें भूत ही भूत समा चुके होते।'

'तब आप गली गली में उनका तीव्र विरोध और सगुण का अंध प्रचार क्यों करते हैं?' एक बुद्धिवन्त और सौम्य लगने वाले युवक ने पूरी शिष्टता से अपना तीखापन मिलाकर पूछा।

'मैं निर्गुण का विरोध कभी नहीं करता। सगुण निर्गुण दोनों एक ही ब्रह्म के स्वरूप हैं। वे अकथ, अगाध, अनादि और अनूप हैं। मैं तो केवल उन लोगों का विरोध करता हूं जो कबीर साहब के वचनों की आड़ लेकर समाज की धार्मिक आस्थाओं के निकम्मे आलोचक हैं। कबीर साहब को राम धाम-लाभ हुए सौ डेढ़ सौ वर्ष बीत गए किन्तु तब से लेकर अब तक वे और उनके पथगामी तीव्र प्रहार करके भी जन-जन के हृदयमन्दिर से रावणहन्ता रामभद्र की मूर्ति भंजित नहीं कर पाए। त्रस्त जनमानस के अडिग आधार-सी उस सगुण भक्ति पर निकम्मे प्रहार करके बेचारी जनता को सताते हैं, मरे हुओं को मारते हैं। ऐसे निकम्मे आलोचक लोग देश समाज के शत्रु होते हैं। मैं इसका विरोध करता हूं।'

'आप कृष्ण जी के भी तो विरोधी हैं?'

'मैंने कृष्ण प्रेम में गीत गाए हैं। राम श्याम में भेद नहीं है। पर इस समय मुझे उनका मुरलीधर गोपीरमण रूप नहीं लुभाता। मैं उन्हें धनुधारी असुर संहारक और रामराज्य प्रतिष्ठापक के रूप में निहारना चाहता हूं।"

एक युवक ने बात का रंग बदलते हुए पूछा—"हमने सुना है महराज कि विद्यार्थी काल में पण्डित बटेश्वर जी मिश्र से आपका कोई झगड़ा हुआ था?"

'हमसे उनका कोई झगड़ा कभी नहीं हुआ। हमारे हनुमान जी से उनके भूत अवश्य डरकर भाग खड़े हुए थे।' तुलसीदास के कहने के विनोदी ढंग से कुछ और लोग भी हंस पड़े।

युवक ने फिर कहा—"वह आपके ऊपर कोई मारण प्रयोग कर सकते हैं। महान तान्त्रिक हैं।"

'मारने और जिलाने वाले तो राम हैं। फिर यह सब बातें निरर्थक हैं।'

फिर उसी युवक ने प्रश्न किया—'अच्छा इसे छोड़िए, हमने सुना है कि इन्हीं मेघा भगत के दरबार में आपकी और यहां की किसी वेश्या की गायन कला में होड़ लगी थी?'

तुलसीदास का चेहरा लज्जा और क्रोध से लाल हो गया, परन्तु अपने को संयत रखकर व मुस्कराते हुए बोले—'हां, मेरे भीतर कला प्रदर्शन की होड़ जागी थी।'

'फिर कुछ इश्क मुहब्बत की कलाबाजियां भी बाई जी के साथ लगाई थीं आपने?" युवकों में से कई निर्लज्जतापूर्वक हंसे।

हुलासराय ने तुरन्त टोका—'आप लोगों को एक महात्मा से ऐसे भद्दे सवाल

नहीं करने चाहिए।"

एक युवक बोला—'इसमें भद्दा कुछ नहीं है। हमारी सहज जिज्ञासा है। महात्मा जी क्या बतला सकते हैं कि वह मोहिनीबाई अब कहां रहती है?'

तुलसी के मन में वर्षों पहले की अंकित मोहिनी की छवि उभर उठी। परन्तु यह छवि उनके लिए इस समय मोहक न थी वरन अपमान की आशंकाएं उभारने वाली बन गई थी। फिर भी तुलसीदास ने अपने मन को संयत रखा। भय और क्रोध को दबाकर स्थिर स्वर में कहा—'नहीं।"

'मिलेंगे उससे? मैं मिला सकता हूं।"

इस प्रश्न के साथ हर युवक के चेहरे पर हिंसात्मक आनन्द की चमक आ गई। तुलसीदास ने चतुर कनखियों से हर चेहरा भाप लिया। चट से मुस्कराकर प्रश्न का उत्तर बड़ी दीनतापूर्वक दिया—'मिला सकें तो मुझे राम से मिला दें।'

राम से तो वह राम का प्यारा ब्रह्मघातकी चमार ही मिला सकता है। सुना है आपने उस ब्रह्महत्यारे के पैर भी धुलाए थे?"

'हां दीन-दुर्बल और रोगी की सेवा करना मैं राम की सेवा करना ही मानता हूं।'

सुना है आप जाति पांति नहीं मानते?"

मानता हूं और नहीं भी मानता।

'कैसे?

'वर्णाश्रम धर्म को मानता हूं परन्तु प्रेम धर्म को वर्णाश्रम से भी ऊपर मानता हूं।'

युवक मण्डली तुलसी की हाजिर जवाबी से अब चिढ़ उठी थी। उनमें से एक तीसरा पड़ा बोला— आप क्या अवधूत हैं?'

दूसरा बोला— अजी अवधूत वौधूत कुछ भी नहीं। विशुद्ध पाखण्डी हैं ये। जो एक नीच-हत्यारे के पैर धोए, उसे भोजन कराए, वह ब्राह्मण भी कदापि नहीं हो सकता।'

तो इनको ब्राह्मण कहता ही कौन है। यह किसी ब्राह्मणी कुलटा के गर्भ से उत्पन्न राजपूत हैं।

तुलसी भीतर ही भीतर उबलने लगे किन्तु चुप रहे। राम शब्द उनका सहारा था।

दूसरे युवक ने तीसरे युवक की जांघ में चिकोटी काटकर आंख मारी फिर वह बोला— भई राजपूत वाजपूत की तो हम नहीं जानते पर सुना है कि ये कबीरदास की कौम के हैं।

तुलसीदास उठ खड़े हुए। मन हाथ से छूट चला। उनका चेहरा क्रोध से तमतमा उठा था वे बोले—'धूत अवधूत, रजपूत जुलाहा जो जिसके मन में आए जो भरके कहे। मुझे न किसी की बेटी से अपना बेटा ब्याहना है और न किसी की जात ही बिगाड़नी है। तुलसी अपने राम का सरनाम गुलाम है बाकी और जो जिसके मन में आए कहता फिरे। फकीर आदमी भाग के खाना

मस्जिद मे सोना। न लेना एक न देना दो। फिर आप लोगो के प न क्या पड़ ? कहकर वे उठ खडे हुए।

एक युवक तुरत उठा और उनकी राह रोक हाथ जोडकर बोला—'हमम से कुछ लोगा ने नि सदेह आपको अपमानित करने के लिए ही यहा बुलाया था, मैं जानता हू। आपके मत से मेरा विरोध भले ही हो पर मैं आपका सम्मान करता हू। हमारी मूखतापूण और विद्रूप भरी बाता का बुरा न मानें।'

तुलसी शान्त स्वर म बाले—'भैया, बुरा मानकर मेरा कुछ लाभ तो होन से रहा जो मानू। आप लोगा ने मरे बहाने अपना थोडा-सा मनोरजन कर लिया इसलिए अपने आपको धन्य मानता हू।' तुलसीदास तेजी से चल आए और भगत जा के पास आकर शातिपूवक बैठ गए। सम्भ्राता की भीड अब पहल से अधिक जुट चुकी थी। तुलसीदास के उत्तेजित हो जान स सभा म एक प्रकार का सनाका-सा छा गया था और सम्भ्रात समाज का बहुत रुचिकर नही लग रहा था। फिर भी दोपी प्राय युवकों को ही बतलाया गया। सयोग से अधिक समय न बीत पाया था और जयराम साहु तथा काशी के दो चार बडे बडे धनी धारियों के साथ महान पण्डित नारायण भट्ट और उनके महामहिम शिष्य राजा गोवधनधारी दास टण्डन बारहदरी म पधार। सभा म बडी रौनक आ गई।

भोजनोपरान्त सभा फिर जुटी। कुछ कविया ने अपनी सस्कृत भाषा की कविताए सुनाइ। मेघा भगत ने किसी दूसरे कवि का नाम लिए जाने स पूव ही नारायण भट्ट जी को सम्बोधित करते हुए कहा— आचाय प्रवर हमार अनुज सम प्रिय रामभक्त तुलसीदास की कविता अब सुनने की कृपा करें। आज हमारी रामलीला का प्रथम प्रदशन भी श्रीराम जन्म प्रसग का लेकर ही आरभ हो रहा है। तुलसीदास कृपा करके सभा को अपनी कोई रम्य रचना सुनाए।'

नारायण भट्ट जसे उद्भट और परम प्रतिष्ठित विद्वान के लिए काशी के कवि समाज म एक नया चेहरा कोई विशेष आकपण नही रखता था। किन्तु तुलसी के स्वर और काव्य प्रतिभा न उन्हें क्रमश अपनी ओर खीच लिया। तुलसीदास सभा म तन्मय होकर गा रहे थे—

'श्रीरामचन्द्र कृपालु भजमन हरण भव भय दारुणम ॥ "

भजन के समाप्त होने पर सभा कुछ क्षणा तक तुलसी के जादू स बधी हुई मौन बठी रह गई। सामने मच से उसी समय जवनिका हटा दी गई और राम लीला का प्रदशन आरभ हो गया।

लीला प्रदशन के बाद लौटते समय दुष्ट युवक मण्डली म से एक बोला—'भई कुछ भी कहो, सब मिलाकर यह तुलसीदास नाम का प्राणी है चमत्कारी और दमदार भी है।'

'इसीलिए इसे शीघ्र उखाड फेंकना चाहिए।'

"इसकी एक चाभी ता आज हम लोगों को मिल हो गई है जात-पात

पूछने से चिढ़ता है। घर चलो बैठकर इसके मुण्डन संस्कार पर विचार किया जाएगा।" × × ×

४२

गुरु कथा धीरे धीरे बेनीमाधव जी के लिए एक ऐसी प्रेरणा भरी चुनौती बनती जा रही थी जिसका सामना करने में उनका दिल दहलता था। उन्हें अपने लौकिक जीवन में अपने गुरु के समान विकट संघर्ष कभी नहीं झेलना पड़ा था। वे अभी तक काम को ही राम नहीं बना पाए और गुरु जी काम क्रोध-लोभ-मोहादि की शक्तियों को खींचकर कितने मनोयोग से अपनी रामनिष्ठा को प्रबल बना चुके हैं और अधिकाधिक बनाते रहे हैं। यह उनके लिए आश्चर्यजनक तो था ही साथ ही उनका रहा-सहा हौसला भी दिनादिन पस्त होता चला जा रहा था। बेनीमाधव अपने भीतर बराबर लघुता अनुभव करते जा रहे थे। वर्षों पहले जब वे इसी काशी में गुरु-आश्रम के अंतेवासी थे तब भी गुरु जी के व्यक्तित्व के आगे उन्हें अपनी हीनता ने बेहद सताया था। तब गुरु जी ने ही उन्हें सूकरखेत जाकर अपना मुक्त विकास करने की सलाह दी थी। इन दिनों भी उनका एक मन फिर से भाग जाने को होता था। परन्तु दूसरे मन से वे अपनी इस इच्छा को बरजकर पीछे हटते थे।

एक दिन जेठ की लू भरी दुपहरी में अपनी कोठरी में बेनीमाधव जी उदास बैठे थे। आकाश उनके मन के आकाश के समान ही दूर-दूर तक सूना था। कोठरी उनके अंतर की तरह ही तप रही थी। माला जपने में मन नहीं लग रहा था वे अपने आप से उबरना चाहते थे। गर्म हवा के तेज थपेड़ों से कोठरी का पुराना पर्दा फट गया था हवा आ आकर आग की लपटा-सी काया को छू जाती थी। पर्दे के निचले बांस का दाहिना कोना सुतली टूट जाने से दीवाल में जड़े कुण्डे से मुक्त होकर बार-बार उड़कर दीवार से फटाफट लगता था। वह ध्वनि सीधे उनके मस्तिष्क की शिराओं पर ही वार करती थी। बेनीमाधव बाहर भीतर से झुंझलाकर उठे अपनी छोटी-सी कोठरी में दो चार बार तेज चहलकदमी की और फिर लू के झोंके की तरह ही कोठरी से बाहर निकल आए।

बगलवाली कोठरी में पर्दे की झिरी से झांककर देखा, राजा भगत सीधे तने बैठे गोमुखी में हाथ डाले माला जप रहे थे। उनकी आंखें मुंदी हुई थीं। किसी साधक की यह तल्लीनता इस समय बेनीमाधव के लिए शांतिदायक न होकर लघुता चिढ़ और झुंझलाहट उपजाने वाली थी। वे वहां से हट आए। नीचे उतरे, कुएं वाले दालान में रामू दो विद्यार्थियों को पढ़ा रहा था। रामू से वे अब ईर्ष्या नहीं करना चाहते, किन्तु क्या करें हो ही जाती है। राजा भगत तो खैर गुरु जी के सखा हैं ऊंचे साधक हैं किन्तु रामू आयु में उनके पुत्र समान होते हुए भी आत्मसंयम की दृष्टि से उनसे कहीं अधिक बसा हुआ है। वह

की आयु में ही ऐसा तय गया है और वे अब भी मानसिक करोलों से नहीं उबरे। हीनतावश एक ठण्डी साँस उनके बनाने से फटकर निकल गई। भवन के बाहर निकल आए। एक बार जी चाहा कि घाट की ओर निकल जाय और किसी सीढ़ी पर गंगा में गले गले डूबकर बैठ जाय फिर गुरु जी की कोठरी की ओर देखा। टोडर ने कोठरी के आगे छप्पर छा दिया था जो चारों ओर से एक प्रवेश द्वार को छोड़कर बन्द था इसीलिए लू की तपन बाबा की कोठरी में सीधे नहीं पहुँच पाती थी। बनीमाधव उसी ओर चल गए। छप्पर में प्रवेश करने पर देखा कि कोठरी के दोनों द्वार खुले हुए थे और अँधेरे में उनके गुरु जी चौकी पर बैठे अपने घुटने पर थाप देते हुए आँखें मींचे कुछ गुन गुनाते हुए झूम रहे थे। वह शुभ्रवसन-गौरवर्ण की तेजस्वी काया कोठरी के अँधेरे को प्रकाशवान कर रही थी। बनीमाधव बाहर ही ठाहर खड़े खड़े अपने गुरु जी को दर्शन रहे। उनके मन के नाचते बवण्डर बाबा को देखते हुए मानो थम गए थे। मरुस्थल में चलते चलते मानो वे हरियाली के सामने आ गए थे।

बाबा ने सहसा आँखें खोलीं बेनीमाधव को देखा बोले— आओ आओ वत्स बड़े समय से आए। अभी कुछ देर पहले मुझे तुम्हारी याद भी आई थी। तुम आज अपने से बहुत उखड़े हुए हो है न?"

बेनीमाधव जी के मन में एक क्षण के लिए भी झिझक न आई वे बोले— 'हाँ गुरु जी लगता है कि एक यथार्थ को झुठलाया नहीं जा सकता। कहकर बेनीमाधव रुके। उन्होंने सोचा कि शायद गुरु जी प्रश्न करें किन्तु वे मौन बैठे रहे। बेनीमाधव ने आप ही आप फिर बात को आगे बढ़ाया कहने लगे— 'भोजन और कामसुख यह दो अनुभव ऐसे हैं कि जिन्हें मनुष्य क्या प्राणिमात्र बार-बार अनुभव करके भी जनम भर नहीं अघाता। जब यह इतना व्यापक सत्य है तब इसे नकारना क्या उचित है?' अपनी बेझिझकपन से बेनीमाधव स्वयं ही कुछ-कुछ भय स्तंभित होकर भी बड़ा हल्कापन अनुभव कर रहे थे। जो बात गुरु जी के सामने उनके मुख से कभी निकल ही न पाती थी वह आज अकस्मात् फूट पड़ी।

बाबा बोले— मेरा यथार्थ तुम्हारे यथार्थ से भिन्न है। तुम गली में खड़े होकर जहाँ तक देख पा रहे हो मैं छत पर खड़े होकर उससे कहीं अधिक दूर तक देख रहा हूँ। यह कहो कि तुम या तो कायर हो अथवा आलसी।"

बेनीमाधव का माथा फिर झुक गया बोले— मैं दोनों हूँ। मैंने एक मिथ्या मान की चादर में अपना मुँह लपेटकर अपने आप को अंधा भी बना लिया है गुरु जी। मैं महामूरख हूँ।'

बाबा ने स्नेहपूर्वक कहा— यदि यह चेतना तुम्हारे भीतर व्यापक रूप से प्रकट हुई है तो तुमने कुछ नहीं गवाया। मैं जानता हूँ कि तुम आजकल अपने से हार रहे हो, पर मैं नहीं चाहता कि तुम हारो। अपने को उठाओ। तनिक अपने विराट स्वरूप को देखो तो सही! वह अपने आप में ही एक ऐसा अनुभव है जिसे पाकर मनुष्य को और कुछ पाने की चाह नहीं रह जाती।" कुछ क्षण चुप रहकर वे फिर कहने लगे—' मैं जिन दिनों मानस रचना कर रहा था उन

दिनों बराबर इसी उत्साह में रहा करता था कि यदि मैं निष्ठापूर्वक इस महा काव्य को लिख गया तो राम जी मुझे निश्चय ही प्रत्यक्ष दर्शन देंगे। काशी में जब मेरी जाति-पांति को लेकर मिथ्या प्रचार बड़े जोर से चला तो मुझे यह होता था कि अपने आपको सत्ता, कुल अथवा धन के मद में माना किए हुए जो लोग आज मेरी निन्दा में व्यस्त हैं वे यहीं के यहीं रह जाएंगे और मैं राम सान्निध्य पा जाऊंगा। इस विचार ने मुझे कभी भी हीन भाव का अनुभव नहीं होने दिया। हीन भाव जो कुछ था वह केवल अपने राम के सम्मुख था और किसी के आगे नहीं।"

गुरु जी की बातों से वेनीमाधव फिर अपनी पकड़ में आ गए। भोला मन अब फिर से सधने लगा था। बोले—'उस ब्रह्महत्यारे को भोजन कराने के कारण आपको बहुत निन्दा सहनी पड़ी। पहले जब मैं यहां रहता था तब कइयों से सुना था कि आप यह अस्सी घाट का स्थान छोड़कर कहीं गुप्तवास करने लगे थे?"

तुलसी बोले—'यहां से उठकर भदैनी चला गया था।' × × ×

तुलसी के लिए अस्सी घाट पर रहना दूभर हो गया था। उनके विरोधियों के द्वारा भेजे जानेवाले भाड़े के निंदक दिन रात उनकी कोठरी के आसपास मंडराया ही करते थे। निंदक ऐसे मन के हो गए लोग थे कि टोडर के पहलवान और हनुमान अखाड़े के नौजवान ऐसा मौका खोजते ही रह गए जब वे लोग कोई उत्पात या गालीगलौज करें और यह लोग उनकी ठुकम्मस कर पाएं। किन्तु निंदा बड़े भक्तिभाव के आडम्बर के साथ की जाती थी। ब्रह्महत्यारे के चरण पखार कर उसे भोजन कराने की बात ने इतना तूल पकड़ लिया था कि बहुत से भक्त भी तुलसीदास के ब्राह्मण होने में थोड़ा-बहुत सन्देह करने लगे थे।

तुलसीदास ने बड़े धैर्य और संयम से काम लिया पर वे वहां तक एक ही बात को रहट के गड़ुवे की तरह चलाते रहते। उनकी मानस रचना में काम में व्याघात पड़ता था। अरण्यकाण्ड की रचना लगभग पूरी हो चुकी थी। सीताहरण की योजना में रावण कपटमृग का जाल फैला चुका था किन्तु यहीं आकर तुलसी दास की लेखनी स्तम्भित हो गई थी। न लिखने का अवकाश मिलता है न सोचने का। एक दिन वे दुखी हो गए। बड़ी शांति बरतते हुए भी मन की खीझ आखिर उभर ही पड़ी। उन्होंने अपने छद्म निंदकों और प्रशंसकों की भीड़ से कहा—भाई, अब इस प्रश्न का समाप्त कीजिए। समझ लीजिए कि न तो कोई मेरी जाति-पांति है और न मैं किसी की जाति पांति से कोई प्रयोजन ही रखना चाहता हूं। न मैं किसी के काम का हूं और न कोई मेरे काम का है। मेरा लोक-परलोक सब कुछ रघुनाथ जी के हाथ है। उन्हींके नाम का भारी भरोसा है।

बात चल ही रही थी कि एक शहद लिपटी हुई छुरी सा प्रश्न फिर उनके कलेजे के आर पार हुआ। एक व्यक्ति ने हाथ जोड़कर सविनय कहा—अरे महाराज आपकी अटल राम भक्ति पर भला कौन सन्देह कर सकता है? और मैं समझता हूं कि यहां बैठे हुए किसी भी जन के मन में आपके ब्राह्मण होने में भी सन्देह नहीं है। ब्राह्मण आप अवश्य हैं बाकी रहा कुल गोत्र वगैरा सो

निंदा का नई चाल के इस जहर को तुलसी नीलकंठ की तरह पचाने का

प्रयत्न करते-करते भी बिफर ही पड़े, बोले—'अरे आप बड़े नासमझ हैं। इत्ती-सी बात भी नहीं जानते कि गुलाम का गोत्र भी वही होता है जो उसके साहब का गोत्र होता है। पर अब दया करके मेरी भी एक विनय सुन लें मैं साधु होऊं या असाधु भला आदमी होऊं या बुरा आदमी, आपको इसकी चिन्ता क्या सताती है? क्या मैं किसीके द्वार पर जाके पड़ा हूं जो यहां न पधारे फंसाते ही चले जाते हैं। अरे मैं जैसा भी हूं अपने राम का हूं।

उसी दिन शाम को संयोग से कैलासनाथ आ गए। टोडर भी बैठे हुए थे। तुलसी बोले—"कैलासनाथ अब हम यहां से चले जाएंगे।"

"कहां?"

"दो ही जगह मन में आ रही हैं, या अयोध्या जाऊंगा या फिर चित्रकूट। समझ में नहीं आता कहां जाऊं।"

"परन्तु तुम यहां से जाना ही क्यों चाहते हो? क्या नगर के कुत्तों की भौं-भौं से डर गए?"

"डरा तो नहीं पर दुखी अवश्य हो गया हूं। इन निन्दकों और प्रशंसकों की चकल्लस में मेरा जप-तप ध्यान लेखन कार्य सब कुछ चौपट हो रहा है। मन को चैन ही नहीं मिलता तो स्फूर्ति कैसे आए?"

'महात्मा जी आप कहें तो कपिलधारा पर आपके रहने का प्रबन्ध करा दूं?' टोडर ने कहा।

"वहां जाने से भी मुझे कोई लाभ न होगा। आसपास के गांवों की भीड़ आएगी और इन चकल्लसियों को भी पहुंचते देर न लगेगी। फिर तो जैसा अस्सी घाट वैसी ही कपिलधारा।"

"हम कहते हैं कि तुम मेघा भाई के साथ क्यों नहीं रहते? भदैनी में जयराम साव की बगीची में रहो। और निश्चिन्त होकर अपना महाकाव्य रचो। वहां तुम्हें कोई सता नहीं सकेगा।"

कुछ देर तक विचार करने के बाद तुलसी ने कहा—'तुम्हारे इस प्रस्ताव में दम है। मेरा लेखन कार्य वहां शांतिपूर्वक हो सकेगा। तब फिर तुम एक बार भदैनी चले जाओ कैलास, मेघा भाई से सही स्थिति बतलाना और कहना कि कल ब्राह्मवेला में मैं भदैनी पहुंच जाऊंगा। कोई यह जान भी न पाएगा कि तुलसी कहां गया।'

तुलसी के भदैनी आ जाने से मेघा भगत बड़े ही प्रसन्न हुए। ऐसा लगता था कि उनके आगमन की प्रतीक्षा में वे रात भर नींद सो भी नहीं पाए थे। देखते ही बड़े उन्मत्त उल्लास से भगत जी ने उन्हें आलिंगनबद्ध कर लिया, फिर एकाएक फूट फूटकर रो पड़े। उस रुदन में तुलसी को भगत जी के अन्तमन की शांति और आनन्द का अनुभव ही अधिक हुआ। उन्हें लगा जैसे लू भरे मैदान में कोसों चलकर वे ऐसी घनी अमराई में आ गए हों जहां आम के बौरों की गंध से लदी शीतल बयार डोल रही है। आलिंगन में बंधे-बंधे ही वे बोले—'राम जी ने इस बार कठिन परीक्षा ली मेघा भाई परन्तु उन्हींकी कृपा से उबर भी गया।'

धीरे धीरे आलिंगन मुक्त होकर अपने आपको संयत करते-करते मेघा भाई फिर रो पड़े, कहा— अरे अभी तेरी परीक्षाओं का अन्त कहां आया है भैया यही सोच सोचकर तो दुखी हो रहा हूं।"

तुलसी हंसे, बोले—'आपके इस दुख में भी सुख ही झलक रहा है भाई।"

सुनकर रोते रोते ही मेघा हंस पड़े कहा— एक जगह पर अब मुझे दुख सुख में अंतर नहीं दिखलाई पड़ता। वासना, बिंब ध्वनि और उनका बहिर्प्रसार त्रिआयामी है जितना गहन उतना ही विस्तृत और उतना ही उच्च। कहां भेद करूं। पहले तीनों अलग अलग समझ पड़ते थे—अब सब एकाकार हैं।'

तुलसी गंभीर हो गए कुछ क्षणों तक चुप रहकर कहा—'एक राम, एक कवि, एक रामबोला—तुलसीदास—परन्तु राम तुलसी तक आते आते अनेक रूपरूपाय हो जाते हैं। मेरे जप-तप सारे साधन अभी तक आपके समान एकाकार नहीं हो सके। क्या करूं ?" तुलसी के स्वर में उदासी छा गई।

माली सींचे सौ घड़ा ऋतु आए फल होय।" कहकर वे भीतर की ओर बढ़ चले। चौखट पर रुककर तुलसी के कंधे पर हाथ रखकर कहा— धान के फूल जल्दी विकसित हो जाते हैं, चपक देर से खिलता है। इतिहास मघा'को कहां देख पाएगा रे? मेरा तुलसी तो राम बनकर घट घट में रमेगा। ना ना संकोच न करो भैया। अपने यथार्थ को पहचानो। तुम्हारे अहंकार की बहिर्चेतना और तुम्हारा अंतर्कवि दोनों ही राममय बनने की उत्कट लालसा में एक सिरे पर तप रहे हैं और दूसरे सिरे पर तुम्हें अपनाने के हेतु स्वयं राम। तुम्हारे महाकाव्य की रचना के लिए यही अंतर्द्वन्द्व कदाचित आवश्यक है। तपे जाओ मेरे भैया यही तो दुख में सुख है।' × × ×

'एक राम, एक कवि और एक रामबोला।' बेनीमाधव जी अपने भीतर इस गुरु वाक्य को घुनते रहे। असल में उनके राम और काम में ही द्वन्द्व है। उनका कवि और बेनीमाधव दोनों ही चाहते राम को हैं वही तो महिमा की वस्तु है। लेकिन कामेच्छा राह में रोड़े डाल देती है। क्यों? तृप्ति पाई तो है फिर अतृप्ति क्यों? गुरु जी को भी ब्रह्मचर्य धारण करने के बाद कबों तक काम से संघर्ष करना पड़ा है। तब मैं क्यों डरता हूं? गुरु जी ने अपने भक्त और कवि के अंतर्द्वन्द्व का भी सुन्दर निरूपण उस दिन मेरे सामने किया था। अयोध्याकाण्ड की रचना करते समय वे अपनी काव्यकला निपुणता के प्रति जितने निष्ठावान रहे उतने राम भक्ति में लय न रहे। उन्होंने अयोध्या में अपनी रचना के चुराए जानेवाले प्रसंग से या अयोध्या ग्रहण किया था, कथक करनी के अनुभवों से भी उनके लिए नियति से तीनों टकराहटें ही मिलीं। फिर भी व अपने महाकाव्य की रचना में लगन के साथ लगे रहे। वह निष्ठा जो इनके मन को व्यर्थ संघर्ष रत न बनाकर रचनात्मक कार्य में जुटाए रखती है मुझे क्या नहीं मिलती? कैसे पाऊं?' बेनीमाधव का सरल बाल मन चन्द्रखिलौना पाने के लिए मचल रहा था। गुरु जी की बात पूरी हो जाने के बाद वे अपने ही गुंताड़े में तल्लीन हो गए।

प्रयत्न करते-करते भी बिफर ही पड़े होते— अरे आप बड़े नासमझ हैं। इत्ती-सी बात भी नहीं जानते कि गुलाम का गोत्र भी वही होता है जो उसके साहब का गोत्र होता है। पर अब दया करके मेरी भी एक विनय सुन लें, मैं साधु होऊं या असाधु भला आदमी होऊं या बुरा आदमी आपको इसकी चिन्ता क्या सताती है ? क्या मैं किसीके द्वार पर जाके पड़ा हूं जो यह न पधारे फँसाते ही चले जाते हैं। घरे मैं जैसा भी हूं अपने राम का हूं।"

उसी दिन शाम को सयोग से कैलासनाथ आ गए। टोडर भी बैठे हुए थे। तुलसी बोले— कैलासनाथ अब हम यहां से चले जाएंगे।"

कहां ?'

दो ही जगह मन में आ रही हैं या अयोध्या जाऊंगा या फिर चित्रकूट। समझ में नहीं आता कहां जाऊं।'

परन्तु तुम यहां से जाना ही क्या चाहते हो ? क्या नगर के कुत्तों की भौं भौं से डर गए ?"

डरा तो नहीं पर दुखी अवश्य हो गया हूं। इन निन्दकों और प्रशंसकों की चकल्लसों में मेरा जप-तप ध्यान लेखन कार्य सब कुछ चौपट हो रहा है। मन को चैन ही नहीं मिलता तो स्फूर्ति कैसे आए ?

महात्मा जी आप कहें तो कपिलधारा पर आपके रहने का प्रबन्ध करा दूं ?' टोडर ने कहा।

'वहां जाने से भी मुझे कोई लाभ न होगा। आसपास के गांवों की भीड़ आएगी और इन चकल्लसियों को भी पहुंचते देर न लगेगी। फिर तो जैसा अस्सी घाट वैसी ही कपिलधारा।'

हम कहते हैं कि तुम मेघा भाई के साथ क्यों नहीं रहते ? भदैनी में जयराम साव की बगीची में रहो। और निश्चिन्त होकर अपना महाकाव्य रचो। वहां तुम्हें कोई सता नहीं सकेगा।

कुछ देर तक विचार करने के बाद तुलसी ने कहा— तुम्हारे इस प्रस्ताव में दम है। मेरा लेखन कार्य वहां शान्तिपूर्वक हो सकेगा। तब फिर तुम एक बार भदैनी चले जाओ कैलास, मेघा भाई से सही स्थिति बतलाना और कहना कि मैं कल ब्राह्मवेला में मैं भदैनी पहुंच जाऊंगा। कोई यह जान भी न पाएगा कि तुलसी कहां गया।

तुलसी के भदैनी आ जाने से मेघा भगत बड़े ही प्रसन्न हुए। ऐसा लगता था कि उनके आगमन की प्रतीक्षा में वे रात भर नींद सो भी नहीं पाए थे। देखते ही बड़े उन्मत्त उल्लास से भगत जी ने उन्हें आलिंगनबद्ध कर लिया, फिर एकाएक फूट फूटकर रो पड़े। उस रुदन में तुलसी को भगत जी के अन्तर्मन की शान्ति और आनन्द का अनुभव ही अधिक हुआ। उन्हें लगा जैसे लू भरे मैदान में कोसों चलकर वे ऐसी घनी अमराई में आ गए हों जहां आम के बौरों की गंध से लदी शीतल बयार डोल रही है। आलिंगन में बंधे-बंधे ही वे बोले— 'राम जी ने इस बार कठिन परीक्षा ली मेघा भाई, परन्तु उन्हींकी कृपा से उबर भी गया।"

धीरे धीरे आलिंगन मुक्त होकर अपने आपको सयत करते-करते मेघा भाई फिर रो पड़े, कहा— अरे अभी तेरी परीक्षाओं का अन्त कहा आया है भैया, यही सोच सोचकर तो दु खी हो रहा हू ।"

तुलसी हसे बोले— आपके इस दु ख म भी सुख ही झलक रहा है भाई।"

सुनकर रोते रोते ही मेघा हस पडे, कहा— एक जगह पर अब मुझे दु ख-सुख मे अतर नही दिखलाई पडता । वासना, बिंद ध्वनि और उनका बहिप्रसार त्रिआयामी है जितना गहन उतना ही विस्तृत और उतना ही उच्च । कहा भेद करू । पहले तीनो अलग अलग समझ पडते थे—अब सब एकाकार हैं ।'

तुलसी गभीर हो गए कुछ क्षणो तक चुप रहकर कहा—'एक राम, एक कवि एक रामबोला—तुलसीदास—परन्तु राम तुलसी तक आते आते अनेक रूपरूपाय हो जाते हैं । मेरे जप तप सारे साधन अभी तक आपके समान एका कार नही हो सके । क्या करू ?' तुलसी के स्वर मे उदासी छा गई ।

"माली सींच सौ घडा ऋतु आए फल होय ।' कहकर वे भीतर की ओर बढ़ चले । चौखट पर रुककर तुलसी के कधे पर हाथ रखकर कहा— घास के फूल जल्दी विकसित हो जाते हैं चपक देर से खिलता है । इतिहास मेघा'को कहा देख पाएगा रे ? मेरा तुलसी तो राम बनकर घट घट म रमेगा । ना ना सकोच न करो भैया । अपने यथार्थ को पहचानो । तुम्हारे अहकार की बहि चेतना और तुम्हारा अतर्कवि दोनो ही राममय बनने की उत्कट लालसा मे एक सिरे पर तप रहे हैं और दूसरे सिरे पर तुम्हे अपनाने के हेतु स्वय राम । तुम्हारे महाकाव्य की रचना के लिए यही अतर्द्वन्द्व कदाचित आवश्यक है । तपे जाओ मेरे भैया यही तो दु ख म सुख है ।" × × ×

'एक राम, एक कवि और एक रामबोला ।' बेनीमाधव जी अपने भीतर इस गुरु वाक्य को धुनते रहे । असल म उनके राम और काम म ही द्वन्द्व है । उनका कवि और बेनीमाधव दोनो ही चाहते राम को हैं वही तो महिमा की वस्तु है । लेकिन कामेच्छा राह मे राडे डाल देती है । क्यों ? तृप्ति पाई तो है फिर अतृप्ति क्यो ? गुरू जी को भी ब्रह्मचर्य धारण करने के बाद वर्षों तक काम से सघर्ष करना पडा है । तब मैं क्यो डरता हू ? गुरू जी ने अपने भक्त और कवि के अन्तर्द्वन्द्व का भी सु दर निरूपण उस दिन मेरे सामने किया था । अयोध्याकाण्ड की रचना करते समय वे अपनी काव्यकला निपुणता के प्रति जितने निष्ठावान रहे उतने राम भक्ति म लय न रहे । उन्होंने अयोध्या मे अपनी रचना के चुराए जानेवाले प्रसग से या अयबोध ग्रहण किया था । अपने काशी के अनुभवों म भी उनके लिए नियति से तीखी टकराहटें ही मिली । फिर भी व अपने महाकाव्य की रचना म लगन के साथ लगे रहे । वह निष्ठा जो इनके मन को व्यर्थ सघर्ष-रत न बनाकर रचनात्मक काय म जुटाए रखती है मुझे क्यों नहीं मिलती ? कसे पाऊ ?' बेनीमाधव का सरल बाल मन चन्द्रखिलौना पाने के लिए मचल रहा था । गुरू जी की बात पूरी हो जाने के बाद वे अपने ही गुताडे मे तल्लीन हो गए ।

बाबा बोले— अच्छा जाओ बाहर टहल आओ, स्नानादि का समय हुआ कि नहीं। कल फिर तुम्हें आगे की कथा सुनाऊँगा। तुम्हें अपने प्रश्न का उत्तर मिल जाएगा।'

दूसरे दिन फिर वे अपनी कथा सुनाने लगे— मैंने सब को ले लिया और जरा एक के पीछे ही दीवाना बन गया। धन-वैभव-सत्ता आदि नाम में लुभाने वाला सब कुछ मेरे राम के पास था और इतना था जितना कि मनुष्य की कल्पना में आ सकता था कोटि-कोटि ब्रह्माण्ड में किसी भी जीव के पास नहीं था। मैं उस ठाट नापा में वह बेनीमाधव कि अपने आदर्श की ऊँचाई के आगे मुझे न बादशाह सिपहसालार राजे-महाराजे सेठ-साहूकार मिट्टी के खिलौना से समान लगते थे। मेरे सृजनशील अहं को जो मनिनमां हीनता का बोध करा सकती थी वे तुच्छ बन गए। ऐसे ही सामान्य वृत्ति रूपी असुर भी मेरे सृजनशील अहं को तुच्छ नहीं बना सकता था। मेरे कवि का साहब परम न्यायी और करुणानिधान है फिर मैं भला लोक की रावणी व्यवस्था से क्या घबराता? मुझे परस्पर विरोधों के बीच से चलकर अपना राममार्ग प्रशस्त बनाना था। इसके बिना मैं अपनी सर्जनशीलता को जिस धरातल पर ढालना चाहता था वह ढल न पाती। मेरा कवि अपने साहब के प्रति निष्ठावान था और मेरा साहब घट घट में रमा हुआ है इसलिए मैं मानवमन के दर्शन करने का योग ही जीवन भर साधना रहा।

बेनीमाधव बोले – आपने क्या राम के प्रत्यक्ष दर्शन पाए गुरु जी?

बाबा हँस रहे जानते हो रामचरितमानस लिखते समय मुझे बराबर यही विश्वास होता था कि जिस महाकाव्य को स्वप्न में जगदम्बा जानकी रूपी ईश्वर और कौशलेश्वर की आज्ञा पाकर रच रहा हूँ उसके पूरा होते ही राम जी मुझे अवश्य ही प्रत्यक्ष दर्शन देंगे। मुझे प्रत्यक्ष दर्शन मिले किन्तु जन-जन के रूप में। यों रामचरितमानस रचकर मेरे घट घट व्यापी राम मुझे निश्चय ही मिल गए। मैंने उन्हें निराकार-साकार रूप में बहुत सीमा तक पहचान लिया। उनका पूर्ण रूप देखने की लालसा या मुझमें अब भी शेष है। कदाचित् अंतिम सांस के साथ ही पूरी हो कि न हो। नहीं-नहीं, राम कृपा से होगी। इस कलिकाल में तुलसी जैसी लगन से प्रीति निभाने वाले अधिक नहीं हैं। मेरे साहब अब मुझे नवाजेंगे।

बाबा का अडिग अगाध आत्म विश्वास भरा गौर मुख बेनीमाधव के मन में उत्साह का संचार करने लगा। कैसा साहसी है यह रणबांकुरा। भाव से उमगे चुभ होकर प्रश्न कर बैठे— अरण्यकाण्ड तो आपने असीघाट पर ही रच डाला था न गुरु जी?'

बाबा की स्मृति झनझना उठी संघर्ष भरे रचना की लीला भरे वे पुराने दिन बेनीमाधव को दिखाने के लिए उनकी वाणी पर शब्द चित्र बनकर संवरने लगे। × × ×

अरण्यकाण्ड अति संघर्ष के क्षणों में रचा गया। हनुमान फाटक और असी पर विशेष रूप से ब्रह्महत्यारे को भोजन कराने के बाद उन्हें अत्यधिक त्रस्त

होना पडा। तुलसी आठो पहर सतक रहकर अपनी वीतरागता को सिद्ध करते रहते थे और इसके लिए अरण्यवासी तापस श्रीराम का ध्यान उन्हे बल देता था बल ही नही वे आनन्द और एक अवर्णनीय तरावट-सी पाते थे। उनके मान-सरोवर मे बिम्ब शब्दो के कमल बनकर खिलने लगते थे और फिर वे लिखे बिना रह नही पाते थे। किन्तु कितने विघ्नो के झटके उन्हें लगते थे! लिखने का तार बार-बार टूटता था। यहा भी तुलसी को अब तक अयोध्या से कुछ कम सघर्ष नही झेलना पडा था। अहता पर चोटें-सी पडी। यह सचमुच रामकृपा ही था कि अपने आध्यात्मिक जीवन के प्रथम सघर्ष काल मे उन्ह महाकाव्य रचने की प्रेरणा मिली। अयोध्याकाण्ड फिर भी निर्बाध गति से लिखा, यद्यपि भक्ति से अधिक वे काव्यनिष्ठा मे बधे। काशी मे काव्य और भक्ति दोनो के प्रति वे अपनी निष्ठा को वराग्य से सतुलित रखने मे सतत् जागरूक रहे, यह महाकाव्य तुलसी का होकर भी उसका नही था, स्वय हनुमान जी उससे लिखा रहे हैं। वह जितने सुघर ढग से काम करेगा, जितनी सच्ची लगन से करगा उतने ही उसके मालिक सतुष्ट होंगे। जाति प्रपच, निन्दात्मक प्रचार आदि विरोधी पक्ष के तीखे से तीखे प्रहार तुलसी ऊपर से तो सफलतापूर्वक झेल जाते थे पर भीतर कही कचोट लगती थी, सद्चिन्ता विहीन शुद्ध दम्भयुक्त सत्ता या धन से मडित दुश्चरित्र लोग मुझे नीचा कहें और मुझे सुनना पडे! पीतल सोने को मुह चिढाए और सोना चुप रह जाय यह विडम्बना न्याययुक्त मानकर कसे सही जाय? पर सहनी ही पडेगी। रामबोला, राम तेरी परीक्षा ले रहे हैं। इधर से वीतराग बन। महाकाव्य पूरा करते ही राम तुझे प्रत्यक्ष दर्शन देंगे। अपने को अभागा न समझ। ऊपरी मानापमान के चोचले छोडकर रामकथा रस मे डूब —गहरे से गहरा डूब।

भदनी म घायल गृद्धराज जटायु से राम की भेंट होने का प्रसग उठाया। गृद्धराज के बहाने राम वन्दना की ओर फिर बह चले। किष्किन्धाकाण्ड मे, रामकथा मे हनुमान के प्रवेश करते ही तुलसी का कार्यभार मानो मन से हल्का हो गया। काव्य रचना में उनकी तन्मयता और गति स्फूर्तिवत् हो उठी। सारा सुन्दरकाण्ड एकरस होकर लिखा। हनुमान जी इस काण्ड के नायक थे। काण्ड रचते समय जब स्वय राम-सीता अथवा राम के भाइयो के प्रसग आ जाते हैं, तब तो उन्ह समुद्री तराक की तरह अधिक सचेत रहना पडता है परन्तु हनुमान तो निरे बचपन से ही उनके लिए गगा के समान हैं। वे उनके बडे भाई हैं सखा हैं आडे समय के सहारे हैं इसलिए उनका शौर्य और उनकी दूत-कर्म-कुशलता का बखान करते हुए उनका काव्य चातुर्य लगन भरे चाकर की तरह उनकी हनुमदभक्ति की सेवा म ऐसा लीन रहा कि जसा पहले कभी इतने दिनो तक नही हुआ था। यो घडी दो घडी अधिक से अधिक एकाध दिन तक ऐसी तल्लीन तरगो के बहाव मे तो प्राय ही बहते रहे थे। सुन्दरकाण्ड की रचना करते हुए उन्हे अपने प्रति नया विश्वास सिद्ध हुआ।

यो भी मेघा भगत से वे अपन लिए हनुमतवत सकेत पाया ही करते थे। मेघा भगत ने उन्ह स्वच्छन्द जीवन बिताने के लिए व्यवस्था भी बहुत अच्छी

कर रखी थी। केवल सायंकाल को छोड़कर कोई उनसे मिलता न था। टोडर और कैलास नित्य, गंगाराम कभी-कभी और जयराम साव तीसरे चौथे दिन एक चक्कर लगा जाया करते थे। सवेरे स्नान पूजा से छुट्टी पाकर तुलसीदास एक बार मेघा भगत से मिलने के लिए अवश्य जाते थे। अशोक वाटिका में हनुमान और जगदम्बा की भेंट का चित्रण करते हुए उन्हें एक गुप-चुप आनन्द यह रहा कि वे हनुमान जी की कृपा से जानकी मैया का देख रहे हैं। उनके मुख से राम जी की बातें सुन रहे हैं। जैसे जैसे इस कथा प्रसंग का शब्दचित्र उभरता आता था वैसे वैसे ही उनका आत्म विश्वास अपनी सरल भोली निष्ठा में प्रबल और प्रौढ़ होता जा रहा था। भक्ति के क्षेत्र में उन्होंने पहली बार अपने आपको वयस्क अनुभव किया। पहली बार रत्नावली के प्रति अपनी अनन्य चाह वे राम जी के वहाने सीता जी को अर्पित करके अपने भीतर की अनिरंजित झिझक तोड़कर मन के नातों में सहज हुए। × × ×

४३

बेनीमाधव ने पूछा— किसी जीवन चरित्र को लिखते समय प्रत्येक पात्र या पात्रों की कल्पना आप कैसे करते थे गुरु जी? मैं पहले अपना उदाहरण दूं मैं जिस जीवनचरित की रचना कर रहा हूं उसमें केवल आप ही नायक के रूप में मेरे जाने पहचाने हैं किन्तु रामकथा रचते समय आपके पास एक भी ऐसा पात्र नहीं था जिसे आपने मेरे समान प्रत्यक्ष देखा और भोगा हो फिर उनके भाव चित्रों को ।'

क्या बचपने का प्रश्न करते हो बेनीमाधव मैंने अपने राम को तुम्हारे तुलसीदास से कहीं अधिक प्रत्यक्ष देखा है। मानस रचते समय मैं जिस ललक के साथ अपने जीवन मूल्यों के पूर्ण समुच्चय स्वरूप श्रीराम की कल्पना के साथ आठों पहर तल्लीन रहता था तुम अपने तुलसीदास में क्या रह पाते हो। सभी पात्रों में जीवन के देखे हुए अनेक चरित्र अपनी व्यक्तिगत छाप मेरे आग्रह से अवश्य ही छोड़ते थे। मंथरा के रूप में मेरे बचपन की भिखारी बस्ती में रहनेवाली कुबड़ी भैंसिया की यह बरबस अपनी चाल-ढाल के साथ उभरकर मेरी लेखनी पर आ जाती थी। कौशल्या के रूप में कहीं न कहीं पर सूकर खेत की बड़ी रानी का चरित्र मन में आ जाता था। बेचारी बड़ी दयालु और बड़ी दानी थीं। उनको और राजा साहब की रखैल को एक ही दिन और प्राय आस ही पास के समय में बालक हुए। रानी जी का लड़का पहले हुआ परन्तु दरबार में रखैल की चतुराई से उसके बेटे के जन्म की खबर पहले पहुंची। राजा ने रखैल के बेटे को ही अपना उत्तराधिकारी घोषित किया। रानी बेचारी जीवन भर तपस्या ही करती रह गई। इसी प्रकार जीवन में देखे-सुने अनेक दृश्य और चरित्र रामचरित रचना में घुलमिल जाते थे।'

'भरत के चरित्र में गुरु जी स्वयं आप हैं ?'

बाबा हंसे मगन लगे— 'अरे भइया, जहां राम-पद वन्दन का छोटा-सा अवसर भी मिलता था मैं वहीं अपने आपको रमा देता था। भरत में, लक्ष्मण और हनुमान में अत्रि-जटायु शिव नारदी, प्रत्येक पात्र या पात्री के रामलीन क्षणों में तुलसी अवश्य हैं। श्रीराम के अयोध्या त्याग के चित्रों की पृष्ठभूमि में मेरे अपने गृहत्याग की पीड़ा भी कहीं पर समाई है। सीता के विरह में राम की मनोदशा के चित्रण में, कहीं न कहीं तो मैं अपनी रत्नावली के साथ समा ही गया हूं। छोड़ो इसे मेरे मन में इस समय मेघा भगत के अंतिम दिनों की स्मृति उभर रही है। उस समय मैं लंकाकाण्ड की रचना कर रहा था।" × × ×

युद्ध-क्षेत्र में लक्ष्मण मेघनाद लड़ रहे थे। तुलसीदास अपनी कुटी में बैठे इस प्रसंग को लिख रहे हैं। तभी एक सेवक दौड़ा हुआ आता है और सूचना देता है कि मेघा भगत बगीचे में चबूतरे से अचानक लड़खड़ाकर नीचे गिर गए। उनको सिर में घाव लगा है, खून बह रहा है वे अचेत हैं। तुलसीदास लिखना छोड़कर भागते हैं।

मेघा भगत को भीतर के कमरे में ले जाया गया। तुलसी पहुंचते ही उनका सिर अपनी गोद में लेकर घाव की धोवाधोई करने का काम नौकर के बजाय स्वयं करने लगते हैं। थोड़ी देर में जयराम साहु कलारा दो-तीन वैद्य और भगत जी के कई भक्तों का जमाव जुट जाता है। औषधि उपचार होता है। किन्तु भगत जी की चेतना नहीं लौटती है। उन्हें तीव्र ज्वर चढ़ आया है। वैद्य जी जौनपुर के किसी वैद्य का पता बतलाते हैं। जयराम साहु के खर्चे पर कलानाथ उन्हें बुलाने के लिए जौनपुर भेजे जाते हैं।

यह दिन तुलसीदास के लिए अत्यन्त विकलता भरे थे। उसी समय दुर्योग से उनकी बाईं बांह में भी बादी का दर्द आरम्भ हो गया। बांह में टीसें-सी उठती थीं पर वे मेघा भगत को छोड़कर स्वयं विश्राम नहीं करना चाहते थे।

रात का समय था। वैद्य की प्रतीक्षा में व्याकुल तुलसी अचेत मेघा भगत के सिरहाने बैठे हुए उनकी बांह अपनी गोद में रखे सहलाते हुए आंखें मूंदे हुए युद्ध-क्षेत्र में राम की गोद में अचेत पड़े लक्ष्मण को देख रहे थे। उनकी व्याकुलता राम के मुखारविन्द से काव्य बनकर फूटने लगी। × × ×

लक्ष्मण के प्रति विलाप करते समय राम के वे भाव मेरे विकल क्षणों से ही उमगे थे। श्रीलक्ष्मण के वैद्य को आना था, हनुमान जी की संजीवनी बूटी का प्रभाव उनपर होना था क्योंकि वह तो अवतारी पुरुषों की कथा थी परन्तु मेरे मेघा भाई बच न सके। उसी अचेतावस्था में वे दो दिन बाद रामलीन हो गए। मेरा रामचरितमानस उनके सामने पूरा नहीं हो सका, इसका मुझे दुख है।

"संवत १६३५ में जेठ की तीज को रामचरितमानस का लेखन कार्य पूरा हुआ। उस दिन हमारे मन में अपार संतोष था। तुमसे सत्य कहता हूं बेनीमाधव,

जब अन्तिम दोहा रचते समय मैंने प्रार्थना की कि—

कामिहि नारि पियारि जिमि, लोभहि प्रिय जिमि दाम।
ऐसे ही रघुवश मंहि प्रिय लागहु मोहि राम॥

"उस समय मुझे ऐसा लगा कि राम मेरे आगे एसे खडे हैं जसे प्रत्यक्ष आ गए हो। मैं भावाभिभूत होकर लेखनी-पोथी छोडकर उनके चरणो मे नत हुआ और ऐसा करते ही मेरे राम अतर्धान हो गए। काशी के भदैनी क्षेत्र मे वह कुटिया जहा बैठकर मैंने रामायण पूरी की थी ऐसी दिव्य भीनी सुगन्ध से भर गई कि वर्षों बाद आज भी स्मरणमात्र स वह मेरे मन म महक उठी है। पर उस स्वरूप-दर्शन की चाह जो एक बार देखा था अभी तक शेष बनी है। मेरे मरते मरते राम एक बार अपना मुख दिखला दें। हे राम आपके स्वभाव गुण शील महिमा और प्रभाव को शिव हनुमान भरत और लखनलाल ने ही भली-भाति पहचाना था। मैंने भी आज पहचान लिया। तुम्हारे नाम के प्रताप से तुलसी ऐसा दीन अभागा भी रामायण रचना का यह काय सम्पन्न कर सका। अब एक बार और उदार हो जाइए। मरते मरते आखो मे आपकी दिव्य छवि भर-कर जी छककर जाऊ अपने लिए आपसे केवल यही माग करता हू।' बाबा इतने भावविभूति हो गए थे कि बेनीमाधव देखते ही रह गए। उन्हे स्पष्ट लग रहा था कि गुरुजी इस समय अपनी काया मे नही है। उनका ध्यान सब ओर से निकलकर एक मे केंद्रित है। बन्द आखों से पहले तो आसू निकलते रहे फिर शान्ति छा गई। बेनीमाधव को लगता था कि सामने कोई व्यक्ति नही बल्कि एक दिव्य प्रकाशपुज बठा है।

उस समय फिर कोई बात न हो सकी। रात मे बाबा के पर दबाते समय सत बेनीमाधव ने उनसे प्रश्न किया— गुरूजी, एक बात पूछू?'

पूछो।"

'रत्ना मया फिर आपसे मिली थी?"

तुलसीदास पल भर चुप रहे फिर कहा—'हू।"

यही काशी मे?'

हा।"

"क्या उस प्रसग के सबध म कुछ बतलाने की कृपा करेंगे?"

बाबा चुप रहे। उनके मौन को तोडने का साहस सत जी मे नही था। इसलिए मन मारकर गुरु-पद सेवा मे तल्लीन हो गए।

थोडी देर के बाद अनायास ही बाबा बोले— आज भी सोचता हू कि मैंने जीवन मे एक महत अपराध किया है। किन्तु उस समय ऐसा करने के लिए मैं विवश था।" × × ×

तुलसी अपनी कोठरी के आगे फुलवारी मे गम्भीर किन्तु सन्तोष भरी मुद्रा मे टहल रहे हैं। रह रहकर उनका सिर उठकर कुछ देखने लगता है मानो उन्हे किसी की प्रतीक्षा है। वे कभी-कभी विकल होकर आकाश की ओर देखते हुए

गिड़गिड़ाते हैं, मुखमुद्रा दीन बन जाती है। उनका चेहरा देखकर लगता है कि मन में कुछ तरंगें मचल-मचलकर आपस में मिलकर कोई भवर-सी बना रही हैं। सहसा झाड़ी के पीछे किसी की पदचाप सुनाई दी। तुलसी के कान बावले होकर ऊंचे उठे। झुरमुट के पीछे से एक मनुष्याकार आता हुआ दिखलाई दिया। आखों की चमक झलक देखते ही मद पड़ गई। मुह से हल्की निराशा के साथ आप ही आप निकल पड़ा— अरे यह तो टोडर हैं।" पीछे और भी लोग थे।

जयराम साहु पंडित गगाराम और टोडर साथ-साथ आए थे। नमस्कार, प्रणाम, आशीर्वाद आदि की क्रिया सम्पन्न हो जाने पर टोडर बोले— 'हम एक प्रस्ताव लेकर आपकी सेवा मे आए हैं।'

क्या प्रस्ताव है ?"

इस बार गगाराम बोले— तुमने रामचरितमानस ऐसा महाकाव्य रचने में सचमुच अथक परिश्रम किया है और राम जी की कृपा से रससिद्ध हुए हो। अब हमारा यह विचार है कि तुम्हें कुछ विश्राम भी मिलना चाहिए।"

तुलसी हसे, कहा— इन बीते चार वर्षों म मानस रचना के क्षण ही मेरे खरे विश्राम के क्षण रहे हैं। मेरा मन इस समय हरा भरा है गगाराम।"

जयराम बोले— फिर भी विश्राम तो आपको अवश्य ही करना चाहिए महराज। आपने हमसे इन दिनों मे कोई सेवा नहीं ली, केवल फलाहार और दुग्ध-पान करके ही रहे। मैं समझता हू कि अब तो आपको अन्न ग्रहण करना चाहिए। थोड़ी सेवा भी स्वीकार करनी चाहिए।"

अरे तब तो मैं मोटा जाऊंगा। मेरा तप ही मेरा आनन्द है भाई, उसे मुझसे क्यो छीनते हो ? ना-ना, यह सब बातें छोड़िए। अब चातुर्मास लगनेवाला है। मैं सदगृहस्थों के बीच में कहीं मानस कथा सुनाना चाहता हू। उसीमे मुझे आनन्द आएगा।"

टोडर बोले— मैं जो प्रस्ताव लेकर आया हू, उसके पीछे आपकी रामायण कथा वाली बात मूल रूप से मेरे मन म है, महात्मा जी।"

तुम्हारा प्रस्ताव क्या है ?'

टोडर सावधान होकर कहने लगे—' बात यह है कि (पंडित गगाराम की ओर देखकर) आप ही बतलाए ज्योतिषी जी।'

तुलसीदास बोले— ऐसी क्या बात है भाई? कहने मे इतना सकोच क्या ?"

गगाराम बोले— 'सकोच इसलिए है कि तुम कदाचित प्रस्ताव सुनकर बिगड़ न जाओ। पर हम लोगों ने जब बात को हर तरह से मथ लिया है, तभी कहने आए हैं। बात ये है कि लोलार्क कुण्ड पर एक वैष्णव मठ है मठ क्या है हमारे टोडर की एक नातेदार बुढ़िया थी, वह एक गोसाइं जी को अपना घर पुन्न कर गई थी। गोसाइं जी बड़े भक्त और विद्वान पुरुष थे। उन्होंने चार-पाच शिष्यों को भी रख छोड़ा था। अब वे तो गोलोकवासी हो चुके हैं। मठ म गोस्वामी पद के लिए झगड़ा है। वहा जो कुछ पैसा आता है वह प्राय टोडर की बिरादरी वालों से आता है। वे गोसाईं जी के शिष्यों मे किसीको उस पद के योग्य नहीं समझते। अब या तो मठ बन्द कर दिया जाए या फिर किसी योग्य व्यक्ति को उस पद

पर विठलाया जाए।"

तो तुम लोगों ने मुझे चुना ? मैं राम कृपा से गोस्वामी बन तो रहा हूं किन्तु अभी इस पद को सिद्ध नहीं कर पाया। अब तुम्हारा प्रस्ताव मुझे अमान्य है।'

जयराम बोले— देखिए महराज, अपने मन से आप चाहे वहा तक पहुंचे हों या न पहुंचे हों पर काशी के लोग आपको पुराने जमाने के बड़े बड़े ऋषि मुनियों के समान ही मानते हैं। टोडरराम जी ने तो श्रौचक में आपका नाम अपनी बिरादरी वालों के सामने ले दिया पर सबके-सब तब से इनके पीछे पड़ गए हैं। लोलार्क कुण्ड महल्ले में यह खबर फैल चुकी है कि आप आ रहे हैं। और क्या छोटा, क्या बड़ा महराज सबके मनों में इस समाचार से बड़ी खुशी छा गई है।'

यह सब ठीक है किन्तु मैं इस प्रपंच में नहीं पड़ूंगा। मठ में मन्दिर भी होगा ?"

हां महात्मा जी।"

स्वाभाविक रूप से कृष्ण मन्दिर होगा।

'हां, टोडर के मन में भी यह सकोच आया था और इन्होंने मेरे सामने यह प्रश्न उठाया भी था, पर मैंने कहा कि तुम्हारे मन में राम कृष्ण का भेद भाव नहीं है। तुम कृष्ण पूजन कराके भी रामभक्त बन रह सकते हो।'

तुमने ठीक कहा गंगाराम परन्तु

देखो तुलसी दीन दुखी जन समाज में तुम्हारा महत्त्व अवश्य बढ़ गया पर यहां का प्रतिष्ठित नागरिक वर्ग यहां के दुष्टों के प्रचार के कारण अभी तुम्हारे सम्पर्क में आने से सकोच करता है। देखो बुरा न मानना तुलसी भद्रवर्गीय दृष्टि में तुम अभी प्रतिष्ठित नहीं हो।'

सुनकर तुलसी उखड़े कुछ कुछ तीखे स्वर में कहा— तो ? मुझे भला उसकी चिन्ता है ? राम करें तुम सब लोग यहां का सारा भद्र समाज धन और पदों का ऐश्वर्य भोगता हुआ चिर प्रतिष्ठित रहे। पर तुलसी भी क्या किसी से कम है ? तीन गाठ कौपीन में बिन भाजी बिन लौन। तुलसी मन सतोष जो इन्द्र बापुरो कौन ?'

तुलसीदास के चेहरे की चमक देख टोडर हाथ जोड़कर बोले— देखिए महात्मा जी प्रश्न आपका नहीं, आपके रचे इस महाकाव्य का है। दुष्टों के कुप्रचार से इसकी प्रतिष्ठा को आच नहीं आनी चाहिए।

'तो क्या चाहते हो तुम लोग ? मैं गोसाइं बन जाऊं ?'

"हां महाराज।" जयराम बोले।

देखिए महात्मा जी शकराचार्य महाराज ने भी, सुना है मठ स्थापित किए थे। उनकी परपरा के शकराचार्य सन्यासी होकर भी सोने के सिंहासन पर विराजते हैं। सोने की खड़ाऊं पहनते हैं। इससे लोक पर उचित प्रभाव पड़ता है।'

गगाराम बोले—'हमारा कहना मान लो तुलसी, तुम इस मठ के गुसाइं बन जाव। गोसाइं तुलसी की रामायण का प्रभाव भक्त तुलसीदास की रामायण से अधिक अच्छा पड़ेगा।"

तुलसीदास सिर झुकाकर चुप हो गए मन बोला —'भाग तुलसी, यहां से

भाग।'

गंगाराम बोले—"सामाजिक प्रतिष्ठा नितांत आवश्यक है तुलसीदास। किसी लोकधर्मी व्यक्ति को उसकी अवहेलना नहीं करनी चाहिए। नीति यही कहती है।"

तुलसी चुप।

टोडर बोले—"साल में लगभग छ-सात हजार रुपये की चढ़त वहां हो ही जाती है। आपके पहुंचने से निश्चय ही उस स्थान की महिमा बढ़ेगी। आप मठ के धन का कोई सुन्दर उपयोग कर सकेंगे।'

जयराम बोले—' अरे मैं और मेरे कई नातेदार आपकी यहां नियमित रूप से सेवा करेंगे। काशी में और भी लोग राजी हो जाएंगे। हम सबकी ही अरदास है महराज कि आप यह पद स्वीकार कर लें।" कुछ रुककर जयराम ने फिर कहा—'इससे पाखंडियों के विरुद्ध मोर्चा लेने में हम सभी को बड़ी मदद मिलेगी। काशी से अब यह पापलीला तो समाप्त होनी ही चाहिए महराज।"

गम्भीर स्वर में तुलसीदास बोले—"भाई, मैं अब भी अपने मन में स्पष्ट नहीं हो पा रहा हूं कि मुझे यह पद स्वीकार करना चाहिए या नहीं। एक मन हां कहता है और दूसरा ना। ऊपर से आग्रह ऐसे लोग कर रहे हैं जो मेरे श्रेष्ठतम शुभचिन्तक हैं। राम करें सो होय। मैं तुम्हारा प्रस्ताव स्वीकार करता हूं। इसका भला बुरा परिणाम जो कुछ भी होगा, आगे आ ही जाएगा।'

तीनों सज्जनों के चेहरे आनन्द से खिल उठे। और चातुर्मास आरंभ होने से पहले ही एक शुभ तिथि पर महाकवि भक्त शिरोमणि तुलसी भगत गोस्वामी तुलसीदास हो गए। दाढ़ी मूछें और सिर के लहराते केश मुड़ गए।

४४

गोस्वामी जी लोलार्क कुण्ड के मठ में भगवान श्रीकृष्ण की आरती करते हुए कृष्ण भक्ति का एक पद गा रहे हैं। मठ के आंगन में सम्भ्रांत भक्तों की भीड़ है। सभी उनके भजन पर मुग्ध हैं। आरती के बाद दर्शनार्थियों को गोस्वामी जी कृष्ण भक्ति का महत्त्व बतलाते हैं। सभी अवतारों के प्रति श्रद्धा प्रकट करते हैं। 'जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरति देखी तिन तैसी' वाली अपनी चौपाई का भाव अपने प्रवचन में निरूपित करते हैं। शिव के गुणगान करते हैं। लोगों को समझाते हैं—'जैसे चुटकी में डोर सधी होने पर पतंग को आकाश में चाहे वहीं भी विचरे कोई बाधा नहीं पहुंचती वैसे ही अपने इष्ट से सधकर भाव की डोर में बंधी हुई मन पतंग को सारे आकाश में उड़ाओ, सब देवों के प्रति अपनी श्रद्धा अर्पित करो तो तुम्हारा इष्ट भी सर्वव्यापी और सर्वसामर्थ्यवान के रूप में अपने आपको प्रकट करेगा।"

भक्त गए, एकान्त हुआ। अपना प्रवचन आप ही खाने लगा हे राम जी

मैंने सब कुछ किया और कर रहा हू । वेद, पुराण शास्त्र और सन्तो की वाणी मे आप को पाने के लिए जो जो साधन बतलाए गए हैं वह सब मैं बडी ललक के साथ करता हू फिर भी आप मुझे प्रत्यक्ष दर्शन क्यो नहीं देते ? मेरे ध्यान में जैसे कभी-कभी हनुमान जी प्रकट हो जाते हैं वैसे आप क्यों नहीं आते ? मैं प्रीति तो बढाता चलता हू पर प्रतीति क्यो नही होती ?" गोस्वामी तुलसीदास अपने आप मे उदास थे । अपने दुखमय जीवन के सारे क्षण सताप के झरने मे दुग्धधार बनकर तेजी से उतरते गए और उनके सामने सन्ताप को अधिक गहरा कर दिया ।

एक शिष्य पूछने आया कि आज भगवान के भोग के लिए भोजन मे कौन-कौन व्यजन बनें । इस प्रश्न ने गोस्वामी जी को अधिक खिन्न बना दिया । कहा— 'जो भगवान को रुचता हो वही बनवाओ ।"

शिष्य बोला— गोलोकवासी गोस्वामी जी बडे कुशल पाकशास्त्री भी थे । वे स्वय अपने हाथ से नाना प्रकार के व्यजन भगवान के लिए तैयार करते थे ।'

उन्होंने निश्चय ही अपनी स्वाद शक्ति प्रभु की स्वाद शक्ति बना ली होगी । मेरी स्वाद रूपिणी गऊ अभी भडकती है । जाओ, जो रुचे सो बनाओ ।

शिष्य निश्चय ही कुछ खिन्न मन होकर चला गया । दालान मे मन्दिर की चौखट का टेका लगाकर वे राधा मुरलीधर की मूर्तिया निहारने लगे हे कृष्ण रूप राम जी मेरा मन अभी सधा भी नहीं था कि आपने मुझे इस वभव की भट्टी मे डालकर और अधिक तपाना आरम्भ कर दिया है । हे हरि मुझ दीन-दुबल की इतनी कठिन परीक्षा आप क्यो ले रहे है ! एक ओर तो दुनिया मुझे महामुनि और दूसरी ओर कपटी-कुचाली कहती है । केशव, यह दोनो परस्पर विरोधी विशेषताए तो मुझमे कदापि नही हो सकतीं । फिर भी लगता है कि मैं अति अधम प्राणी हू तभी आप मुझे अपनी प्रतीति नही देते । मुझे एक बार भरोसा दिला दो राम जी । एक बार यह कक्ष तुम्हारे आश्वासन भरे स्वर से गूज उठे तुम कह दो कि तुलसी तू मेरा है तो बस फिर मुझे कुछ नही चाहिए । मुझे केवल आपका भरोसा आपका सान्निध्य चाहिए ।' इस प्रतीक्षा मे कि भगवान अब अवश्य बोलेंगे भोले भावुक गोस्वामी जी युगल मूर्ति की ओर टकटकी लगाकर भिखारी जैसी दीन मुद्रा मे देखने लगे ।

विक्रमपुर से राजा भगत पधारे हैं ।'

नाम सुनते ही तुलसीदास का उदास भाव तरोहित हो गया । प्रसन्न और उत्साहित होकर बोले— 'कहा हैं राजा ?' कहकर वे मन्दिर वाले दालान से बाहर आए और आगन पार करते हुए फाटक की ओर तेजी से बढ चले । दहली की चौखट पर पर रखते ही उत्साह ठिठक गया । राजा तो सामने थे ही, रत्नावली भी थी । उनका तपोपूत मुख पहले से अधिक दिव्य लग रहा था । रत्नावली ने एक बार पति की आखो से आखें मिलाइ । राजा भगत दाढी-केश विहीन तुलसीदास के नये रूप को चकित दृष्टि से देखते हुए हाथ फलाकर आगे बढे— 'अरे भैया तुम तो एकदम बदल गए ।' परन्तु तुलसीदास का उत्साह अब ठडा पड चुका था । औपचारिक आलिंगन करके तुरन्त अपने आपको मुक्त कर लिया,

किंचित रुखे स्वर म पूछा— इन्हे क्यो लाए ?'

रत्नावली तब तक तजी से आगे बढ़कर उनके परा म गिर चुकी थी । तुलसी दास ने अपने पैरों पर रत्नावली की उगलियो का स्पर्श अनुभव किया । उस स्पश म इतनी तृप्ति थी कि पल भर के लिए मन से राम बिसर गये । रोष ठहर न पाया । मृदुल स्वर म राजा से कहा— भीतर चलो, विश्राम करो फिर बातें होगी । (शिष्य की ओर देखकर) प्रभुदत्त ।"

'आज्ञा सरकार ।"

अपनी माता जी को ऊपर के कक्ष मे पहुचा दो । भगत जी के रहने की व्यवस्था मेरी बगल वाली कोठरी में करो । माता जी यदि गगा स्नान के लिए जाना चाहें तो किसी को उनके साथ भेज दो ।"

रत्नावली जी के चेहरे पर पति के इन शब्दो ने सन्तोष की आभा प्रदान कर दी ।

नहा धोकर रत्नावली मठ मे लौट आइ । राजा भगत गगा जी से ही अपने एक काशी स्थित नातेदार हिरद अहिर से मिलने के लिए चल गए ।

मठ के सारे शिष्यो और सेवको को तब तक मालूम हो चुका था कि गोस्वामी जी की पत्नी आई हैं । सभी उनके प्रति अपना आदर प्रकट कर रह थे । एक बार तुलसीदास ने किसी भृत्य से माता जी के सम्बन्ध में पूछा तो पता चला कि वे रसोईघर म रसोइये को सहायता दे रही हैं । तुलसीदास के मन पर सन्तोष के भाव ने छाना चाहा पर छा न सका लेकिन किसी प्रकार का असन्तोष भी मन म न जागा । वे भागवत बाचते रहे ।

भोजन के समय रसोई म वर्षों पूर्व नित्य मिलनवाला स्वाद आज फिर मिला । सन्तोष हुआ । राजा से उन्होने गाव जवार मे सबकी खर-खबर पूछी । अपने रामायण रचने की बात अयोध्या, मिथिला और सीतामढी आदि यात्राओं की चर्चा भी उनसे की पर रत्नावली के सम्बन्ध मे एक शब्द भी न पूछा ।

दूसरे दिन टोडर आए । तुलसीदास ने उनसे राजा भगत का परिचय कराया और पत्नी के आने की सूचना भी दी । तुलसीदास बोले— गगाराम को इस बात की सूचना दे देना । हम चाहेंगे कि रत्नादेवी हमारे बाल मित्र की धर्मपत्नी के प्रति अपना आदर प्रकट करने जाए ।"

टोडर उल्लसित स्वर मे बोले— हा हा, वहा जाएगी और मेरे यहा भी पधारेंगी । जिस दिन गठजोडे स महात्मा जी की जूठन गिरने का सौभाग्य मेरे घर को मिलेगा उस दिन मेरा जन्म सार्थक हो जाएगा ।'

दो चार दिन बीत गए । इस बीच म तुलसी और रत्ना का आमना-सामना एक बार भी न हुआ । तुलसी चाहते थे कि उन्ह हिरते फिरते रत्नावली की सूरत देखने का मौका मिल जाय पर रत्नावली ने सतर्कतापूर्वक अपने आपको उनकी दृष्टि से बचाया । हा भोजन के समय उन्हें अपनी थाली म हर व्यजन म रत्नावली के हाथ का स्पर्श मालूम पडता था । व थाली के सामने बठकर बार-बार रत्नावली की छवि के साथ अपने मन मे बध जाते थ ।

पण्डित गगाराम के यहा सूचना पहुची तो रत्नावली को लिवा जाने के लिए

तुरन्त उनके यहां से पालकी आ गई। रत्नावली प्रह्लाद घाट गइ तो भोजन का वह स्वाद भी चला गया। रात के समय वे और राजा बैठे हुए धर्म चर्चा कर रहे थे। रसोइया दो गिलासों में दूध लेकर आया। तुलसीदास बोले—'अरे भाई, गोसाईं क्या बना हू कि आठो पहर तर माल चाभते चाभते दुखी हो गया हू।' एक घूट पिया, मलाई चाभते हुए मुह बनाया फिर मुस्कराए कहा—'वाह रे राम जी कहा तो एक वह दिन था कि कटोरी भर छाछ पाने के लिए मैं ललाता था और कहा अब इस साधे दूध की मलाई को खाते भी खुनस लगती है।"

राजा बोले— वाह खुनसाते हो भइया। तुम्हारी जिम्या से भगवान जी स्वाद लेते हैं। गोसाइयों म हम यही बात तो अच्छी लगती है कि गोसाइ लोग दुनिया का हर भोग राजी होकर ग्रहण करते हैं पर अपने स्वाद और सुख को वे भगवान का मान कर ही चलते हैं।"

गोस्वामी जी म्हाराज चुप रहे दूध पीते रहे। बात मे उन्ह राजा के मन का हल्का-सा सकेत मिल गया था। उन्होंने तुरत ही राजा भगत की मनोधारा का मुहाना बन्द करने का निश्चय किया कहा—'है तो यह ऊची बात पर खरा गोस्वामी ही इस पानी पर बिना पैर भिगोए चल सकता है। पूर्ण गोस्वामीत्व पाने के लिए मैं अभी तक राम जी की ड्योढ़ी का भिखारी हू।"

राजा तुलसी का पैंतरा समझ गए। उन्होंने भी अपने पक्ष को दृढ़ता स प्रस्तुत करने की ठानी, कहने लगे— दो तपसी जब मिल जाते हैं तब दोनों को एक-दूसरे से आगे बढ़ने का हौंसला मिलता है। तुम्हारी तपस्या तो भइया सारा जग देख रहा है पर हम तो भौजी का तप देख-देखकर ही अपने मन को ठिकाने पर ला पाए हैं। इस कलिकाल म ऐसा कठिन जोग साधनेवाली जोगिन मैंने नही देखी।'

तुलसी चुप रहे रत्नावली की कठिन साधना के प्रति अपने मित्र के यह उद्‌गार सुनकर उन्हें भला लगा उन्हे वैसा ही सन्तोष हुआ जसाकि अपने सम्बन्ध मे सुनकर होता। और यह सन्तोष जिस तेजी से अपने चरम बिन्दु पर पहुचा उससे ही मन का परदा फडफडाकर पलट भी गया। उन्होंने अपने आपको कस लिया। कुछ क्षणो के लिए भूला हुआ रामनाम फिर स घट म गुजाना आरम्भ कर दिया। राजा कह रहे थे—'गाव मे तुम्हारी रुचि की रसोई बनाती रहीं और किसी भूखे कगले को खिलाती थी। आप बिना चुपडी, बिना सागभाजी के दो रोटी खाकर अपने दिन बिताती हैं। रोज तुम्हारी धोती धोना तुम्हारी पूजा की सामग्री लगाना तुम्हारे बठके मे झाड़ू लगाना तुम्हारी एक एक चीज को सहेज-सभालकर रखना, कहा तक कहू भया, भौजी जसी तपसिन हमने देखी नहीं। तुम घर से निकल गए पर उन्होंने अपनी भक्ती से तुम्हे अभी तक घर म ही बाध रखा है।'

मन का राम शब्द राजा की बातो स उपजे सन्तोष से बीच-बीच मे फिर बिसरने लगा। यहा आने पर रत्नावली की देखी हुई एक झलक उनके मन के दृश्य पट पर बार-बार आन लगी। परदा दर परदा मन म यह इच्छा भी होन

लगी कि एक बार उन्हें फिर देखें, बातें करें। मन की इस गुदगुदाहट से राम नाम फिर प्रबल हुआ। वे दूध का गिलास रखकर कुल्ला करने के बहाने उठ पड़े। एक मन कह रहा था चेत ! और दूसरा रत्नावली की मनोछवि निहारने में ही अटका हुआ था। कुल्ला करके दोनों जन जब फिर अपनी अपनी चौकियों पर बैठे तो राजा ने कहा—"सीता जी के बिना राम जी कभी सुखी नहीं रह पाए। तुमसे अधिक भला और कौन समझ सकता है। तुमने तो सारी रामायन रच डाली है। जब रावना उन्हें हर ले गया तब भी, और जब उन्होंने उन्हें धोबी की निन्दा के कारण बालमीकी मुनी के आसरम में भेज दिया तब भी राम जी सुखी न रह पाये। बाया अंग जब कट जाय तब दाया भला कैसे सुख पा सकता है?"

तुलसीदास को यह बातें कहीं पर अच्छी लग रही थीं और कहीं वे इस ओर से उचटने का प्रयत्न भी कर रहे थे। थाली का बैंगन कभी इधर लुढ़कता और कभी उधर। तुलसी ने लेटकर चादर तानते हुए राजा की वाग्धारा को आगे बढ़ने से रोकने के लिए कहा—'अच्छा, अब हम विश्राम करेंगे।' लेट गए। चद्दर तान ली। करवट बदल ली, राम राम भी जपना आरम्भ कर दिया, पर रत्नावली उनके मन से न हटी। इच्छा होने लगी कि रत्नावली उनके पास आए उनसे अपना दुख-सुख कहे। मैं राम के लिए तड़पता हूं वह मेरे लिए। राम जी कदाचित मुझे इसीलिए दर्शन नहीं दे रहे हैं कि मैं रत्नावली से निठुराई करता रहा हूं। रख लूं अपने पास ! उसे सन्तोष मिलेगा तो कदाचित राम जी भी मेरे प्रति दयालु हो जाएंगे।' तुलसी का मन कभी ऊहापोह में रहता और कभी झटके के साथ उस मोह से अपने को उबारकर राम शब्द में लीन होने का प्रयत्न करता। उन्हें रात में अच्छी नींद न आई। सबेरे पण्डित गंगाराम के यहां से न्योता आया उन्होंने कहला दिया कि वे नहीं आएंगे। टोडर आए तो उन्होंने भी अपना प्रस्ताव दोहराया कहा—'महात्मा जी आप दोनों ही एक दिन मेरी कुटिया पर अवश्य पधारेंगे।"

तुलसीदास को लगा कि राम उनकी परीक्षा लेने के लिए ही यह प्रस्ताव टोडर के मुख से करा रहे हैं। वे बोले—'विरक्त अब फिर से राग के बन्धनों में नहीं बंध सकता।'

आप उन्हें अब यहीं रहने दें महात्मा जी "

बात पूरी भी न हो पाई थी कि गोस्वामी जी ने उसे झटके से काट दिया और उत्तेजित स्वर में बोले—क्या तुम चाहते हो कि मैं अपने अथवा अपनी पत्नी के सुख के लिए समाज की आस्था को अधर ही में लटका दूं? यह असंभव है टोडर।

'क्षमा करें महात्मा जी किन्तु इससे लोगों की आस्था क्यों बिखरेगी? वल्लभ गोस्वामी की घर-गृहस्थी उनके साथ रहती थी फिर भी उन्होंने मोक्ष लाभ किया।

तुलसी ने मीठी झिड़की देते हुए कहा—तुम समझते क्यों नहीं हो टोडर, नहीं है। कबीरदास जी वाला

समय भी बीत गया। यह घोर कलिकाल है। नतिकता का इतना ह्रास हो गया है कि उसे यदि एक स्तर तक उठाए न रखा जाएगा तो फिर सारा संसार अनतिकता की लपेट म आए बिना कदापि न रह सकेगा।"

टोडर चुप हो गए। राजा भगत ने इस बार तुलसी-रत्नावली का मेल कराने के लिए पूरा षड्यन्त्र रचा था। उन्होंने पडित गगाराम, टोडर, यहा तक कि कलास कवि को भी, अपने पक्ष मे कर लिया था। गगाराम आए उन्होंने कहा। कलास आए उन्होंने कहा। मठ मे रहनेवाले शिष्यो ने भी कहा— माता जी परम विदुषी हैं, उनके यहा रहने से हमारे अध्ययन म बडी सहायता मिलेगी।"

तुलसी सुनते, ऊपर से विरोध भी करते परन्तु उनका मन कहता कि रत्नावली को पास रखकर यदि अपना ध्यान साधो तो अधिक सुगम रहेगा। 'काम विकार कभी न कभी मुझे सताता तो जाता ही है। उससे कहीं अच्छा है कि मेरा यह विकार धर्म सम्मत होकर ही शात रहे।' मन का हाला-डोला उन्हे तरह-तरह से मथित करने लगा।

एक दिन नाथू नाऊ जब उनके बाल बनाने आया तो उसी समय मठ के द्वार पर रत्नावली जी की पालकी भी आ लगी। रत्नावली जी पालकी से उतरकर ऊपर चली गइ। नाथू गोसाइ जी की सेवा मे पहुचा। उनके चरणो मे ढोका देकर उसने अपनी किस्वत से उस्तरा और पत्थर निकालकर उस्तरे को पनाना शुरू किया। एक भृत्य ने आकर गोसाइ जी को पडित गगाराम के घर से माता जी के लौट आने का समाचार दिया। तुलसीदास के चेहरे पर सन्तोष की आभा चमकी। बोले—'सरवन, उनसे बराबर पूछताछ करते रहना। उनकी सेवा मे कोई कमी न आए।"

भृत्य सरवन के 'अच्छा महराज जी' कहकर जाते ही पानी की कटोरी लेकर गोस्वामी जी के पास आते हुए नाथू बोला—'माता जी आ गइ सरकार, यह बडा सुभ भया।"

तुलसीदास चुप रहे। उन्हे भी उस समय सुख का अनुभव हो रहा था। गोसाइ जी की ठोडी को पानी से तर करके भीजते हुए नाथू ने फिर अपना राग अलापा—'ये दुनिया वाले बडे कमीने होते हैं महराज। कलजुग मे सबका मन काला हो गया है।"

तुलसी आखें मीचे मौन बैठे सुखानुभव करते रहे। नाथू ने बात को फिर आगे बढाया—'जब से माता जी कासी आई हैं तब से रोज लोग-बाग हमसे पूछते हैं कि नत्थू माता जी अब क्या यहीं रहेंगी? अब हम क्या कहै सरकार जी? अरे माता जी यहा रहें चाहे न रहें पूछो, भला तुम्हार बाप का क्या आता जाता है? बडी हवेली के गोसाइ महराज भी तो गिरहस्त हैं। पर नहीं, उनको कोई कुछ न कहेगा। आपके लिए लोग रोक-टोक करते हैं। कहते है चार दिन की चादनी फिर अधेरा पाख है। अब ये भी तपिस्या छोडकर भोग बिलास म "

तुलसीदास के मन म सन्तोष और सुख का महल बालू की दीवार-सा ढह पडा। वे उत्तेजित हो गए, बोले—"इस प्रसग को अब यहीं पर समाप्त कर दो नत्थू।'

सयाना नाऊ गोस्वामी जी का रुख देखकर सहमकर चुपचाप अपने काम में लग गया। तुलसीदास के मनोलोक मे अंधड उठने लगे। कभी अपने ऊपर, कभी दुनिया पर और कभी रत्नावली तथा राजा पर क्रोध आता कि वे उनकी शांति भंग करने के लिए यहा क्यो आए।

हजामत बनती रही सिर और गालो पर उस्तरा चलता रहा बार-बार पानी मीजा जाता रहा पर तुलसीदास का मन इन सब बाहरी क्रियाओ से अलिप्त होकर अपनी करुणा से आप ही विगलित होने लगा। मन जब अपनी विकलता का सह न पाया तो अपनी आदत के अनुसार राम जी के चरणों में शांति पाने के लिए दौड पडा— हे दीनबन्धु सुखसिन्धु कृपाकर, कारुणीक रघुराई ! सुनिए नाथ मेरा मन त्रिविध ताप से जल रहा है। वह बौरा गया है। कभी योगाभ्यास करता है तो कभी वह शठ भोग विलास मे फंस जाता है। वह कभी कठोर और कभी दयावान बन जाता है। कभी दीन कभी मूर्ख-कंगाल और कभी घमण्डी राजा बन जाता है। वह कभी पाखण्डी बनता है और कभी ज्ञानी। हे देव, मेरे मन को यह ससार विविध प्रकार से सता रहा है। कभी धन का लालच सताता है, कभी शत्रुभय सताता है और कभी जगत को नारीमय देखने लगता है। मैं अपने मन से बडा ही दुखी हू रघुनाथ। सयम जप तप, नियम धर्म व्रत आदि सारी औषधिया करके हार चुका किन्तु वह मेरे काबू मे नही आ रहा है। कृपा करके उसे निरोगी बनाइए। अपने चरणो की अटल भक्ति देकर उसे शांत कीजिए, नाथ। मैं अब बहुत-बहुत तप चुका हू।' बन्द आखों से आसू टपकने लगे।

नाथू ने जो यह देखा तो अपना उस्तरा रोक दिया। उसके उस्तरे और हाथ का स्पर्श हटते ही तुलसीदास बाहरी होश मे आ गए। भरी हुई आखें खोलकर एक बार देखा फिर पास रखे हुए अंगौछे से आखे पोछकर बोले—'तुम अपना काम करो नत्थू, मेरा मन तो राम बावला है कभी हसता है कभी रोता है।"

नाथू जब अपना काम करके जाने लगा तो तुलसीदास बोले— अब जो कोई तुमसे पूछे तो कह देना कि माता जी अपने मोहवश चार दिन के लिए आई हैं शीघ्र ही चली जाएगी।

'काहे महराज रहैं ना। दो ही दिनो मे मठ के सारे लोग उनकी बडाई करने लगे। गोसाइं लोग तो घिरस्ताश्रमी होते ही हैं।'

'मैं दूसरे गोसाइयों की तरह अनीति की चाल पर कदापि नही चल सकता। मैंने गृहस्थाश्रम का त्याग किया सो किया।" उनके चेहरे पर हठ-भरी अहंता दमक उठी। थोडी देर के बाद ही उन्होंने नौकर को बुलाकर रत्नावली जी को कहलाया कि वे शीघ्र से शीघ्र राजापुर लौट जाए।

रत्नावली ने उसी दास के द्वारा कहलाया कि वे उनसे मिलना चाहती हैं।

एक बार तुलसी का जी हुआ कि मना कर दें फिर कहते-कहते थम गए और कहा— भेज दो। कोठरी का पर्दा गिरा दो और उनके बैठने के लिए बाहर आसन भी बिछा दो।"

रत्नावली आई। अपने और पतिदेव के बीच में टंगे हुए गिर भुका खडी हो गई, पल भर बाद हल्के-से खखारा धीमे 'जै

सियाराम।'

'जय सियाराम। बाहर आसन बिछा होगा, विराजो।"

'मैं आपके दर्शन भी नहीं कर सकता ?'

तुलसी एकाएक उत्तर न दे सके, कुछ रुककर शान्त स्वर में कहा— नाह धर्म बडा कठिन होता है देवी। व्यर्थ निंदा से बचने के लिए राम जी को जगदम्बा का त्याग करना पड़ा था। तुम घर कब लौट रही हो ?"

'मैं अब काशी में ही रहना चाहती हूं।"

नहीं।'

मैं मठ में नहीं रहूंगी। पंडित गंगाराम जी की गृहिणी ने मुझे "

गंगाराम या टोडर के यहां तुम्हारा रहना उचित नहीं होगा।'

मैं स्वयं भी यह उचित नहीं समझती। अलग घर लेकर रहूंगी।'

नहीं।'

रत्नावली का टूटता मन उनके चेहरे पर दिखलाई पड़ने लगा। गिड़गिड़ाकर बोली—'मैं यहां आपको कष्ट देने के लिए कभी नहीं आऊंगी। कभी आपके सामने नहीं पड़ूंगी। आपके तप में कोई बाधा न डालूंगी।'

'नहीं तब भी नहीं।'

'आप राम जी का सान्निध्य चाहते हैं यदि वे भी इसी तरह आपसे ना कह दें तो ?

सुनकर तुलसी एक बार निरुत्तर हो गए, मन लड़खड़ाया, परन्तु तुरन्त ही उसे कसकर कहा— श्री राम और इस अधम तुलसी में अन्तर है। लोक का चरित्र गिरा हुआ है। उसे उठाने की कामना रखने वाले का कठिन त्याग करना होगा। लोक कल्याण के लिए तुम भी तपो, देवी। अब इस जन्म में हमारा तुम्हारा साथ नहीं हो सकता।'

पर्दे के दोनों ओर कुछ देर तक चुप्पी रही। फिर रत्नावली ने रुंधे हुए स्वर में कहा— जो आज्ञा। मैं कल ही चली जाऊंगी। पर्दे के उस पार फिर चुप्पी छा गई। कुछ पलों के बाद रत्नावली ने कहा— जाने से पहले एक बार चरण स्पर्श करने की "

मेरा मन अभी दुर्बल है देवी। तुम्हारे स्पर्श से मेरी तपस्या पर आंच आ जाएगी।"

जो आज्ञा।" गला रुंध गया। पर्दे के आगे झुककर धरती पर मस्तक टेक दिया। आंसू उमड़ पड़े। भीतर से तुलसीदास ने पूछा— 'गई ?"

'जा रही हूं एक भीख मांगती हूं।'

'बोलो।

'पंडित गंगाराम जी के घर पर मैंने आपके द्वारा रचित रामचरितमानस का पारायण किया था। मैंने उसे वाल्मीकि जी की कृति से श्रेष्ठ भक्ति प्रदायक ग्रंथ पाया।'

तुलसी को सुनकर संतोष हुआ। बोले —'आदिकवि के परम पावन ग्रंथ से उसकी तुलना न करो देवी। वैसे यह जानकर मैं संतुष्ट हुआ कि तुमने वह

ग्रंथ पढ लिया।'

रामचरितमानस की एक प्रति '

शीघ्र ही तुम्हारे पास पहुंच जाएगी। टोडर प्रतिलिपियां कराने की व्यवस्था कर रहे हैं।"

एक बात और पूछना चाहती हू। आज्ञा है ?"

'पूछो देवी।"

महर्षि ने उत्तरकांड में धोबी की निंदा सुनकर श्रीराम के द्वारा सीता जी का त्याग कराया है। आपने मानस में वह प्रसंग क्यों नहीं उठाया ?"

तुलसीदास सुनकर चुप। चुप्पी लम्बी रही।

'यदि मेरा प्रश्न अनुचित हो तो क्षमा करें।"

'नहीं, तुम्हारा प्रश्न जितना सहज है मेरे लिए उसका उत्तर देना उतना सरल नहीं।

'कोई बात नहीं, जाती हू।'

'उत्तर सुन जाओ देवी, मैं तुमसे कुछ न छिपाऊगा। जो अन्याय मैं तुम्हारे प्रति कर सका, वह मेरे रामचन्द्र जगदम्बा के प्रति नहीं कर सकते थे।

रत्नावली की आंखें बरस पड़ी। कुछ देर रुककर तुलसी गोसाइ ने पूछा—'गई ?"

रुदन कंपित स्वर में रत्ना बोली—"जा रही हू।"

'रो रही हो रत्ना ?"

'संताप के आंसू हैं।'

'अब न बहाओ देवी नहीं तो मेरे मन का धैर्य और संतोष बह जायगा। सवक का धर्म कठिन होता है। कहकर गोसाइ जी ने एक गहरी ठंडी सांस ढील दी।

जाती हू। एक भिक्षा और माग लू ?'

मागो।

मेरी मृत्यु से पहले एक बार मुझे अपना श्रीमुख दिखलाने की कृपा करें।'

'वचन देता हू, आऊगा।" × × ×

४५

"रत्ना चली गई। उसका जाना मुझसे [illegible] की [illegible] का एक और प्रबल कारण बन गया।

क्या गुरू जी ?" बेनीमाधव ने पूछा।

गृहस्थ गोस्वामियों को लगा कि ऐसा करके मैंने [illegible] गिराया है।"

'उनके लिए यह सब सोचना कदाचित् [illegible]

शील महात्माओं के नैसर्गिक शत्रु होते ही हैं। तो उन्होंने किस प्रकार से आपका विरोध किया गुरू जी ?"

'पहला विरोध मठ की अव्यवस्था को भंग करने की चेष्टा के रूप में हुआ।" × × ×

मठ के द्वार पर दो सण्ड मुसण्ड वैरागी चौखट के दोनों ओर बैठे थे। उनमें से एक प्रातःकाल दर्शन करने और प्रवचन सुनने के लिए आई हुई नर-नारियों की छोटी सी भीड़ को बड़े रोब के साथ सम्बोधित कर रहा था— यहां कोई मत आओ। यह धर्म का नहीं वरन् अधर्म का मठ है। नये गोस्वामी के आगमन से यहां पापाचार बहुत अधिक बढ़ गया है।"

एक सम्भ्रान्त भक्त सविनय हाथ जोड़कर सतेज स्वर में बोला— यहां तो मैंने एक दिन भी पापाचार नहीं देखा गुसाईं जी। महात्मा तुलसीदास जी पर आप जैसे पूज्य पुरुषों का मिथ्या दोष लगाना अच्छी बात नहीं है।"

कई अधेड़ बूढ़ी स्त्रियां प्रायः एक साथ ही चेंचा मेची कर उठीं— 'अरे इत्ती अच्छी कथा सुनाते हैं। ऐसा भजन भाव करते हैं। उनके मुंह पर ऐसा तेज टपकता है कि बनारस-भर में किसी साधु-महात्मा के मुंह पर वैसा तेज देखने को नहीं मिलता।"

युवक गोसाईं उत्तेजनावश उठकर खड़ा हो गया, चिल्ला चिल्लाकर कहने लगा— उसके मुंह पर तेज देखती हो ? तेल फुलेल से अपना मुंह चमका के ढोंग रचानेवाला पापी जिसे तेजवान महात्मा दिखाई पड़े वह मूर्ख है। जो ढोंगी हमारे इष्टदेव नन्दनन्दन गोपीवल्लभ राधारमण श्री कृष्ण परमात्मा को गौण बताकर अपने इष्टदेव को ऊंचा बताए, उससे बड़ा ढोंगी और पापाचारी भला और कौन होगा ? भागवत् जैसे परम पवित्र ग्रंथ को छोड़कर वह यहां अपनी रची हुई रामायण सुनाएगा ! कहां तो महर्षि वेदव्यास रचित श्रीमद्भागवत् जो अठारह पुराणों से भी श्रेष्ठ है और कहां एक ढोंगी तुक्कड़ की भ्रष्ट कविता ! न उसे मात्राओं का ज्ञान है न छन्द का। हम यहां अनशन-पाटी लेकर पड़ेंगे। हम अपने जीते-जी ऐसा पापाचार कदापि नहीं होने देंगे।

उनके धरना देने से गोस्वामी तुलसीदास जी की क्रोधरूपी गौ भड़क उठी। उन्हें लगता था कि जैसे लंका पर चढ़ाई करने के लिए राम जी सेना सहित समुद्र के तट पर खड़े थे और समुद्र उन्हें जाने की राह नहीं दे रहा था, वैसे ही यह दुष्ट उनके राम कथा प्रसार में बाधक बने हैं। वे टोडर तक को मन्दिर के भीतर नहीं आने देते थे। एक दिन क्रोध को अपने वश में न रख सकने के कारण तुलसी बाहर निकल आए। टोडर से कहा— कथा मैं अवश्य सुनाऊंगा। तुम डुग्गी पिटवा दो कि कथा अब अस्सी घाट पर होगी।"

एक गोसाईं युवक उत्तेजित हो गया, बोला— कथा तुम्हारे बाप दादे भी नहीं सुना सकते। हमारे जीते जी काशी में यह अनाचार नहीं होगा। अपनी रामायण को गंगा जी में डुबा दो।

मेरी रामायण जन-जन की हृदय गंगा में तरी बनकर तैरेगी। राम कृपा

से यह कथा अवश्य होगी । शकर भोलानाथ स्वय मेरी कथा सुनेंगे ।' × × ×

'डुग्गी पिटी । वष्णवा और शैवा मे कुटिल प्राणियो का प्रबल सगठन मेरे विरुद्ध बन गया । कहा तो वे लोग आपस म एक दूसरे को गालिया देते फिरा करते थे और कहा अब दोनों मिलकर मेरे विरुद्ध प्रचार करने लगे । मेरे पुराने विरोधी बटेश्वर मिश्र कुछ पण्डितो की ओर से यह निणय ले आए कि गोस्वामी तुलसीदास रचित रामचरितमानस एक अत्यन्त निकृष्ट का य है । इसमे धम, दशन तथा भक्ति का गलत निरूपण हुआ है । काव्य की दृष्टि से यह एकदम हीन और अशुद्ध है । इसे सुनने वाले को घोर रौरव नरक भोगना पडेगा । यमदूत उसके कानों मे खौलता हुआ तेल डालकर उसे दण्डित करेंगे । मेरे लिए वे दिन बडे ही दुखदाई सिद्ध हुए किन्तु गगाराम तथा टोडर की दौड-धूप से काशी के पण्डितो का एक और निणय भी गली-गली मे प्रचारित होने लगा । इन पण्डितो ने पहले प्रचारित किए निणय को भ्रामक बतलाया । कुछ पण्डितगण जिन्होंने कि रामायण के थोडे-बहुत अश सुन रखे थे, यह कहने लगे कि यह तुलसी के प्रति मिथ्या प्रचार है । नगर का जनमत भी पहले वाले निणय के विरुद्ध था । स्वय पण्डितो मे ही विकट द्वन्द्व मचने लगा । उन दिनो काशी मे मेरा बाहर निकलना दूभर हो गया था । जिधर जाओ उधर ही निन्दक भी मिलते और प्रशसक भी । मैंने सोचा कि रामकथा को लेकर ऐसा राग-द्वेष बढाना उचित नही । स्वामी मधुसूदन जी सरस्वती काशी के सभी पण्डितों को मान्य थे । मैंने उनसे जाकर निवेदन किया कि महाराज, आप रामचरितमानस सुनें यदि आपकी दृष्टि मे वह ग्रन्थ हीन सिद्ध हुआ तो मैं उसे तुरन्त जाकर गगा जी मे प्रवाहित कर दूगा । वे राजी हो गए ।'

यह सभा तो विश्वनाथ जी के मन्दिर मे हुई थी न गुरु जी ?'

'विश्वनाथ जी का यह मन्दिर उन दिनो निर्माणाधीन था किन्तु उसके पास ही यह पण्डित सभा जुडी । मैंने रामायण वाचना आरम्भ कर दिया । राम जी का ऐसा स्नेहवपण हुआ बेनीमाधव, कि ज्यो-ज्यों कथा आगे बढती जाती थी त्यो-त्यों पण्डित मण्डली पर उसका प्रभाव भी बढता जाता था । कथा के अन्तिम दिन × × ×

> राम कथा गिरिजा मैं बरनी । कलि मल हरनि मनोमल हरनी ।
> ससृति रोग सजीवन मूरी । राम कथा गावहि स्रुति भूरी ।।

पडित सभा में सभी के चेहरे मन्त्रमुग्ध-से लग रहे थे । स्वर की मधुरता, शब्दो का जादू और भक्ति रस की अजस्र निमल धार काशी के प्रमुखतम शकरमतानुयायी सवमान्य महापण्डित परम चरित्रवान सन्यासी मधुसूदन जी सरस्वती के रोम रोम को आनन्दप्लावित कर रही थी । केवल बटेश्वर मिश्र और उनके जसे कुछ लोग ही जसे भुने जा रहे थे । मधुसूदन सरस्वती से लेकर सभा म बैठा हुआ प्रत्येक योपवान सन्यासी और पण्डित का चेहरा उन्हें शत्रु-वत् लग रहा था । वे और उनके पक्ष के अन्य शिवभक्त और कुटिल वष्णव

एक दूसरे को देख दसबर आखें मिचमिचा रहे थे। खीझ, हार और क्रोध की चढती उतरती लहरें उनके चेहरा को विरूप बना रही थी।

कथा चलती रही। गोस्वामी जी ने अन्तिम दोहा पढ़ा और पढते-पढते राम के ध्यान मे वे ऐसे मग्न हो गए कि उन्हें अपने तन-बदन का होश तक न रहा। हाथ जोड़े बैठे हुए तुलसीदास की गौर काया सगमरमर की सजीव मूर्ति-सी लग रही थी। उनके मुख पर परम सन्तोष और अपार आनन्द छाया हुआ था।

कथा समाप्त हुई मधुसूदन जी सरस्वती भी कुछ देर तक आखें मूदे आनन्द-मग्न बैठे रहे, फिर धीरे धीरे उनकी आखें खुली। वे बड़े प्रेम से ध्यानावस्थित तुलसीदास को देखने लगे, फिर अपने आसन से उठे, तुलसीदास के पास आए और बड़े स्नेह से उनके सिर पर हाथ फेरने लगे। तुलसीदास की आखें खुली, सिर उठाकर देखा, उन्हें लगा कि गगा चन्द्र-सर्पों और बाघाम्बर से विभूषित साक्षात शिव उनके सिर पर हाथ फेर रहे हैं। जटाजूटधारी गगा की धारा उनके ग्रथ पर पड रही है। पृष्ठो की चौहद्दी अपना रूप परिवर्तित करके सात सीढ़ियो वाले एक विशाल सरोवर के रूप म बढती ही चली जा रही है। उसम गगा भरती ही चली जा रही है। धारा म, सरोवर की उठती लहरो मे, जहा देखो वही सियाराम की छवि ही दिखलाई पड रही है। तुलसी गदगद हो उठे। मधुसूदन जी सरस्वती ने सभा को सम्बोधित करते हुए कहा—

"आनन्द कानने ह्यस्मिन् जगमस्तुलसीतरु।
कविता मजरी यस्य रामभ्रमरभूषिता॥"

सभा मण्डप से निकलकर भीड गली के बाहर आ रही थी। रामचरित-मानस ग्रन्थ काठ की पेटी मे बन्द था। टोडर पेटी को अपने हाथो मे लेकर तुलसी और गगाराम के पीछे-पीछे चल रहे थे। अनेक पण्डित तुलसीदास जी के साथ ही साथ चलते हुए उनकी प्रशसा का सुमेरु भी खडा करते चल रहे थे। सभा मण्डप के बाहर पचास लठत खडे थे। टोडर के पास पहुचते ही वे लठत उनके आगे-पीछे चारो ओर मजबूत दीवार बनकर चलने लगे। बटेश्वर मिश्र और उनकी दुष्ट मण्डली बडी तेजी के साथ लठैतो की भीड म घसकर उन्हें बिखेरने का प्रयत्न करने लगी किन्तु सफल न हो सकी। बटेश्वर के सामने पडनेवाला अहिर उनके आगे बढने पर जब तनिक-सा भी इधर उधर न हुआ तो लाल-लाल आखें निकालकर वे बोले—'सरक उधर, रस्ता दे।"

लठत बोला—'इत्ता तो रस्ता पडा है महराज, चले काहे नही जाते ?"

बटेश्वर जी गरज उठे—'सरऊ जानता है हम कौन हैं ? मैं अभी का अभी तुमको भस्म कर सकता हू।'

अहिर युवक भी तेज पडा वह भी आखें निकालकर बोला—'ए बटेसुर महराज, जो तोहे आपन इज्जत प्यारी होय तो चुप्पे ते निकल जाओ। नाही तो ई जान लेव कि चाहे हम बरहम हतिया का दोख लगे चाहे जो हुइ जाय हम तोहरी ई तत्र मन्त्र भरी खोपडिया एक ते दुइ बनाइ देव। समझ्यौ कि नाही!

लडाई झगडे की आवाजा से तुलसीदास और उनके साथ चलने वाली भीड

इधर देखने लगी। "क्या बात है क्या बात है ?" की गुहार पड़ी। तुलसीदास के साथ वाली भीड़ गली में ज्योंही एक ओर सिमटी त्योंही रामायण की पेटी लिए टोडर ने अपने आगे के लठत अहिर से कहा—"बढ़े चलो हिरदय, हम लोग रुकेंगे नहीं।"

लठैतों की अगली पंक्ति बढ़ी तो पिछली स्वाभाविक रूप से अपने साथियों के पीछे चली। तुलसीदास के साथ वाले पण्डित उन्हें रास्ता देने के लिए गली में और सिमट आए। अब तुलसीदास और बटेश्वर आमने-सामने थे। बटेश्वर तुलसीदास को देखते ही क्रोध के मारे बौरा गए। लाल आंखें दिखलाते हुए हाथ बढ़ाकर वे गरजने लगे—'रे नीच नराधम, सम्मोहिनी मंत्र से मधुसूदन जी महाराज को तथा इन सारे पण्डितों को बांधकर तूने अपने दम्भ का जो जाल फैलाया है उसे मैं निश्चय ही तोड़ फोड़कर नष्ट भ्रष्ट कर डालूगा। अरे नीच मैं तेरी हत्या कर डालूगा।"

लठतों की भीड़ पोथी लेकर आगे बढ़ गई थी। तुलसी हाथ जोड़कर बोले—"मिश्र जी, आप मुझसे बड़े हैं गुरुभाई हैं, आपके इन वचनों को मैं प्रसाद के रूप में ग्रहण करता हूं।'

एक बूढ़े पण्डित बोले—"अरे बटेश्वर, मिथ्या क्रोध और दम्भ को बढ़ाकर क्यों अपनी फजीहत करते हो ? सूर्य पर थूकोगे तो वह तुम्हारे ही ऊपर गिरेगा भैया।"

अपने साथ के कुछ लोगों के द्वारा शांत करके आगे बढ़ाए जाने पर बटेश्वर बढ़े तो अवश्य किन्तु तुलसीदास और गंगाराम के पास से गुजरते-गुजरते वे एक बार फिर भड़के बिना न रह सके। अपनी तर्जनी हिला हिलाकर वे कहने लगे—"अरे, मैं पंद्रह दिना के भीतर ही तुमको, इस नीच गंगाराम को, टोडर को तुम्हारे सभी पक्षधरों से भरी सारी काशी का सत्यानाश कर डालूगा।"

उन लोगों के आगे बढ़ जाने के बाद पण्डित घनश्याम शुक्ल ने कहा—गोस्वामी जी भाषा में काव्य रचने के लिए मैं अनेक वर्षों से अपने मन ही मन में तड़प रहा था। किन्तु साथी पण्डित सदा मुझे भाषा में कविता लिखने से निरुत्साहित करते रहे। आपके मानस महाकाव्य से आज मुझे अपार मनोबल और स्फूर्ति मिली है। मैं भी अब भाषा में काव्य रचूगा।"

तुलसी बोले—'भैया,

" का भाषा का संस्कृत, प्रेम चाहिये साच।
काम जो आवे कामरी, का लै करै कुमाच॥

' भाषा लाखों लोग समझते हैं। भाषा की शक्ति राम-शक्ति है।"

एक पण्डित ने पूछा— अब तो आप काशी में कहीं अवश्य ही जन-जनार्दन को पूरी रामायण सुनाएंगे ?"

'हां विचार तो यही है।

परन्तु इस बार आपको कथा सुनाते समय लठैतों और धनुधरों की पूरी सेना ही अपनी और ग्रंथ की सुरक्षा के लिए रखनी होगी। काशी के अनेक [illegible]

सज्जन और उनके पिट्ठू बहुत-से हाकिम-हुक्काम भी इन लोगों के साथ हैं। आपके द्वारा गली-गली में ये जो अखाड़े खुलवाए गए हैं और युवकों का दल जिस तरह आपके साथ संगठित हो रहा है उसे यह लोग फूटी आंखों से भी नहीं देख पा रहे।"

'हां महराज, सावधान रहिएगा ये दुष्ट लोग जो न कर डालें सो थोड़ा है।"

'मैं सावधान हूं घनश्याम। सदा सावधान रहने के लिए ही मैं राम को अपने मन में समाए रखता हूं। चिन्ता न करो बन्धु, इस बार काशी में मैं नये ढंग से रामायण सुनाऊंगा।'

४६

मठ के अपने खास दालान में गोस्वामी तुलसीदास अपनी मित्रमंडली टोडर, कैलासनाथ और गंगाराम के साथ विराजमान हैं। तुलसीदास बात आरम्भ करते हुए बोले—' मैंने आपको आज एक विशेष कारण से बुलाया है। मैंने खूब दत्त-चित्त होके सोच विचार करके निर्णय लिया है। मैं यह मठाधीशता अब छोड़ना चाहता हूं।"

टोडर बोलने की विकलता में आगे बढ़ आए और अपने दोनों हाथ आगे की ओर बढ़ाकर बोले— कोई निर्णय लेने से पहले तनिक मेरी भी सुन लीजिए। यह माना कि गोसाइयों के प्रबल विरोध से इस मठ की आमदनी को धक्का पहुंचा है पर आप चिन्तित न हों। चाहे इस मठ के सारे सहायक उन दुष्टों के बहकावे में आकर सहायता देना बन्द कर दें, तब भी आपका यह सेवक अपने जीते-जी कुल खर्चा उठाने को तैयार है।'

कैलास बोले—' टोडर जी जहां तक मैं समझता हूं तुलसीदास का दृष्टिकोण आपके दृष्टिकोण से सर्वथा अलग है। इन्होंने किसी दूसरे कारण से यह निर्णय लिया है। क्यों तुलसी, मैं गलत तो नहीं कह रहा हूं ?"

तुलसी बोले— जो कारण टोडर के ध्यान में आया है वह अंशतया ठीक है, पर, तुमने सही कहा मूल कारण और है। मैं यह रजोगुणी परिवेश अब सह नहीं पाता गंगाराम। यह मुझे आठों याम खलता है। टोडर, मैं अस्सी घाट पर तुम्हारे बनवाए हुए अपने उसी प्राचीन स्थान पर लौट जाना चाहता हूं। वहां हर प्रकार का आदमी आठों याम मेरे पास स्वतन्त्रतापूर्वक आ सकेगा। मेरी वह गली-गली घूमने और नाम प्रचार करने की पुरानी परिपाटी जब फिर से आरम्भ होगी, तभी मुझे सुख मिलेगा।"

गंगाराम बोले—' टोडर, सूर्य को कोठरी में बन्द नहीं किया जा सकता। यह जैसा जीवन बिताना चाहते हैं वैसा ही बिताने दो।"

कैलास बोले—' यह जब तक अपने घट घट व्यापी राम से न मिलते रहें तब तक इनका योग पूरा नहीं होगा। मैं इन्हें सदा से जानता हूं।"

तुलसीदास मुस्कराए बोले— कवि के साथ प्रारब्ध ने मुझे कथावाचक भी

बनाया है। मैं रामायण सुनाना चाहता हू और नाम प्रचार करना चाहता हू। आज के हारे थके, हर तरह से टूटे-बुझे हुए जनजीवन को इस आस्था से भर देना चाहता हू कि न्याय, धम, त्याग और शील आज भी इस जग मे विद्यमान हैं। कोई चिनगारी को छोटा न समझे, वह किसी भी समय अनुकूल परिस्थितिया पाकर निश्चय ही महाज्वाला बन जाएगी। राम थे राम हैं, राम सदा रहेंगे—और इस पृथ्वी पर एक दिन रामराज्य आकर रहेगा।"

टोडर, बोले— 'आपकी इच्छा ही मेरे लिए वेद वाक्य है महात्मा जी, परन्तु मेरे सामने फिर वही की वही समस्या आ जाती है, इस मठ का गोस्वामी पद किसे प्रदान किया जाए ?"

गगाराम बोले— 'तुलसीदास, मैं जब-जब तुम्हारे इस मठ मे आया हू, मुझे इस मठ का तुम्हारा वह शिष्य, जिसके छोटी-सी दाढी है क्या नाम है उसका "

हरेकृष्णदास। कहते हुए तुलसीदास की आखो मे चमक आ गई, कहा—"तुमने ठीक सोचा। मूल मथुरावासी है, शात शिष्ट और भावुक है।'

टोडर बोले— वह तो पहले भी था महात्मा जी, किन्तु लोग कहते हैं कि वह अभी बहुत युवक है।'

तुलसी हल्की झिडकी-सी देते हुए बोले—'यह बेकार का तक है। उसकी आयु पैंतीस-छत्तीस वर्ष से कम तो है नहीं। तुम चिता न करो, मैं तुम्हारी बिरादरी वालो को समझा लूगा। मेरे जाने से कुछ लोग जो अन्य गासाइयो के प्रभाव मे हैं निश्चय ही सतुष्ट होंगे, और हरेकृष्णदास का नाम सहर्ष स्वीकार कर लेंगे।" × × ×

मैं फिर से अस्सी घाट पर आ गया। अखाडे पर अब पहले से अधिक जमाव होता था। टोडर ने एक भवन में मेरे लिए रहने की सुखद व्यवस्था कर दी। मैं जो पहुचा तो पुराने लोग बडे प्रसन्न हुए। नगर मे अपने सभी पुराने परिचिता से स्वच्छदतापूवक घूम घूमकर मिलना आरम्भ किया।' × × ×

विश्वनाथ मदिर की गली में तुलसीदास एक बतनवाले की दूकान पर बैठे हैं। गली में आते-जाते लोगो की एक छोटी-सी भीड उनके आसपास खडी है। सब लोग बडे प्रसन्न हैं। गोस्वामी जी हसकर कह रहे हैं—'बन के पछी को चाहे सोने के पिजड़े मे क्यों न बिठला दो, हीरे मोती-मानिक जडी कटोरियों मे दाना-पानी क्यो न दो पर उसे वह सुख नहीं मिलता जो डाल-डाल पर डोल डालकर चहकने मे मिलता है।"

एक निर्धन, फटेहाल-सा आदमी, जो गली म खडा हुआ था, बोला— 'ठीक कहा गुसाइ जी, अरे नामी-ग्रामी बडे-बडे दिगजों में एक आपै तो रह जिन्हें हम अपना समझते रहे। और आप भी नालकी पालकी में चढ़कर तुरही-नरसिघे के साथ आने-जने लगे तो हमारा, सच्ची मानो मन का सारा मजा चौपट हुइ गया रहा गुसाईं जी। अब हमे फिर से लगा कि नहीं जो हमारा है सो हमारा ही है। जियो महराज, जुग जुग जियो महराज।"

दूसरा बोला—"महराज जी, अब यहीं अपनी वह रामायण बांचिए न, जिसके पीछे पंडितों में इतने अखाड़े-दंगल हुए।" सभी ने एक साथ उल्लसित होकर 'हां, हां' कहा।

गोसाईं जी बोले—"हम भी रामायण बांचना चाहते हैं। हमारे मन में यह विचार हो रहा है कि इस कथा में सभी लोग सम्मिलित हों। पूरे नगर में यह कथा बांची जाए।"

जिनकी दूकान पर तुलसीदास जी विराजमान थे, वह लाला जी आश्चर्यचकित मुद्रा से गोस्वामी जी को देखते हुए बोले—'बड़ी अनोखी बात कह रहे हैं महराज जी। सारे नगर में कथा कैसे बांचेंगे आप? आज यहां कल वहां?"

तुलसीदास हंसे, कहा—"और क्या करेंगे हम रामचरितमानस सुनाने के साथ तुम लोगों को रामलीला भी दिखाएंगे। बोलिए, आज के समय में पूरी रामलीला का खर्चा कौन उठाएगा भला?'

लाला जी गंभीर भाव से सिर हिलाकर बोले—'आप बिलकुल ठीक कहते हैं। आजकल बजार बहुत मंदा है। दिन दिन भर दुकान खोले बैठे रहते हैं और किसी किसी दिन तो गाहक भगवान के दर्शन भी नहीं होते हैं। क्या धनी, क्या निर्धन सभी एक-से दुखी हैं। और देखिए फिर अकाल पड़ रहा है। जब गांव में प्रलै आती है तो वहां की परजा सीधे शहरों की ओर ही दौड़ती है। और शहरों में भी कोई कहां ते भीख दे महराज? बुरे समय में बड़े-बड़े लछमीवानों की लछमी भी लजवंती हो जाती है, बाहर नहीं निकलती।"

इसीलिए तो हम बिन टके का महायज्ञ रचाएंगे। यह अकाल की स्थिति ही हमें इस समय विशेष रूप से रामलीला रचाने की प्रेरणा दे रही है। जन करुणा को करुणासागर राम की लीलाओं को देख देखकर अपनी शक्ति की थाह मिलेगी। देखो, राम जी ने चाहा तो अगले पित पक्ष के बाद नवरात्र में रामलीला प्रदर्शन के साथ-साथ तुम्हें रामचरितमानस सुनाई जाएगी।'

गली में खड़ा हुआ एक बाला—'बात बहुत ऊंची कह रहे हो बाबा। नट बाजीगरी तो बहुत होती है और भद्दे भद्दे स्वांग भी गली-गली में होते हैं। अच्छी लीला होगी तो अच्छा मन भी अच्छा बनेगा।"

'हां, यही बात है। देखो, राम ने चाहा तो उनकी लीला बड़े धूमधाम से होगी।" × × ×

बेनीमाधव जी बड़े ध्यानमग्न होकर बाबा के संस्मरण सुन रहे थे। एका एक पूछा—"गुरू जी ये आपकी सारी योजना बिना पैसे-कौड़ी के सफल कैसे हो सकी?"

"जो काम धनबल नहीं कर सकता वह जनबल से सहज सम्भव हो जाता है। हम नगर में जहां-कहीं डोलते हुए पहुंच जाते वहीं हमसे रामयण बांचने का आग्रह किया जाता। हम भी फिर अपनी जुगाड़ में लग गए। ठठेरों-कसेरों से कहा × × ×

'चौधरी, अबकी नौरातों मे हम रामलीला करना चाहते हैं।"

बनारसी चौधरी बोला— यह तो बडी अच्छी बात है महराज। फिर हमारे लिए क्या अग्या होती है?"

'देखो चौधरी जब लीला होगी तो राम जी, सीता जी, लछमन जी आदि देवी देवताओ के लिए मुकुट होने चाहिए। रावण का दस सिर वाला मुखौटा होना चाहिए और भी देवी-देवताओ-असुरा के मुखौटे होने चाहिए।'

'महराज जी मुखौटे हम बनवा देंगे। सियाराम लछिमन, चारो भइयो के तावे के मुकुट हम बनाय देंगे। बाकी और सजावट का सामान आप गोटे वाला से कहके बनवाइए। हम अपनी बिरादरी के हर आदमी को एक-एक मुखौटा बनाने का जिम्मा सौंप देंगे। जसे आप कहगे वैसे बन जाएगे, और किसी पर बोझ भी नही पडेगा। बतन बनाते भए पत्तरो की काट-तरास और छीजन मे ही आपके काम लायक-पीतल तावा निकल आएगा।"

तुलसी बोले— तुम्हारी बिरादरी म जो लोग उत्साही हा उनको कहो कि लीला भी खेलें। धम का काम है, दूसरे अपना और सबका मन बहलेगा। ठीक कहता हू न चौधरी?'

चौधरी हाथ जोडकर बोला—'अरे, हमरी बिरादरीवाला मे यह सुनके उमग भर जाएगी। सोचेंगे हमे ही लीला भी करनी है। घबराइए नही, बडी जल्दी ही सबको इकट्ठा करके मैं ले आऊगा।"

केवटा के चौधरी रामा से बातें करने के लिए जब गोसाईं जी नौका घाट पर पहुचे तो वहा बडा उत्पात मचा हुआ था। लडके एक बजरे को घेरे खडे थे और उसके बन्द कमरे के सामने ललकार रहे थे—'सीधी तरह निकल आओ, लाला तो थोडा-सा दड देकर ही छोड देंगे। नही तो कुठरिया का दरवाजा तोडके मारते-मारते तुम्हारा औ उस निगोडी भुनिया का कचूमर निकाल डालेंगे, जिसने हमारी बिरादरी की नाक कटा रखी है।'

तट के ऊपर बडे बूढे केवटो की भीड खडी चुपचाप तमाशा देख रही थी। गोस्वामी जी के पहुचते ही सब पर छूने आगे बढे। उन्होने पूछा—"यह किस बात का उत्पात हो रहा है, भइया?'

रामा बोला—'क्या कहे महराज, कलिकाल है। भूरन साहु हम लोगो को कर्जा क्या देता है कि ब्याज मे हमारी आबरू भी लूटता है। इसी बस्ती की एक चुडल है महराज वही हर घर से उसके सिकार पकड-पकडकर लाती है। आज लडको ने पकड लिया है सो दड दे रहे हैं।'

लडके तब तक कोठरी का द्वार तोडकर भूरन और भुनिया को अन्दर से बाहर घसीट लाए और उनकी मरम्मत करने लगे। तुलसी ने कहा—"अच्छा है, जब सेर पर सवा सेर पडता है तभी दुष्ट मानते हैं। जसे कृष्ण ने नागनथैया की थी वैसे ही हमारे युवका को दुष्टों की नागनथैया भी करनी चाहिए।"

थोडी देर तक भूरन की धुनाई होती रही, फिर गोसाईं जी ने ही आगे बढ़कर उसे और भुनिया को कुछ युवको के घेरे से मुक्त कराया। आदेश देकर सबको शान्त किया, फिर केवटो के चौधरी से कहा—"रामा भइया, हम राम

लीला करवाना चाहते हैं।"

यह कैसे होयगी गुसाइ जी?"

ये एसे होगी कि जब सियाराम जी, लछमन जी गगा पार करके बन को जाएगे तो तुम्ही उन्हे पार उतारोगे और राम जी के चरण पखार के अपना जीवन सार्थक करोगे।"

'सच्ची महराज?"

"हा, रामा, तुम यहा के केवटों के चौधरी हो निपादराज से क्या कम हो?"

"अरे, गोसाइ जी हम औ हमारी सारी बिरादरी आपके साथ है। जसे कहोगे वैसे करेंगे।"

हिरदै अहिर की गोशाला के तखत पर गोस्वामी जी विराजमान हैं। हिरदै तखत के नीचे सविनय बैठा हुआ कह रहा है—'इत्ती-सी बात कहने के लिए आप दौडके आए! अरे, हमे कहलाय दिया होता तो हम आपै आ जाते। बाकी हमारे जवान तो यह सुनते ही फडक-फडक उठेंगे महराज। स्वाग भरने का चाव किसे नही होता और फिर राम जी के बानर बनने की बात सुनकर तो लडके ऐसे मगन होंगे कि कुछ न पूछिए।"

"उन्हें बानर तो बनना ही है हिरदै, बाकी यह है कि स्वरूपो की सुरक्षा के लिए भी तुम्हें कुछ लठत देने होंगे। यहा कुछ लोग अकारण ही हमारे शत्रु हैं। हमारी रामायण की रक्षा के लिए भी टोडर ने तुम्ही लोगो को कष्ट दिया था।"

"कस्ट महराज? अरे ई तौ हम पचो का सुख है, जो आपकी सेवा करने का औसर मिलेगा। आप निसाखातिर रहैं। हमारी बिरादरी का एक-एक लठैत आपकी सेवा में हाजिर रहेगा। जिसे चाहे बानर बनाय लें और जिसे चाहे पहरेदार। बाकी एक हमारी अरदास है। अग्या होय तो अरज करू?"

"कहो कहो।"

'पहले इस बीच मे एकाध-दुइ छोटी-छोटी लीलाए आप करवाय लें तो फिर बडे काम में हाथ डालने पर और आनद आएगा।"

तुलसीदास इस सुझाव से खिल उठे, बोले—"तुमने बहुत अच्छी बात कही है हिरद। अच्छा, पहले दो छोटी छोटी लीलाए करेंगे, एक नागनथैया लीला और दूसरी नरसिंह लीला।" × × ×

"अन्यायी कालिय नाग और क्रूर हिरण्यकशिपु दोनो ही के अत्याचारो का सामना नवयुवक ही करते हैं। एक मे कृष्ण की गोप मण्डली है, दूसरे मे सत्य निष्ठ प्रह्लाद। मेरी इन लीलाओ का नगर में, विशेष रूप से युवको की टोली मे, बडा ही असर पडा बनीमाधव। अब रामलीला के लिए हर वर्ग मे बडी उत्सुकता और उत्साह बढ गया था। एक दिन × × ×

टोडर के साथ अपने अस्सी घाट वाले स्थान पर गोसाईं जी बठे बातें कर रहे हैं। वे कह रहे थे—"हमने हर बिरादरी म और हर महल्ले मे सबसे बात कर ली है टोडर। जिस महल्ले मे जो लीला होगी उसका खर्चा और प्रबध

उसी महल्ले वाले करेंगे और रामायण मैं सुनाऊंगा।"

टोडर बोले— महात्मा जी आप जो चाहेंगे वह अवश्य होगा, लेकिन यह न भूलें कि इस नगर के कट्टर शैवपंथी, वल्लभ सम्प्रदाय वाले और उनके साथ ही साथ वटेसुर महराज जैसे प्रभावशाली दुर्जन लोग आपकी सभाओं में तरह-तरह से विघ्न डालने में कोई कसर न उठा रखेंगे।"

गोसाईं जी शांत स्वर में बोले— 'टोडर, अबकी यह विघ्न डालेंगे तो राम जी की दया से सारा नगर इनके विरुद्ध जायगा। मैं इसीलिए रामलीला प्रदर्शन के साथ रामचरितमानस सुना रहा हूं। मेरे वानर सब प्रकार के असुरों को दण्ड देने के लिए तैयार रहेंगे।"

उसी समय घाट के एक अधेड़ व्यक्ति घबराए हुए तुलसीदास जी के पास आए, कहा—'अरे बड़ा गजब हुइ गया गुसाईं जी महराज। पूरा कलिकाल आ गया। चारों चरन टेक के कलजुग खड़ा होइ गवा है ससुरा। कुछ न पूछौ।"

"क्या हुआ श्रीधर ?"

'अरे एक कौनो सरवा बैरागी रहा वह तान्त्रिक रहा, सौन किसी बड़े हाकिम की बड़ी पतुरिया को लैके भाग गवा। अब जित्ते छोटे-बड़े साधू-बैरागी हैं सब पकड़े जाय रहे हैं। भला बताओ इ कहां का न्याव है महराज ?"

"तो तान्त्रिकों को कौन पहिचनवा रहा है भाई ?"

"सब मिली भगत है महराज। बटेसुअर मिसिर यो किसीने नहीं पकड़ा महराज, उन्होंने सुना है कि पाच सौ रुपये रुसखत चटाय दी औ "

मुंह की बात मुंह में ही रह गई और आठ-दस सरकारी प्यादों को लेकर जमादार और एक ब्राह्मण युवक तुलसीदास की कोठरी के सामने आ पहुंचा। टोडर ने इस ब्राह्मण को बटेश्वर मिश्र के साथ कई बार देखा था। उनके कान ठनके। वह युवक वैसी ही शान और शेखी के साथ, जैसी केवल मूर्ख और दम्भी दिखला सकते हैं, आगे बढ़ा और चिल्लाकर बोला— यही हैं तुलसीदास। इन्हें सम्मोहिनी विद्या सिद्ध है। बड़ी-बड़ी सुन्दर स्त्रियों को नित्य फंसाना ही इनका काम है। आज इस सठ के पाप का घड़ा भर गया सो आय फसा है।" कहकर अपने कंधे पर लटकी हुई लाल झोली से एक काठ की डिबिया निकाली और जल्दी-जल्दी मन्त्र बुदबुदाते हुए उसका सिंदूर बिजली की फुर्ती से तुलसीदास की छाती पर उछाल दिया। हे-हे-हे-हे' बकरे की मिमियाहट की तर्ज पर भैंस की डकराहट जैसी वह हंसी उस कायर-वीर के गले से निकलने लगी।

टोडर का हाथ अपनी तलवार की मूठ पर चला गया। तुलसीदास ने दृढ़ता पूर्वक उनका हाथ पकड़ लिया। उनके चेहरे पर परम शांति विराज रही थी।

बटेश्वर का वह कायर-वीर शिष्य अपने इस भीषण तान्त्रिक प्रहार के बाद भी अपने गुरु जी के 'गुरु'भाई को वैसी ही शांत मुद्रा में देखकर कुछ-कुछ भय-भीत तो अवश्य हुआ पर दस सिपाहियों की शक्ति उसे अपने गुरु की तन्त्र शक्ति से अधिक बल दे रही थी। हंसते हुए बोला— हे-हे-हे-हे, हमारे गुरु जी से टक्कर लेने चला था ! जान ससुर कौन नीच जात ठगहारी विद्या करके दो-चार मन्त्रों के बल पर सच्चे गुरुओं से होड़ ले रहा था। जाओ बेटा, अब चक्की

पीसो हे-हे-हे-हे ।"

सिपाहियों म दो पठान तुलसीदास को अयोध्या की बाबरी मस्जिद के पास फकीरो के बीच मे नित्य रात को देखा करते थे। उनसे बातें भी हुआ करती थी। उन दिनो यह दोनो पठान अपने सरदार के साथ अयोध्या की मस्जिद पर तनात थे। दोनो ने आपस म एक दूसरे स बातें की और फिर एक ने तुलसी दास से पूछा—'खो बाबा, पहला तुम्हारा दाढ़ी-मुच्छा था ?"

तुलसीदास ने पठान को ध्यान से देखा, पूछा—'आप नूर खा पठान हैं और ये वली खा हैं। क्स है ?"

तुलसीदास का स्वर इतना सहज और शात था कि जसे यह सिपाही उन्हें पकडने नही वरन् साधारण आगन्तुक की तरह बोलने-बतियाने आए हैं। वली खा ने जमादार से कहा— हुजूर, हम दोनो इनको अजुध्या स जानता है ये बाबरी मस्जिद म राज हमार फकीरो के साथ उठता-बैठता-सोता था। बहुत उम्दा गाता है हुजूर! ऊपर वाल का सच्चा, दुनिया वाले का दोस्त है।"

जमादार ही नही साथ आया हुआ हर सिपाही इस बात म एक मत था कि अब तक जितने वरागी पकडे हैं उनम यह निराला है। जमादार बोला— इनके लिए खासतौर स कोतवाल साहब का हुक्म है। इस बरहमन के गुरु ने कोतवाल साहब की बगम का कुछ काम किया था। उसकी पहुच थी, उसी ने इनका पता दिया है।"

'हू!" फिर तुलसी की ओर देखकर जमादार न विनीत स्वर में कहा— 'साइ, हम खतावार नही, महज हुक्म के बन्दे हैं।

तुलसीदास मुस्कराए, कहा—' चलिए चलिए, आप अपना फर्ज अदा कीजिए और हम भी अपने मालिक की मर्जी पूरी करने दीजिए।

तुलसी जस भवितव्यता तसी मिल सहाइ।
आपुनु आवइ ताहि प ताहि तहा ल जाइ॥"

जब कोतवाल के सामने तुलसीदास पेश किए गए तो उनकी बेगम साहबा भी पर्दे के पीछे मौजूद थी। कोतवाल ने उन्हे सर से पैर तक घूरकर देखा और पूछा— सुना है तुमने बहुत शोहरत हासिल की है। तुम बडे-बडे पण्डितो को भी अपने जादू से बाध लेते हो।"

तुलसीदास बोले— मैं जादू-टोने नहीं करता, केवल रामनाम जपता हू और इसीका प्रचार करता हू।"

पर्दे के पीछे से बेगम साहबा ने कोतवाल साहब के कानों मे फरमाया— 'मेरी बादी बतलाती है, यह बहुत बडा फकीर है। इससे कोई करिश्मा दिखलाने को कहिए।

कोतवाल ने तुलसीदास से कहा—'हमे अपना कोई कमाल दिखला सकते हो ?"

तुलसीदास हसे, बोले—'कमाली तो एक ही है या फिर उसका सिपहसालार है।'

'कौन है उसका सिपहसालार ?"

"हनुमान बजरंगबली।" यह कहकर वे सहसा आवेश में आ गए। ऊंचे सशक्त स्वर में उनके मुख से एक छप्पय सोते-सा उमडकर बह चला, आंखें सामने वाले खम्भ पर ऐसी सध गईं जैसे वहां उनका हनुमान हठीला दृढ आस्था का स्तम्भ बनकर प्रत्यक्ष खड़ा हो। वे उसे ही अपना छप्पय सुना रहे थे—

> सिंधु-तरन सिय सोच-हरन, रवि बालबरन-तनु।
> भुज विशाल, मूरति कराल कालहुका काल जनु॥
> गहन-दहन-निरदहन-लंक निःसंक, बंक, भुव।
> जातुधान-बलवान-मान-मद-दवन पवन सुव॥
> कह तुलसिदास सेवत सुलभ सेवक हित सतत निकट।
> गुन गनत नमत, सुमिरत जपत समन सकल-संकट विकट॥

नगर में गोस्वामी तुलसीदास जी के पकड़ जाने की खबर बिजली-सी फैली। काशी की ऐसी कौन-सी गली थी, जिसे तुलसीदास ने अपना न बना लिया हो। शहर में सैकड़ों ऐसे युवक थे जिन्होंने उन्हीं की प्रेरणा से हनुमान अखाड़े आयोजित किए थे। ब्राह्मण राजपूत, गोप, अहिर, गोंड कहार केवट, नाऊ जुलाहे, छोटी कौमों के मुसलमान, तमोली, छोटे-छोटे सौदागर सभी तो रामबोला बाबा को अपना मानते थे। उनके पकड़े जाने के समाचार ने क्या छोटे, क्या बड़े सभी के मनों में बड़ी कड़वाहट उत्पन्न कर दी। सारी काशी में वटेश्वर मिश्र की थू-थू हो रही थी। टोडर ने भूख-प्यास सब बिसार कर दौड़ धूप आरम्भ की। जयराम साहु बोले— अबकी भिड़के ही दिखा दो टोडर। अकबर जैसे न्यायप्रिय बादशाह के राज्य में भी ऐसी मनमानियां हो रही हैं। मिश्र जी जैसे घमण्डी-स्वार्थी आपसी ईर्ष्या-द्वेष में सारे नगर की नाक कटा रहे हैं। एक बार इनसे निबटे बिना निस्तार नहीं। आगे जो होगा सो भुगत लेंगे।'

टोडर बोले—'हिरदे अहीर महात्मा जी का बड़ा भक्त है। अच्छे लड़वैये ठाकुर समरसिंह भी दे देंगे।

जयराम बोले— दो सौ लठैत मैं भी दूंगा। ये कोतवाल बड़ा ही दुष्ट आदमी है और ये बक्नी, जिसकी पतुरिया भागी है एक नम्बर का धूर्त है। इन लोगों ने हमें दुखी कर रखा है।'

'ठीक है, अब आपकी सलाह मिल गई है तो आज रात तक हम भी कुछ कर दिखाएंगे।"

टोडर हिरदे से मिले तो वह बोला—'भैया, कासी जी का अहिर खून उबल रहा है। जब आप सब लोग पीठ पर हो तो हम भी आज इन्हें ऐसा सबक सिखाएंगे की छठी का दूध याद आ जाएगा। हमारे गुसाइं बाबा हमारे लड़कों को रामलीला में बानर सेना बनाने वाले थे सो आज कोतवाल की कोतवाली पर हमारी बानर सेना ही टूटेगी। देख लेना। पहली रामलीला बानर लीला से ही होयगी।

टोडर बोले— ठीक है पर हमको खूब सोच-विचार के बड़े सुगठित ढंग

से होना चाहिए हिरदै। सिपाहियो पर ऐसे अचानक टूटो कि उनसे कुछ करते-धरते न बने। फिर कहीं पर अहिर टूटेंगे, कहीं पर केवट और कहीं पर ठाकुर भुइहार धमकेंगे। और हिरदै, कल सवेरे काशी जी में बटेश्वर मिश्र कहीं चलता फिरता न दिखाई दे।"

'भैया, हम बरमहत्या न करेंगे। उस बरमराक्स को हनुमान जी आप ही समझेंगे।"

रात पहर भर भी न बीती थी कि छावनी में हुल्लड़ मच गया। मुगल पठान सिपाही अचानक म घिर गए। कइयो की मुश्कें कस गइ। सैकडों तुपकचिया विद्रोहियो के कब्जे मे आ गइ। लठैतों का आक्रमण इतना व्यापक और फुर्तीला था कि सिपाही बिना लडे ही उनके जादू मे बधकर परास्त हो गए।

कोतवाली पर सारे शरीर मे सेंदुर लगाए लाल लगोटेधारी अहिर युवा बानर टूट पडे थे। हरम मे ऐसा हाय-तोबा मचा कि बेगम बादिया बेहाथ हो हो गइ। अफीम की पिनक मे गाना सुनते और झूमते हुए कोतवाल साहब की दाढी नुची। उन्हाने कैदखाने के जमादार को बुलाके हुक्म दिया कि तुलसीदास को फौरन छोड दो। तुलसीदास बोले—"जब तक सब बरागी नहीं छोडे जाएगे तब तक मैं बदीगृह से नहीं निकलूगा।'

सारे बैरागी छोडे गए। नगर मे रात के तीसरे पहर सैकडो मशालो के साथ तुलसीबाबा और सारे बैरागियो का जुलूस निकला। पूरा नगर जाग पडा। एक विचित्र उत्साह काशी के जन-जन मे लहरा उठा था। तुलसीदास और काशी उस रात सदा के लिए एक हो गए।

टोडर की इच्छा भी पूरी हुई। बटेश्वर मिश्र नया सूर्योदय न देख पाया। कोतवाली के सिपाहियो ने अपनी इस अपमान भरी पराजय का बदला लेने के लिए रात ही मे बटेश्वर मिश्र के घर जाकर उन्हें सोने से जगाया, बाहर बुलाया और कत्ल कर डाला।

४७

नगर म इस विद्रोह से जहा युवकों मे जान आई वहा दूसरी ओर शासन तत्र भी चूर चूर हो गया। सभी आला हाकिम इस बात से चिन्तित थे कि आगरे के किले मे जब यह समाचार पहुचेगा तो बादशाह न जाने हमारी क्या दुर्गति करे। इस घबराहट में बख्शी दीवा, मीर अदल, कोतवाल, छोटे-बडे सिपहसालार सब आपस म एक-दूसरे को दोषी तथा अपने को सतक स्वामि-भक्त सेवक सिद्ध करने के लिए आगरे मे अपने पक्ष के आला हाकिमा के पास मूल्यवान भेंटें और सदेश भिजवाने लगे। अकबर के दरबार म काशी के इस युवक विद्रोह की इतनी और इतनी प्रकार की सूचनाए पहुचीं कि बादशाह ने काशी जौनपुर सूबे के लिए पुराने सूबेदार का तबादला करके अब्दुर्रहीम खाने

खाना को सूबेदार बनाकर व्यवस्था संभालने के लिए भेजा।

खानेखाना अभी आगरे से चल भी न पाए थे कि उनके आने की सूचना काशी में पहुंच गई। उस समय नगर में अकालग्रस्त जनसमूह मारा-मारा डोल रहा था। श्रमजीवी, किसान आदि सभी भिखारी बन गए थे। पेट भरने के लिए लोग अपने बेटे-बेटियों तक को बेच देते थे। भूतभावन भोलानाथ की नगरी करुणा से चीत्कार कर रही थी और प्रायः उसी समय राजा टोडरमल के पुत्र राजा गोवर्धनधारी काशी के पण्डित शिरोमणि नारायण भट्ट जी की प्रेरणा से विश्वनाथ जी का नया मन्दिर बनवाकर शिवलिंग की प्रतिष्ठा कराने आए थे।

मन्दिर में बड़ी धूमधाम थी। पण्डित मण्डली में हर जगह राजा गोवर्धन धारीदास टंडन की जै-जैकार हो रही थी। फकीरों को अन्न दिया जा रहा था। नगर में सबको शांत किया जा रहा था। एक भिखारी बोला—"यहां सब बड़े-बड़े पण्डित दिखाई दिए पर हमारे रामबोलवा बाबा के दरसन नहीं भये।"

'अरे भइया, जो गरीबों का साथ दे उसे बड़े लोग अपने बीच में नहीं बैठाते हैं। बाबा हमारे-तुम्हारे हैं कि इनके हैं।"

'सच्ची कहा मंगलू, बाबा हमारे हैं।'

'सुना है बिचारों की बांह में गिल्टी निकल आई है। आज-कल वे बहुत पीड़ा पाय रहे हैं।'

तुलसीदास की कोठरी में टोडर आदि कई भक्तों की भीड़ जमा थी। तुलसी अपनी पीड़ा से विकल थे। बार-बार हनुमान को गोहराते थे—'हे हनुमान हठीले, तुमने पहाड़ उठाया, लंका जलाई, बड़े-बड़े बलशाली राक्षसों को चुटकी बजाते मसल डाला, मेरी यह जरा-सी पीर नहीं हरी जाती? मेरी ही सहायता करते समय क्या तुम बूढ़े हो गए हो? तुम्हारी शक्ति क्षीण हो गई है? आओ मेरे साहब, मेरा कष्ट हरो। बड़ा काम करने को पड़ा है। राम जी का काम है हनुमान हठीले, मेरी लाज रखो।"

एक सरकारी ओहदेदार के आने की सूचना मिली। टोडर उठकर बाहर गए। हाकिम को मुजरा इत्यादि करने के बाद उससे बातें करने पर टोडर ने जाना कि नये सूबेदार बनारस आये हैं और गोसाईं जी से मिलना चाहते हैं।

टोडर ने कहा— हुजूर, भीतर चलकर महात्मा जी की हालत अपनी आंखों में देख लें। इस समय तो गिल्टी में बड़ी पीड़ा होने से वे कराह रहे हैं।"

हाकिम टोडर के साथ भीतर आया, सब लोग अदब से उठ खड़े हुए। हाकिम ने गोसाईं जी को झुककर सलाम की और कहा—"हुजूरेआली खाने-खाना साहब ने मुझे आपकी मिजाजपुर्सी के लिए भेजा है।"

उनसे हमारा सलाम कहिएगा। उनके कुछ दोहे हमने सुने हैं। उन्हें हमारी सराहना की सूचना दीजिएगा और इस कृपा के लिए मेरा आभार भी प्रकट कीजिएगा।"

दूसरे दिन पैदलों और घुड़सवारों की सेना के साथ हाथी पर सूबेदार अब्दुर्रहीम खानेखाना गोस्वामी तुलसीदास जी के दर्शनार्थ पधारे। उनके

की सूचना पहले ही भेज दी गई थी। बडा सरकारी प्रबध हुआ था। सूबेदार को देखने के लिए बाबा के निवास-स्थान के आस पास बडी भीड इकट्ठी हो गई थी।

तुलसी और रहीम बडे प्रेम से मिले। खानेखाना साधारण आसन पर बैठकर एक-दूसरे स बातें करन लग। उनके बन्दी बनाए जान के कारण रहीम न क्षमा मागी। उनके उपचार के लिए अपने खास हकीम को भिजवाने की बात भी कही। रहीम ने अकबर बादशाह के सबध म कहा—'महाबली सब प्रकार के अन्यायियो को कुचल रह हैं। व ऐस धम का प्रतिपादन करते हैं जो मानव-मात्र को एक कर सके।'

तुलसी बोले— इसम कोई सदेह नही कि अकबर शाह के काल मे बडी व्यवस्था आई है। फिर भी समाज और शासन को और अधिक सगठित और न्यायशील होना चाहिए।"

'आपका कहना यथाथ है गोस्वामी जी अच्छा, तो अब आज्ञा लूगा। स्वस्थ हो जाय तो एक दिन मुझे दशन दन की कृपा अवश्य करें। एक और निवेदन भी करना चाहता हू। मेरी इच्छा है कि आप ऐसे महात्मा महाकवि को राज्य सरक्षण मिलना चाहिए। मैं यदि शाहशाह सलामत को आपको कोई जागीर प्रदान करने के लिए लिखू तो क्या आप उसे स्वीकार करेंगे ?"

तुलसी हस बोले— आपकी बडी कृपा है खानखाना साहब, परन्तु

'हम चाकर रघुबीर के पटो लिखो दरबार।
तुलसी अब का होहिंगे, नर के मनसबदार॥"

४८

काशी की अधेरी गलियो दर गलियो का जाल अपने कुतरे जान की आशका से सहसा चौकन्ना हो उठा था और उसे कुतरने वाले थ चूहे। घरो खडहरो और मैदाना के अधरे बिलो स रेंगते लडखडाते चूहे निकलते, दो चार डग भरते और मर जाते थे बिल्लिया तक अब उन्ह बिलो से देखकर नही झपटती थी।

एक घर से एक लडका मरा हुआ चूहा दुम से पकडकर हिलाता हुआ बाहर निकला और घूरे पर छाड आया। लौटकर घर पहुचा तो मा न कहा—'अरे सिबुआ तुम्हें बेटा एक बार और जाना पडेगा।"

"क्या मा ?'

अरे बेटा भडारे वाली कोठरी के भीतर पाच-सात चूहे एक के पीछे एक लडखडाते भए निकले और मर-मर गए। ये क्या हुइ गया है राम ?'

दूसरे दिन घर घर मे तेज बुखार फल गया था। नगर के छोटे-बडे किसी भी वैद्य हकीम को दम मारने का अवकाश नही था। गिरजादत्त वद्य के बठके और चबूतरे पर भीड जमा थी। एक कह रहा था— ये तो अथवाई का रोग भया

है भैया।"

दूसरा बोला—' पण्डित गगाराम ज्योतिषी हमारे लाला से कहते रहे, भैरो, कि ये रुद्र बीसी पडी है। जो न हुइ जाय सो थोडा है।"

तीसर ने कुछ सोच भरी मुद्रा म कहा—' भाई, हमन तो इन दुइ-तीन दिनों म यह अजमाया कि जिस घर मे चूह मरते हैं उसी घर म ये जानलेवा जर आता है। हमारे पडोस मे एक बुढ़िया उसकी बहुरिया और पोते-पोती, चारो के चारों पडे हैं। चारों की बाहन मे गिल्टिया निकली भई हैं। हमसे बिचारी का दुख न देखा गया सो दवा लेवै आए हैं। यहा तो पानी देनेवाला भी कोई नही है।"

पहले ने चिंतित दुखी स्वर म कहा—' हमरी घर मे से बुखार मे पडी है। अब हम भी जाने किसी दिन पड जाय। कौन ठिकाना।"

श्मशानों की ओर लाशें जा रही हैं। किसी के मुह से बोल नही निकलता। किसी भी गली मे घुसो, दो चार घरा से आती रोने चिल्लाने की आवाजें सुनने वाले के कलेजे पर आरिया चलाए बिना नही रहती। तुलसीदास रात के समय अकेले उदास गलिया से गुजरते हुए कहीं जा रह हैं।

एक द्वार की कुण्डी खटखटाते हैं। एक तगडा सा युवक कुप्पी लिए बाहर निकलता है।

गोस्वामी जी को देखते ही आश्चर्यचकित होकर जल्दी से कुप्पी चौखट पर रखकर चरण छूने को झुककर पूछता है—' अरे बाबा, आप इतनी रात मे ?"

"जटा शकर मैं तुमसे एक भिक्षा मागने आया हू।"

' पहले भीतर तो चलें। हुकुम करें बाबा।"

"मैं बैठने नहीं, तुम्हे उठाने के लिए आया हू पुत्र। काशी मे राम कृपा से अब हनुमान अखाडों की कमी नहीं रही।"

' नही बाबा अरे पचास से ऊपर अखाड वाला को तो मैं जानता हू। इनके सारे दगल मैं ही कराता हू। तभी "

गोसाईं जी ने बातो की जटा बढाने वाल जटाशकर को बीच मे ही टोककर कहा— बेटा, इस शकरनाहर सरोवर के नर-नारी रूपी मच्छ-मछलिया इस समय बडे ही व्याकुल हैं। जैसे नदी के जीवो म माजा की बीमारी पडती है न, और उनके शव उतरा उतरा कर तट पर ढेर के ढेर आकर बिछ जाते हैं वैसी ही दशा है।"

हा बाबा, बचपन में अपने गाव के तलाव में देखा था। आज वही हाल काशी के नर-नारिया का है, आपने ठीक कहा।"

' पुत्र, व्यायामप्रिय युवको के एक बहुत बडे दल को तुम जानते हो। इसलिए मैं तुम्हारे पास आया हू।'

' आज्ञा करें बाबा।

' क्या कहे जटाशकर। अपनी इस परम पावन पुरी की दशा ता देख ही रहे हो। चूहों पर चूहों के ढर पड़े हैं। कहन को तो महामारी का आज दसवा दिन है पर नगर म ऐसे कितने ही घर हैं जहा मरे हुए शवो की सद्गति करनेवाला

भी कोई नही बचा है। बेटा, तुम हनुमान अखाड़े के युवा लोग इस समय यदि राम जी की सेवा करोगे तो तुम्हें अपार पुण्य मिलेगा। बोलो, हनुमान जी के नाम की लाज रखोगे? है तुममें राम सेवा करने का साहस?'

हट्टा-कट्टा पहलवान जटाशंकर यह सुनकर एक बार तो सिर से पांव तक सिहर उठा परन्तु दूसरे ही क्षण वह सिहरन स्फूर्ति बनने लगी, बोला— या तो बाबा, यह काम आग से खेलने जैसा है। पर जब आपकी आज्ञा है तो फिर कुछ सोचने का सवाल ही नही उठता।"

'जीते रहो पुत्र, राम तुम्हारा सब विधि भला करेंगे। मैं आठो पहर रामरक्षा कवच मंत्र का पाठ करता रहूंगा। हनुमान जी की कृपा से कोई भी युवक इस ज्वर से पीडित नहीं हो पाएगा।"

जटाशंकर बोला— हम तो आपका नाम लेके आग म भी कूद पड़ेंगे। बाकी औरो के जी की बात मैं कसे कहू। दो चार लोगों से बातें करके बताऊंगा।"

'मैं देखा चाहता हू कि परम योगेश्वर महामृत्युंजय की इस नगरी मे अभी कितना पुण्य शेष है।"

अरे बाबा या कहने को तो राम राम शिव शिव सभी जपते हैं पर आप जैसी भक्ती न हम जवाना म है और न बूढ़ा मे। बाकी, मैं आपकी सेवा मे हाजिर हू।"

हा, यहा तो ऊंचे-नीचे बीच के धनिक रंक, राजा, राय सब श्रेणियों के लोगों का एक करके मैंने इतने दिनों म देख लिया। जब पीड़ा दगते हैं तो पीठ फेर लेते हैं। देखना चाहता हू कि इन पीडितो की सहायता करने का उत्साह तुम्हारे समान और कितने लागो के मना म उमगता है।"

जटाशंकर बोला— अच्छा ता ठहरिए मैं घर मे अम्मा से कह आऊं कि द्वार बन्द कर लें। आपको लेके कुछ अखाड़ों के गुरुओं के यहा चलूंगा। पहले एक बालक सरदार के यहां चलूगा। आपके प्रभाव से लोगा को राजी करन म सुभीता होगा।' जटाशंकर कुप्पी लिए अपने घर की दहलीज तक गया और जोर स आवाज दी— अम्मा कुण्डी लगवाय लेव। हम गुसाइ बाबा के साथ एक काम से जाय रहे हैं।" कहकर वह उल्ट पाव लौट आया। बाहर से किवाड़े उढ़का दिए और गुसाईं जी के साथ तीन चार छोटी-छोटी गलियों को पार करके एक घर के सामने पहुचा और जोर से आवाज लगाई 'ए रामू! रामचन्द्र! ओ रामचन्द्र!'

तुलसीदास का मन मुदित हुआ। जब जटाशंकर के सहायक रामचन्द्र हैं तो काम बना समझो।

उसी समय भीतर से किसी पुरुष का स्वर आता है— 'अरे कौन है?"

"हम हैं बाबा, जटाशंकर जरा रामू को जगाय दीज।"

अन्दर स खांसते हुए पुरुष स्वर न कहा— अच्छा।'

इतनी देर मे जटाशंकर गोसाइ जी स कहन लगा— है तो बाबा यह रामू चौदह-पन्द्रह बरस का लड़का ही पर एसा तेज और फुर्तीला है कि जब आपके सामने आवेगा तो आप भी कहेंगे कि याह जटाशंकर क्या सतथा भिड छांट क लाए है।"

गोसाईं जी ततैया भिड़ की उपमा सुनकर हस पड़े।

जटाशंकर बोला—'आपके चरणों की सौं बाबा, मैं झूठ नहीं कहता। ये लड़का दस-बारह टोलों के लड़कों का मुखिया है समझ लीजिए। यदि यह हिम्मत दिखा जाए तो "

कुण्डी खुली, एक कसरती बदन का चौदह पन्द्रह वर्ष की आयु का बालक मिट्टी की ढिबरी लिए एक हाथ से आँखें मीजते हुए आया।

जै बजरंग दादा, अरे! अरे! अरे!!" कहकर ढिबरी वहीं पर रखकर दो सीढ़ियाँ उतरने के बजाय सीधे गली में ही कूद पड़ा और गोसाइं जी के चरणों में साष्टांग प्रणाम किया।

झुककर उसे उठाते हुए गोसाइं जी बोले— राम राम! आयुष्मान निष्ठावान हो। सुखी हो। अरे बस-बस, अब उठो बेटा। अभी जाड़ा गया नहीं, तुम उघाड़े बदन हो। गली ठंडी है।"

गोसाइं जी के पीठ थपथपाकर उठने का आदेश देने से जिस समय रामू उठ रहा था उसी समय जटाशंकर हँसकर कहने लगा— आपके सामने विनय दिखा रहा है हमसे भी मानता है पर ऐसा विकट है कि जिससे भिड़ जाय "

जाओ दादा, पर गोसाइं बाबा हमारे घर आए! कैसा अचम्भा-सा लग रहा है। भी भीतर पधारें महाराज। घर में हमारे बाबा को छोड़कर और कोई नहीं है।' कहकर वह चौखट से ढिबरी उठाकर मुस्तैदी से खड़ा हो गया। उन्हें प्रकाश दिखाते हुए भीतर एक अँधेरे दालान को पार कर एक कोठरी में ले गया। वहाँ दिया जल रहा था और एक दमे का रोगी अंधा वृद्ध बैठा दोनों हाथों से अपनी छाती दबाए हुए धीरे धीरे हाँफ रहा था।

रामू बोला— बाबा गोसाईं जी महाराज पधारे हैं।"

'कौन गुसाइं रामू? हम दीन दरिद्रन के यहाँ तो बस एक गोसाइं धोखे से आय सकते हैं।"

जटाशंकर ने पूछा— कौन से गोसाईं आ सकते हैं बाबा?"

रामू ने तब तक चटाई बिछा दी थी और गोसाईं जी को जब बैठने का सविनय संकेत कर रहा था तभी अंधे बाबा अपने दम को बाँधकर धीरे-धीरे बोले—"हम दीन-दुखियन का गुसाइं तो एक है भइया रामायण वाला।"

रामू सोत्साह बोला—"वही आए हैं बाबा।'

उत्साह के आवेग में जब कलेजे में हलचल मची तो अंधे बाबा का दम ... गया। वे खटिया से उठने का उपक्रम कर रहे थे कि तुलसीदास उनके पास पहुँच गए। एक हाथ पीठ और एक उनकी छाती पर रखकर धीरे धीरे सहलाते हुए वे बोले— आप आयु में मुझसे बड़े हैं ब्राह्मण हैं बैठे-बैठे मेरा प्रणाम स्वीकार करें। बस-बस, आपको आनन्द अवश्य हुआ है, यह माना पर उसे रोग का कारण न बनाए। शान्त हो जाइए। मेरे लिए तो सबका घर अपना ही घर है। सहज रूप से सबके घर पहुँच जाता हूँ। इसमें आश्चर्य की क्या बात है।

बुड्ढा रो पड़ा उनके हाथ पर अपने दोनों हाथ रखकर बोला— जैसा सुना था वैसा ही आपको पाया। सुना है गंगा आपके सहपाठी रहे!

'हाँ", महाराज।'

'तनिक दूर के नाते से वे हमारे भाई लगते हैं।"

'यह जानकर प्रसन्न हुआ। मैं आपसे आज एक भिक्षा मागने आया हू।मुझे घर दिखाने के लिए जटाशंकर मिल गए हैं। उन्हीके साथ यहा तक आ सका।'

'अरे महाराज मैं निर्धन ब्राह्मण अधा अभागा। भला आपको क्या दे सकता हू ? पुत्र-पतोहू नौका से गगा पार कर रहे थे सो गगा जी मे ही समा गए। उसके छह महीने बाद ही मैं अन्धा हो गया। यह पौत्र है इसे थोड़ा-बहुत पढाता हू। यह मेरी सेवा करके फिर श्याम जी शास्त्री के यहा वेद पढने जाता है। बस यही मेरा धन है, बल है सहारा है।"

म इसी बालक को आपसे मागने आया हू।'

अधे बाबा चौंके कहा—"काहे के लिए महाराज ?'

राम जी की सेवा कराने के लिए। आना है ? आपकी सेवा के समय यह सदा आपके पास रहेगा। या आप चाहे तो मेरे साथ अस्सी घाट चलें वही रहें मैं स्वय आपकी सेवा करूगा। कहकर तुलसीदास बाबा की खाट पर ही बैठ गए।

बाबा गद्गद हो गए बोले—'आपको मैं क्या बडाई करू गोसाइ जी महाराज आप ऐसा प्रस्ताव लेकर इस समय पधारे हैं कि मेरी वाणी बोल करके भी भीतर से गूगी हो गई है। पहले मैं अपने मन की बात आपसे कहना चाहता हू ?'

"आप बडे हैं महाराज कहिए-कहिए।'

पिछले एक पखवारे से मेरा मन मुझे सचेत कर रहा है कि मेरा अन्तकाल अब निकट है। अपने जाने की चिन्ता नही किन्तु तब से रामू की चिन्ता मुझे अवश्य सता रही है। यही मेरे वश का एकमात्र आशा दीप है।'

सुनकर तुलसीदास गभीर हो गए फिर उनके घुटने पर टिका हाथ अपने दोनो हाथो म दबाकर उन्होने कहा— पण्डित जी हानि-लाभ जीवन मरण यश अपयश विधि हाथ फिर भी मैं वचन देता हू कि ऐसी स्थिति म यह बालक मेरे पास रहेगा और मैं स्वय इसे पढाऊगा।"

कृतज्ञता के भावावेश मे बुडढा बैठे ही बैठे उनके घुटने पर झुक के रो पडा कहने लगा—'साक्षात परमात्मा ही मेरी चिन्ता हरने के लिए आ गए हैं। बस अब मुझे कुछ नही कहना है। रामू इधर आ पूत।'

रामू आगे बढा उनके घुटने पर हाथ रखकर कहा—"हा बाबा।"

उसका हाथ तुलसीदास के हाथ म रखते हुए गद्गद वाणी मे वृद्ध बोला—'अब आज से यही तेरे माता पिता गुरु सभी कुछ हैं। मैं नही जानता कि यह तुझे अपने किस काम के लिए मुझसे मागने आए पर अब तू इन्हीका है। अब चाहे जितने दिन जिऊ मुझे चिन्ता नही है।'

जिन क्षेत्रो मे ताऊन की महामारी फैली हुई थी उनमे लगभग पाच सौ लडके काम कर रहे थे। उनम से अधिकाश बारह से पद्रह वर्ष तक की आयु के थे। घूरे साफ हो रहे हैं। नीम के काढे से रोगियो का उपचार हो रहा है। शव उठाए जा रहे हैं। लडके बारी-बारी से परिश्रम कर रहे हैं बडी लगन मे सेवा कर रहे हैं। इस समय सभी का डेरा अस्सी के पास खुले मदान मे झोपडिया मे

पडा है। नियम से सबके व्यायाम, विश्राम और खाने का प्रबन्ध स्वय गोस्वामी जी की दख रेख म उनके बरसा पहले गगाराम के द्वारा जमा करवाए गए धन से हो रहा है। टाडर और जयराम साहु प्रबधक हैं। बालको के पुण्य ने नगर के अधबुझे पुण्यशीला के भीतर भी उत्साह जगाया और तभी एकाएक गली-गली म अफवाह उडी

'अरे मोहना, कुछ सुना ?'

'क्या भया भगेलू ?"

हमने सुना है किसी जादूगर न अपने कुछ चेल छाडे हैं। वो भया कुप्पा म भरकर कोई रसायन अपने साथ लाते हैं और जहा छोडा नही, वही चूह मरने लगे। औ बस बीमारी फलती चली जाती है।'

'अर, नही भगेलू किसीकी उडाई हुई बात है।"

उडाई हुई ? अरे, मैं अपन आखा देखी कह रहा हू। मेरे सामने चार कुप्पे वाल पकडे गए। उ होंने सब कबूल दिया।'

'क्या कबूला ?"

यही कि हमारे जादूगर-उस्ताद ने कहा है कि बनारस भर मे ये दवा छिडक आओ जिससे वहा के सब लोग मर जाए और उनके घरो का रुपया टका माल मता आसानी स लूट लें।

"अर नही, गप्प है।'

'गप्प ! अच्छा तो गप्प ही सही। नाई-नाई बाल कितने कि जिजमान आगे आएगे। दो चार दिनो मे आपही दख लेना। अब किसी की जिन्दगी का कोई भरासा नही है।

सामन स एक खोमचेवाल को जात देखकर भगेलू ने आवाज लगाई—'अरे आ कचौडी वाले, यहा आना भाई। कौन जान कल जियें कि मर, आज कचौडी तो खा ही लें।

जादूगर के कुप्पा की अफवाह काशी म बडी तेजी से फली। गली-गली म घबराहट फल गई। महल्ले महल्ले म रातो मे पहरे बैठने लग। दिन और रात म पचासा बार जहा तहा 'वो आए' की भडिया गुहार मच जाती थी। बेचारे कई निरपराधी लोग जादूगर के शिष्य माने जाकर पीटे गए। नगर मे एक आतक-सा छा गया।

तुलसीदास ने सुना, वे उत्तेजित हो गए। कहा— यह निश्चय ही किसी दुष्ट बुद्धि के द्वारा उपजी हुई बात है। अपने क्रूर विनोद से वह इन बेचारे मरे हुआ का मार रहा है। लोगा का भयातक देखकर तुलसी विचार मे पडे। जन-जन की असीम निराशाजनित घोर अनास्था का उचित उपचार होना ही चाहिए। आस्थाहीन मनुष्य का जीवन ही उसका असह्य बोझ बन जाता है। यह स्थिति भयावह है। गोस्वामी जी ने टोडर और जयराम साहु को बुलाकर कहा— मैं अब इस महामारी को बाधूगा। काशी की दसों दिशाओ म सकट मोचन हनुमान जी की मूर्तिया स्थापित करूगा। इसके निमित्त भी धन चाहिए। कहा जागाड होगा साव जी ?

यह चिन्ता हमारी है महराज। आप तो बस आना भर दें, काम हो जाएगा। मेरा धन और किस दिन काम आएगा ! बस आपके रुपयों म भी बडी राशि बाकी है।'

मित्रो से आश्वासन पाकर तुलसीदास उत्साह मे आ गए। उन्होंने एक नये उत्साह की धूम बाध दी। जगह-जगह हनुमान जी के मन्दिरो की प्रतिष्ठा होती। पूजा-पाठ से वहा के लोगो मे उत्साह आता और तुलसी कहते— 'घब राओ मत हनुमान जी हर दिशा के पहरेदार बने बठ हैं। वे हर जादूगर भूत प्रेत-यक्षादि को मार डालेंगे। राम जी ने हनुमान जी को अब तुम्हारी सेवा के लिए यहा नियुक्त कर दिया है। घबराओ मत।'

मानसिक यत्रणाओ स जडीभूत पागलो को होश म लाने वाला यह आस्था का महायज्ञ रचने म तुलसीदास स्वय अपना आपा खोकर रमे हुए थे।

एक दिन टोडर और गगाराम दोनों ने उनसे विनय की। गगाराम ने कहा— तुलसीदास, तुम निश्चय ही सिद्ध महात्मा हो, किन्तु तुम और तुम्हारा यह हनुमान दल जो इतना अधिक परिश्रम कर रहा है वह यदि '

मुस्कराते हुए तुलसी न बात काटकर कहा— ज्योतिपाचाय जी तनिक प्रश्न कुण्डली बनाकर देख लो न। अरे यह राम का काम है। मेरी तो छोड दो इन बच्चो का भी बाल बाका न होगा। श्रद्धा और विश्वास ऐसी सजीवन बूटी है कि जो एक बार घोलकर पी लेता है वह चाहन पर मृत्यु को भी पीछे ढकेल देता है। फिर भी देखत हो मैं कितना सतक हू मैंने केवल उन्ही बालको और युवाओ को लिया है जो कसरत करते है। जब तक रक्त शुद्ध है तब तक कोई रोग छू नही सकता। यह भी देख रह हो कि मैं नीम के काढे और पत्ती का कितना उपयोग करता हू।

टोडर बोले— राम जाने यह महामारी कब तक चलेगी। अभी तो इसका अत नही दीखता।

अरे चार दिन म गर्मी की ऋतु आते ही यह महामारी अपने आप चली जाएगी और हनुमान जी की कृपा मानकर नर-नारियो का श्रद्धा और विश्वास बढेगा। राम रूपी नैतिकता का झण्डा भूत भावन की इस परम पावन नगरी से ही एक बार आसेतु हिमाचल फिर फहराएगा। देख लेना।" × × ×

बनीमाधव गद्गद होकर बोले— 'प० गगाराम जी ने स्वय एक बार आपकी उस समय की भविष्यवाणी मुझे बतलाई थी। सचमुच शिव की काशी स ही इस बार राम की ज्योति जागी है।

'बस अब कोई विशेष बात तो हमारे जीवन म कहने को रह नही जाती पुत्र फिर तो स्वय तुम लोगा के देखते ही देखते जो तुलसी भाग से भी भोडा था वह रामनाम के प्रताप से गोस्वामी तुलसीदास बनकर पुज रहा है। चलो, आज मैं तुमसे भी उऋण हुआ। हमारी जीवनी कदाचित तुम्हे आस्था के सघष की कथा बनकर प्रेरित करे। तुम्हारा उपकार होगा। किन्तु एक बात ज्योतिषी तुलसीदास की भी गाठ म बाध लो।'

"वह क्या गुरू जी ?"

'कालांतर में तुम्हारा ग्रन्थ मेरे भक्तों के द्वारा वह न रह जाएगा जो तुम लिखोगे। वह कुछ का कुछ हो जाएगा। हां तुम अवश्य अमर हो जाओगे।'

गुरू जी के चरणों में श्रद्धापूर्वक मस्तक नवाकर बेनीमाधव बोले— अमरता मिलेगी तो मैं देखने नहीं आऊंगा महाराज, किन्तु इस जीवन में आपके इस आस्था के महायज्ञ से प्रेरणा लेकर मैं अपने मन की काली छायाओं से मुक्त हो सका तो अपना अहोभाग्य मानूंगा। मैं एक बार अपने भीतर वह मन देखने के लिए तड़प रहा हूं गुरू जी जिसकी निर्मलता से परम ज्योति आभासित होती है। आशीर्वाद दें कि इस जन्म में यदि उस दिव्य ज्योति को न देख पाऊं तो भी मेरा मन निर्मल हो जाय। मेरे आस्था दुर्ग की नींव आपके चरणों के प्रताप से दृढ़ हो जाय।'

सन्त जी के माथे पर हाथ फेरते हुए बाबा ने स्नेहपूर्वक कहा —"होगा अवश्य होगा। जैसे ठग साहूकार के पीछे पड़ता है न, वैसे ही तुम राम जी के पीछे लग जाओ बेनीमाधव। उनका प्रसाद तुम्हें अवश्य मिलेगा। सत्य आस्था और लगन जीवन सिद्धि के मूल हैं।

'आपके कथा प्रसंग में केवल एक जिज्ञासा और है गुरू जी, आपके मित्र टोडर जी का क्या हुआ ?"

प्रश्न सुनते ही बाबा की आंखें भर आईं। कुछ क्षणों के लिए वे भाव विगलित हो गए। फिर एक दीर्घ निःश्वास छोड़ते हुए 'राम' कहा और कुछ रुककर फिर बोले —'महामारी शांत होने के बाद मैं कुछ समय के लिए मथुरा चला गया था। लौटकर जाना कि कुचाली गोस्वामियों ने मेरे उपकारी को दण्ड देने के लिए धोखा देकर उसका वध कर डाला था। टोडर ऐसा परोपकारी मनुष्य इस कलिकाल में कम ही देखने में आता है। टोडर के स्मरणमात्र से ही मैं अब भी अपने आंसू नहीं रोक पाता भैया।' बाबा की आंखें फिर छलछला उठीं।

४९

गोस्वामी तुलसीदास जी रोग शैया पर पड़े हैं। उनके सारे शरीर में फुंसियां ही फुंसियां निकल आई हैं। मवाद की कीलें-सी पड़ जाती हैं। शरीर भर से निकलती हैं। आज चार दिन हो गए न रातों को नींद आती है और न दिन का चैन पड़ता है। बीच-बीच में मूर्च्छित हो जाते हैं। राजा गंगाराम कैलास जयराम साहु स्व० टोडर के पुत्र और पौत्र तथा काशी के दो नामी वैद्य कोठरी के भीतर उन्हें घेरकर बैठे हैं। रामू नीम के उबाले पानी से उनके घाव धोता और एक लेप लगाता चल रहा है। झोपड़ी के बाहर दर्शनार्थियों की भीड़ खड़ी है। लोग उत्सुकतावश मना किए जाने पर भी दरवाजे से झांक झांककर गोस्वामी

जो के दर्शन करते हैं । कभी-कभी वे जोर से कराहकर राम राम कह उठते हैं, फिर पीड़ा शान्त होने पर मुस्कराकर कहते हैं— सुख से दुख भला जो राम का याद तो कराता रहता है ।"

दरवाजे से झाँकते कई दर्शनार्थियों की आँखों से आँसू बह रहे थे । बाबा उन्हें मुस्कराकर देखने लगे कुछ देर तक टकटकी बाँधकर देखते रहे फिर गर्दन घुमाकर दीवार पर बनी सीताराम की छवि को देखते हुए हाथ बढ़ाकर कहते हैं—'यह भी इनकी असीम करुणा है

> 'असन-बसन हीन विषम विषाद-लीन,
> देखि दीन दूबरो करै न हाय-हाय को ?
> तुलसी अनाथ सो सनाथ रघुनाथ कियो,
> दियो फल सील सिंधु आपने सुभाय को ।।
> नीच यहि बीच पति पाइ भरुहाइगो
> बिहाय प्रभु भजन बचन मन काय को ।
> तातें तनु पेखियत घोर बरतोर मिस
> फूटि फूटि निकसत लोन राम राय को ।

कैलास फड़क उठे बोले— मित्र तुम महात्मा तो हो ही पर खरे कवि पहले हो । वाह-वाह वाह ।

तुलसी मुस्कराए कहा— कविमनीषी परिभू स्वयंभू । अब तो दो होकर भी दो नहीं रहा कैलास । कहते-कहते फिर एकाएक टीस उठी । आगे कुछ और कहने जा रहे थे कि एकाएक कराह कर राम राम पुकार उठे और फिर अचेत हो गए ।

आँखों में आँसू भरकर राजा भगत ने गंगाराम से कहा— हमें लगता है कि अब तो भैया का दरसन मिला ही रह गया ।

गंगाराम ने कुछ न कहकर एक गहरी निसाँस छोड़ दी । राजा बोले— 'भौजी गई, इनके बेटे को भी अपने हाथों से ही मसान में ले गया था और अब ये भी जा रहे हैं ।' कहकर वे रोने लगे ।

गंगाराम ने उन्हें सांत्वना देते हुए कहा— अपने हृदय में मेरा भी हृदय देखो राजा । क्या किया जाय । कल से ध्यान तक इनका मारकेश और है । वह समय बीत जाय तो फिर सब मंगल होगा ।"

राजा टूटे हुए स्वर में बोले— हाँ वैसे तो जब तक साँसा तब तक आसा । बाकी क्या कहें ?

रात में प्राय सन्नाटा हो चुका था । सावन का महीना था बादल गरज रहे थे । राजा कैलास, वेनीमाधव और गंगाराम चुपचाप दीवार से टेका लगाए थके हारे बैठे थे । रामू अपने प्रभु जी की चौकी के पास बैठा टकटकी लगाकर उन्हें देख रहा था ।

और

तुलसीदास स्वप्न देख रहे थे । हाथ में अरजी का लम्बा कागज लिए तुलसी

दास राम जी के गहनों की ओर जा रहे हैं। पहले गणेश जी मिलते हैं उन्हें प्रणाम करते हैं, फिर क्रमशः भूप शिव-पार्वती गंगा-यमुना वाणी, चित्रकूट आदि की झनकियाँ एक के बाद एक खुलती ही चली जाती हैं। भीतर की ड्योढ़ी पर खास दरबार के आगे हनुमान जी खड़े हैं। तुलसी उन्हें देखकर प्रसन्न होते हैं और अपनी अर्जी का कागज उनकी ओर बढ़ाते हुए कहते हैं— 'इसे राम जी तक पहुँचा दीजिए।"

हनुमान जी मुस्कराकर लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न की ओर इशारा करके कहते हैं— इनकी स्तुति करो। जगदम्बा को प्रणाम करो। उन्हीं की चिरौरी करने से तुम्हारी विनयपत्रिका साहब की सेवा में पहुँच सकती है।'

तुलसी तीनों भाइयों की वन्दना करते हैं। माँ के चरणों में नत होते हैं। सीता जी प्रसन्न होकर मुस्कराती हैं। हनुमान का मन और भरत का रुख देखकर लक्ष्मण तुलसीदास के हाथ से विनयपत्रिका ले लेते हैं और राम जी के सम्मुख उसे सविनय बढ़ाकर कहते हैं— 'नाथ इस कलिकाल में भी आपके एक अकिंचन सेवक ने आपके नाम के प्रति अपनी प्रीति और प्रतीति को निबाहा है। गरीब निवाज, अब इसपर कृपा करें।" भगवान रामचन्द्र विनीत भाव से हाथ बाँधे खड़े हुए तुलसीदास को उन्हें स्नेह से देखकर कहते हैं — हाँ मेरे भी ध्यान में यह बात आई है।' यह कहकर राम जी हाथ बढ़ाते हैं। लक्ष्मण जी उन्हें कलम-दवात देते हैं राम जी अपने हाथ से कलम लेकर तुलसीदास की विनयपत्रिका पर सही कर देते हैं।

उसी समय आकाश में बादल गड़गड़ा उठते हैं मानो रामकिंकर तुलसीदास का जयघोष कर रहे हों। बिजली बार-बार कड़क उठती है। मानो राम की भक्ति माया के अन्धकार को मिटा रही हो। पानी ऐसे बरसता है कि जैसे भक्त के मन में अविरल राम रस धारा बहती है।"

राम के पत्रिका पर सही करते ही स्वप्न भंग हो गया। बादलों की गड़गड़ाहट से तुलसीदास की आँखें खुल गईं— रामू!'

हाँ प्रभु जी!

'आज कौन तिथि है?"

गंगाराम मिश्र को बातें करते देखकर तुरन्त बोल उठे—'श्रावण कृष्ण तीज। अब तो ब्राह्म वेला आ गई।'

तुलसीदास एक क्षण चुप रहे फिर कहा—'पिछले वर्ष रत्नावली आज ही के दिन गई थीं।'

राजा पास आ गए। उनके हाथ पर पोले से अपना हाथ रखकर कहा— "अब कैसा जी है भइया?'

'निर्मल गंगा जल जैसा। गाने को जी चाहता है रामू।'

जी प्रभु जी!'

'आज स्वप्न में मैंने विनयपत्रिका के अंतिम छन्द को दृश्य रूप में देखा है। मेरी काव्य स्फूर्ति अंतिम बार उसे अंकित करने को ललक रही है। एक बार मुझे सब जने सहारा देकर बैठा तो दो। झटपट सहारा दिया गया।

रामू तत्पर बैठ गया। बाबा धीरे धीरे गाने लगे—

'मारति मन रुचि भरत की लखि लखन कही है।
कलिकालहु नाथ नाम सों प्रतीति प्रीति—
एक किंकर की निबही है ॥१॥

सकल सभा सुनि लै उठी जानी रीति रही है।
कृपा गरीब निवाज की देखत
गरीब को साहब बांह गही है ॥२॥

बिहंसि राम कह्यो 'सत्य है सुधि मैं हूं लही है।'
मुदित माथ नावत, बनी तुलसी अनाथ की
परी रघुनाथ हाथ सही है ॥३॥

अंतिम पंक्ति उन्होंने स्वर खींचकर गाई, उसके पूरी होते ही गर्दन निढाल हो गई। रामू उनके सिर को सहारा देने के लिए लपका। बेनीमाधव पैर के तलवे सहलाने लगे। कैलास ने नाडी पर हाथ रखा। बोले—'इन्हें धरती पर लो भगत जी, जल्दी करो। मेरा यार चला।" कहते हुए उनका गला भरआया। उसी भाव मे फिर कहा—

राम नाम जस बरनि कै, भयो चहत अब मौन।
तुलसी के मुख दीजिए अबहीं तुलसी सोन।।"

रामू ने जल्दी जल्दी धरती पर कोने में पहले ही से रखा हुआ गोबर उठा कर लीपा। गोस्वामी जी धरती पर ले लिए गए। तुलसी दल, सोना और गंगा जल उनके घरघराते कण्ठ में डाला गया। सब लोग मौन होकर उन्हींकी ओर दृष्टि लगाए बैठे थे। गले की घरघराहट में भी मानो राम शब्द ही गूंज रहा था। आंखें एकाएक खुल गई, सबके चेहरों को देखा, दीवार पर अंकित हनुमान और सियाराम के चित्रों की ओर देखा। देखते ही रहे, देखते ही रह गए। बाहर ऐसी बिजली चमकी कि उसकी कौंध भीतर तक आ पहुंची। पानी ज़ोर से बरस रहा था। सबकी आंखें भी वैसी ही बरस रही थीं।

श्री रामनवमी, गुरुवार
२१ मार्च १९७२ ई०
रात्रि ९.३४